श्रीमद्दयानन्द महाविद्यालय संस्कृतग्रन्थमाला सं० ७

॥ ओम् ॥

वाल्मीकीय-रामायणम्

अयोध्या-काण्डम्

(पश्चिमोत्तरशाखीयम्)

सम्पादक

पं० रामलभाया एम. ए.

प्रो० खालसा कालेज, अमृतसर ।

So

आर्य्य सम्वत् १९६०८५३०२८ ।

विक्रम सं० १९८४ । सन् १९२८ ई० ।

दयानन्दाब्द १०३ ।

प्रथम संस्करण १००० प्रति मूल्य ७॥) रु०



Printed by Pt MAHAVIR PRASAD
MANAGER VIDYA PRAKASH PRESS, CHANGAR ROAD, LAHORE.
AND PUBLISHED BY
THE RESEARCH DEPARTMENT, D A V. COLLEGE, LAHORE



ग्रन्थमाला के सम्पादक का निवेदन।

पांच से कुछ अधिक वर्ष हुए जब पं० राम लभाया एम० ए० ने मेरे साथ कुछ दिनों के लिये निवास किया था। उन दिनों परस्पर विचार के अनन्तर हमने निश्चित किया कि पं० राम लभाया दयानन्द कालेज के लिये वाल्मीकीय रामायण की पश्चिमोत्तर शाखा का संपादन करेंगे। उस समय तक इस रामायण का एक भी हस्तलेख हमारे नहीं था।

मेरी सम्मति से दिसम्बर १९२१ में पं० राम लभाया कैथल गये। परलोकगत लाला रामकृष्ण वकील उन दिनों कैथल में थे। उन के संग्रह से पं० जी रामायण के दो प्राचीन ग्रन्थ लाये। यही रामायण के संशोधन का आरम्भ था। तत्पश्चात् चार वर्षों में पश्चिमोत्तर रामायण के भिन्न २ काण्डों के कोई २०० ग्रन्थ एकत्र कर लिये गये। इन में से पर्याप्त ग्रन्थ प्राचीन संस्कृत लिखित पुस्तकों के एकत्र करने वाले महाशय भजन लाल के परिश्रम से हमारे पास आये हैं। समय २ पर मैंने इन सब का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन किया है। उस से मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं, कि इस शाखा के यथोचित सम्पादन के लिये कई विद्वानों के भूरि परिश्रम की आवश्यकता है। पं० रामलभाया ने अपना काम उस समय तक प्राप्त सामग्री द्वारा बड़ी सावधानी से किया था। वे अयोध्याकाण्ड के अतिरिक्त बाल, आरण्य और किष्किन्धा काण्ड के कुछ अंश भी सम्पादन कर गये थे। धन के अत्यन्ताभाव में भी मैंने अयोध्याकाण्ड यथा कथञ्चित् छपवा दिया है। अयोध्याकाण्ड के अन्त में १० अत्यन्तोपयोगी सूचियां छापी गई हैं। इनको मैंने अपने निरीक्षण में रिसर्च विभाग के शास्त्री पं० प्रेमनिधि जी से तयार करवाया है। पं० रामलभाया के खालसा कालेज अमृतसर में नियुक्त होने के पीछे पांचवें भाग का मुद्रण पं० प्रेमनिधि जी ने ही कराया है। उन्हों ने ही पं० रामलभाया की प्रेस कापी शोधी है।

नई सामग्री की उपस्थिति में मैंने यही उचित समझा है कि अधिक धन एकत्र करके और पूरी सामग्री को काम में लाकर ही आदि काण्ड का प्रकाशन आरम्भ करना चाहिये। यद्यपि रामायण के काम की प्रशंसा प्रो० सिल्वन् लेवी, डा० कीथ, प्रो० हॉपकिन्स आदि बड़े २ विद्वानों ने की है, परन्तु धन किसी कोने से भी नहीं आया। पञ्जाब गवर्नमेंट तो इस विषय में अत्यन्त ही उदासीन रही है। यद्यपि अपने रिसर्च विभाग में सर जान मेनार्ड के आने पर सहायता की कुछ आशा हुई थी, पर वह सफल नहीं हुई। ऐसी अवस्था में एक तुक परमात्मा की ही सहायता की आशा है। जब तक वह सहायता किसी निमित्त द्वारा न पहुंचेगी, अगले काण्डों का छापना बन्द ही रहेगा।

१५ नवम्बर १६२७
लाहौर।

भगवद्दत्त

वाल्मीकीय रामायणम्

ABBREVIATIONS.

N=Nill=(नास्ति)

O=Omission (Psychological).=(त्यक्तम्)

from 2nd. fasciculus onwards. (द्वितीयभागादारभ्य) ।

पू=पूर्वार्धं=(1st. half of a verse).

उ=उत्तरार्धं=(2nd. half of a verse).

व=वङ्गशाखीयं वाल्मीकीय-रामायणम् ।

(Gorresio's Edition).

दा=दाक्षिणात्यशाखीयं वाल्मीकीय-रामायणम् ।

(Gujrati Press Edition Bombay, 1913)

DESCRIPTION of व MS.

This Ms. has been recently purchased for the Research Library D. A. V. College Lahore.

It is written on country paper; in Devanāgari script; is generally correct; agrees with के; about 100 years old; obtained from Bahāvalpur state

1. MANUSCRIPT MATERIAL.

All the MSS., collated for the present edition, are written, on country paper, in Devanāgarī script.

1. कै—about 100 years old, almost correct, writes स्त for त very often.
2. ल—about 100 years old, almost correct, agrees with कै.
3. म—about 100 years old, incorrect at many places, agrees with कै.
4. पं—dated Vikrama samvat 1808, incorrect at many places, sometime agrees with कै.
5. श्र—dated Vikrama samvat 1875, writes य for च, very often; obtained from Alvara State.
6. पु—dated Vik. samvat 1885, writes च for य, and स for श, very often; transcribed in kurukṣetra.
7. शु—dated Vik. sam. 1512, writes प्र for ग often, and names बालकाण्ड as बालचरित and includes it in the Ayodhyā kānda; loan from Bh. Or. R. I. Poona. No. 123/1884-87.
8. वं—dated Vikrama samvat 1924, copied, by my maternal grand-father, from an old MS.
9. दी—dated Vikrama samvat 1869, obtained from Dirghapur (Bharatpur State).
10. रा—about 200 years old, obtained from near about Rāma Mandira (Nasik).
11. पू¹—about 150 years old, loan from Bh. Or. Research Institute, Poona. No. 181, Vish. col.
12. पू²—about 200 years old loan from Bh. Or. Research Institute, Poona. No. 34/1883-84.

2. COLLATION.

MS. No. 1. is the basic one, collated from the beginning to the end of the Kāṇḍa.

MSS No, 2 and 3. collated from the 16th sarga on wards

MS No 4 left out where found too divergent

MSS No 5 and 6 collated from the 5th sarga on wards since the 1st four sargas are not to be found therein

MSS No 7–12 collated for the 1st four sargas with a view to determine their affinity to the main Recension, and to enable scholars to judge their relative value for the future work on Ramayana These MSS are too divergent on wards

3 SOURCES OF MSS

MS No 1 and 6 were a loan from L Rama Krsna Pleader Kaithal, but later on purchased for the Library after his death

MS No 2 loan from Mahanta Hari Dass through Pt Bhagat Rama B A Librarian Medical College Lahore

MSS No 3–5,9,10 belong to the D A V College Research Library

4 CLASSIFICATION OF MSS

1 के, ल, म—represent the main group

2 अ, ग्र—represent the sub group and, at times, exhibit a tendency to coincide with the Bengal version

3 प—*stands midway between* के, ल, म *group on one* side and अ, ग्र group on the other.

4 गु—represents a strange Sub-Recension and preserves divergent readings

5 दीं पुं, चं, रा, पुं—represent another Sub-Recension

5 DIACRITICAL SIGNS & ABBREVIATIONS

* indicates doubtful authenticity, when prefixed to

hemistiches, but when appended to readings, it indicates obscurity or anomaly.

? indicates uncertainty.

( ) indicates emendation, except in the case of uncommon portions of the readings, that, for the sake of brevity, have been enclosed within such brackets along with their respective MSS, in the crictical notes.

[ ] when placed round readings, indicates restoration; but when placed round hemistiches, verses, and passages, it indicates insertion.

A signifies addition on-wards.

O+नास्ति +(त्यक्तमस्ति or only त्यक्तम्)=omission.

6. METHOD OF DEGREE FIGURES

The degree figures invariably refer to those to which they have been appended, but when they repeat, they refer to the intervening unmarked portion as well, whenever there is any.

7. CRITICAL PRINCIPLES FOLLOWED IN THE CONSTITUTION OF THE TEXT.

The Eclectic Method has been avoided as far as possible Emendations and Restorations have been proposed in rare cases only.

8. PROSPECTUS.

A detailed introduction will be given after the publication of the last fasciculus of this Kāṇḍa.

It is intended to add various important Indices and Appendices at the end of every Kāṇḍa.

9. EPILOGUE.

Despite my strenuous efforts, the printing errors have persisted. These have been corrected and referred to in the errata

Research Library,
D. A. V. College, Lahore. | Rāma Labhāya

१. हस्तलेख सामग्री ।

समस्त हस्तलेख, जो प्रस्तुत संस्करण के लिये मिलाये गये, देशी कागज पर देवनागरी में लिखे हुए हैं ।

१. कै—लगभग १०० वर्ष पुराना, प्रायः शुद्ध, 'त' को बहुधा 'स' लिखता है, केथल से प्राप्त ।

२. ल—लगभग १०० वर्ष पुराना, प्रायः शुद्ध, 'कै' से मिलता है। लाहौर से प्राप्त ।

३. म—लगभग १०० वर्ष पुराना, बहुधा अशुद्ध, 'कै' से मिलता है। मच्छीहट्टा लाहौर से प्राप्त ।

४. पं—वि० सं० १८०८ का, बहुधा अशुद्ध, कई स्थलों में कै से मिलता है। पञ्चवटी से प्राप्त ।

५. अ–वि० सं० १८७१ का, 'ष' को बहुधा 'ख' लिखता है। अलवर से प्राप्त ।

६. कु—वि० सं० १८८१ का, 'ब' को 'व' और 'श' को बहुधा 'स' लिखता है। कुरुक्षेत्र से प्राप्त ।

७. गु—वि० सं० १५१२ का, प्रायः 'ग' को 'ग्र' लिखता है। बालकाण्ड को बालचरित लिख के अयोध्याकाण्डान्तर्गत देता है। भण्डारकर प्राच्य अनुसन्धान समिति पूना से मांग। हस्तले० गुजराती है। संख्या १२३/१८८४-८७।

८. चं—वि० सं० १९२४ का, मेरे नाना की एक पुरातन हस्तलेख से लिखी प्रति। अपने मातुल पं० गोविन्दराम वकील 'चनियोट' से प्राप्त ।

९. दी—वि० सं० १८६९ का, दीर्घपुर (भरतपुर) से प्राप्त ।

१०. रा—लगभग २०० वर्ष पुराना, राममन्दिर, पंचवटी, नासिक के समीप से प्राप्त ।

११. पूं—लगभग १५० वर्ष पुराना, भण्डारकर० प्रा० स० पूना से मांग। संख्या १८१, विश्रामबाग संग्रह ।

१२. पूं—लगभग २०० वर्ष पुराना, भ० प्रा० स० पूना से मांग। संख्या ३४/ १८८३-८४।

२. हस्तलेखों के प्राप्तिस्थान।

हस्तले० संख्या १, ६ ला० रामकृष्ण फ़्लीडर कैथल से मांगे गये थे। उन की मृत्यु के पश्चात् दयानन्द महा० के अनुसन्धान पुस्तकालय के लिये मोल लिये गये।

हस्तले० सं० २ श्री पण्डित भक्तराम बी० ए० पुस्तकाध्यक्ष, मैडीकल कालेज लाहौर द्वारा महन्त हरिदास से मांगा गया। हम महन्त जी, या पण्डित जी के बड़े कृतज्ञ हैं।

हस्तले० सं० ३-५, ९, १० दयानन्द कालेज अनुसन्धान पुस्तकालय के हैं।

शेष के सम्बन्ध में पहले बता दिया गया है।

३. हस्तलेखों का विभागकरण।

१. कै, ल, म—मूल शाखा का आदर्शविभाग दिखाते हैं।

२. अ, कु—गौणविभाग है। इसका झुकाव अनेक स्थानों पर बहुशाखा की ओर है।

३. पं—कै, ल, म तथा अ, कु के मध्य में ठहरता है। कभी एक ओर और कभी दूसरी ओर झुकता है।

४. गु—विलक्षण गौणविभाग दिखाता है। इसके पाठ बड़े भिन्न हैं।

५. दी, पुं, र्व, रा, पूं—एक और गौणविभाग दिखाते हैं। सम्भव है इनकी एक नयी मूलशाखा ही हो।

४. हस्तलेखों के पाठों का मिलान।

हस्तले० संख्या १ हमारा आदर्श है। काण्डारम्भ से अन्त तक मिलाया गया है।

हस्तले० सं० २, ३ पीछे मिलने के कारण सोलहवें सर्ग से मिलाये गये।
हस्तले० सं० ४ अत्यन्त विभिन्न स्थानों में नहीं मिलाया गया।
हस्तले० सं० ५, ६ पांचवें सर्ग से सर्ग १६। १६॥ तक मिलाये गये। इन में पहले चार सर्ग नहीं हैं।
हस्तले० सं० ७ १२ पहले चार सर्गों में उनका मूलशाखा से सम्बन्ध जानने के लिये मिलाये गये। इस का और भी प्रयोजन था, अर्थात् रामायण पर काम करने वाले भावी विद्वानों को उन के तुलनात्मक मूल्य के जानने में सुविधा हो। ये हस्तले० आगे बहुत विभिन्न हैं।

५. चिन्ह और संक्षेप।

* श्लोकार्धों के पहले सन्देह का द्योतक है। पदों के साथ पाठ का संशय बताता है।

? अनिश्चय प्रकटाता है।

( ) सम्भावित संशोधन बताता है। पर जब टिप्पण में पाठभेदों के मध्य में हस्तलेखों के सङ्केत के साथ आया है, तो उस २ हस्तलेख का पहले पाठ से असामान्य भाग बताता है।

[ ] जब पदों के साथ है, तो त्रुटि को पूरित करता है। पर जब श्लोकार्धों, एक या अनेक श्लोकों के साथ है, तो प्रक्षेप बताता है।

A. आगे को श्लोकों का प्रक्षेप बताता है।

O +नास्ति+(स्वतमास्ति 'अथवा' स्वतम्)=पाठ का छूट जाना।

६. घटे वाले अंकों का प्रयोग।

घटे वाले अङ्क सर्वदा उन्हीं पदों को बताते हैं, जिन के साथ कि ये लगाये गये हैं। पर जब एक ही अङ्क दोबारा आता है, तो उन बिना अङ्कित मध्यस्थ पदों को भी साथ ही बताता है, जहां कहीं कि ये आजायें।

७. ग्रन्थ-सम्पादन का प्रकार।

जहां तक सम्भव था, विभिन्न गणों के हस्तलेखों के पाठों को चुन २ कर एकत्र मूलपाठ में देने से संकोच किया गया है। आदर्श हस्तलेखों का पाठ ही मूल में है। सम्भावित, संशोधन या पूर्त्तियां कहीं २ ही प्रस्तावित की गयी हैं।

८. ग्रन्थ में और क्या होगा ?

इस खण्ड के अन्तिम भाग के साथ एक सुविस्तृत भूमिका होगी। कई अत्यन्तावश्यक परिशिष्ट और सूचियां देने का भी विचार किया गया है।

९. क्षमा याचना।

अत्यन्त यत्न करने पर भी कुछ अशुद्धियां रह गई हैं। यह अशुद्धियां शुद्धिपत्र में ठीक की गयी हैं।

अनुसन्धान पुस्तकालय
दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर। } रामलभाया

शुद्धिपत्रम्।

पृष्ठ पङ्क्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
१४—३	पूजयामास्तुस्तदा	पूजयामासतुस्तदा
२१—२	श्रत्वा	श्रुत्वा
२२—१	रञ्जिता[३]	रञ्जिता.[३८]
२५—८	०गच्छतं	०गच्छतां
३१—२	तेपामाञ्जलि०	तेषामञ्जलि०
३८—१८	रुणो माविन्यभिषेचने	रुणोमाविन्याभिषेचने
३९—१८	" "	"
४२—११	विदेशं त०	विदेशान्त०
४३॥—२	मंफुल	मंफुलं
४५॥—३	सिताम्रं	सिता—

४६n–५	क	कै
४७n–१	नंदन	०नंदन
४७n–१	०वद्धन	०वर्द्धन
४८—४	सा[2]—ददर्शाथ[2]	सा[2]ददर्शाथ[2]
४९—१७	साऽसम्यपारे	साऽसृम्यपारे
५१n–३	तनेदं	तेनेदं
५६—६	कथ	कथं
५६—३	येनं	येन
६२—१२	दिष्टया	दिष्ट्या
६४—३	शुक्लवासिनी	शुक्लवासिनी[17]
७०—१५	]	][48]
७१n–५	अभिशाप्य	अभिशप्य
७२—२०	रामगुणैरियम्	रामगुणैरयम्
७२n–२	नहाविपा	महाविपा
७५—१	गर्हयिष्यन्ति	गर्हिष्यन्ति
८१n–१	शोडशे	षोडशे
८४—६	श्वेतपुष्पाणि	श्वेतपुष्पाणि
८४—१५	प्रतीहारो	प्रतीहारो
८०—२०	दृश्यते	दृश्येते
८६—१६	रामसाहूय	राममाहूय
८८—१५	०योपमा	०योपमाः
९०—६	०घारिभि	०घारिभि[8]
९०—१५	महार्णेन	महाऽर्हेण
९५—१	०म	Om
९६—७	रामो महारथः	रामो महारथः
म अॅाजार्द .	हेमलोज	हेमलोजे

ओ३म्

वाल्मीकीय-रामायणम् ।

अयोध्या-काण्डम्

[प्रथमः सर्गः]

कस्यचित्त्वथ कालस्य राजा दशरथः सुतम् ।
भरतं केकयीपुत्रं समाहूयेदमब्रवीत् ॥ १ ॥
अयं केकयराजस्य पुत्रो वसति पुत्रक ।
त्वां नेतुमागतो वीर युधाजिन्मातुलस्तव ॥ २ ॥
तस्मान्मातामहं द्रष्टुमितोऽनेन सह त्वया ।
गन्तव्यं पुत्र पश्य त्वं पुरं मातामहस्य तत् ॥ ३ ॥
श्रुत्वा दशरथस्यैतद्भरतः केकयीसुतः ।
गमनेऽर्थे मतिं चक्रे शत्रुघ्नसहितस्तदा ॥ ४ ॥
श्रुत्वा दूतं तु संप्राप्तं कैकेयेभ्यो नृपात्मजम् ।
भरतं चाप्यनुज्ञातं राज्ञा राजीवलोचनम् ॥ ५ ॥

---

१ गु, दी, पं—कैकेयी० । पूं, चं, रा—कैकयी० । २ चं, गु, पूं, [illegible], दी, रा—इदं वचनमब्र० । पं—अब्रवीद्रघुनंदनः ३ चं, गु, पूं, [illegible]—कैकय० । पूं, दी, पं—कैकेय० । ४ रा—दानानुजगतो । रा—०लस्तदा । ६ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—नास्ति । ७ रा—दाशरथं [illegible]यं भरतः । ८ पूं—कैकय्यात्मजः । ९ दी—गमनाय । १० चं, गु, [illegible], रा—तु दूतं ११ कै—केकयस्य । पूं, कैकयेभ्यो । १२ चं, गु, पूं, पूं, [illegible], रा—चाप्यनुज्ञातं । १३ पूं, पूं, रा—राजा ।

प्रहृष्टा तत्र कैकेयी मुदा परमया युता ।
चिन्तयामास गमनं भरतस्य महात्मनः ॥ ६ ॥
गमने[14] च[15] मतिं चक्रे तदा तस्य शुभानना[15] ।
गृहे[16] मातामहकुले सन्न्यस्तं मन्यते[16] हि सा ॥ ७ ॥
न हि कश्चिद्विशेषो[17] मे[18] तस्मिन्वापीह[19] वा[19] गृहे ।
स त्वभ्यनुज्ञाय नृपः सुतं सुरसुतोपमम् ॥ [20]८ ॥
समानयच्च[21] कैकेयीं[22] तदा राजगृहं प्रति ।[23]
आपृच्छ्यैव[24] पितरं[25] सोऽयं[26] रामं चाक्लिष्टकारिणम् ॥ ९ ॥
मातृंश्चैव[27] महाबाहुः शत्रुघ्नसहितो ययौ[28] ।
अमात्यैर्बहुभिर्गुप्तो[29] रथैश्च शुभवाजिभिः[29] ॥ १० ॥
पादातेन[30] च मुख्येन वृतः शतसहस्रैः[31] ।
स पित्रा समुपाघ्राय[32] परिष्वक्तश्च बाहुना ॥ ११ ॥

---

१४ पं—गमनेथ । १५ च, कै—शुभात्मनः । १६ गु—०ऽस्त्युन्यस्तं । दी—०स्त्न्यस्तं । पूं-०सत्यसंमन्मते । पं—०मातामहे सम्यक् सन्यस्ते । रा—गृहं मातामहकुलं समानं मन्येत । १७ पूं-०दोषस्तु । १८ कै—तस्मिंश्चापिह । पं—तस्मिन्नास्तीह । १९ रा—वै । २० दी—नास्ति । २१ चं—सन्मानयंश्च । गु—समागतश्च । रा—संमानयंश्च । पूं—समानयंश्च । पूं—जगाम सह । २२ गु—कैकेय्या । पूं—कैकय्या । पूं—कैकेयी । २३ पं—स राजा प्रेषयामास तदा रातगृ[हं] प्रति । २४ दी—आपृष्ट्वा । २५ कै—नृपतिं । पं—कुशलं । २६ गु, पूं, दी, पं—धीमान् । २७ पूं-मातॄंश्चैव । २८ पूं, घासि (?) । २९ पूं—आमत्यै० । पं—अमन् मातुलगृहं शीघ्रगैश्चैव वाजिभिः । ३० गु—पदातिना । ३१ दी—सहस्रशैः । ३२ दी—समुपघ्रातः । गु, पूं, समुपाघ्रातः । चं, पूं, रा—समनुज्ञातः ।

भरतः सिंहविक्रान्तः शत्रुघ्नश्च महामतिः ।[33]
तं तदा प्रस्थितं[34] वीरं भरतं वदतां वरैः[35] ॥ १२ ॥
राजा दशरथो वाक्यमुवाच जनसंसदि ।[36]
प्रस्थितस्त्वं नरवर मातामहगृहं[37] शुभम्[37] ॥ १३ ॥
संदेशं शृणु मे वत्स त्वं[38] च कुर्याः समाहितः[38] ।
शत्रुघ्नसहितो गच्छ मातामहकुलं विभो[39] ॥ १४ ॥
स ते सहायो भविता स[40] त्वां[40] नित्यमनुव्रतः ।
तथापि च प्रियतरः प्राणेभ्योऽपि परंतप ॥[41] १५ ॥
आत्मवत्स त्वया भ्राता द्रष्टव्यो रक्ष्य एव च ।[41]
गुणपाशशतैर्बद्धस्त्वया हृदि परंतप ॥[41] १६ ॥
न जहाति च[42] शुश्रूषां कदाचिदपि[43] तेऽनघ[42] ।[41]
संदेक्ष्यामि[44] च[45] भूयस्त्वं संदेशं शृणु मे हितम्[45] ॥ १७ ॥

---

३३ गु, पूं—श्लोकान्तं दण्डद्वयचिह्नेन प्रदर्शितम् । ३४ पूं, दी-प्रणितं । पं—प्रयतं । ३५ गु, चं, पूं, दी, रा—वरं । ३६ रा—उवाच राजा राजर्षि सस्नेहं भरतं प्रति । ३७ चं, पूं, दी—०कुलं० । रा—०कुलं प्रति । पं—०गृहे शुभे । ३८ गु, पूं—तथा० । पं—तं कुर्याः सुसमाहितः । गु, दी, रा—०कुर्यात्० । ३९ पं—शिशो । ४० गु—यस्त्वां । ४१ केवल कै पं पाठः । ४२ पं—त्वया पुत्र । ४३ पं—सुश्रूष्योहमिव त्वया । ४४ पूं—संद्रक्ष्यामि । ४५ गु—च तं भूयः संदेशं तव यं हितं । पं—च ते भूयः संदेशं यत्त्वयाहितं । पूं, दी—तु (दी—च) तं भूयः संदेशं तव यद्धितं । पूं—च त्वां भूयः संदेश तव सि—तं । चं—त्वां भूय· संदेशस्तव सिध्यतां । रा—च तथापि संदेशं तव सिध्यतां ।

तव[46] चैव महाभाग[47] शत्रुघ्नस्य च मानद[48] ।
नित्यश[49] त्वया कार्या शुश्रूषा मातुलस्य वै[50] ॥ १८ ॥
आर्यकस्य[51] च ते[52] नित्यं[53] काले कालेऽभिवादनम्[54] ।
व्रतचर्या[55] च ते पुत्र कर्तव्या नियतात्मना[56] ॥ १९ ॥
ब्राह्मणैः सह धर्मात्मन् वासः सद्भिरुदाहृतः[57] ।
काले काले यथोक्तं[58] च ब्राह्मणानभिवादय ॥ २० ॥
ब्राह्मणा हि श्रियो मूलं पुरुषस्य शुभार्थिनः ।
सहायार्थे च कर्तव्याः[59] प्रणम्य नियतात्मना ॥ २१ ॥
सर्वविद्यान्तगा धन्या ब्राह्मणा मङ्गलावहाः[60] ।
देवाः पुत्रभवार्थं वै प्रजानां सुरसत्तमैः ॥ २२ ॥
प्रेषिता मानुषं[61] लोकं[62] भूमिदेवा इति श्रुतिः[63] ।

---

४६ गु—तथैव च । ४७ गु, पूं, दी, पं—महाप्राज्ञ । चं, पूं, रा-महाबाहो । ४८ चं—सौम्यद· । पूं—मानदा । ४९ पूं—नित्यं तस्य । पूं—नित्यं शस्य । ५० रा—तु । ५१ कै—आरण्यकस्य । पं-अर्यकस्य । रा—आर्यकर्म । ५२ कै—कर्तव्यं । ५३ गु, चं, पूं, दी, रा—कार्यं । ५४ गु, पूं—०वादिनं । ५५ गु, पूं-व्रतचर्याश्चते । दी—व्रतचर्यास्तुते । पं—ब्रह्मचर्यावते । रा—व्रतचर्या त्वया । ५६ चं, पूं, दी, रा—वै यतात्मना । गु—वै जितात्मना । ५७ गु—यद्देशाः समुदाहृतः । पं—यद्देशा· समुदाहरन् । पूं-वेदे याः समुदाहृता· । दी-वेदे याः समुदाहृताः । ५८ कै—ब्राह्मणांश्च यथोक्तमभिवादयः । गु, पूं—यथोक्ते—०वादये । दी, रा—०वादये । रा—यथोक्तं तु० । ५९ पूं, दी, पं—कर्तव्या । ६० चं—मंगला ब्राह्मणा सदा । गु, दी, पं, रा—मंगल्या ब्राह्मणाः सदा । पूं—मांगल्या ब्राह्मणा· सदा । ६१ चं—मानुषे । ६२ कै, चं—लोके । ६३ कै—श्रुताः । पूं—स्मृतिः ।

तेभ्यः सर्वाणि शास्त्राणि वेदांश्च वदतां वरे ॥ २३ ॥
अस्त्रं शस्त्रं महास्त्रं च विधिवत् पुत्र धारय ।
अश्वपृष्ठे रथे चैव व्यायामं कुरु नित्यशः ॥ २४ ॥
गन्धर्वविद्यासु तथा पारगो भव पुत्रक ।
अन्येष्वपि च शिल्पेषु यत्नः कार्यः सुत त्वया ॥ २५ ॥
क्षणमप्यासितुं पुत्र वृथा नार्हसि सर्वथा ।
कुशलप्रेषणं पुत्र दूतैः कार्यं सदैव मे ॥ २६ ॥
श्रुत्वा कुशलिनं त्वाऽहं संदेक्ष्यामि सबान्धवः ।
एवमुक्त्वा तु नृपतिर्भरतं बाष्पगद्गदम् ॥ २७ ॥
व्याजहार महातेजा गम्यतां मा विचारय ।
सोऽभिवाद्य जितक्रोधो राजानं शिरसा तदा ॥ २९ ॥
मातरं च महाभागः शत्रुघ्नसहितस्तदा ।
स ययौ नगरं धीमान् बलेन परिवारितः ॥ २९ ॥

---

६४ गु, पूं—रत्नानि । दी—दैवतं । पं—शेयं च । ६५ गु, पूं—वरः । ६६ पं—अर्थं शास्त्रं महार्थं । ६७ रा—विविधं । ६८ गु, पूं-पालय । दी—पारय । ६९ रा—आयामं । ७० चं, पूं, रा—नित्यदा । ७१ के—गांधर्व० । ७२ चं, पं, रा—तदा । ७३ चं, गु, पूं, दी, रा—परस्० ७४ । पं-०मध्यासितुं । ७५ गु-स्यातुं पुत्र । ७६ गु-नान्यथा । के, दी, रा—सर्वदा । ७७ पूं—कुशलं० । ७८ चं—चापि दूतैः कुर्याः सदैव मे । गु, पूं—दूतैः कुर्यांश्चैव सदैव मे । दी, रा—चापि दूतैः कार्यं सदैव हि (रा—मे) । ७९ दी—श्रुतं । ८० चं, दी—हि त्वा । गु, पूं, रा—हि त्वां । ८१ चं, पूं, दी, रा-नंदिष्यामि । ८२ गु, चं, पूं, दी, रा—स । ८३ रा—वाक्यग० । ८४ गु, पूं, दी—महाभागां । ८५ के—०स्तथा । ८६ गु—प्रययौ । ८७ पूं, दी—नगरीं ।

तथाऽनुगम्यमानश्च[88] जनैः[89] पुरनिवासिभिः ।
रामेण च महाभागो[90] लक्ष्मणेन च वीर्यवान् ॥ ३० ॥
पुरस्कृतो ययौ धीमान् प्रीतिस्निग्धौ[91] हि तस्य तौ[92] ।
अभिवाद्य रामं भरतः परिष्वज्य च लक्ष्मणम् ॥ ३१ ॥
न्यवर्तयत[93] धर्मात्मा तदा सर्वान्[94] सुहृज्जनान् ।
सुहृद्भिः कैश्चिदेवेह सह विद्वद्भिरात्मवान् ॥[95] ३२ ॥
अनुगम्यमानो विधिवत्प्रयातैः[96] कृतमङ्गलैः ।
निवर्त्य तं[97] जनं सर्व प्रययौ शीघ्रवाहनः ॥ ३३ ॥
पुरं[98] यातो महातेजा यमध्यास्ते स धर्मवित् ।
कथायोगेन सुहृदां मनोज्ञेन[99] महाभुजः[100] ॥ ३४ ॥
दिवसैः कैश्चिदेवाथ स[101] श्रान्तबलवाहनैः ।
सरितः[102] पर्वतांश्चैव व्यतिक्रम्य महाभुजः[103] ॥ ३५ ॥
उपस्थितो वै नगरं तदा[104] राजगृहं[105] विभुः ।
स[106] दूतं प्रेषयामास राज्ञो वृद्धस्य धीमतः ॥ ३६ ॥

---

८८ पूं-०मानैश्च । पं-तदानु० । ८९ चं, गु, पूं, दी, पं, रा-सर्वै । ९० रा-महायाहो । ९१ पूं-०स्निग्धस्य । पं-०स्निग्धा । ९२ पं-ते । ९३ गु-निवर्त्तयत । ९४ गु, चं, पूं, दी, रा-सर्वं सुहृज्जनं । ९५ रा-नास्ति । ९६ के-प्रयातहृत० । रा-०मंगत । ९७ चं, रा-सजनं । पूं-सज्जनं । गु, दी-स्वजनं । ९८ गु, चं, रा—पुरं मातामहजितं यदध्या० । रा—०जितं यमध्या० । पूं—पुरं मातामहजितां यामध्या० । दी—०मातामहयुतं यदध्या० । पं—०तेजामध्ये तेषा । ९९ रा—सुहृदामनुजने । १०० चं, रा—सहानुग । दी—सदानुग । १०१ गु—स भिन्नबल० । पूं—अथांतबल० । दी-सभ्रातबल० । १०२ च—स नदी- । पूं, दी, पं—स नदी । १०३ चं, गु, पूं, दी, रा-सहानुग । १०४ गु-महा- । १०५ पं, रा-राजागृहं । १०६ गु-संगतं ।

आर्यकस्य महातेजा भरतः प्रियदर्शनः ।
श्रुत्वा दूतस्य वचनं स[107] राजा सह[108] मन्त्रिभिः ॥ ३७ ॥
प्रवेशयामास तदा भरतं नगरोत्तमम् ।
पुष्पैर्गन्धैश्च धूपैश्च सर्वतः समलङ्कृतम् ॥ ३८ ॥
राजमार्गस्तदाकीर्णो जलेन च समुक्षितः ।
समुच्छ्रितपताकं च तूर्योत्कृष्टनिनादितम्[109] ॥[110] ३९ ॥
वेश्याभिर्वारमुख्याभिर्वाद्यानुगतशोभितम्[111] ।
पुरतो नृत्यमानाभिर्भरतस्य महात्मनः ॥ ४० ॥
नरमुख्यैश्च[112] बहुभिः सूतमागधवंदिभिः[113] ।
स्तूयमानो यथान्यायं भरतः प्रविवेश ह ॥ ४१ ॥
प्रविश्य च [114]गृहं रम्यमभिवाद्य च मातुलम् ।
वृद्धं मातामहं चैव तथैव नृपयोपितः[115] ॥ ४२ ॥
स वै मातामहगृहे सर्वकामैः सुपूजितः[116] ।
उवास स सुखी धीमान् कञ्चित्[117] कालं नृपात्मजः ॥ ४३ ॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतगमनं
नाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

---

१०७ गु—सह राजा सह । पूं—स च राजार्थं । १०८ पं—उपस्थितपताकाश्च । १०९ पूं—भेर्योत्कृष्टविनोदितम् । ११० गु—"समुच्छ्रित०" इत्यारभ्य श्लोकार्द्धस्य पाठोऽग्रिमाच्छ्लोकानन्तरं दृश्यते, अग्रे च "राजमार्ग०" इत्यस्यार्द्धस्य । १११ गु—०भिर्ली-स्यानुगतशोभितः । ११२ पं—०मुख्यैः स । ११३ गु—स्तुतो मागध० । ११४ के, चं, रा—गृहे रम्ये अ० । ११५ कै—वृद्धयोपितः । ११६ चं, पूं, रा—सुसत्कृतः । पं—स पूजित. । गु—पुरस्कृतः । दी—सुसंस्कृतः । ११७ गु—किंचित् ॥

[द्वितीयः सर्गः]

कदाचिद्भरतः श्रीमान् वृद्धं मातामहं नृपम् ।
अभिवाद्य महात्मानमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
आचार्याननुगच्छेयं भवतोऽनुमते[1] प्रभो ।
लेख्यसंस्थानशब्दज्ञान्नीतिशास्त्रार्थपारगान्[2] ॥ २ ॥
[विविधासु[3] च विद्यासु सुनिष्ठान्[4] ब्राह्मणानपि ।][5]
हस्त्यश्वरथयानेषु तथैव परिनिष्ठितान्[6] ॥ ३ ॥
गन्धर्वविद्याकुशलान्नानाशिल्पविदस्तथा ।[7]
नरान्विनीतान्[8] वृद्धान् वै[9] चेत्तुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ ४ ॥
ब्राह्मणान्वेदविदुषो वृद्धान्[10] परमपूजितान् ।
व्यादिष्टान् पुरुषांस्तत्र सर्वविद्याविशारदान्[11] ॥ ५ ॥

---

१ चं—भवतां प्रीतये । रा—भवतानुमते । २ पूं, पं—०शास्त्रस्यपा० । दी—०शास्त्रानुपा० । रा—०शब्देच ज्योतिः शास्त्रस्यपा० । ३ पूं—विविधायुध— । ४ चं—निष्णातान्० । दी—शिल्पजातिषु चापरान् । पं—शिल्पजातिषु चापरान् । ५ कै—नास्ति । पं—केनचिदन्येन उत्तरपार्श्वे लिखितम् । 'राजविद्यान्वितान्वृद्धांस्तै (न्ये) तुमीच्छामि तत्त्वतः ।' इत्यप्यग्रे लिखितं वर्त्तते । ६ चं, गु, पूं, रा—विनीतान् हस्तिशिक्षासु हयपृष्ठे तथैव च । दी—नास्ति । ७ चं, गु, पूं, रा—गांधर्वेषु (गु—गांधर्वासु) च विद्यासु शिल्पजातिषु चापरान् (रा—पारगान्) । कै—गांधर्व० । दी—नास्ति । ८ गु—राजविद्यान्वितान् शुद्धान् । पूं—राजविद्यान्वितान् वृद्धान् । दी—०वृद्धांश्च० । ९ पूं—चेत्तुमि० । १० गु—प्राज्ञान् । ११ चं, गु, पूं, दी, रा—भवतेच्छामि शिक्षार्थं मम नित्यशः (दी—नित्यतः) ।

*उपसेवितुमिच्छामि श्रेयोऽर्थी दृढमात्मनः ।
*भवतोऽनुमते राजन्प्रदेष्टुं तान्ममार्हसि ॥ ६ ॥[12]
श्रुत्वैवं नृपतिर्वाक्यं कैकेयो भरतस्य सः ।[13]
व्यादिदेश महृष्टात्मा तस्याचार्यान्विपश्चितः ॥[14] ७ ॥
*तानुपास्य प्रयत्नेन भरतः केकयीसुतः ।[15]
*वेदवेदांगशास्त्राणां पठने तत्परोऽभवत् ॥[16] ८ ॥[17]
सर्वविद्यासु कुशलान् परं हर्षमवाप ह ।
प्रदाय शिष्यमात्मानं तेभ्यः स रघुनन्दनः ॥[18] ९ ॥
आचार्येभ्यस्ततो[19] विद्यां धर्मेणाधिजगाम ह ।[20]
*जग्राह वेदवेदांगशास्त्राणि गुणवृद्धये ॥[21] १० ॥
सो[22]ऽनुपूर्वेण तान्सर्वान्[23] परिजग्राह सुव्रतः ।
सह भ्रात्रा महातेजाः शत्रुघ्नेन यशस्विना ॥ ११ ॥[24]
एवमाचार्यहस्तेषु वर्तमानो नरोत्तमः ।

---

१२ चं, गु, पूं, दी, रा—नास्ति । १३ चं, गु, पूं, दी, रा—
श्रुत्वा तु भरतस्यैतद्वचः परमहृष्टवान् ।
आज्ञापयत्तदा राजा यदुक्तं भरतेन वै ॥
१४ पं—च यतेन । १५ पं-ग्रहणे । १६ चं, गु, पूं, दी, रा—नास्ति । १७ चं, गु, पूं, दी, रा—श्रुत्वा तु भरतो राजा व्यादिदेश पुरस्तांस्तदा । इत्यधिकमत्र । १८ पं—तान् सर्वविद्याकुशला० । कै—०कुशलाः । १९ गु, पूं, दी रा—०स्तदा विद्यां । चं—०स्तदा विद्या । २० दी—०भिजगाम् ।
२१ चं, गु, पूं, दी, रा—नास्ति । २२ कै-आनुपूर्व्येण ताः सर्वाः । २३ पं—भ्राता । २४ पूं—वर्तमानस्य नरोत्तम । दी—हायतेन्मनः रघूत्तमः । पं—वर्तमाने रघुनन्दन ।

रममाणो नरव्याघ्रः परं हर्षमवाप ह ॥ १२ ॥[25]
शुश्रू[26]षते यथान्याय्य[27]माचार्यं नियतेन्द्रियः ।
अर्थमानप्रदानाभ्यां यथाकालमतन्द्रितः ॥ १३ ॥
ज्ञानाभ्या[28]से प्रवृत्तस्य विज्ञानेऽभिरतस्य[29] च ।
एवं कालो व्यतिक्रामत्[30] सुमहान् भरतस्य च[31] ॥ १४ ॥
यदा ज्ञानेषु[32] निष्ठां[33] वै प्राप्तवान् रघुनन्दनः ।
ततोऽस्य बुद्धिः संजाता धर्मं श्रोतुं सनातनम् ॥ १५ ॥
ब्राह्मणेभ्योऽथ वृद्धेभ्यो[34] भिक्षुकेभ्यश्च[35] धार्मिकः ।
ये चान्ये च[36] महाभागा धर्म्मेषु कुशला[37] द्विजाः ॥ १६ ॥
तान् सर्वान् स महातेजाः सेवते[38] धर्मकारणात् ।[39]
अन्तरात्मनि धर्म्मेभ्य[40] संततं पर्यनर्त्तत ॥ १७ ॥
कथाया धर्मयुक्तायां[41] रमते रघुनन्दनः ।

---

२५ गु-पुस्तके श्लोकत्रय नास्ति। "पर हर्षमवाप ह" इति श्लोकार्द्ध दृष्टि प्रमादादग्रेऽयलोक्य मध्यस्थश्लोकत्रय सम्भवत परित्यक्तम् । २६ च, दी, रा—शुश्रूपति । २७ गु—यथायोग्य आचार्यान्। दी—०मात्चार्यान्। २८ रा—ज्ञानाभ्यास० । २९ कै—विज्ञानाविरतस्य च । प—विज्ञानाभिरतस्य च । गु—विज्ञान विरतस्य च । ३० के—व्यतिक्रात । पू—विचक्रमत् । रा—०व्यतिकामन्। ३१ पू—तु। रा—ह । ३२ गु—ज्ञाने सुनिष्ठा। पू—०निष्ठा । ३३ गु—यतिभ्यश्च। पूं—०थ विप्रेभ्यो। ३४ गु—०भ्योऽथ दी, रा—०भ्योथ। ३५ च, गु, पूं, रा—ऽपि। ३६ दी—कुब्जा।पू—कुशल०। ३७ गु—ये च धर्मपरायणा । ३८ गु—तपोभिनिरता नित्य सेवते धर्मकारणात्। १२ इत्याधिकम्। ३९ च गु पूं दी, रा—धर्मांस्य। ४० पूं—न नत पर्यवस्यते ॥१५॥ ४१ गु-धर्मवृत्ताया।

तपोऽहिंसारतौ नित्यं ये च धर्मपरायणाः ॥ १८ ॥
तान् सर्वान् स महातेजा उपास्ते निभृतः शुचिः ।
शास्त्राणि च महाप्राज्ञो नित्यशो गुणवन्त्यपि ॥ १९ ॥
वेदविद्यासु चान्यासु कुशलः सर्वशास्त्रवित् ।
कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यते धर्मसेवनात् ॥ २० ॥
तस्य बुद्धिः समभवत् पितुः सम्प्रेक्षणं प्रति ।
संदिदेश तदा दूतं ब्राह्मणं शुभलक्षणम् ॥ २१ ॥
अयोध्यां गच्छ भद्रं ते दूत शीघ्रं नृपोत्तमम् ।
पितरं कुशलं ब्रूहि मातॄश्च भ्रातरौ तथा ॥ २२ ॥
पृष्ट्वा च कुशलं तेभ्यो वाच्यो दशरथः प्रभुः ।
मातामहगृहे तात वर्तते त्वदनुग्रहात् ॥ २३ ॥
यथाऽऽज्ञप्तं कृतं तात महत्तपं शुभं प्रियम् ।
स हि तेनाभ्यनुज्ञातो भरतेन यशस्विना ॥ २४ ॥
दूतः परमसंहृष्टः प्रयातो येन सा पुरी ।
अयोध्यां नगरीं रम्यां प्रविवेश महातपाः ॥ २५ ॥

---

४२ फै—तपांसि सेवते । पं—ऽहिंसानायतो । ४३ फै—धर्मे० । ४४ फै—निभृतो भृशम् । पं—निभृतो शुचि । गु—च भृशं शुचिः । दी—निर्वृत्तः० । रा—निर्वृतः० । ४५ गु—चैव सहसा । दी—०महाभागो । ४६ गु—तेजस्वी । ४७ गु—शास्त्राणि ते । पूं गुणवत्यपि । दी, ग गुणवानपि । ४८ गु, दी, रा—संप्रेषणं । ४९ पूं—तथादं गं । ५० पूं—शंसितव्रतं । ५१ फै—नृपोत्तमम् । ५२ पूं—भ्रातरं । ५३ गु, पूं—वर्तता । चं—वर्त्तेहं । ५४ पूं—सर्व । ५५ पूं—मया मय । ५६ पं, फै—०हृतं । रा—हृतं शुभं । ५७ पं—आशु । ५८ पूं—महात्मना । ५९ फै—प्रययौ । ६० पूं—यत्र । ६१ गु—मनुना नि-

यां[62] स[62] राजीवताम्राक्षो[62] राजा दशरथोऽन्ववसत्[63] ।
प्राप्तयानर्थं[64] तां दूतो[64] भरतस्यानुशासनात् ॥ २६ ॥
न्यवेदयन्त[65] तद्राज्ञे[66] मातृभ्योऽथ द्विजस्तथा[67] ।
कृतकृत्यो हि[68] राजेन्द्र भरतः सत्यविक्रमः ॥ २७ ॥
धनुर्वेदे च वेदे च नीतिशास्त्रे[69] च[69] पारगः ।
अर्थशास्त्रे[70] च[70] कुशलो व्यायामे[71] च[71] तथैव हि[72] ।
हस्तिशिक्षासु निष्णातो[73] रथशिक्षासु[74] निष्ठितः[74] ॥ २८ ॥
आलेख्ये चैव लक्ष्ये[75] च लंघने प्लवने तथा ।
ज्योतिर्गतिषु निष्णातस्तव वाक्येन नोदितः[76] ॥ २९ ॥[77]
एवंविधानि कर्माणि कृत्वा[78] च सुबहून्यपि ।
कृतार्थो भरतो राजंस्त्वत्सकाशमुपैष्यति[79] ॥ ३० ॥

म्मितां पुरा । ६२ गु—या संजीवना प्राक्षो । पूं—यां च० । ६३ गु—ऽन्यगात् । पूं, दी, पं—न्ववशात् । ६४ गु—प्राप्तयानवता ह्यथे । पं तान्विप्रो । ६५ गु—निवेदयत । ६६ गु, पूं, दी—तद्राज्ञो । चं—न्यवेदयन्तसद्राज्ञे । ६७ गु, दी, रा, पं—०तदा । पूं—०तत । ६८ चं, गु, दी—थ । पूं—ह । ६९ चं रा—०शास्त्रेषु । ७० च, रा—०शास्त्रेषु । ७१ रा—०यामेषु । ७२ चं, गु, दी—च । ७३ चं—कुशलो । रा—निपुणो । कै—निष्णात । ७४ चं, रा—०शिक्षा विशारद । पूं—०शिक्षा विपश्चित । दी—तव वाक्येन नोदित । ७५ पं—लक्ष्ये । गु, पूं, रा—लेख्ये । चं—लेखे । ७६ चं, पूं, पं—चोदित । ७७ दी—नास्ति । स्पष्टोऽयं लेखकप्रमादः । ७८ चं, गु, पूं, दी, रा—कृतानि । पं—कृत च । ७९ चं, गु, पूं, दी, रा—०मुपेष्यति । पं—०मपेक्षते ।

श्रुत्वा राजा प्रहृष्टात्मा दूतस्य वचनं तदा ।
कौशल्याद्याश्च तौ देव्यस्तथोभौ रामलक्ष्मणौ ॥ ३१ ॥
प्रतिसंश्रुत्य नृपतिस्तं दूतं भरतस्य तु ।
अभवन्मुदितः श्रीमांस्तदा दशरथो नृपः ॥ ३२ ॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतदूतागमनं
नाम द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥



८० गु—प्रहृष्टमूत् । ८१ गु—श्रुत्वं । ८२ चं, डी—देव्यस्ता तथो० । गु, पं—देव्यश्च तथो० । पं-देव्यो धै तथो० । ८३ चं, रा—वचो (रा-वाचो) दूतस्य धै तदा । गु, डी—०भरतस्य धै । पूं—०भरतस्य च । ८४ गु—०गमा । ८५ गु—०ध्यर्थान् ।

[तृतीयः सर्गः]

गतेऽथ भरते रामो लक्ष्मणश्च महामतिः[1] ।
पितरं देवसङ्काशं पूजयामास्तुस्तदा ॥ १ ॥
पितुराज्ञां रघुश्रेष्ठौ[2] कृत्वा परमहर्षितौ ।
पौरकार्याणि सहितौ चक्रतुः कृत्स्नशस्तदा ॥ २ ॥
मातॄणां सर्वकार्याणि कृत्वा च रघुसत्तमौ[3] ।
गुरोश्च[4] गुरुकार्याणि काले काले त्ववेक्षताम्[5] ॥ ३ ॥
[राजा दशरथः प्रीतो[6] वैदिकां ब्राह्मणास्तथा[7]] ।[8]
रामस्य शीलवृत्ताभ्यां सर्वे[9] च विषये जनाः ॥ ४ ॥
तुष्टुवुः[10] सहिताः सर्वे देवकल्पस्य धीमतः[11] ।
अथ राजा दशरथः सस्मार प्रेषितौ सुतौ ॥ ५ ॥
उभौ भरतशत्रुघ्नौ किञ्चिच्छोको[12] बभूव ह[13] ।
सर्व एव तु तस्येष्टाश्चत्वारः पुरुषर्षभाः[14] ॥ ६ ॥
एकस्मादभिनिर्वृत्ताः[15] शरीरादिव बाहवः ।
तेषामिष्टतमो लोके रामो रतिकरः पितुः[16] ॥ ७ ॥

---

१. चं, रा—महाबलः । गु—महीपतिः । २ दी—नरश्रेष्ठौ । ३ पू—रघुनंदनौ । ४ कै—गुरुणां । ५ चं—न्य(न्च)वेक्षतां । कै—त्त्ववेक्षतां । गु—त्यपेक्षत । पू—न्ववैक्ष्यतां । दी, रा—न्ववेक्षतां । ६ गु—तस्य । ७ गु—ब्राह्मणा नैगमांस्तथा । पू—ब्राह्मणा नैगमास्तदा । दी, रा—ब्राह्मणा नैगमास्तथा । ८ चं—नास्ति । ९. गु, पू—तथैव । १० गु—तुतुषुः । रा—रमतुः । ११ चं, गु, पू, दी, रा—महातेजाः । १२ दी—०छोको । १३ चं, दी, रा—स्तः । १४ पं—पुत्राश्चत्वारः पुरुषर्षभ । १५ पू—०पिनिर्वृत्ताः । कै—०न्निवृत्ता विष्णो । पं—०न्निवृत्ता विष्णोः । १६ गु, दी—प्रभुः ।

स्वयंभूरिव भूतानां बभूव गुणवत्तमः ।
स हि नित्यं प्रशान्तात्मा मृदु पूर्वं च भाषते ॥ ८ ॥
नित्यं श्रेष्ठगुणैर्युक्तः प्रज्ञावान् पार्थिवात्मजः ।
बहिश्चर इव प्राणो बभूव गुणतः पितुः ॥ ९ ॥
शीलवृद्धान् वयोवृद्धान् ज्ञानवृद्धांश्च सज्जनान् ।
कथयामास तान्नित्यमस्त्रयोग्यान् कथान्तरे ॥ १० ॥
कल्याणाभिजनः साधुरदीनः सत्यवागृजुः ।
वृद्धैरपि विनीतश्च समर्थो धर्मनैपुणे ॥ ११ ॥
धर्मशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान् धर्मकोविदः ।
स्मितपूर्वाभिभाषी च कृत्येषु व्यवसायवान् ॥ १२ ॥

सानुक्रोशः कृतज्ञश्च त्यागी संयमकालवित्[34] ।
दृढभक्तिः स्थिरप्रज्ञो गुणग्राह्यनसूयकः[35] ॥ १३ ॥
निस्तन्द्रीरप्रमत्तश्च[36] निर्दोषः[37] परदोषवित् ।
परिग्रहानुग्रहयोर्यथान्यायमवेक्षिता[38] ॥ १४ ॥
कथञ्चिदुपकारेण कृतेनैकेन कस्यचित् ।
न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया[39] ॥ १५ ॥
अर्थकर्माण्युपायज्ञो[40] धर्मेणावेक्षते[41] सदा ।
श्रैष्ठ्यं[42] चार्थप्रदानेन प्रीतो[43] व्यायामिकेषु[44] च ॥ १६ ॥[45]
अर्थधर्मावसक्तश्च सुखतत्त्वे च नालसः ।[46]
वैहारिकाणां[47] कार्याणां विज्ञातार्थो[48] यथार्थवित् ॥ १७ ॥
आरोढा[49] च विनेता च योक्ता[50] वारणवाजिनाम्[51] ।

---

३४ पूं—समयकाल० । ३५ चं, दी, पं—गुणग्राही न सूयकः । गु—०ह्यनुसूयकः । ३६ गु—निस्तंद्री चाप्रमत्तश्च । ३७ गु, पूं, दी—स्वदोष० । ३८ चं, पूं—परिग्रहावग्रहयो० । पूं—०च वेदिता ॥ १६ ॥ दी—०मवेक्षते । गु—परिग्रह स्वसैन्यं हि शत्रुसैन्यमवग्रहः ॥ १४ ॥ ३९ गु—शतमथल्पवित्तया । ४० गु, पं—आर्यकर्मण्युपा० । पूं, रा—अर्थकर्मण्युपा० । दी—आयुः फर्मण्युपा० । ४१ गु—०धस्यते । पूं, पं—०वेक्ष्यते । दी—०वेक्षिता । ४२ कै—श्रेष्ठः । पं—श्रेष्ठः । ४३ कै—प्रातौ । ४४ दी—व्यायामकेषु । ४५ गु—नास्ति । ४६ गु—अर्थधर्म्मावसंक्लेश्य मुखतंद्रो न चालयं । १६ । चं, रा—अर्थधर्मावसंक्लेश्य (रा—०श्यः) सुखतत्त्वेन नालसः (रा—लालसः) । पूं—अर्थधर्मावसंक्लिष्य मुखतंत्रो न चालसः । पं—०तत्वो न धामवत् । दी—अर्थकामावसंक्लेश्य सुखतंत्रो न चालसः । ४७ गु—वैहारिणां च । ४८ चं, रा—विज्ञानार्थो तथार्थवित् । ४९ चं, रा—आरोढा । ५० चं, गु, पूं, दी, रा—युक्तो । ५१ पूं—यै गजवाजिनां । रा—वानरवा० ।

धनुर्वेदविदां शास्त्रेलोकानामतिसम्मतः[52] ॥ १८ ॥
अभियाता प्रहर्ता च सेनानयविशारदः[53] ।
अप्रधृष्यश्च संग्रामे सर्वैरपि[54] सुरासुरैः ॥ १९ ॥
अनसूयुर्जितक्रोधो[55] न द्वेष्टा[56] न च मत्सरी ।
न चावमन्ता भृत्यानां न च भृत्यवशानुगः ॥ २० ॥
सत्यवादी महोत्साहो वृद्धसेवी जितेन्द्रियः ।
मितवागपि कार्येषु वक्ता वाचस्पतेः समः ॥ २१ ॥
लोकप्रियत्वे चन्द्रस्य वसुधायाः क्षमागुणैः[57] ।
बुद्ध्या बृहस्पतेस्तुल्यो वीर्ये च स्याच्छचीपतेः[58] ॥ २२ ॥
लोके[59] संख्यायमानानां प्राज्ञः[60] सर्वधनुष्मताम्[61] ।
वीर्यवांश्च च वीर्येण महता तेन विस्मितः ॥ २३ ॥
स तैः सर्वैः प्रजाकान्तैः[62] प्रीतिसञ्जननैः पितुः ।
गुणैर्विरुरुचे रामो दीप्तैः[63] सूर्य इवांशुभिः ॥ २४ ॥
तमेवं वृत्तसम्पन्नं रामं सत्यपराक्रमम् ।
लोकपालोपमं नाथमकामयत[64] मेदिनी ॥ २५ ॥

---

५२ चं, गु शास्त्रे लोकेऽतिरथ सम्मतः । पूं—शास्त्रे लोकाभिरथ संगतः । च, दीं, रा—शास्त्रे (रा—श्रेष्ठो) लोकेऽतिरथ सम्मतः । ५३ गु—सेवा-नय० । पूं—सेवानीपवि० । ५४ चं, गु, पूं, दी, रा—युद्धैरपि । ५५ पूं—अनुसूयु० । गु—अनुसूयो । ५६ चं, गु, पूं, दी, रा, पं—दुष्टे । ५७ गु—क्षमा० । पूं, पं—क्षमागुणे । ५८ कैं—चैव शचीपतेः । गु—०पतिः । ५९ कै, पं—०संख्यायमाणां च । पूं, दी—लोकसंख्या० । रा—०संख्यो-ममानानं । ६० गु—[illegible]य० । चं, रा—प्रात० । पूं—प्रायः । ६१ गु—०धनुभृतां । ६२ पं—प्रजाकामैः । ६३ गु, पूं, दी, रा, पं—दीप्तः । ६४ गु—रामं अकामयत् ।

अनुरक्ताः[65] प्रजास्तं[65] हि सानुक्रोशं[66] प्रजाहितम्[66] ।
[67]तं प्रेक्ष्य[67] सुमहोत्साहं[68] शक्तं च परिपालने ॥ २६ ॥
वृद्धैः[69] [70]श्रुतगुणोपेतैराप्तैर्धर्म्मार्थतत्परैः ।
सोऽतिबाल्यात्प्रभृत्येव[71] नृपतिः समयोजयत् ॥ २७ ॥
स्वभावेन विशुद्धेन[72] सर्वशास्त्रागमेन च ।
[73]अभवत्सर्वभूतानामधिको गुणवत्तया[74] ॥ २८ ॥
तमेवं बहुभिर्युक्तं गुणैरनुपमं सुतम्[75] ।
प्रेक्ष्य[76] राजा दशरथश्चिन्तयामास तं प्रति ॥[77] २९ ॥
तस्य बुद्धिरियं जाता वृद्धस्य[78] चिरजीविनः ।[79]
यौवराज्येऽभिषिञ्चामि सुतं राममिति[79] स्थिरा[80] ॥ ३० ॥
सा तस्य परमा प्रीतिर्हृदये पर्यवर्त्तत[81] ।
कदा [82]रामं सुतं द्रक्ष्याम्यभिषिक्तमिति[83] [83]प्रभोः ॥ ३१ ॥

---

६५ गु—अनुरक्तं प्रजानां । ६६ पूं—०क्रोशप्रजाहिते । ६७ कै—स वीक्ष्य । गु—संप्रेक्ष्य । ६८ गु-सुमनोत्साहं । ६९ चं, रा-बुद्धि । पं-वृद्धि० । ७० चं, पूं, दी, रा—श्रुति० । ७१ चं, पूं, दी, रा—स हि या० । गु—तं हि या० । पं—स त या० । ७२ गु—विशुद्धे(द्धेः?)न० । पं—अति० शुद्धेन । ७३ चं, रा—सोऽभवत् । ७४ पं—०वृत्तया । रा—०वत्तया । ७५ चं—०रनुपमैः सुतं । पं—०रनुपमै सुतं । गु—०रनुपमैर्युतं । पूं—०रनवद्यैः सुतं । दी—रनवमैः सुतं । रा—०रनुपजीविनः । ७६ गु—प्रेक्ष्य । ७७ रा—नास्ति । ७८ कै—वृद्धस्याचिर० । ७९ चं-०मति स्थिरं । रा—०मिति स्थिता । गु—०स्थिरं । ८० गु—या । ८१ गु—परिवर्त्तते । ८२ चं, रा—राममहं । ८३ गु—द्रक्ष्ये ह्यभिषिक्तमिति प्रभुः । पूं—द्रक्ष्यमभिषिक्तमिति प्रभु० । दी, पं—रा—०प्रभुः ।

वृद्धिकामो हि[84] राष्ट्रस्य[85] सर्वभूतानुकम्पकः[86] ।
मत्तः प्रियतरो[87] लोके पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥ ३२ ॥
यमशक्रसमो[88] वीर्ये बृहस्पतिसमो मतौ ।
महीधरसमो धृत्यां[89] गाम्भीर्ये सागरोपमः ॥ ३३ ॥
महीमहमिमां[90] कृत्स्नामधितिष्ठन्तमात्मजम्[91] ।
अनेन वयसा दृष्ट्वा जीवन्स्वर्गमवाप्नुयाम्[92] ॥[93] ३४ ॥
[कुल[94]क्रमागतं राज्यं क्रम एवं नियुज्य हि[95] ।][96]
तं[97] समीक्ष्य महाराजः समुपेतं सुतं[98] गुणैः[99] ।
सह[100] निश्चित्य सचिवैर्यौवराज्यम[1]मन्त्रयत् ॥ ३५ ॥
दिव्यं चैवान्तरिक्षं च भौमं चोत्पातजं[2] भयम् ।
आचचक्षे स[3] मेधावी शरीरे[4] चात्मनो[4] जराम् ॥ ३६ ॥[5]

---

८४ पूं—ह । ८५ पं—राज्यस्य । ८६ चं—०कंपनः । ८७ फै, दी—प्रियतमो । रा—प्रियङ्करो । ८८ फै—०क्रोपमो । ८९ गु—धीर्ये । पूं, पूं, दी—धृत्या । पं—धृत्या । रा—भूत्या । ९० गु—महीमिमामहं । ९१ गु—०मधिष्ठित तमात्मजं । पूं—०मभिषिक्तं तमा० । दी, पं—०मभितिष्ठं० । रा—०मभिषिक्तं तथा० । ९२ पूं—०मवाप्स्यान् । ९३ चं, पूं, रा—नास्ति । ९४ चं, पूं, रा—कुल । ९५ पं—मेव हि युंक्ष्महि । ९६ फै—नास्ति । ९७ गु—समीक्ष्य स तदा राजा । रा—०महाराजा । ९८ गु—गुणैः सुतं । दी—समुपैतं गुणैः । ९९ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—न हि । १०० चं, पूं, रा—संमंत्र्य । १ पूं—०यश्च राज्यम् । २ गु—घोत्पातकं । पूं—चौत्पातिकं । ३ गु, दी—अथ । पूं, पूं, रा—ह । ४ चं, गु, पूं, रा, पं—शरीरेणात्मनो । ५ गु, पूं, पूं, दी, रा—

एवं चिंतयतस्तस्य रामं प्रति महात्मन ।
सततस्य भावं भावज्ञा विज्ञाय ज्ञानकोविदा[1] । ३७
गुरवो मत्रिणश्चैव परां प्रीतिमपागमन् । इत्यधिकमस्ते ।

---

१ पं, दी—०मवाप्नुयन् । पूं, रा—प्रीतिं गता हि से ।

ततस्ते मन्त्रयामासुर्यौवराज्यमभीप्सवः ।
*तस्य धर्मार्थविदुषो मानमाज्ञाय सर्वशः ॥[6] ३७ ॥
*ब्राह्मणा मन्त्रिमुख्याश्च सर्वे वचनमब्रुवन् ।[6]
पूर्णचन्द्राननस्यास्य सदृशस्यात्मनो गुणैः ॥ ३८ ॥
लोकप्रियत्वं[9] रामस्य बुध्यते[10] यं[10] महात्मनः ।[11]
*आत्मनश्च प्रजानां च श्रेयसा च प्रियेण च ॥[12] ३९ ॥
*काले[13] कांक्षति संयोगं तेन त्वरति भूमिपः ।[12]
अर्हत्येष[14] हि[15] धर्मात्मा यौवराज्यं महाबलः ॥ ४० ॥
समर्थः[16] सर्वकार्येषु[16] शक्रतुल्यपराक्रमः ।[17]
एवं सम्मन्त्र्य सहिता ऊचुर्दशरथं नृपम् ॥ ४१ ॥
राजेन् धर्मेण धर्मज्ञ[19] पृथिवी तेऽनुपालितां ।
गतश्च सुमहान् कालो वृद्धश्चासि[21] नरेश्वरं ॥ ४२ ॥

---

६ चं, गु, पुं, पूं, दी, रा—नास्ति । ७ पूं—पूर्णचंद्रनिभस्यास्य । ८ पूं—सदृस्य नंदिनो । ९ गु—लोकप्रियस्त्व । पुं, पूं, दी—लोकेप्रि० । १० गु, पुं—बुध्यते यं । पूं—बुध्याय तं । दी—बुध्वा ते च । ११ पं—लोकप्रियत्वे रतिमान् भूमिपाल सुखावहं । १२ पं—नास्ति । १३ कै—लोके । दी—काल । १४ के, प—अर्हत्येव । १५ गु—सुधर्म्मात्मा । १६ चं—सर्वकार्येषु कुशल । १७ पूं—०क्रमे । १८ च—पालने विष्णुतुल्यो हि साक्षाद्विष्णुरिवेश्वर । इत्यधिक "०पराक्रम" इत्यनन्तरम् । १९ के—राज० । चं, पूं—राजधर्मेण० । चं—०धर्मेण भूप । पं—०धर्मज्ञ धर्मेण । २० के—तनुपालिता । गु—चानुपा० । २१ चं, पूं—वृद्धस्याद्य । पूं—वृद्धस्यद्य(द्य ?) दी, रा, पं—वृद्धोस्यद्य । गु, पुं, पं—नरेश्वर ।

स रामं युवराजानमभिषिञ्चस्व राघवं[22] ।
तेषां तु[23] वचनं श्रुत्वा मनोज्ञं हृदयस्थितम्[24] ॥ ४३ ॥
अनिच्छन्निवं[25] जिज्ञासुस्तान्[26] जनान्[26] प्रत्युवाच सः[27] ।
कथं[28] नु[28] मयि धर्मेण पृथिवीमनुशासति ॥ ४४ ॥
भवन्तः कर्तुमिच्छन्ति[29] युवराजं ममात्मजम् ।
ते तमूचुर्महात्मानं[30] वृद्धं दशरथं नृपम् ॥ ४५ ॥
बहवः कृतकल्याणा[31] गुणा[31] पुत्रस्य सन्ति ते ।[32]
पुत्रस्ते देवसदृशः स्वाध्यायाचारसंयुतः ॥[32] ४६ ॥
प्रियकृत् प्रियवादी च प्रजानां पितृमातृवत् ।[33]
बहुश्रुतानां वृद्धानां ब्राह्मणानामुपासिता ॥ ४७ ॥
*दुर्वृत्तानां नियन्ता च विनीतप्रतिपूजकः ।[33]
न ज्ञातिषु न मित्रेषु[34] न च जानपदेष्वपि ॥ ४८ ॥
जनोऽस्त्यगुणवादी यो रामस्य भुवि भूपते[35] ।[36]
सवृद्धबालाः पौरास्ते तथा जानपदा जनाः ॥[36] ४९ ॥
गुणानुरक्ता राजेन्द्र राममिच्छन्ति भूपतिम्[37] ।

---

२२ चं, गु, पूं, दी, रा—राघवं । २३ गु—सद् । २४ गु—हृदयेप्सितं । २५ चं—अनिच्छन्निव । गु-०च्छन्नपि । पूं-अनिच्छन्निव । २६ रा-तं जनं । २७ चं, पूं, रा—ह । २८ पूं, दी, रा, पं—कथं तु । गु—अजस्र (०स्रं?) २९ पूं, पूं, रा—कृतमि० । गु—कृतमिछंतु । ३० ०र्वयो वृद्धा । ३१ चं, पूं, रा—कृतकल्याणगुणा । ३२ दी—नास्ति । ३३ गु—नियंता दुर्विनीतानां च विनीत॰ प्रति० । चं, पू, पूं, दी, रा—नास्ति । ३४ पं—वृद्धेषु । ३५ दी—भूमिप । ३६ गु—नास्ति । ३७ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—भूमिपं ।

गुणकीर्त्या नरपते प्रजा रामेण रञ्जिताः[38] ॥ ५० ॥
एतच्छ्रुत्वा स नृपतिः[39] द्विजानां[40] मन्त्रिणामपि ।
हर्षं[41] परममागच्छत्तेषां भाववतां प्रति ॥ ५१ ॥
सह सञ्चिन्त्य[42] सचिवैर्यौवराज्यमचिन्तयत्[43] ।
सर्वान्नगर[44]वास्तव्यान् पृथग्जानपदानपि[45] ॥ ५२ ॥
आनाययामास[46] तदा पृथिव्यां[47] पृथिवीपतिः ।
ततः प्रजाः[48] समागम्य ब्रह्मक्षत्रमुखास्तथा[49] ॥ ५३ ॥
अनुज्ञाताः प्रविविशुः[50] नृपतेर्भवनं[51] महत् ।
आसीनं चापि राजानमैक्ष्वाकुं[52] राष्ट्रवर्द्धनम्[53] ॥ ५४ ॥
प्राच्योदीच्य[54]प्रतीच्याश्च दाक्षिणात्याश्च भूमिपाः ।

---

३८ पुं—रक्षिताः । ३९ चं—एतच्छ्रुत्वा वचो राजा । रा—एतत् श्रुत्वा वचो राजा । गु—इति श्रुत्वा तदा राजा । पू—एतच्छ्रुत्वा तु राजा वै । दी—तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां । ४० पुं—जिज्ञासां । पू—प्रजानां । अत्र 'प्रजा' इति बहिर्लेखितं हस्तेनेतरेण विभिन्नमस्याश्च । ४१ चं, पूं—हर्षं-तत्वमुपागच्छन् (पूं—त्) तेषां भावानुगं प्रति । रा—हर्षतत्त्वमुपागछ तेषां भावानुगं प्रति । गु—परं हर्षमुपागच्छत्० । पू, दी—हर्षं परममुपागच्छत्० । पं—हर्षे० भाववतां प्रति । ४२ कै, चं, गु, पू—संचिन्त्य । ४३ चं, पुं, पूं, दी, रा—०ममंत्रयत् । ४४ गु, पू, दी, पं—नानानगर० । ४५ चं, पूं, रा—श्रेष्ठान् जान-पदानपि । ४६ चं, पूं—आवाहयामास । पू, पं—आनापयामास । दी—आनयामास स । ४७ चं, पूं, रा—पृथिव्याः । ४८ गु—प्रजास्तदागत्य । दी—प्रजाः समायाता । ४९ पू पूं, दी, रा, पं—०स्तदा । ५० पं—अनुज्ञायाथ विविशुः । ५१ गु—०भुवनं । ५२ कै—०मैक्ष्वाकं । चं, पं—०मिक्ष्वाकु० । पूं मिक्ष्वाकुं । ५३ पं—राज्य । ५४ गु, पूं—०दीच्या । पू—प्राच्यादीच्याः । चं, दी, रा, पं—प्राच्योदीच्याः ।

म्लेच्छाश्चान्ये[55] सुबहवः[56] पार्वतीयाश्च सङ्गताः ॥ ५५ ॥
[उपासाञ्चक्रिरे प्रीता महेन्द्रमिव देवताः ।
तेषां मध्ये महाराजो देवानामिव[57] वासवः ॥ ५६ ॥
विद्योतमानं[58] प्रभया ददर्श[59] सुतमात्मनः ।
गन्धर्वराजप्रतिमं लोके विश्रुतपौरुषम् ॥ ५७ ॥
दीर्घबाहुं महासत्त्वमत्यन्तप्रियदर्शनम् ।
शैलप्रतिमदन्तीनां[60] ग्रहीतारं[61] विषाणिनाम् ॥ ५८ ॥
लोके विख्यातवीर्याणां श्रेष्ठं सर्वधनुष्मताम् ।
सुवर्षेणेव[62] पर्जन्यं ह्लादयन्तं प्रजागुणैः[63] ॥[64] ५९ ॥
प्रद्योतयन्तं लोकांश्च[65] सहस्रांशुमिवांशुभिः ।][66]
तद्राजवेश्म मनुजैर्यथावत्प्रतिपूरितम्[67] ।
ददर्श भीमनिर्ह्रादं वार्योघैरिव[68] सागरः[69] ॥ ६० ॥
तं[70] जनौघं[70] बहुविधं राजभिः समलङ्कृतम् ।
ददर्श द्युतिमान्[71] राजा प्रजापतिरिवापरः[72] ॥ ६१ ॥

---

५५ रा—म्लेच्छा ह्यन्ये । ५६ चं, शु, पू, पृ, दी, रा—च बहवः । ५७ रा—०मपि । ५८ कै—०मानः । पं—०मान । ५९ रा—ददृशुः । ६० चं, पूं, रा—शैलश्रपिनद० । पं—शैलभूतविख्यातानां । ६१ रा—प्रतीहारं । ६२ पं—सुवर्षणेन । ६३ पं—ह्लादयन्तामिव प्रजाः । ६४ चं, पूं, रा—ह्लादनं सर्वमित्राणां शत्रूणां शोकवर्धनं । ६५ चं, पूं, रा, पं—गुणैः प्रद्योतयंतस्तं (चं—०यंतं तु) (रा, पं—०यंतं तं) । ६६ पूं, दी—नास्ति । ६७ पूं—०प्रीति० । पं—०प्रतिपूजितं । ६८ शु—वार्योघोरिव । पूं, दी—वार्योघैरिव । रा—घर्मोघैरिव । ६९ चं, पूं, दी, रा, पं—सागरं । पूं—सागरी । ७० पूं—ते जनौघैर् । ७१ कै—धीतिमान् । ७२ पं—प्रजाप्रीतिद्वियामपान् ।

अथ राज्ञां[७३] वितीर्णेषु आसनेषु[७४] समन्ततः ।
राजानमेवाभिमुखा[७५] निषेदुर्नियताः प्रजाः[७६] ॥ ६२ ॥
तेषां मध्ये महातेजा देवानामिव वासवः ।
शशुभे सर्वसिद्धार्थः[७७] सर्वाभरणभूषितः[७८] ॥ ६३ ॥
ते तु तं सुमहात्मानं पूर्णचन्द्रसमद्युतिम्[७९] ।
उपासाञ्चक्रिरे वीराः कुबेरमिव[८०] नैर्ऋताः ॥ ६४ ॥
स[८१] लब्धमानैर्विनयात्समागतैः पुरालयैर्जानपदैश्च[८२] मानवैः[८३] ।
उपोपविष्टैश्च[८४] नृपैर्नृपो बभौ सहस्रचक्षुर्भगवानिवामरैः ॥[८५] ६५॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे प्रकृतिसमागमो-
नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥



७३ गु—राज्ञां विकीर्णेषु । पूं—राज्ञा विकीर्णेषु । दी—राजवितीर्णेषु । चं—०विचीर्णेषु । ७४ चं—ह्यासनेषु । पं स्वासनेषु । ७५ पं—०मुखं । ७६ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—जना । ७७ पूं—सिद्धार्थे । ७८ दी—सर्वा० भूतिविभूषितः । ७९ कै—०समप्रभम् । पं—पूर्व्वचंद्र समप्रभं । दी—राजभि० समलंकृतं । ८० रा—कुबेरमिव नैर्ऋता० । ८१ पूं—अलक्षमा० नैर्विं० । ८२ गु—सुरालयैर्० । ८३ रा—समागतै० । ८४, पूं—नास्ति । ८५ चं, रा—सुखोप० । १८६ पं—०वान् यथामरै० ॥

[चतुर्थः सर्गः]

ततः परिषदः सर्वा[1] आमन्त्र्य वसुधाधिपः ।
हितमुद्धर्षणं[2] चैवमुवाचाप्रतिमं[3] वचः ॥ १ ॥
दुन्दुभिस्वनकल्पेन[4] गम्भीरेणानुनादिना[5] ।
स्वरेण[6] भवनं[7] राजा जीमूत इव नादयन्[8] ॥ २ ॥
इदमिक्ष्वाकुभिः पूर्वैर्नरेन्द्रैः[9] परिपालितम्[10] ।
श्रेयसा योक्तुमिच्छामि सुखार्थमखिलं जगत्[11] ॥ ३ ॥
मयाप्याचरितं[12] पूर्वैः[13] पन्थानमनुगच्छता[14] ।
प्रजा निनीताश्चोत्सेधे[15] यथावदुपशिक्षिताः[16] ॥ ४ ॥
इदं शरीरं कृत्स्नस्य सुखस्य विषये[17] चिरम् ।
पाण्डुरस्यातपत्रस्य छायायां धारितं मया ॥ ५ ॥

---

१ गु—सर्वांश्चामन्त्र्य । २ चं—हृद्योद्ध० । पं—स्फोतमु० । ३ चं, गु, पं, पूं, श्री, रा—चेदमु० । ४ गु, पूं—दुंदुभि ० । चं, रा—०स्वर० । पूं—०भिनिस्वनकल्पेन । ५ चं, पूं —०नुनादितं (चं—०ते) । दी—०नुना-दिना । पं—गांधर्वेणानु० । ६ चं, गु, पूं, पूं, श्री, रा—स्वनेन । ७ गु, दी—भुवनं । चं, पूं, रा—भगवान् । ८ पं—जीमूतेनेव नादितां । ९ चं, पूं—सर्वैर्न० । रा-सर्वै न० । पं-पूर्वै न० । १० पूं—०पालिनी । चं, पं—मतिरा० । ११ चं, पूं, रा—जनं । १२ पं.—सद्भिराचरितं । पं—मया प्याचरितं । चं, पूं, रा-अयोध्याचरितं । १३ दी-पूर्वं । १४ चं—यथैनमनु० । पूं—०गच्छत । १५ पं.—०श्चोत्सेधं । चं—धिनानिरे० । गु, पूं, पूं, दी, रा-निर्नातत्रिरेदेन । १६ पूं, दी—यथावदनपमिरक्षिताः । पूं—यथावदनपाभि० रक्षितं । चं, गु, रा—यथा शक्त्यमिरक्षिता । १७ पूं—विषयं ।

प्रायो[१८] वर्षसहस्राणि बहून्यायुश्च पालितम् ।
जीर्णस्यास्य शरीरस्य विश्राममभिरोचये ॥ ६ ॥
राजपुङ्गवगुप्तां[१९] हि दुर्धरामजितेन्द्रियैः[२०] ।
परिश्रान्तश्च[२१] लोकेऽस्मिन् गुर्वीं[२२] धर्मधुरं[२३] वहन् ॥[२४] ७ ॥
सोऽहं विश्राममिच्छामि कृत्वा सर्वप्रजाहितम् ।
भवद्भिरपि तत्सर्वमनुमन्तव्यमद्य मे[२६] ॥ ८ ॥
अनुयातो[२७] हि मे सर्वगुणैर्ज्येष्ठो[२८] ममात्मजः ।
पुरन्दरसमो वीर्ये रामः परपुरञ्जयः[२९] ॥ ९ ॥
तं चन्द्रमसि पुष्येण युक्ते धर्म्मभृतां वरम् ।
यौवराज्येऽभिषेक्तास्मि[३०] प्रीतः[३१] क्षत्रियपुङ्गवम् ॥ १० ॥
अनुरूपो हि राज्यस्य[३२] लक्ष्मीवान् लक्ष्मणाग्रजः[३३] ।
त्रैलोक्यमपि नाथेन येन स्यान्नाथवत्तरम् ॥ ११ ॥

---

१८ च, गु पूं, पू दी, रा प्राप्य । १९ च, गु पूं पूं, दी, रा-पुंगवजुष्टा । २० च, गु, पूं, पूं, दी, रा—दुर्वहाम० । दी—०मकृतात्मभि । २१ चं—परिश्राता । पूं—परिक्रान्तश्च । रा—परिकाता । पुं—परिश्रातस्य । २२ पू, पूं प—गुर्वी । २३ च, पूं—०धुरंमहत् । पूं० धुरावह । २४ च—धारयामि अना लोके वृद्धो भूत्वा महोक्षवत् ।
इदानीं ता समुत्सॄय मन्त्रिणो विप्रक्षत्रिया । इत्याधिकं 'वहन्' इति पश्चात् ।
२५ च, गु रा—सर्व० । २६ च, पूं—०मनुवर्त्तव्यमद्य वै । रा—०मनुवर्तव्यम० । दी—०मद्य ते । २७ पूं, पं-अनुजातो । चं, गु, पूं, दी, रा—अनुज्ञातो । २८ दी—०जुष्टो० । पं—सर्वगुणज्येष्ठो महात्मना । २९ गु—पुरपुर० । ३० पूं, दी—भिषिक्ता० । ३१ पं—प्रीत० ०पुंगवा । ३२ पं—राष्ट्रस्य । पूं—राज्या वै । चं, गु पूं, दी, रा—राजा वै । ३३ चं, पूं, रा—लक्ष(रा—क्ष्म)णान्वित ।

संयोज्य रामं राज्येन श्रयमाऽहं महीमिमाम्[34] ।
संश्रित्य[35] रामस्य भुजौ[36] विहर्ताऽस्मि गतज्वरः ॥ १२ ॥
इति ब्रुवाणं मुदिता अभ्यनन्दन्नृपं[37] प्रजाः[38] ।
वृष्टिमन्तं महानादं पर्जन्यमिव[39] वर्हिणः[40] ॥ १३ ॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवकल्पस्य[41] धीमतः ।
प्रियं चैवानुरूपं च वक्तुं[42] समुपचक्रमुः ॥ १४ ॥
दिव्यैर्गुणैर्दक्षसमो रामः शक्रसमो बले ।
इक्ष्वाकुभ्यो हि सर्वेभ्यो व्यतिरिक्तो[43] विशांपते ॥ १५ ॥
रामस्य पुरुषो लोके सत्त्वधर्मयशोबलैः[44] ।
समो[45] न विद्यते कश्चिद्विशिष्टः कुत एव तु ॥ १६ ॥
धर्मात्मा[46] सत्यवादी च शीलवाननसूयकः ।[47]
दान्तः सत्त्वहितैः प्राज्ञैः कृतज्ञो विजितेन्द्रियः ॥ १७ ॥
मृदुश्च स्थिरबुद्धिश्च[48] नित्यं दीनानुकम्पकः[49] ।

---

३४ के, चं, पूं, रा—महीपतिम् । ३५ गु द्री—संस्तुत्य । ३६ पूं—भुजे । ३७ गु-सर्वेऽनंदन्नृपं । पूं-सर्वे नंदन्नृपं । पूं-सर्व्वे चैते नृपे । द्री—सर्वे नंदन्नृपं । रा-सर्वे चैतं नृपं । ३८ गु पूं, पूं, द्री, रा-नराः । ३९ चं, गु, पूं, द्री, रा वृष्टिमंतमिवांभोदं गर्जंतमिव । पूं-वृष्टिमंतमिवाम्बुदं गर्जंतमिव । पं—०गर्जन्तमिव । ४० पूं—बर्हिणः । ४१ चं—दार्थकल्पस्य । पूं—सर्व्व कल्पस्य । रा—सर्वकल्पस्य । ४२ पूं—प्रवचनमुपचक्रमु० । द्री-०चक्रमे । ४३ पूं—व्यतिरेकी । रा—व्यतिरिक्तो । ४४ चं, रा—सत्यधर्मयशोगुणैः । पूं—सत्यधर्मपरोगुणः । ४५ पू—समानो । ४६ रा—धर्मवाननसूयी च सत्यवान् धर्मसंस्तथा । ४७ गु, पूं, द्री, पं—सांत्वयिता शकः । ४८ चं, गु, पूं, पूं, द्री, रा स्थिरवृत्तिश्च । ४९ चं-०कंपनः ।

प्रियवादी जितक्रोधो दीर्घदर्शी महामतिः ॥ १८ ॥
बहुश्रुतानां वृद्धानां ब्राह्मणानामुपासिता ।
तेन तस्यातुलाकीर्त्तिर्यशस्तेजश्च वर्द्धते ॥ १९ ॥
समर्थश्च धनुर्वेदे हयपृष्ठे गजे रथे ।
लब्धास्त्रः शब्दवेधी च दूरपाती दृढायुधः ॥ २० ॥
देवासुरमनुष्याणां संयुगेष्वपराजितः ।
दिव्यमानवसंस्थेषु सर्वास्त्रेषु विशारदः ॥ २१ ॥
यं चोपयाति सङ्ग्रामे ग्रामान्ते नगरेपि वां ।
गत्वा सौमित्रिणा सार्द्धं तं जित्वा निनिवर्त्तते ॥ २२ ॥
सदाऽग्रे नगराद्गच्छन् कुञ्जरेण रथेन वां ।
राजमार्गेऽपि नो दृष्ट्वा कुशलं परिपृच्छति ॥ २३ ॥
पुत्रेष्वग्निषु दारेषु प्रेष्यशिष्यगणेषु च ।
निखिलेनानुपूर्व्येण पिता पुत्रानिवौरसान् ॥ २४ ॥

---

५० गु महाद्युतिः । ५१ पूं—वृत्तानां । ५२ पू—वद्यातु० । ५३ गु पूं पूं, दी, रा, पं—समात्तश्च । ५४ दी अश्व० । ५५ गु, पूं दी—लब्धास्त्र पू—लब्धास्त्र । पं—लब्धस्त्र० । ५६ गु, पू, पूं, दी, रा, पं—०मानुष० च—०मानुषसंस्थेषु । ५७ पूं, पं—च । ५८ चं, पूं—विजित्योपनिवर्त्तते रा—तं जित्वोपनिवर्त्तते । गु, दी—तं जित्वोपनिवर्त्तते । पूं—जित्वोपनिवर्त्तते । ५९ गु, पूं, दी, पं—निर्गच्छन् । रा—तनरे गच्छन् । ६० चं, पूं दी—च । ६१ चं, पूं, रा—राजमार्गेण । ६२ गु पूं, दी, रा, पं ०नुपूर्व्येण । पूं—०नुपूर्व्येण ।

शुश्रूषन्ति[63] वर्चः[64] शिष्याः कच्चित्कर्मसु[65] दंशिताः[66] ।
इति नः[67] पुरुषव्याघ्रः[68] सदा रामोऽभिभाषते[69] ॥ २५ ॥
व्यसनेषु च सर्वेषां[70] भृशं भवति दुःखितः ।
दृष्टो नोऽभ्युदयं[71] किञ्चित्पितेव परितुष्यति ॥ २६ ॥
सत्यः[72] श्रेयसि जातस्ते दिष्ट्याऽसौ तव राघवः[73] ।
दिष्ट्या रामो गुणैर्युक्तो मारीच इव कश्यपः ॥[74] २७ ॥
बलमारोग्यमायुश्च रामस्य विदितात्मनः ।
आशंसन्ते हि जनः सर्वो राष्ट्रेषु नगरेषु च ॥[75] २८ ॥[76]
आभ्यन्तराश्च[77] बाह्याश्च[78] पौरजानपदा जनाः ।[79]
स्त्रियो वृद्धास्तरुण्यश्च सायं[80] प्रातः समाहिताः[81] ॥ २९ ॥
सर्वे[82] देवान्नमस्यन्ति रामस्यार्थे महात्मनः ।
तेषामाशंसितं[83] चैव त्वत्प्रसादाच्च युज्यताम् ॥ ३० ॥

६३ गु, पे–शुश्रूषंते । ६४ गु–च य । ६५ गु पूं ग, पं–कश्चित्क० । दी–कच्चित्क० । ६६ गु—दंशिता । पूं, दी–दंशिताः । ग–दंसिताः । चं, पू, पं–दर्शिताः । ६७ पूं—नान् । ६८ गु, दी—०व्याघ्र । ६९ दी—०ऽभिभा० । ७० पं—सर्वेषु । ७१ चं, गु, पू, पूं, दी, रा—श्रुत्वा चाभ्युदयं । ७२ पू, दी—यत्न । ७३ पू, पूं, रा, पं—राघव । ७४ पू—नास्ति । ७५ दी–पौरा जान-पदा जनाः । ७६ चं, गु, पूं, रा, पं—आशासते जनाः सर्वे । ७७ दी—शान्ति । ७८ गु—आभ्यांतराश्च । पू—आभ्यंतरश्च । ग—अभ्यंतरश्च । पं, अभ्यंतराश्च । ७९ पू, पूं, रा, पं–बाह्याश्च । ८० ग सायः । ८१ गु, दी–समाहितः । ८२ सर्वे देवा नम० । पू—सर्वान्देवान्नम० । रा—सर्वान् देवान्नम० । ८३ गु, पूं, दी—०मायाचितं । चं—तेषामपचितं । पूं, ग—तेषामयाचितं । पं—०मभाषितं ।

वीरमिन्दीवरश्यामं सर्वशत्रुनिबर्हणम् ।
पश्येम यौवराज्यस्थं रामं राजीवलोचनम् ॥ ३१ ॥
तं देवदेवोपममात्मवन्तं सर्वस्य लोकस्य हिते निविष्टम् ।
अतीव[85] तं[86] क्षिप्रमुदारसत्त्वं पुरेऽभिषेक्तुं वरदार्हसि त्वम् ॥ ३२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे प्रकृतिवाक्यं
नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥



८४ पं—पौरराजान । ८५ पुं—आर्ता वयं । गु, दी—अतीव न । पुं—अतीव ते । ८६ गु—क्षत्रमुदार० । ८७ गु—अयोध्या पर्वणि ॥

[पञ्चम सर्गः]

तेषामञ्जलिमालास्तां[1] प्रतिगृह्य समन्ततः ।
हृष्टो दशरथो राजा प्रोवाचेदं वचस्तदा ॥ १ ॥
धन्यो ऽस्म्यनुगृहीतो ऽस्मि भवद्भिः प्रियवादिभिः ।
यन्मे ज्येष्ठं प्रियं पुत्रं युवराजमिहेच्छथ ॥ २ ॥
इति राजा ऽनुमाष्यैतानिदं[2] वचनमब्रवीत् ।
वसिष्ठं वामदेवं च तेषामेवोपशृण्वताम् ॥ ३ ॥
चैत्रः श्रीमानयं मासः पुण्यः पुष्पितकाननः ।
यौवराज्याय रामस्य सर्वमेवोपकल्प्यताम् ॥[3] ४ ॥
आभिषेचनिकं द्रव्यं यत्किंचिद् ज्ञापयन्तु माम् ।
यन्मया चोपहर्तव्यं रामराज्याऽभिपत्तये ॥ ५ ॥
तां तथेति प्रतिज्ञाय नृपतेर्वचनात्तदा ।
लेखयाञ्चक्रतुर्द्रव्यं भूपस्यैवोपशृण्वतः ॥ ६ ॥
कृतमित्येवं चाब्रूतामभिगम्य नराधिपम् ।
सुप्रीतमनसौ प्रीतं हर्षयन्तौ पुनर्नृपम् ॥ ७ ॥
ततः सुमन्त्रमाहूय राजा दशरथो ऽब्रवीत् ।
रामः कृतात्मा भवता शीघ्रमानीयतामिति ॥ ८ ॥

---

१ पं—तेषां मांजलिमालस्ताः । २ अ, कु—०तानेवं भूयो ऽर्थाढ्यः । ३ अ, कु—रामाय यौवराज्यं मे दानुमश्चैव रोचते । ४ कै—सर्वं । ५ अ, कु—मत्र्ये ते । ६ कै—भारयंतु । ७ पं—०पकर्तव्यं । ८ अ, कु—०र्वचनमहा । ९. अ, कु—भूपर्षीनं ननंदतु । १० पं—०मित्येवमं घृतामधिगम्य । ११ कै —तु मं। नृपम् । पं—पुं नृरं ।

स तथेति प्रतिज्ञाय सुमन्त्रो राजशासनात् ।
रामं तत्रानिनायार्थं[12] रथेन रथिनां वरः[13] ॥ ९ ॥
अथ तत्र समानीतास्तदा[14] दशरथं नृपम् ।
प्राच्योदीच्यप्रतीच्याश्च[15] दाक्षिणात्याश्च भूमिपाः ॥ १० ॥
म्लेच्छाश्च यवनाश्चैव शकाः[16] शैलान्तवासिनः ।
उपासाञ्चक्रिरे सर्वे तं[17] देवा इव वासवम् ॥ ११ ॥
तेषां मध्ये स राजर्षिर्मरुतामिव वासवः[18] ।
प्रासादस्थो रथगतं ददर्शायान्तमात्मजम् ॥ १२ ॥
गन्धर्वराजप्रतिमं लोके विश्रुतपौरुषम् ।
दीर्घबाहुं महासत्त्वं मत्तमातङ्गगामिनम् ॥ १३ ॥
चन्द्रकान्ताननं[19] राममतीवप्रियदर्शनम्[20] ।
रूपौदार्यगुणैः पुंसां दृष्टिचित्तापहारिणम् ॥ १४ ॥
घर्माभितप्ताः पर्जन्यं ह्लादयन्तमिव प्रजाः ।
नातृप्यच्च[21] तमायान्तं वीक्षमाणो[22] नराधिपः ॥ १५ ॥
अवतार्य सुमन्त्रश्च राघवं स्यन्दनोत्तमात् ।
पितुः समीपं गच्छन्तं प्राञ्जलिः[23] पृष्ठतोऽन्वगात्[24] ॥ १६ ॥

---

१२ अ, कु—तत्रानयां चक्रे । १३ अ, कु—वरं । १४ अ, कु—समासीनं तदा । १५ पं—०दीच्याश्चप्र० । "श्च" इति लोपव्यञ्जकचिह्नेन अङ्कितः । १६ पं—शकः । १७ अ, कु, पं—ते । १८ पं—वासवं । १९ पं—चंद्रकांत्याननं । २० पं—दृष्टचिता० । २१ अ, कु—नातृप्यत । २२ पं—०यांतमीक्ष० । २३ पं—प्रांजलिं । २४ कै—०न्वयात् ।

स तं कैलासशृङ्गाभं प्रासादं नरपुङ्गवः ।
आरुरोह नृपं द्रष्टुं सह सूतेन राघवः ॥ १७ ॥
स प्राञ्जलिरभिप्रेत्य प्रणतः पितुरन्तिकम् ।
नाम संश्रावयन् रामो ववन्दे चरणौ पितुः ॥ १८ ॥
तं दृष्ट्वा प्रणतं पार्श्वे कृताञ्जलिपुटं नृपः ।
गृहीत्वाऽञ्जलिमाकृष्य सस्वजे प्रियमात्मजम् ॥ १९ ॥
तस्मै चाभ्युच्छ्रितं श्रीमान् मणिकाञ्चनभूषितम् ।
दिदेश राजा रुचिरं रामायानुपमासनम् ॥ २० ॥
तदासनवरं प्राप्य दीपयामास राघवः ।
स्वयेव प्रभया मेरुमुदये विमलो रविः ॥ २१ ॥
तेन विभ्राजता तत्र सा सभाऽपि[33] व्यराजत ।
विमलग्रहनक्षत्रा शारदी द्यौरिवेन्दुना ॥ २२ ॥
तं स पश्यन्नरपतिस्तुतोष प्रियमात्मजम् ।
अलङ्कृतमिवात्मानमादर्शतलसंस्थितम् ॥ २३ ॥
स तं सस्मितमाभाष्य पुत्रं पुत्रवतां वरः ।
उवाचेदं वचो राजा देवेन्द्रमिव कश्यपः ॥ २४ ॥

---

२५ अ—कैलाश० । २६ कै—सहितस्तेन । २७ अ, कु—पितुरंतिके । २८ अ, कु—गृहीता० । २९ कै—स्वयमात्मजम् । ३० अ, कु—चाभ्युचितं श्रीमन् । कै—चाभ्युत्थितं० । ३१ अ, कु, पं—०भूषणम् । ३२ अ, कु—व्यदीपयत । पं—सोदीपयत । ३३ अ, कु—सभाति । ३४ के—विशालग्रह० । ३५ कै—द्यौरिवोडुना । ३६ पं—भूमिपः ।

ज्येष्ठायामसि मे पत्न्यां[37] सदृश्यां सदृशः सुतः ।
उत्पन्नः[38] सद्गुणैः पूज्यो[39] मम रामात्मजः प्रियः ॥ २५ ॥
त्वया यतः प्रजाश्चेमाः स्वगुणैरनुरञ्जिताः ।
तस्मात्त्वं पुष्ययोगेन यौवराज्यमवाप्नुहि ॥ २६ ॥
कामं[39] च त्वं[40] प्रकृत्यैव विनीतो गुणवानसि[41] ।
गुणवत्त्वात्[42] पितृस्नेहात् पुत्र वक्ष्यामि ते हितम् ॥ २७ ॥
भूयो विनयमास्थाय भव नित्यं जितेन्द्रियः ।
कामक्रोधसमुत्थानि त्यज[43] त्वं[43] व्यसनानि च ॥ २८ ॥
परोक्षया ऽपि[44] संबुद्ध्यौ राम प्रत्यक्षया तथा ।
परमां प्रकृतिं दृष्ट्वा परिपाल्याः[45] प्रजास्त्वया[46] ॥ २९ ॥
निर्ममो[47] निरहङ्कारो भूत्वा राम गुणान्वितः ।
ततः पालय पुत्रेमाः प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ॥ ३० ॥
योधानमात्यान् हस्त्यश्वान्[48] कोपं चावेक्ष्य यत्नवान् ।
तथा मित्राणि मध्यस्थानमित्रांश्चानुरञ्जय[49] ॥ ३१ ॥
तुष्टानुरक्तप्रकृतिर्यः पालयति मेदिनीम् ।
तस्य नन्दन्ति मित्राणि लब्ध्वाऽमृतमिवामराः ॥ ३२ ॥

---

३७ कै—यत्त्वं । ३८ अ, कु—उत्पन्नस्त्वं गुणज्येष्ठो । ३९ कै, पं—कार्यं । ४० कै, पं—ते । ४१ के—गुणवानपि । ४२ कु—गुणाकरो । अ—गुण वत्त्वे । ४३ पं—त्यजस्व । अ, कु—त्यजेश्च । ४४ अ, कु—निशं बुद्धया। ४५ कै—प्रतिपाल्या । ४६ अ, कु—त्वया प्रजा । ४७ कु—ततस्त्वं । अ—तत्परो । ४८ अ, कु—हस्त्यश्वं । ४९ के—मध्यस्थान्मित्राण्यप्यु परंजय । पं—मध्यस्था मित्र चैवानुरंजयन् ।

तस्मात्पुत्र त्वमात्मानं नियम्यैवं[50] समाचर ।
इति राज्ञो वचः श्रुत्वा नराः प्रियनिवेदिनः ।
त्वरिताः शीघ्रमभ्येत्य कौशल्यायै न्यवेदयन् ॥ ३३ ॥
सा हिरण्यं च गाश्चैव[51] रत्नानि विविधानि च ।
व्यादिदेश प्रियाख्येभ्यः कौशल्या प्रमदोत्तमा ॥ ३४ ॥
अथाभिवाद्य राजानं रथमारुह्य राघवः ।
ययौ स्वं द्युतिमान्वेश्म जनौघैः पथि पूजितः ॥ ३५ ॥
ते चापि पौरा नृपतेर्वचस्तच्छ्रुत्वा ततोलाभमनन्तमापुः ।
नरेन्द्रमामन्त्र्य गृहाणि गत्वा देवान् समानर्चुरतीवहृष्टाः॥३६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामाभिषेकव्यवसायो नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥



५० अ, कु—निशम्यैवं। ५१ अ, कु, पं—गां चैव । ५२ कै—तदा तेभ्यः। पं—प्रयातेभ्यः । ५३ कु—०मिष्टमापुः । अ—०मिष्टमाप्य । ५४ कै—गृहांश्च ॥

[षष्टः सर्गः]

गतेष्वथ नृपो भूयः पौरेषु सह मन्त्रिभिः ।
मन्त्रयित्वा ततश्चक्रे निश्चयज्ञः स निश्चयम् ॥ १ ॥
श्व एव पुष्यो भविता सुतो मे श्वो ऽभिषिच्यताम् ।
रामो राजीवताम्राक्षो यौवराज्य इति प्रभुः ॥ २ ॥A
अथान्तर्गृहमाविश्य राजा दशरथस्तदा ।
सूतमाज्ञापयामास रामं० पुनरिहानय० ॥ ३ ॥
प्रतिगृह्य० स० तद्वाक्यं सूतः पुनरुपाययौ ।
रामस्य भवनं शीघ्रं राममानयितुं पुनः ॥ ४ ॥
तेन चावेदित तस्य रामस्यागमनं पुनः ।
द्रष्टुमिच्छति राजा त्वां शीघ्रमागन्तुमर्हसि ॥ ०५ ॥
श्रुत्वा प्रमाणमत्र त्वं गमनायेति राघवे ।
इति सूतवचः श्रुत्वा रामो ऽपि त्वरयाऽन्वितः ॥ ६ ॥
प्रययौ राजभवनं पुनर्द्रष्टुं नरर्षभम् ।
स श्रुत्वा समनुप्राप्त रामं दशरथो नृपः ॥ ७ ॥
तूर्णं प्रवेशयामास विवक्षुः प्रियमुत्तमम् ।
प्रविशन्नेव च श्रीमान् राघवो भवनं पितुः ॥ ८ ॥
ददर्श पितरं दूरात् प्रणिपत्य कृताञ्जलिः ।
प्रणमन्तं समुत्थाप्य तं परिष्वज्य भूमिपः ॥ ९ ॥

---

१ प—भवति । A प—राममपेद्यत्सर्वं प्रणगाद्धगितेन न । Oप—नास्ति । (स्वर्वं माति ।) २ प—पुनरुपाययौ । ३ पै—रामस्य गमन । Oपं—नास्ति । (त्यक्तम् ।) ४ पै—राघव । ५ प—चानु । ६ प—स । ७ पु—प्रणमान । अ—प्रणामान ।

प्रदिश्य चास्मै रुचिरमासनं पुनरब्रवीत् ।
राम वृद्धोऽस्मि दीर्घायुर्भुक्त्वा भोगान् यथेप्सितम् ॥ १० ॥
अन्नवद्भिः क्रतुशतैस्तथेष्टं भूरिदक्षिणैः ।
जातमिष्टमपत्यं मे मयाऽप्यनुपमं भुवि ॥ ११ ॥
दत्तमिष्टमधीतं च मया पुरुषसत्तम ।
अनुभूतानि चैं तथा वीर राज्यसुखानि च ॥ १२ ॥
देवर्षिपितृविप्राणामनृणोऽस्मि तथाऽऽत्मनः ।
न किंचिन्मम कर्तव्यं तवान्यत्राभिषेचनात् ॥ १३ ॥
अतस्त्वां यदहं ब्रूयां तन्मे त्वं कर्तुमर्हसि ।
अद्य प्रकृतयः सर्वास्त्वामिच्छन्ति नराधिपम् ॥ १४ ॥
अतस्त्वां यौवराज्येऽहमभिषेक्ष्यामि पुत्रक ।
गच्छन्ते च तथा राम स्वप्नान् पश्यामि दारुणान् ॥ १५ ॥
सनिर्घाता महोल्काश्च पतन्ति सहनिःस्वनाः ।
उपसृष्टं च मे राम नक्षत्रं दारुणैर्ग्रहैः ॥ १६ ॥
आवेदयन्ति दैवज्ञाः सूर्याङ्गारकराहुभिः ।
प्रायेण हि निमित्तानामीदृशानां समुद्भवे ॥ १७ ॥

---

९ [illegible] । १० अ, कु—भुक्त्वा भोगा यथेप्सिताः । पं—भुक्ता भोगा- [illegible] । ११ अ, कु—[illegible] । ११ अ, कु—जातमि० । १२ अ, कु—[illegible] । १३ अ, कु—चेष्टानि । १४ अ, कु—०पितृभूता- [illegible] । १५ अ, कु—अद्य । १६ पं—पुत्रकं । १७ पं—[illegible] । १८ अ—[illegible] । कु [illegible] ....। पं पतन्ति हि महास्वनाः । १९ अ—[illegible] । २० कु—[illegible] । [illegible] । २१ पं—[illegible] ।

राजा वा मृत्युमाप्नोति राज्यं[22] वा नैव ऋच्छति[22] ।
तद्यावदेव चित्तं[23] मे न विमुह्यति राघव ॥ १८ ॥
तावदेवाभिषिच्यस्व चला हि प्राणिनां गतिः ।
अद्य चन्द्रोऽभ्युपगतः[24] पुष्यात्पूर्वं पुनर्वसुम् ॥ १९ ॥
श्वः पुष्ययोगं नियतं वक्ष्यन्ते दैवचिन्तकाः ।
तत्र त्वमभिषिच्यस्व मनस्त्वरयतीव माम् ॥ २० ॥
श्वस्त्वाऽहमभिषेक्ष्यामि[25] यौवराज्ये परन्तप ।
तस्मात्त्वयाऽद्य व्रतिना निशेयं नियतात्मना ॥ २१ ॥
सह वध्वोपवस्तव्या दर्भास्तरणशायिना[26] ।
सुहृदस्त्वाऽप्रमत्ताश्च[27] रक्षन्त्वद्य प्रयत्नतः ॥ २२ ॥
भवन्ति बहुविघ्नानि कार्याण्येवंविधानि हि[28] ।
निष्कासितश्च[29] भरतो यावदेव पुरादितः ॥ २३ ॥
तावदेवाभिषेकस्ते प्राप्तकालो मतो मम ।
कामं खलु सतां वृत्ते भ्राता ते भरतः स्थितः ॥ २४ ॥
ज्येष्ठानुवर्ती धर्मात्मा सानुक्रोशो जितेन्द्रियः ।
किन्तु चित्तं मनुष्याणां जानाम्येव[30] यथा चलम् ॥ २५ ॥
सतां च धर्मकृत्यानि कृतशोभानि राघव ।
इत्युक्तो[31] सो[31]ऽभ्यनुज्ञातः[32] श्वो भाविन्यभिषेचने ॥ २६ ॥

---

२२ अ, कु—राष्ट्रं वाऽवमृच्छति । पं—०मृच्छति । २३ अ, कु—चेतो । २४ अ, कु—ह्युप० । २५ अ, कु—०त्वामभिनिवेक्ष्यामि । २६ अ, कु—दर्भसंस्तरशा० । २७ अ, कु—सुहृदश्चाप्रमत्तास्त्वां । पं—सुहृदस्त्वा—मप्रमत्त । २८ अ, कु, पं—तु । २९ अ, कु निर्वासितश्च । ३० अ, कु—जानामि चलनात्मकं । पं—जानाम्येव० । ३१ अ, कु—इत्युक्तोऽसौ (कु—सो) । ३२ वै—भ्यनु० ।

व्रजेति राज्ञा[33] काकुत्स्थो जगाम स्वनिवेशनम्[33] ।
प्रविश्य चात्मनो वेश्म राज्ञाऽऽदिष्टे ऽभिषेचने ॥ २७ ॥
तस्मिन् क्षणे ऽभिनिर्गम्य[34] मातुरन्तःपुरं ययौ ।
प्रणतस्तत्र[35] तामेव[35] मातरं क्षौमवाससम् ॥ २८ ॥
ददर्श याचमानां तां देवतावेश्मनि श्रियम् ।
प्रागेव चागता तत्र सुमित्रा लक्ष्मणस्तथा ॥ २९ ॥
सीता चैवापि[36] तच्छ्रुत्वा[37] प्रियं रामाभिषेचनम् ।
तस्मिन् काले हि कौशल्या तस्थावामीलितेक्षणा ॥ ३० ॥
सुमित्रयोपास्यमाना सीतया लक्ष्मणेन च ।
श्रुत्वा पुष्येण पुत्रस्य यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ३१ ॥
प्राणायामेन पुरुषं ध्यायन्ती सा जनार्दनम् ।
तथा स नियतामेवमभिगम्याभिवाद्य च ॥ ३२ ॥
उवाच मातरं रामो हर्षयिष्यन्निदं वचः ।
अम्बे पित्रा नियुक्तो ऽस्मि प्रजापालनकर्मणि ॥ ३३ ॥
भविता श्वो ऽभिषेको मे यथा वै शासनं पितुः ।
सीतया चोपवस्तव्या रजनीयं मया सह ॥ ३४ ॥
एवमृत्विगुपाध्यायैः सह मामुक्तवान् नृपः ।
यानि चात्यन्तयोग्यानि श्वो भाविन्यभिषेचने ॥ ३५ ॥

---

३३ अ, फु, पं—राम पितरमभिवाद्याभ्ययाद्गृहं । ३४ अ—विनिर्गत्य । फु—विनिर्गत्य । पं—विनिर्गम्य । ३५ अ, फु—तत्र तां प्रयतामेव । पं—तत्र तां प्रणतामेव । ३६ अ, फु, पं—चानायिता (पं—चानायिता) श्रुत्वा । ३७ अ, फु अथ ।

तानि मे मङ्गलान्यद्य सीतायाश्चापि कारय ।
एतच्छ्रुत्वा तु कौशल्या चिरकालाभिकांक्षितम् ॥ ३६ ॥
हर्षवाष्पाकुलं वाक्यमिदं राममभाषत ।
वत्स राम चिरं जीव हतास्ते परिपंथिनः ॥ ३७ ॥
ज्ञातीन् मे त्वं श्रिया युक्तः सुमित्रायाश्च नंदय ।
कल्याणे त्वं च नक्षत्रे मयि जातोऽसि पुत्रक ॥ ३८ ॥
येन त्वया दशरथो गुणैराराधितः पिता ।
अमोघा चात्र मे भक्तिः पुरुषे पुष्करेक्षणे ॥ ३९ ॥
सेयमिक्ष्वाकुराजर्षिश्रीस्त्वामद्याश्रयिष्यति ।
इत्येवमुक्तो मात्रेदं रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ॥ ४० ॥
प्रांजलिं प्रह्वमासीनमभिवीक्ष्य स्मितान्वितः ।
लक्ष्मणेमां मया सार्द्धं प्रशाधि त्वं वसुन्धराम् ॥ ४१ ॥
द्वितीयो मेऽन्तरात्मा त्वं त्वामियं श्रीरुपस्थिता ।
सौमित्रे भुंक्ष्व भोगांस्त्वमिष्टान् राज्यफलानि च ॥ ४२ ॥
जीवितं चापि राज्यं च त्वदर्थमभिकामये ।
इत्युक्त्वा लक्ष्मणं रामो मातरावभिवाद्य च ।
अभ्यनुज्ञाप्य सीतां च जगाम स्वं निवेशनम् ॥ ४३ ॥
इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकांडे रामराज्योपनिमंत्रणं
नाम षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

---

३८ अ, कु, प—वैदेह्याश्चापि(कु—भि) । ३९ अ, कु—ज्ञातीनां । ४० अ, कु—नंदन । ४१ अ, कु—कल्याणवति । प—०त्वं [illegible] । ४२ अ, कु—वत । ४३ पं—या । ४४ अ, कु—०राजर्षे० । ४५ अ, कु—भ्रातरम० । ४६ अ, कु—चैव । ४७ प—०भिकाङ्क्षये । ४८ अ, कु—०ज्ञाप्य ।

[सप्तमः सर्गः]

स चिन्तयानो[1] नृपतिः श्वोभाविन्यभिषेचने ।
पुरोहितं समाहूय वसिष्ठमिदमब्रवीत् ॥१॥
गच्छोपवासं काकुत्स्थं कारयाद्य तपोधन ।
श्रीयशोराज्यलाभाय वध्वा सह यतव्रतम् ॥२॥
तथेति च स राजानमुक्त्वा वेदविदां वरः ।
स्वयं वसिष्ठो भगवान् ययौ रामनिवेशनम् ॥३॥
उपवासयितुं रामं मंत्रविन्मंत्रपारगः ।
ब्राह्मं रथवरं युक्तमास्थाय स[2] धृतव्रतः[2] ॥४॥
स रामभवनं प्राप्य पांडुराभ्रचयोपमम् ।
तिस्रः कक्षा[3] रथेनैव विवेश मुनिपुंगवः[4] ॥ ५ ॥
समागतमृषिं रामस्त्वरमाणः ससंभ्रमः ।
मानयिष्यन्स मानार्हं निश्चक्राम निवेशनात् ॥ ६ ॥
अभ्येत्य त्वरमाणश्च रथाभ्याशं मनीषिणः ।
ततोऽवतारयामास परिगृह्य रथात्स्वयम् ॥ ७ ॥ *1
स चैनं प्रश्रितं दृष्ट्वा संभाष्य[5] प्रसाद्य[6] च ।[7]

---

1 पं—चिन्तमानो । 2 कै—सधृतव्रतः 'स' इत्युपरि लिखितं सकारस्थाने पतनचिह्नं, अन्यथा लेखितम् । अ, कु—सुधृत० । 3 पं—कक्ष्या ।
4 अ, कु, पं—०सत्तमः ।
*1 कै—अं रथादवरोहंतं विज्ञानाभ्यागतं गुरुम्
आलोकात्तरयामास प्रत्युद्गम्य स राघवः
प्रह्वो वचनमाकांक्षंस्तस्थौ रामः कृतांजलिः
तमाह मुनिस्तत्रैव संभाष्याभिप्रशस्य च
5 पं स संभाष्य । 6 पं-प्रहृष्य । 7 कै: स तु प्रविश्य भवनं रामस्य मुनिपुंगवः ।

प्रियार्हं हर्षयन् राममित्युवाच पुरोहितः ॥ ८ ॥
प्रसन्नस्ते पिता राम यौवराज्यमवाप्स्यसि ।
उपवासं भवानद्य करोतु सह सीतया ॥ ९ ॥
प्रातस्त्वामभिषेक्ता हि यौवराज्ये नराधिपः ।
पिता दशरथः प्रीत्या ययातिं नहुषो यथा ॥ १० ॥
इत्युक्त्वा स तदा राममुपवासं यतव्रतम् ।
मंत्रवत्कारयामास[8] वैदेह्या सहितं मुनिः ॥ ११ ॥
ततो यथावत्क्रमेण स राज्ञो[9] गुरुरर्चितः ।[A2]
अभ्यनुज्ञाय[10] काकुत्स्थं ययौ राजनिवेशनम् ॥ १२ ॥
सुहृद्भिस्तत्र रामोऽपि महार्यैश्च[11] प्रियंवदैः ।
सभाजितो विवेशां तस्ताननुज्ञाय[12] सर्वशः ॥ १३ ॥
हृष्टनारीनरयुतं राजवेश्म तदा बभौ ।
यथा मत्तद्विजगणं प्रफुल्लनलिनं सरः ॥ १४ ॥
स राजभवनं गच्छन् मुनिः कैलाससन्निभम् ।[13]
सर्वतो ददृशे मार्गं वसिष्ठो जनसंकुलम् ॥ १५ ॥
वन्दिवृन्दैरयोध्यायां[14] राजमार्गाः समन्ततः ।

---

8 अ, कु—मंत्रविन्० । 9 कु—राज्ञा । अ—राज्ञ- ।

A2 पं—स्वस्ति पुण्याहघोषेषु देवतायतनेषु च ॥
प्रसादं राघवो राज्ञः शिरसा प्रतिगृह्य च ।
स्पर्शयामास शुभ्रे सहस्राणि गवां ददौ ॥

10 अ, कु—०ज्ञाप्य । 11 अ, कु—महामतिः । 12 अ, कु—०ज्ञाप्य ।
13 अ, कु—स राजभवनाभियान्मुनिः कैलाससन्निभात् । 14 अ, कु—वृंदवृ० । पं—वंदिवृ० ।

बभूवुरतिसंबाधा[15] जनैर्जातकुतूहलैः ॥O १६ ॥
तदा[16] हि[17] सृग्यमानस्य[17] हर्षोद्धतोर्मिभिर्जनैः ।O
बभूव राजमार्गस्य सागरस्येव निस्वनः ॥ १७ ॥
सिक्तसंमृष्टरथ्या हि सा राजपथमालिनी[18] ।
आसीदयोध्या नगरी समुच्छ्रितगृहध्वजा[19] ॥ १८ ॥
तदा ह्ययोध्यानिलयः स्त्रीबालसहितो[20] जनः[21] । A3
रामाभिषेकमाकांक्षन्नाकांक्षन्नुदयं[22] रवेः ॥ १९ ॥
प्रजालंकारभूतं च[23] जनस्यानन्दवर्द्धनम् ।
उत्सुको ऽभूज्जनो द्रष्टुं तमयोध्यामहोत्सवम् ॥ २० ॥
एवं तं[24] जनसंबाधं राजमार्गं पुरोहितः ।
व्यूहन्निव जनौघं तं[25] तदा राजकुलं ययौ ॥ २१ ॥
सिताभ्रशिखरप्रख्यं प्रासादमधिरुह्य[26] सः ।
समियाय नरेन्द्रेण शक्रेणेव बृहस्पतिः ॥ २२ ॥
समागतमभिप्रेक्ष्य हित्वा राजासनं नृपः ।
पप्रच्छ स च तस्मै तत्कृतमित्यभ्यवेदयत् ॥ २३ ॥
तेनैव च तदा तुल्याः सहासीनाः सभासदः ।
आसनेभ्यः समुत्तस्थुः पूजयन्तः पुरोहितम् ॥ २४ ॥

---

15 पं—०संबद्धा । 16 पं—तथा । 17 कु—भिसृज्यमानस्य । Oअ—रपत्तम् । 18 के—०शालिनी । 19 अ, कु—बहुध्वजा । 20 अ, कु—सस्त्रीबालजनो । पं-सस्त्रीबालयुवा । 21 कु-नतः । A3 पं-न सुष्वाप तदा रात्रौ प्रहर्षोत्सुकमानसः । 22 पं-०माकांक्षन्नुदयं च तथा । 23 अ, कु—हि । 24 अ, कु—तु । पं—स । 25 पं—तु । 26 अ, कु—०माभिरुह्य ।

गुरुणा सो ऽभ्यनुज्ञातो मनुजौघं विसृज्य तम् ।
विवेशान्तःपुरं राजा सिंहो गिरिगुहामिव ॥ २५ ॥
तदग्र्युदग्रप्रमदाजनाकुलं[27] महेन्द्रवेश्मप्रतिमं निवेशनम् ।
सुशोभनं[1] चारु[28] विवेश पार्थिवः शशीव तारागणमण्डितं[29] नभः ॥२६॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकांडे रामोत्सवो[30]
नाम सप्तमः सर्गः[30] ॥ ७ ॥

---

27 अ, पु तदग्र्युदग्र प्रमदा० । प—तदामुदग्र प्रमदा० । 28 अ, पु—महोभयद्वार । प—सुशोभयद्वार । 29 अ, पु, प—०गणसकुल । 30 अ, पु—रामाभिषेकोपवासविधानसर्गः । प—रामाभिषेकं प्रवास विधानं नाम सप्त ।

[अष्टमः सर्गः]

गते पुरोहिते रामः स्नातः प्रयतमानसः ।
सह पत्न्या विवेशाथ लक्ष्म्या नारायणो यथा ॥ १ ॥
प्रगृह्य शिरसा पात्रं[1] हविषो विधिवत्तदा ।
महते दैवतायाज्यं जुहाव ज्वलितेऽनले ॥ २ ॥
शेषं च हविषस्तस्य प्राश्याशास्यात्मनो हितम्[2] ।
ध्यायन्नारायणं देवं स्वास्तीर्णे[3] कुशसंस्तरे ॥ ३ ॥
वाग्यतः सह वैदेह्या भूत्वा नियतमैथुनः[4] ।
श्रीमत्यायतने विष्णोः शिश्ये नरवरात्मजः ॥ ४ ॥
एकयामावशिष्टायां रात्र्यां च प्रतिबुद्ध्य सः[5] ।
अलंकारविधिं कृत्स्नं कारयामास वेश्मनः ॥ ५ ॥
ततः शृण्वन् शुभा वाचः सूतमागधवन्दिनाम् ।
पूर्वां सन्ध्यामुपासीनो जजाप यतमानसः ॥ ६ ॥
तुष्टाव[6] प्रणतश्चैव[7] प्रणम्य मधुसूदनम् ।
विमलक्षौमसंवीतो वाचयामास च द्विजान् ॥ ७ ॥
तेषां पुण्याहघोषोऽथ गंभीरमधुरस्तदा ।
अयोध्यां पूरयामास तूर्यघोषविमिश्रितः ॥ ८ ॥
कृतोपवासं च[O] तदा[O] वैदेह्या[O] सह[O] राघवम्[O] ।
अयोध्यानिलयः श्रुत्वा सर्वः प्रमुमुदे जनः ॥[O] ९ ॥
ततः पौरजनः सर्वः श्रुत्वा रामाभिषेचनम् ।[O]
प्रभातां रजनीं दृष्ट्वा चक्रे शोभां परां पुनः ॥[O] १० ॥

---

1 अ, कु—पात्रीं । 2 पं—प्राश्यात्मव्यसनाहित । 3 पं–०स्तीर्णे । 4 कै–०मानस । 5 कै–रात्रौ च प्रतिबुद्ध्य ह । 6 कै–तत स । 7 अ प्रयत० । कु सतत० । O पं–"च तदा" इत्यारभ्य "मिताम्र" इत्यन्तं त्यक्तम् ।

सिताभ्र-शिखराग्रेषु[8] देवतायतनेषु च ।
चतुष्पथेषु रथ्यासु चैत्येष्वट्टालकेषु[9] च ॥ ११ ॥
नानापण्यसमृद्धेषु वणिजामापणेषु च ।
कुटुम्बिनां समृद्धानां श्रीमत्सु भवनेषु च ॥ १२ ॥
सभासु च[10] सुरम्यासु सम्थानामालयेषु च[10] ।
ध्वजाः समुच्छ्रिताश्चित्राः पताकाश्चाभवंस्तदा[11] ॥ १३ ॥
नटनर्तकसंघानां गायकानां[12] च गायताम् ।
मनःकर्णसुखा वाचः श्रूयन्ते स्म समन्ततः ॥ १४ ॥
रामाभिषेकसंयुक्ताः कथाश्चक्रुर्मिथो जनाः ।
रामाभिषेके सम्प्राप्ते चत्वरेषु गृहेषु च ॥ १५ ॥
बालाश्चापि क्रीडमाना गृहद्वारेषु सर्वशः[13] ।
रामाभिषेकसंयुक्ताश्चक्रिरे[14] ते मिथः कथाः ॥ १६ ॥
कृतपुष्पोपहारश्च धूपगन्धाधिवासितः[15] ।
राजमार्गः कृतः श्रीमान् पौरै रामाभिषेचने ॥ १७ ॥
प्रकाशगमनार्थं च निशागमनशंकया ।
दीपवृक्षांस्तथा चक्रुरनुरथ्यासु सर्वशः[16] ॥ १८ ॥
अलंकारं पुरस्यैवं कृत्वा तत्पुरवासिनः ।
आकाङ्क्षन्तो[17] हि[17] रामस्य यौवराज्याभिषेचनम् ॥ १९ ॥
समेत्य संघशः[18] सर्वे चत्वरेषु[19] सभासु च ।
कथयन्तो मिथस्तत्र प्रशशंसुर्नराधिपम्[20] ॥ २० ॥

---

8 अ, कु-०राग्रेषु। 9 अ कु-त्रिरेषु च। 10 अ कु चत्र सर्वेषु वृक्षेष्वाच्छिन्नेषु च। प—च समस्तासु वृक्षेषूपचनेषु च। 11 अ कु—०स्तथा। 12 अ, कु, प गायनानां। 13 अ-सर्वत। 14 अ, कु प-रामाभिषेव०। 15 अ—०न्धाधिवा०। 16 अ, कु—सर्वत। 17 अ, कु-आकाङ्क्षमाणा। 18 महता। 19 क—चत्वरेषु। 20 अ, कु—प्रासादस्थं नराधिपम्।

अहो महानयं राजा इक्ष्वाकुकुलनन्दनः[21] ।
ज्ञात्वा[22] यो[22] वृद्धमात्मानं रामं राज्ये ऽभिषिंचति[23] ॥ २१ ॥
सर्वे ह्यनुगृहीताः स्मो[24] यन्नो रामो महीपतिः ।
चिराय भविता गोप्ता दृष्टतत्त्वपरावरः ॥ २२ ॥
अनुद्धतमना विद्वान् धर्मात्मा भ्रातृवत्सलः ।
यथा भ्रातृष्वपि[25] स्निग्धस्तथास्मास्वपि[26] राघवः ॥२३॥
चिरं जीवतु धर्मात्मा राजा दशरथो ऽनघः[27] ।
यत्प्रसादादभिषिक्तं द्रक्ष्यामो राघवं वयम् ॥ २४ ॥
मिथः कथयतामेवं पौराणां शुश्रुवे[28] तदा ।
दिग्भ्यो ऽपि श्रुतवृत्तान्तः प्राप्तो जानपदो जनः ॥ २५ ॥
स तु दिग्भ्यः पुरं[29] प्राप्तो द्रष्टुं[30] रामाभिषेचनम्[30] ।
सर्वं[31] च[31] पूरयामास पुरं[32] जानपदो जनः ॥ २६ ॥
जनौघैस्तैर्विसर्पद्भिः शुश्रुवे तत्र निःस्वनः[33] ।
पर्वसूदीर्णवेगस्य सागरस्येव गर्जतः[34] ॥ २७ ॥
ततस्तदिन्द्रक्षयसन्निभं पुरं दिदृक्षुभिर्जानपदैरुपागतैः ।
समन्ततः सस्वनमाकुलं बभावनेकयादोभिरिवार्णवं[35] पयः ॥२८॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे पुरालंकरणं[36]
नामाष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

---

21 अ, कु—०वर्द्धनः । पं—नंदन । 22 अ—ज्ञात्वासौ । 23 अ, कु—भिषेक्ष्यति । 24 पं—स्म । 25 पं—च भ्रातृषु । 26 पं—० स्मासु च । 27 अ, कु—नृपः । 28 पं-शुश्रुमे । 29 अ, कु, पं—पुरीं । 30 अ कु, पं—द्रष्टुकामोऽभिषेचनं । 31 अ, कु, पं—रामस्य । 32 अ, कु, पं-पुरीं । 33 अ, कु, पं—निस्वनः । 34 अ, कु—निस्वनः 35 अ-०चार्णव— कु—० चार्णवे । 36 अ, कु, पं—पुरशोभाविधानं ।

[नवमः सर्गः]

ज्ञातिदास्यथ कैकेय्याः सहोढा परिचारिका ।
प्रासादाग्रमथारूढा[1] तस्मिन् काले यदृच्छया ॥ १ ॥
सा[3]–ददर्शाथ[2] तत्रस्था श्रीमद्राजपथां[3] पुरीम् ।
समुच्छ्रितध्वजवती हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २ ॥
तां च दृष्ट्वा पुरीं रम्यामलंकृतजनाकुलाम् ।
सुदूरस्थां समासाद्य धात्रीं कांचिदपृच्छत्[4] ॥ ३ ॥
कस्मात् पौरजनस्यायमतिहर्षो ऽद्य[5] शंस मे ।
चिकीर्षितं किं नृपतेः कार्यं पौरजनप्रियम् ॥ ४ ॥
उत्तमेन च हर्षेण हर्षिताऽद्य विशेषतः ।
राममाता धनोत्सर्गं कुरुते केन हेतुना ॥ ५ ॥
इति पृष्टा तया धात्री कुब्जया भृशहर्षिता ।
आचचक्षे यथावृत्तं यौवराज्याभिषेचनम्[0] ॥ ६ ॥
श्वः[0] पुष्ययोगेन[0] किल[0] यौवराज्ये स्वमात्मजम् ।
अभिषेचयिता राजा[6] रामं[6] गुणगणाकरम्[7] ॥ ७ ॥
तेनाथ[8] हर्षितः सर्वो जनो ऽयमभिषेचने[9] ।
पुरी चालंकृता पौरै राममाता च हर्षिता ॥ ८ ॥
इति श्रुत्वाऽप्रियं पापा कुब्जा क्षिप्रममर्षिता ।
तस्मात्प्रासादशिखरादवतीर्य त्वरान्विता ॥ ९ ॥

---

1 अ, कु, प–०ग्रमुपारूढा । 2 अ, कु ददर्श साथ । 3 पं–०जवथा । 4 अ, कु—०दभाषत । 5 के—हि । 0पं—नास्ति । स्पष्टं भाति । 6 अ, कु–राम राजा । 7 अ, कु—सर्वगुणाकरम् । 8 अ, कु—तेनायं । 9 अ, कु–रामाभि० ।

संरक्तनयना कोपात् मन्थरा पापनिश्चया ।
शयानामेव कैकेयीमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥
उत्तिष्ठ मूढे किं शेषे भयं घोरमुपागतम्[10] ।
समभिप्लुतमात्मानं[11] दुर्भगे नावबुध्यसे ॥ ११ ॥
वृथा[12] सौभाग्यमानेन दुर्भगे त्वं विदह्यसे[13] ।
गिरिनद्या इव स्रोतस्तव सौभाग्यमस्थिरम् ॥ १२ ॥
तथैवमुक्ता कैकेयी मंथरया[14] परुषं वचः ।
कुब्जायाः[15] पापदर्शिन्याः[15] प्रष्टुं समुपचक्रमे ॥ १३ ॥
मन्थरे किं[16] नु क्रुद्धाऽसि[16] कच्चित्क्षेमं निवेदय ।
विषण्णवदनां[17] हि त्वां लक्षयामि सुदुःखिताम् ॥ १४ ॥
मन्थरा तद्वचः श्रुत्वा कैकेय्या[ः][18] पुनरब्रवीत् ।
संरंभामर्षताम्राक्षी वाक्यं वाक्यविशारदा ॥ १५ ॥
भूयो विषादयिष्यन्ती कैकेयीं पापनिश्चया ।
रागाद्विभेदयिष्यन्ती किल तस्याहितैषिणी ॥ १६ ॥
अक्षेमं सुमहद्देवि तथेदं समुपस्थितम् ।
रामं दशरथो राजा यौवराज्ये ऽभिषेक्ष्यति ॥ १७ ॥
साऽगम्यपारे[19] भृशं मग्ना दुःखशोकमहार्णवे ।
दह्यमानाऽनलेनेव[20] त्वद्धितार्थमुपागता ॥० १८ ॥

10 अ, कु, पं—ते घोरमागतम् । 11 कै—०भिप्लुष्मा० । अ, कु—समुपप्लु० । 12 अ, कु–तथा । 13 कै–विमुह्यसि । 14 अ, कु–संरंभ–। 15 अ, कु—कुब्जया पापदर्शिन्या । 16 अ, कु—किमसि क्रुद्धा । पं—किमु० । 17 कै—विवर्ण० । पं—विपन्नव० । 18 अ, कु—कैकेयीं । कै, पं—कैकेय्या । 19 कु—माचापारे । 20 अ, कु—प्रनष्टाऽस्म्यनलेनेव ।

[नवमः सर्गः]

ज्ञातिदास्यथ कैकेय्याः सहोढा परिचारिका ।
प्रासादाग्रमथारूढा[1] तस्मिन् काले यदृच्छया ॥ १ ॥
सा[2]—ददर्शाथ[2] तत्रस्था श्रीमद्राजपथां[3] पुरीम् ।
समुच्छ्रितध्वजवतीं हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २ ॥
तां च दृष्ट्वा पुरीं रम्यामलंकृतजनाकुलाम् ।
सुदूरस्थां समासाद्य धात्रीं कांचिदपृच्छत[4] ॥ ३ ॥
कस्मात् पौरजनस्यायमतिहर्षोऽद्य शंस मे ।
चिकीर्षितं किं नृपतेः कार्यं पौरजनप्रियम् ॥ ४ ॥
उत्तमेन च हर्षेण हर्षिताऽद्य विशेषतः ।
राममाता धनोत्सर्गं कुरुते केन हेतुना ॥ ५ ॥
इति पृष्टा तया धात्री कुब्जया भृशहर्षिता ।
आचचक्षे यथावृत्तं यौवराज्याभिषेचनम्O ॥ ६ ॥
श्वःO पुष्ययोगेनO किलO यौवराज्ये स्वमात्मजम् ।
अभिषेचयिता राजा[6] रामं[6] गुणगणाकरम्[7] ॥ ७ ॥
तेनाथ[8] हर्षितः सर्वो जनोऽयमभिषेचने[9] ।
पुरी चालंकृता पौरै राममाता च हर्षिता ॥ ८ ॥
इति श्रुत्वाऽप्रियं पापा कुब्जा क्षिप्रमसर्पिता ।
तस्मात्प्रासादशिखरादवतीर्य त्वरान्विता ॥ ९ ॥

---

1 अ, कु प-०ग्रमुपारूढा । 2 अ, कु ददर्श साथ । 3 पं-०जवथा ।
4 अ, कु—०द्भाषत । 5 के—हि । Oपं—नास्ति । त्यक्तं भाति ।
6 अ, कु-राम राजा । 7 अ, कु—सर्वगुणाकरम् । 8 अ, कु—तेनायं ।
9 अ, कु—रामाभि० ।

संरक्तनयना कोपात् मन्थरा पापनिश्चया ।
शयानामेव कैकेयीमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥
उत्तिष्ठ मूढे किं शेषे भयं घोरमुपागतम्[10] ।
समभिप्लुतमात्मानं[11] दुर्भगे नावबुध्यसे ॥ ११ ॥
वृथा[12] सौभाग्यमानेन दुर्भगे त्वं विदह्यसे[13] ।
गिरिनद्या इव स्रोतस्तव सौभाग्यमस्थिरम् ॥ १२ ॥
तथैवमुक्ता कैकेयी संश्रुत्य[14] परुषं वचः ।
कुब्जायाः[15] पापदर्शिन्याः[15] प्रष्टुं समुपचक्रमे ॥ १३ ॥
मन्थरे किं[16] नु क्रुद्धाऽसि[16] कच्चित्क्षेमं निवेदय ।
विषण्णवदनां[17] हि त्वां लक्षयामि सुदुःखिताम् ॥ १४ ॥
मन्थरा तद्वचः श्रुत्वा कैकेय्या[ः][18] पुनरब्रवीत् ।
संरंभामर्षताम्राक्षी वाक्यं वाक्यविशारदा ॥ १५ ॥
भूयो विषादयिष्यन्ती कैकेयीं पापनिश्चया ।
रागाद्विभेदयिष्यन्ती किल तस्याहितैषिणी ॥ १६ ॥
अक्षेमं सुमहद्देवि तवेदं समुपस्थितम् ।
रामं दशरथो राजा यौवराज्ये ऽभिषेक्ष्यति ॥ १७ ॥
साऽम्यपारे[19] भृशं मग्ना दुःखशोकमहार्णवे ।
दह्यमानाऽनलेनेव[20] त्वद्धितार्थमुपागता ॥० १८ ॥

10 अ, कु, पं—ते घोरमागतम । 11 पं—०भिन्लुप्तमा० । अ, कु—समुपप्लु० । 12 अ, कु—तथा । 13 पं—विमुह्यसि । 14 अ, कु—संरंभ— । 15 अ, कु—कुब्जया पापदर्शिन्या । 16 अ, कु—किमसि क्रुद्धा । पं—किमु० । 17 कै—विवर्ण० । पं—विपन्नव० । 18 अ, कु—कैकेयी । कै, पं—कैकेय्या । 19 कु—त्वाचापारे । 20 अ, कु—प्रनगाऽऽक्रम्यनलेनेव ।

तव दुःखेन कैकेयी मम दुःखं[21] महद्[21] भवेत् ।
त्वद्वृद्धया मम वृद्धिश्च भवेदिति न संशयः ॥[22]१९॥[O]
[महीपतिकुले जाता महिषी पृथिवीपतेः ।
उग्रत्वं राजधर्माणां कथं देवि न बुध्यसे ॥ २० ॥
धर्मवादी शठो भर्ता श्लक्ष्णवक्ता च दारुणः ।
शुद्धभावे न जानीषे तेनैवमभिहिंसिता ॥ २१ ॥
उपस्थितं प्रयुंक्ते ऽसौ त्वयि सर्वमनर्थकम् ।
अर्थेनैवाद्य ते भर्ता कौसल्यां योजयिष्यति ॥ २२ ॥
अवरुध्य हि शाथेन* भरतं तव बंधुषु ।
कल्ये स्थापयिता रामं राज्ये निहतकंटके ॥ २३ ॥
शत्रुः पतिप्रवादेन पुत्रेन हितकाम्यया ।
आशीविष इवांकेन भर्ता परिभृतस्त्वया ॥ २४ ॥
यथा हि कुर्यात्सर्पो वा शत्रुर्वाप्यनवेक्षितः ।
राज्ञा दशरथेनाद्य तथा ते सहसा कृतम् ॥ २५ ॥
पापेनानृतसत्त्वेन बाला राज्यसुखे स्थिता ।
रामं स्थापयिता राज्ये सानुबंधा हता ह्यसि ॥ २६ ॥][23]
संप्राप्तकालं कैकेयि क्षिप्रं कुर्यात्मनो हितम् ।[24]
त्रायस्व[25] सुतमात्मानं[25] मां[26] चैवामित्रकर्षणि[26] ॥ २७ ॥

21 अ, कु—दु खतर। 22 अ, कु—तव वृद्धौ हि मे (कु-मम) वृद्धि हि गिति मे निश्चिता मति । Oप—नास्ति 23 अ, कु, प—नास्ति। 24 अ, कु, प—तत्प्राप्तकाल कैकेयि कर्तुमर्हसि मे वच । 25 अ, कु, पं रक्ष पुत्र तथात्मान । 26 अ, कु—०कर्षणे । प—जानेयाामित्रकर्षिणी ।

तथा कुरु यथा रामं नाभिषिंचति ते पतिः ।
सकामां कुरु कौशल्यां मा सपत्नीमनिन्दिते ॥ २८ ॥
मन्थराया वचः श्रुत्वा कैकेयी परया[27] मुदा[27] ।
एकमाभरणं तस्याः[28] कुब्जायाः[28] प्रददौ शुभम् ॥ २९ ॥
दत्त्वा चाभरणं श्रीमत् प्रीतिदायं प्रहर्षिता ।
कैकेयी मन्थरामेतत् पुनर्वचनमब्रवीत्[29] ॥ ३० ॥
यदिदं मंथरे मह्यमाख्यातं मत्प्रियं हितम् ।
एतत्ते प्रियमाख्यातुं किं वा भूयः करोमि ते ॥ ३१ ॥[30]
[दत्त्वा चाभरणं तस्याः स्थापनीयकमुत्तमम् ।
कैकेयी मन्थरां दृष्ट्वा पुनरेवाब्रवीद्वचः ॥ ३२ ॥][31]
रामे वा भरते वाहं[32] विशेषं नोपलक्षये[32] ।
तस्माद्धन्यास्मि[33] यद्राजा रामं[33] राज्ये ऽभिषेक्ष्यति ॥ ३३ ॥
न मे प्रियं[34] किंचिदतः परं भवेद् यदद्य राजा सुतमेकमात्मजम्[35] ।
गुणाकरं राममुदारविक्रमं स यौवराज्ये[36] प्रतिपादयिष्यति ॥ ३४ ॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे मन्थराप्रनियोधनं[37]
नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

---

27 अ, कु, पं—हर्षिता ततः । 28 अ, कु, पं—मुक्त्वा कुब्जायै । 29 पं—मन्थरां वाक्यमिदं तथाब्रवीत्पुनः । 30 अ, कु, पं—मन्थरे यत्त्वया मेद्य प्रियमाख्यातमीप्सितं । तथेदं (पं—तनेदं) प्रीतिदायं ते (कु—प्रियमाख्यातु) प्रीत्या (पं—प्रीता) भूयो ददामि ते (पं—च) । 31 अ, कु, पं नास्ति । 32 अ, कु, पं वापि विशेषो नास्ति कश्चन । 33 अ, कु—तस्मात्प्रियं मे यद्रामं राजा । पं—तस्मात्प्रियतरं रामं राजा । 34 पं—प्रियं । 35 कं—सुतमिष्टमात्मजात । 36 अ, कु—यौवराज्ये । 37 अ, कु—मंथराप्रनियोधनं सर्गः । पं—ऽप्रतिबोधनो नाम सर्गः ।

[दशमः सर्गः]

'इत्युक्त्वा तत्र कैकेय्या तत्परिक्षिप्य[1] भूषणम् ।
मात्सर्यं मन्थरा वाक्यमिदं भूयो ऽभ्यभाषत ॥ १ ॥
भयस्थाने किमचले हर्षिता त्वमपण्डिते ।
शोकसागरसंमग्नमात्मानं नावबुध्यसे ॥ २ ॥
आशीविषस्त्वां दशतु मूढे पण्डितमानिनि ।
दुर्भगे चाकृतप्रज्ञे[2] विपरीतार्थदर्शिनि ॥ ३ ॥
कौशल्यां सुभगां मन्ये यस्याः पुत्रो ऽभिषिच्यते ।
यौवराज्ये पैतृके ऽस्मिन् पुण्येण[3] कृतलक्षणः ॥ ४ ॥
प्राप्तां सुमहदैश्वर्यमृद्धामृद्धिविवर्जिता[4] ।
उपस्थास्यसि कौशल्यां दासीव त्वमपण्डिते ॥ ५ ॥
ऋद्धियुक्ता श्रियाजुष्टा[5] रामपत्नी भविष्यति ।
अहृष्टाश्च भविष्यन्ति स्नुषास्ते करुणालये ॥[6] ६ ॥
तां तथा भृशमप्रीतां ब्रुवतीं वीक्ष्य[7] मन्थराम् ।
प्रीता रामगुणानेव कैकेयी प्रशशंस ह[8] ॥ ७ ॥
धर्मात्मा गुरुवर्ती च कृतज्ञः सत्यवाक् शुचिः ।
रामो राज्ञः सुतो ज्येष्ठो युवराजत्वमर्हति ॥ ८ ॥

---

1 अ, कु—तत्परित्यज्य । 2 कै-हकृतप्रज्ञे । पं-अकृतप्रज्ञे । 3 कै, पं—पुण्येन । 4 पं—०वर्जिते । 5 अ, कु—श्रियाविष्ट । 6 अ, कु—अश्रीमती त्वमवृद्धा (अ वृद्धा) स्वजनेन विवर्जिता । पं—०अश्रीत्वमप्रवृद्धच स्वजनेन च वर्जिता । 7 अ, कु, पं-प्रेक्ष्य । 8 अ, कु पं-वै ।

भ्रातॄन् सर्वान् स दीर्घायुः पितृवत् पालयिष्यति ।
मातॄणां चैव सर्वासां प्रियाण्युपहरिष्यति[9] ॥०९ ॥
विशेषतः पूजयति[10] कौशल्यामप्यतीत्य[11] माम् ।
रामो राजीवताम्राक्षः सर्वत्र[12] समदर्शनः[12] ॥ १० ॥
अकल्याणं नास्ति रामे प्रद्वेषश्च महात्मनि ।
संतापं मा कृथास्तस्माच्छ्रुत्वा रामाभिषेचनम् ॥ ११ ॥

भरतश्चापि रामस्य ध्रुवं वर्षशतात्परम् ।
पितृपैतामहं राज्यं क्रमप्राप्तमवाप्स्यति[13] ॥ १२ ॥
सा त्वमभ्युदये प्राप्ते ममानन्दे च मन्थरे ।
भविष्यति च कल्याणे[14] कथं[15] नु[15] परितप्यसे ॥ १३ ॥
इत्येवं वचनं श्रुत्वा मन्थरा भृशदुःखिता ।
दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य कैकेयीं पुनरब्रवीत् ॥ १४ ॥
अनर्थदर्शिन्यप्रज्ञे[16] नात्मानमवबुध्यसे ।
अगाधे दुःखपाताले मज्जन्ती[17] त्वमनन्तके ॥ १५ ॥
भविता राघवो राजा रामस्य च सुतस्ततः ।
तस्यान्यस्तस्य[18] चाप्यन्यो[18] वंश्यो[19] राजा[19] भविष्यति।१६।

9 कै—शुश्रूषां च करिष्यति । 0अ—नास्ति । त्वत्तः मानि । 10 पं—पूजयिता । 11 कै—कौशल्यामप्यति । 12 अ, पु, सर्वस्य प्रियदर्शनः । 13 अ, पु, क्रमात्प्राप्त० । 14 पं—कल्याणि । 15 कै—कस्मात्त्वं । पं—कथं त्वं । 16 कै, पं—दर्शिनी मूढे । 17 अ, पु—मग्नं । 18 पं तत्पुत्रः पुत्रको वंशे । 19 कै—वंश्य० । पं—महाराजो ।

राज्यवंशात्तु[20] कैकेयी भरतः परिहास्यते[21] ।
न हि राज्ञः सुताः सर्वे राज्ये तिष्ठन्ति भामिनि[22] ॥ १७ ॥
बहूनामपि पुत्राणामेको राज्येऽभिषिच्यते ।
स्थाप्यमानेषु सर्वेषु सुमहाननयो भवेत् ॥ १८ ॥
तस्माज्ज्येष्ठेषु पुत्रेषु राज्यतन्त्राणि पार्थिवाः ।
आसज्जन्त्यनवद्याङ्गि गुणवत्स्वितरेषु वा[23] ॥ १९ ॥
ते[24] च ज्येष्ठाः स्वपुत्रेषु ज्येष्ठेष्वेव[24] न संशयः[25] ।
आसज्जन्त्यखिलं राज्यं न भ्रातृषु कथंचन ॥ २० ॥
अतो[26] ऽत्यन्तमपूजार्हस्तव[27] पुत्रो भविष्यति ।
अनाथवत्सुखाद्धीनो राजवंशाच्च शाश्वतात्[28] ॥ २१ ॥
साऽहं[29] त्वदर्थं संप्राप्ता त्वं च मोहान्न[30] बुध्यसे[30] ।
सपत्निवृद्धौ[31] या मे त्वं[32] अदेयं[32] दातुमिच्छसि ॥ २२ ॥
ध्रुवं च भरतं रामः प्राप्य राज्यमकण्टकम् ।
देशान्तरं वासयिता[33] देहान्तरमथापि वा ॥ २३ ॥
बाल एव हि[34] मातुल्यं[34] भरतो नायितस्त्वया[35] ।
सन्निकर्षाच्चानुरागो देवि सर्वस्य जायते ॥ २४ ॥

---

20 अ, पं—राज० । 21 अ, पं—० हास्यति । 22 अ, कु—भाविनी । पं—भाविनि । 23 पं, कु—च । 24 अ, कु—राज्याभिषेकं कुर्वन्ति ते च ज्येष्ठे । पं—०ज्येष्ठेषु च । 25 पं—संशयम् । 26 पं, कै—अहो । 27 कै—नित्यमपूजा० । 28 कै, पं—हास्यति । 29 अ, कु त्वदर्थे । 30 अ, कु मां नावबुध्यसे । 31 अ, कु—सपत्न० । पं—सपत्न्यवृद्धौ । 32 कै—त्वमदेयं । पं—वं अदेयं । 33 अ—वासयिता । 34 कै—मातुलेय, पं—मातुल्ये । 35 पं—श्रापित० ।

शत्रुघ्नो[35] भरते रक्तो[36] लक्ष्मणश्चापि राघवे[37] ।
अश्विनोरिव सौभ्रात्रमन्योर्लोकविश्रुतम् ॥ २५ ॥
तस्मान्न लक्ष्मणे किंचित्पापं रामः करिष्यति ।
रामस्तु भरते पापं कुर्यादिति न संशयः ॥ २६ ॥
मातामहगृहादेवे[38] तस्माद्यातु[39] ते सुतः ।
वनमाश्रयितुं शीघ्रमेतद्धयस्य[40] क्षमं भवेत् ॥ २७ ॥
एतत्ते[41] ज्ञातिपक्षस्य श्रेयः स्यादिति मे मतिः ।
यदि वा भरतो राज्यं पित्र्यर्थं[42] समवाप्स्यति[43] ॥ २८ ॥
स ते[44] सुखोचितो बालो रामस्य सहजो रिपुः ।
समृद्धार्थस्य हीनार्थः कथं जीवेत्तवात्मजः ॥ २९ ॥
अभिद्रुतमिवारण्ये सिंहेन गजयूथपम् ।
उच्छिद्यमानं[44] रामेण भरतं त्रातुमर्हसि ॥ ३० ॥
दर्पाद्धि नित्यनिकृता[45] त्वया सौभाग्यमत्तया ।
रामभाता सपत्नी ते कथं वैरं न यातयेत् ॥ ३१ ॥
कृते हि रामे ऽद्य[46] महीपतौ क्षितौ गमिष्यसि त्वं ससुता पराभवम् ।
अतो ऽनुसंचितय[47] राज्यमात्मजे परस्य चैवाद्य विवासकारणम् ॥३२॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे मन्थरावाक्यं
नाम दशमः सर्गः ॥ १० ॥

---

36 अ, कु—भक्तः हि रामः सौमित्रिः । 37 अ, कु-राघवं । 38 अ, कु—०हादेव । 39 अ, कु—०हागच्छतु । 40 अ, कु-०मेतद्दस्य । 41 अ, कु-एवं ते । 42 अ, कु-पैत्र्यं धर्मं (कु धर्म्यं) मवाप्स्यति । 43 अ, कु-मे । 44 के—उच्छिद्यमानं । 45 अ, कु—नित्यं निरस्ता । 46 अ, कु—ऽद्य । 47 के—हि सं० ।

[एकादशः सर्गः]

एवमुक्ता तु कैकेयी विनिश्वस्याब्रवीद्वचः ।
सत्यं वदसि मे[1] कुब्जे जाने ते भक्तिमुत्तमाम्[2] ॥ १ ॥
न तु[3] पश्याम्युपायं[4] तं येन शक्येत मे सुतः
इद प्रापयितुं राज्यं पितृपैतामह बलात् ॥ २ ॥
अनुरक्तो नृपश्चापि[5] रामं गुणगणान्वितम् ।
स कथं राममुत्सृज्य[6] प्राणेभ्योऽपि प्रिय सुतम् ॥ ३ ॥
भरतं नाम मे पुत्रमभिषिञ्चेदकारणम् ।
प्रव्राजयेच्चापि[7] नृपः कथं राममकारणे[8] ॥ ४ ॥
इत्येतद्वचनं श्रुत्वा कैकेय्या मन्थरा ततः ।
उवाचेदं विनिश्चित्य स्वबुद्ध्या[9] पापनिश्चया[9] ॥ ५ ॥
इमं राममहं[10] क्षिप्रं वनं प्रस्थापयामि ते ।
भरतस्याभिषेकं च कारयामि यदीच्छसि ॥ ६ ॥
श्रुत्वैतन्मन्थरावाक्यं कैकेयी हृष्टमानसा ।
किंचिदुत्थाय शयनात् स्वास्तीर्णादिदमब्रवीत् ॥ ७ ॥
कथय त्वं महाप्राज्ञे केनोपायेन मन्थरे ।
भरतः प्राप्नुयाद्राज्यं रामश्चैन वनं व्रजेत् ॥ ८ ॥
एवमुक्ता तया देव्या मन्थरा पापनिश्चया ।
वाक्यं दुःखाय रामस्य कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ ९ ॥

---

1 के मा । 2 अ, कु—इमां वाचमनुत्तमां । 3 अ च । 4 पं—०म्युपा । 5 पं—रक्त । 6 अ, कु—श्याय । 8 प—त्सृज्य । 7 कु—०येच्चा तं । अ, प—०येद्वापि । 8 कु—०मकारण । अ—रामस्य कारणम् । 9 अ, कु—बुद्ध्या पापविनिश्चया । 10 कै—राममहो ।

यत्त्विदानीमात्महितं[11] शृणु मे त्वमिदं[12] वचः ।
यथा ते भरतः पुत्रो राज्यं प्राप्स्यत्यसंशयम्[13] ॥ १० ॥
पुरा देवासुरे युद्धे युद्धसज्जः[14] पतिस्तव ।
याचितो देवराजेन युद्धं कर्तुमितो गतः ॥ ११ ॥
दिशमास्थाय कैकेयि दक्षिणां दण्डकां[15] प्रति ।
वैजयन्तमिति ख्यातं पुरं यत्र तिमिध्वजः ॥ १२ ॥
स शंबर इति ख्यातो बहुमायो महासुरः ।
ददौ शक्राय संग्रामं देवसंघैर्विनिर्जितः[16] ॥ १३ ॥
तस्मिन्महति संग्रामे राजा शस्त्रपरिक्षतः ।
विजित्याभ्यागतो[17] देवि त्वयोपचरितः स्वयम् ॥ १४ ॥
व्रणसंरोपणं[18] चास्य तत्र देवि त्वया कृतम् ।
परितुष्टेन ते दत्तौ वरौ द्वौ ननु[19] भामिनि[20] ॥ १५ ॥
स त्वयोक्तः प्रतिश्रुत्य[21] यदेच्छेयं[22] तदा वरौ ।
गृह्णीयामिति तत्रैवं[23] तथेत्युक्तं महात्मना ॥ १६ ॥
अनभिज्ञा ह्यहं देवि त्वयैव कथितं पुरा ।
पतिं[24] वरौ तौ याचस्व[25] भरतस्याभिषेचनम् ॥ १७ ॥

---

11 अ, पु–हंतेदा० । 12 अ, पु–तदिदं । 13 अ, पु–प्राप्नोत्य० । 14 अ, पु—०सख्यः । 15 कै—दांडकां । 16 अ,पु—०घैरनि० । 17 कै–स विपद्गतो । पं—स चितामागतो 18 अ, पु, पं—०संरोहणं । 19 अ, पु—तत्र । 20 अ, पु, पं–मानिनि 21 अ, पु, पं—पतिस्तत्र । 22 कै, पं—यदीच्छेयं । 23 अ, पु—तथैव । 24 अ, पु—तौ वरौ याच भर्तारं । पं—पतिं याचस्व च वरौ ।

प्रव्राजनं च रामस्य वर्षाणि हि चतुर्दश ।
क्रोधागारं प्रविश्याद्य[25] भूत्वा[26] क्रुद्धा[26] नृपात्मजे ॥ १८ ॥
शेष्वानन्तर्हितायां[27] त्वं[27] भूमौ मलिनवासिनी ।
राजानं मा निरीक्षिष्ठा[28] मा भाषिष्ठाः[29] कथंचन ॥ १९ ॥
सुप्ता भूमावनाथेव दुःखितेव[30] च भामिनि[30] ।
तत्र त्वां शयितां[31] राजा स्वयं दुःखसमन्वितः ॥ २० ॥
प्रसादयिष्यति क्षिप्रं प्रष्टा[32] चार्थविनिर्णयम्[32] ।
दयिता त्वं भृशं भर्तुरत्र मे नास्ति संशयः ॥ २१ ॥
त्वदर्थं हि महाराजः श्रियं दीप्तामपि त्यजेत् ।
मणिमुक्तासुवर्णानि[33] रत्नानि विविधानि च ॥ २२ ॥
यदि दद्याच्च ते राजा[34] मा स्म तेषु मनः कृथाः ।
यदा तु तौ वरौ दित्सुः स्वयमुत्थापयिष्यति[35] ॥ २३ ॥
सत्येन परिगृह्यैनं याचेथास्त्वं[36] तदा वरौ ।
रामप्रव्राजनायैकं नववर्षाणि पंच च ॥ २४ ॥
द्वितीयं यौवराज्याय भरतस्य वरं शुभे ।
तौ[37] यौ[37] देवासुरे युद्धे वरौ दशरथो ददौ ॥ २५ ॥

---

25 के—प्रविश्याथ । 26 अ, कु—क्रुद्धा भूत्वा । 27 कै—शाया नातर्हिता चाल । पं-शयनामन्तरितायास्त्व।28 अ, कु, पं-निरीक्षस्व। 29 प—भाषस्व । 30 अ, कु, पं-दु खिता नाम (प-राग) भाविनी (अ—०नि) । 31 कु—शायिता । 32 अ, कु—प्रक्ष्यत्यपि च निर्णयं । पं—दृष्ट्वा धाप्यचानिगता । 33 कै—यदि मु०।पं—यदा मु० । 34 अ, कु, पं—भर्ता । 35 अ, कु—०पयेत्पति ।36 अ, कु—०थास्तु । 37 अ, कु-यौ तौ ।

तौ स्मारयित्वा याचेथाः पश्चादेतद्[38] वरद्वयम् ।
रामप्रव्राजनं देवि[39] राज्यप्राप्तिं सुतस्य च ॥ २६ ॥
याचेथा शुचि[40] कल्याणि मा त्वां कालो ऽत्यगादयम्[40] ।
ध्रुवं प्रव्राजितश्चैव रामो भद्रे भविष्यति ॥ २७ ॥
भोक्ष्यते चापि पुत्रस्ते ध्रुवं राज्यमकंटकम् ।
येन कालेन काकुत्स्थो वनात्प्रत्यागमिष्यति ॥O २८ ॥
भरतो ऽनेन कालेन बद्धमूलो भविष्यति ।
संगृहीतमनुष्यश्च कोपमांश्च श्रिया युतः ॥ २९ ॥
ऋजुस्वभावे युध्यस्व सौभाग्यबलमात्मनः[41] ।
न त्वां क्रोधयितुं शक्तो न च क्रुद्धामुपेक्षितुम् ॥ ३० ॥
* तव प्रियार्थे राजा हि प्राणानपि परित्यजेत् ।
न व्यतिक्रमितुं[42] शक्तस्तव वाक्यं महीपतिः ॥ ३१ ॥
प्राप्तकालं तु[43] ते[44] मन्ये राजानं[44] जितसाध्वसा ।
रामाभिषेकसंकल्पात् तं[45] विगृह्य निवर्तय[45] ॥ ३२ ॥
*पथ्यरूपमपथ्यं तदधर्म्यं मन्थरावचः ।
*जितस्वभावा कैकेयी प्रतिजग्राह मोहिता[46] ॥ ३३ ॥
*स्वभाव एष नारीणां मूर्खो ऽपि स्वजनो जनः ।
*यद्ब्रवीति तदेवाशु संगृह्णन्त्यविमृश्य[47] हि ॥ ३४ ॥

---

38 अ, पु—पश्चादेवं । 39 अ, पु—चैव । 40 अ, पु—भावि-ष्यत्वं ध्रुवं प्राप्स्यति ते सुत । O पै, पं—नास्ति । स्पष्टं भाति । 41 अ, पु—०गतः० । 42 अ, पु—हानि० । 43 अ, पु—ततो । 44 अ, पु—राज्ये । 45 अ, पु—राजानं विनिवर्तय । पं—विगृह्य विनिवर्तय । 46 पं—मोहिता । 47 गृह्णात्यपापि० । पै—०विमृष्य । *अ, पु—नास्ति ।

*सा तेन कुब्जा वाक्येन मृगीवोत्फुल्ललोचना ।
*व्याधेन गीतसंलोभादनर्थे संनिवेशिता ॥ ३५ ॥
*अर्थाश्चानर्थरूपेण[48] अनर्थाश्चार्थरूपिणः[49] ।
*आविशन्ति विनाशाय नरं तच्चास्य रोचते ॥ ३६ ॥
अनर्थमर्थरूपेण सा ददर्श तयोदिता ।
नहि तद्बुबुधे पापं शापदोषेण मोहिता ॥ ३७ ॥
केकयेषु[50] हि सा[51] बाल्ये[51] ब्राह्मणं मूर्खरूपिणम्[52] ।
अदूषितवती बाला तेन शप्ता महात्मना ॥ ३८ ॥
यस्मादद्वयसे विप्रं त्वं रूपमददर्पिता ।
तस्मादद्वयां त्वमपि लोके प्राप्स्यसि कुत्सिताम् ॥ ३९ ॥
इति शापसमाच्छन्ना मन्थरावशमागता ।
अतीवहृष्टा कैकेयी मन्थरां परिषस्वजे ॥ ४० ॥
परिष्वज्य ततो गाढं कैकेयी हर्षविक्लवा[53] ।
उवाच वचनं धीरा कुब्जां तां पापदर्शिनीम् ॥ ४१ ॥
*मन्म्यगुक्तं त्वया कुब्जे मया च प्रतिपूजितं[54] ।
*नाहमेतद्विजानामि पूर्वं ते वाक्यमुत्तमम् ॥ ४२ ॥
*उपायश्चिंतितः सम्यक् त्वया बुद्ध्या[55] तु[55] पण्डिते ।
*सुष्ठु संस्मारिता ते ऽहं यन्मे दशरथो ददौ ॥ ४३ ॥
*वरौ देवासुरे युद्धे प्राणत्यागं गतो नृपः ।

48 पं—अर्थास्त्वनर्थ० । 49 पं—त्वनर्था० । *अ, कु—नास्ति । 50 अ, कु, पं—कैकेयेषु । 51 पं—बाल्ये च । 52 अ, कु-रूक्ष० । 53 अ—०विह्वला । *अ,कु-नास्ति । 54 पं-प्रतिपालितं । 55 पं—बुध्वा सु- ।

*मम ह्यंकगतो राजा तदाऽऽसीच्छरपीडितः ॥ ४४ ॥
*मया च राक्षसभयात् पतिस्नेहेन रक्षितः ।
*न खल्वस्ति बलं किंचिन्मम राक्षसवारणे ॥ ४५ ॥
*मम विद्याबलं त्वस्ति येनाहं दुष्प्रधर्षणा[56] ।
*विद्यायाश्चागमं कुब्जे शृणु वक्ष्याम्यहं स्वयम् ॥ ४६ ॥
*परं रहस्यमपि यत्सुहृदा तदशेषतः ।
*आख्येयमिति[57] धर्मज्ञाः कथयन्ति मनीषिणः ॥ ४७ ॥
*न हि मे त्वद्विधा लोके काचिदस्ति हितैषिणी ।
*मया प्रहसितो बाल्ये मूर्खवेशो द्विजोत्तमः ॥ ४८ ॥
*जीर्णवस्त्रपरिछन्नः श्मश्रुलस्तृणभूषणः ।
*भस्मभूषितसर्वांगो वृद्धो हर्षवशं गतः ॥ ४९ ॥
*अविज्ञातकथाभाषश्चेष्टाभिरनवस्थितः ।
*प्रसन्नश्चाह निग्रस्त सस्मिता मधुरा गिरम् ॥ ५० ॥
*प्रीतो ऽस्मि[58] नृपतेः कन्ये ब्रूहि किं करवाणि ते ।
*स मया प्रह्वया भूत्वा बध्वा चाञ्जलिकुड्मलम् ॥ ५१ ॥
*उक्तो वाक्यमिदं कुब्जे लज्जया ग्रथिताक्षरम् ।
न किंचिदहमिच्छामि कृतमेतावता मम ॥ ५२ ॥
*यन्मे क्रोधं परित्यज्य प्रसन्नस्त्वं द्विजोत्तम ।
*एवमुक्तेन तु मया तेन हर्षितचेतसा ॥ ५३ ॥
*ममातिसृष्टा[59] विधेयं बहुमानान्मया धृता[60] ।

*अ, कु—नास्ति । 56 प—०र्षिणी । 57 प—०यमपि । 58 प—ह्र ।
59 कै—०तिरपया । 60 कै—गृता ।

*तादिदं सुष्टु ते कुब्जे प्रणीतं बुद्धिनिश्चयात् ॥ ५४ ॥
*विमृष(श)न्त्या स्वयं बुद्ध्या ममापि रुचितं दृढम् ।
*रामो यद्यपि धर्मात्मा गुणवान् भ्रातृवत्सलः ॥ ५५ ॥
*यौवराज्यं महत्प्राप्य व्यत्थाम्यति[61] न संशयः ।
*राज्यश्रीर्हि मनुष्याणां बंधुस्नेहापहारिणी ॥ ५६ ॥
*यया[62] कार्यमकार्यं वा संसृष्टो नानबुध्यते ।
*रक्षणार्थं च पुत्रस्य भरतस्य महात्मनः ॥ ५७ ॥
*अवश्यमेतत्कर्तव्यं वचनं मन्थरे[63] तव ।
*सा त्वेवमुक्ता कैकेय्या प्रहृष्टा मन्थराभवत् ॥ ५८ ॥
*प्रत्युवाचाथ कैकेयीमिदं प्रीतिसमन्विता ।
*दिष्ट्याऽनगच्छसि हितं दिष्ट्या मे सफलःश्रमः ॥ ५९ ॥
*दिष्ट्या पुनर्हितं कर्म कर्तुमद्य व्यवस्यसि ।
*इदं वचोयुक्तमुदाहृतं मया तवानुरागेण सुखायतिक्षमम् ।
*अलं चिरसृष्टेन सुतप्रतीक्षया[64] कुरुष्व मूर्द्ना प्रणतः[65] प्रसादये ॥६०॥

ॐइत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कैकेयीवाक्यं
ॐनामैकादशः सर्गः ॥ ११ ॥



* अ, कु—नास्ति । 61 पं—समेत्स्य । 62 के—यया । 63 पं—मंथरे वचनं । 64 पं—०तीक्ष्ण । 65 पं—प्रणयात ।

[द्वादशः सर्गः]

*मन्थरायै ततः प्रीता कैकेयी प्रमदोत्तमा ।
*कुण्डले श्रवणान्मुक्त्वा प्रददौ प्रीतिलक्षणम् ॥ १ ॥
*दत्त्वा तु कुण्डले देवी तापनीये अनुत्तमे[1] ।
*अव्यक्तं सुस्मितं कृत्वा मन्थरां प्रशशंस ह ॥ २ ॥
प्रज्ञां ते नावजानामि[3] श्रेष्ठां श्रेष्ठाभिभाषिणि[4] ।
अस्यां पृथिव्यां कुब्जासु[5] बुद्ध्या नास्ति समा[6] त्वया[6] ॥३॥
त्वमेव हि[7] ममार्थेषु[7] नित्ययुक्ता हितैषिणी ।
नाज्ञासिषमहं[8] पूर्वं कुब्जे[8] राज्ञश्चिकीर्षितम्[9] ॥ ४ ॥
सन्ति दुःसंस्थिताः कुब्जे वक्राः परमपापिकाः ।[10]O
त्वं पद्ममिवO वातेनO नामिता प्रियदर्शना ॥[11] ५ ॥
उरस्ते समविस्पष्टं[12] यावत्स्कन्धौ समुन्नतौ[12] ।
अधस्ताच्चोदरं शान्तं सुनाभमवलक्षितम्[13] ॥ ६ ॥

---

1 पं—त्वनु० । * अ, कु—नास्ति । 3 अ, कु, पं—नाभिजानामि । 4 अ, कु, पं—श्रेष्ठाभिधायनि (पं-नी) । 5 अ, कु—कुब्जेन्या । पं—कुब्जेतु । 6 पं—त्वया समा । 7 अ, कु—चैव भक्तो मे । 8 अ, कु—नाहं जानामि कुटिलं कुब्जे । पं—आनासि त्वमहं सर्व्वं । 9 कु—रामचकी· र्षितं । अ—स्पष्टं । 10 पं—०परमपापिनः । कु—सन्ति दुःखस्थिताः कुब्जा विरूपा विकृताननाः । O अ—नास्ति । त्वकमस्ति । 11 कु—त्वं तु पद्मांतरनिभा कुब्जे तिप्रि० । अ—त्वं कुब्जे तिप्रि० । पं—०घातेन सघतः प्रिय० । 12 पं—तु विनिष्टं यावत्० । अ, कु—नातिनि- र्भुग्नमाकंठान्मुरसमुन्नतं । 13 अ, कु—विलग्नं च यथा शुनः ।

जघनं तव[14] विस्पष्टं रशनागुणशोभितम्[14] ।
जंघे भृशसमन्यस्ते[15] पादौ च विततांगुली[15] ॥ ७ ॥
त्वमायताभ्यां सक्थिभ्यां[16] मन्थरे शुक्लवासिनी ।
अग्रतो मम गच्छन्ती सारसीव[17] विराजसे ॥ ८ ॥
यदिदं[19] ककुदाकारं[20] कुब्जं ते चारुशोभने[21] ।
मतयः क्षत्रविद्याश्च मायाश्चात्र वसन्ति ते ॥ ९ ॥
अत्र ते प्रतिमोक्ष्यामि कुब्जे मालां हिरण्मयीम् ।
अभिषिक्ते च[22] भरते राघवे[23] च[23] वनं गते ॥ १० ॥
एतेन[24] ते[24] सुवर्णेन मणियुक्तेन[25] सुंदरि ।
समृद्धार्था प्रतीताऽहं भूषयिष्यामि ते तनुम्[26] ॥ ११ ॥
मुखे च तिलकं कान्तं[27] कांचनं कनकप्रभे ।
कारयिष्यामि ते कुब्जे शुभान्याभरणानि च ॥ १२ ॥
यावदग्रनखं[28] लिप्ता चन्दनेन सुगन्धिना ।
परिधाय शुभे वस्त्रे देवतेव[29] चरिष्यसि[29] ॥ १३ ॥
चन्द्रं विस्पर्द्धमानेन मुखेन त्वं[30] शुभानने ।

---

14 पं-०रसनोगुण० । अ, कु-त्ते सु (कु-स) निम्नासं रसनादामशो० । 15 के—द्दासम० । पं—०प्रततागुली । अ, कु—दीर्घे तनु चेव पार्श्वी चाप्यायतौ कृशो । 16 के, प—शक्तिभ्या । 17 अ, कु—नीलवा० । 18 अ, कु-टिट्टिभीव । 19 अ, कु-यच्चेदं । 20 कु-कुदाकारं । 21 अ, कु—चारुदर्शिनी । (कु—ना) । 22 अ, कु, पं-तु । 23 अ, कु, पं-रामे चैव । 24 अ—सुजातेन । कु सुजात्येन । पं-जात्येन ते । 26 अ, कु—गड्डुम् । 27 अ, कु—चित्र । 28 के—० मुख । 29 अ, कु, पं—देवीव विच० । 30 अ, कु—च ।

गमिष्यस्यनवद्यांगि नन्दयन्ती[31] सुहृज्जनम् ॥ १४ ॥
तत्रापि कुब्जे दास्यो ऽन्याः सर्वाभरणभूषिताः^O ।
पादौ परिचरिष्यन्ति यथैव मम भामिनि[32] ॥^O१५ ॥
एवं^O प्रशस्ता^O कैकेय्या^O कुब्जा^O भूयोऽब्रवीदिदम् ।
शयानां शयने शुभ्रे[33] त्वरयन्तीव तां भृशम्[33] ॥ १६ ॥
गतोदके सेतुबन्धः[34] कल्याणि न विधीयते[34] ।
उत्तिष्ठ कुरु कल्याणं राजानं परिमोहय ॥ १७ ॥
तथेत्यथ प्रतिज्ञाय मन्थरावचनं तदा[35] ।
भरतस्याभिषेकाय कैकेयी कृतनिश्चया ॥ १८ ॥
महार्हमणिरत्नाढ्यं मुक्ताहारं वरांगना ।
अवमुच्य तथाऽन्यानि सर्वाण्याभरणानि च ॥ १९ ॥
भृशं विभेदिता देवी तथा मन्थरया तदा ।
क्रोधागारं प्रविश्यैका[36] सौभाग्यबलगर्विता[37] ॥ २० ॥
तप्तहेमोपमतनुः कुब्जावाक्यवशं[38] गता[38] ।
संविश्य भूमौ कैकेयी मन्थरामिदमब्रवीत् ॥ २१ ॥
अत्र[39] वा मां मृतां कुब्जे भर्तुरावेदयिष्यसि ।
वनं वा राघवे याते भरतः प्राप्स्यति श्रियम् ॥ २२ ॥
न धनानि न वस्त्राणि नालंकारान्न भोजनम् ।

31 अ, कु, पं—गर्वयन्ती । 32 अ, पं—भाविनि । O कु—"भरण॰" इत्यारभ्य " कुब्जा भू " इत्यन्तं त्यक्तमास्ति । 33 अ, कु, पं—देवीं कैकेयीं त्वरयंत्युत । 34 अ, कु, पं—न कल्याणि प्रशस्यते । 35 अ, कु—तत । 36 कै—प्रविश्यैव । 37 अ, कु, पं—॰दर्पिता । 38 अ, कु, पं-वशानुगा । 39 अ, कु—इह ।

आसेवयिष्ये[40] ऽहं तावद्यावद्रामो वनं गतः[41] ॥ २३ ॥
इतीदमुक्त्वा वचनं सुदारुणं निधाय सर्वाभरणानि भामिनी[42] ।
असंवृतामास्तरणेन[43] मेदिनीमथाधिशिश्ये पतितेव किन्नरी ॥२४॥
उदीर्णसंरंभमना[44] धृतानना[45] तदा विमुक्तोत्तमदामभूषणा ।
नरेन्द्रपत्नी विमना बभूव सा तमोवृता द्यौरिवनष्टभास्करा ॥ २५

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे[46] मन्थरावाक्यं
नाम द्वादशः सर्गः[45] ॥ १२ ॥

---

40 अ, कु—आ (कु—अ) सेविष्ये ह्यहं । 41 अ, कु—व्रजेत् । 42 पं, कु—भामिनी । 43 अ, कु—असंवृतां संस्तरणेन । 44 अ, कु—संरंभतमोवृता० । 45 अ, कु—राम प्रव्राजनोपायचिन्तासर्गः । कै-द्वादश सर्गः ।

[त्रयोदशः सर्गः]

आज्ञाप्य[1] तु महाराजो राघवस्याभिषेचनम् ।
कैकेय्याः प्रियमाख्यातुं निवेशान्तःपुरं ततः[2] ॥ १ ॥
तां तत्र पतितां भूमौ शयानामतथोचिताम् ।
प्रतप्त इव दुःखेन शुश्राव जगतीपतिः ॥ २ ॥
स वृद्धस्तरुणीं भार्यां प्राणेभ्यो ऽपि गरीयसीम् ।
अपापः पापसंकल्पामुपचक्राम दुःखितः ॥ ३ ॥
सर्वलोकाप्रियं मूढामनर्थमपि[3] चात्मनः[3] ।
कर्तुं[4] प्रयतमाना तां ददर्श पतितां भुवि ॥ ४ ॥
[लतामिव विनिष्कृत्तां पतिता देवतामिव ।
प्रतप्तामिव दुःखेन विज्ञाय जगतीपतिः ॥ ५ ॥][5]
करेणुं[5] विषदिग्धेन[6] विद्धां[7] व्याधेन दुःखिताम् ।
महागज इवासाद्य स्नेहात् पस्पर्श[8] ता नृपः[8] ॥ ६ ॥
स तां विमृज्य[9] पाणिभ्यामतिसत्रस्तचेतनः[10] ।
उवाच राजा कैकेयीं श्वसन्तीमुरगीमिव[11] ॥ ७ ॥
न ते ऽहमभिजानामि क्रोधमात्मनि संयतम् ।

---

1 कै—आज्ञाप्य । 2 अ, घु, पँ—नृप । 3 अ, कु—०मनर्थं लोकगर्हितम् । प—०मनर्थं लोकविश्रुत । 4 अ, घु, प—अचाक्षमाणा सम्प्राप्तो । 5 अ, घु, प—नास्ति । 6 अ, कु प—करेणुमिव दिग्धेन । 7 प—विद्धामत्यत– । 8 अ, घु—परिममार्ज ता । 9 प–निमृश्य । 10 अ, घु—०स्तलोचन । प—०मस्पृशत्त-श्चेतन । 11 प–०र्ती कुररीमिव ।

देवि केनाभिशस्ताऽसि[12] केन वाऽसि निमानिता ॥ ८ ॥
यदिदं मम दुःखाय शेषे कल्याणि दुःखिता ।
सति[13] देवि महाराज्ञि[13] मयि कल्याणचेतसि ॥ ९ ॥
भूतोपहतचित्तेन मम चित्तप्रमाथिनी ।
सन्ति मे कुशला वैद्याः सुविभक्ताश्च[14] वृत्तिभिः ॥ १० ॥
अगदां त्वां[15] करिष्यन्ति व्याधिमाचक्ष्व[16] भामिनि[17] ।
यस्य[18] वा ते प्रियं कार्यं येन[19] वा विप्रियं[20] कृतम् ॥ ११ ॥
कः प्रियं लभतामद्य को वा सुमहदप्रियम् ।
केन देव्यभिशस्ताऽसि[1] केन वाऽसि[21] विमानिता ॥ १२ ॥
अवध्यो वध्यतां को ऽद्य[23] वध्यो[24] वा को[25] विमुच्यताम् ।
दरिद्रः को भवत्वाढ्यो धनवान् को ऽस्त्वकिंचनः ॥ १३ ॥
यदस्ति मे धनं किंचित्तस्य देवि त्वमीश्वरी ।
यावदावर्तते[26] चक्रं तावती[27] मे[27] वसुन्धरा ॥ १४ ॥
प्राच्याश्च सिन्धुसौवीराः[28] सुरसावर्त्तयस्तथा ।
वंगांगमगधा देशाः समृद्धाः काशिकोसलाः[30] ॥ १५ ॥

---

12 अ, प—०शप्तासि । 13 अ, कु—भूमौ पाशप्वनाथेव 14 अ, कु—संवि० । 15 अ, कु—ते । 16 अ, कु—व्यक्तमाचक्ष्व । 17 कु भाविनि । पं—भाविनी । अ भामिनी । 18 अ, कु—कस्य । 19 अ, कु, पं—केन । 20 अ, कु—ते प्रिय । 21 अ, कु, पं—देव्यभिशप्तासि । 22 अ, कु, प—वाद्य । 23 अ, कु—वा । 24 कै—वद्धो । पं–वद्धो । अ, कु–वध्यो । 25 के—ऽद्य । 26 अ, कु—०वत्प्रव० । 27 अ, कु—तावदेषा । 28 प–०सौवीरा 29 पं–सुराष्ट्रवयस्तयस्तथा । 30 पं–काशिकोशलमेकल ।

तत्र जातं बहु द्रव्यं धनधान्यमनन्तकम् [31] ।
ततो वृणीष्व कैकेयि यावत्त्वं मम शंकसे ॥ १६ ॥
वय चैव मदीयाश्च सर्वे तव वशानुगाः ।[32]
न ते किञ्चिदभिप्रायं व्याहन्तुमहमुत्सहे ॥[32] १७ ॥
आत्मनो जीवितेनापि ब्रूहि यन्मनसेच्छसि ।[33]
बलमात्मनि जानामि न मा शंकितुमर्हसि[34] ॥[33] १८ ॥
करिष्यामि तव प्रीतिं सुकृतेनापि ते शपे ।
किमायासेन ते भीरु शीघ्रमुत्तिष्ठ शोभने ॥ १९ ॥
तत्र मे ब्रूहि कैकेयि यतस्ते भयमागतम् ।
तत्ते ऽहमपनेष्यामि नीहारमिव रश्मिवान् ॥ २० ॥
पृथिव्या मर्त्यराजोऽस्मि[35] सम्राडस्मि[36] महीक्षिताम् ।
पृथिव्या नररत्नाना प्रभुरस्मि शुचिस्मिते ॥ २१ ॥[37]
ददामि[38] यत्ते रुचितं[39] कोप मैव[40] कृथाः प्रिये ।A1
[त मन्मथशरैर्विद्धं कामवेगवशानुगम् ॥ २२ ॥

31 प—धन० । 32 प—नास्ति । 33 प—"आत्मनो" इत्यारभ्य 'शपे' इत्यन्त "स्वमीश्वरः" इत्यनन्तर पठ्यते । 34 थ—किं मतुमर्हसि । 35 अ, कु—राजराजो । 36 अ, कु—मध्याद् सर्व । 37 प—नास्ति । 38 अ कु—ददानि । 39 अ, कु—मिमत । 40 अ, कु—मात्र । प—माव ।

A1 अ कु—न ते किंचिदभिप्रेत न कर्तुमहमुत्सहे ।
आत्मनो जीवितेनापि करिष्ये ते प्रिय प्रिये [१]
अ, कु, प—एवमुक्ता समुत्थाय विवक्षुर्भूरामप्रिय ।
परिपीडयितु भूयो भर्तार साध्यमापत [२] ॥

उवाच पृथिवीपालं कैकेयी दारुणं वचः ।][1]
नास्मि विप्रकृता[42] देव केनचिन्नावमानिता[43] ॥ २३ ॥
अभिप्रायोऽस्ति मे कश्चित्तं मे त्वं कर्तुमर्हसि[44] ।
प्रतिजानीहि तावत् त्वं यदि मे[45] कर्तुमिच्छसि[46] ॥ २४ ॥
प्रतिज्ञाते ततोऽहं त्वां वरयिष्यामि कांक्षितम् ।
एवमुक्तस्तया राजा प्रियया स्त्रीवशं गतः ।[O] २५ ॥
प्रविवेश विनाशाय मृगः पाशमिवाबुधः ।[O]
प्रियां प्रियहिते युक्तां भार्यां नित्यमनुव्रताम् ॥ २६ ॥
स तां विज्ञाय सन्तप्तां कैकेयीं पार्थिवो ऽब्रवीत् ।
अवलिप्ते न जानासि त्वत्तः प्रियतरो मम ॥ २७ ॥
राममेकं वर्जयित्वा लोकेष्वन्यो[47] न विद्यते ।
[तेन ज्येष्ठेन रामेण मुख्येन च महात्मना ॥ २८ ॥
शपेयं जीवतार्हेण ब्रूहि यन्मनसेच्छसि ।
यं मुहूर्तमपश्यंस्तु न जीवेयमहं शुभे ॥ २९ ॥
तेन रामेण कैकेयि शपे ब्रूहि किमिच्छसि ।]
दद्यामहं[48] प्रिये सर्वं स्वीयं[49] हृदयमप्यहम् ॥ ३० ॥
अतः समीक्ष्य कैकेयि ब्रूहि यत्साधु मन्यसे ।

---

41 अ, कु, पं—नास्ति । 42 पं—निर्भर्त्सिता । 43 अ, कु, पं—०विप्रियिमानिता । 44 अ, कु, पं—अभीप्सितं च (पं-तु) मे किंचित् प्रियं कर्तुमिहार्हसि । 45 पं—त्वं । 46 अ, कु-तद्दातुमिच्छसि । Oपं-नास्ति । 47 पं—लोके ह्यन्यो । 48 अ, कु, पं—नास्ति । 49 अ, कु—दास्ये ते परित्यैनं प्रिये । पं—दद्याहं प्रत्येदं प्रिये ।

चलमात्मनि पश्यन्ती न विशंकितुमर्हसि[50] ॥ ३१ ॥
करिष्यामि तव प्रीतिं सुकृतेनात्मनः शपे ।
तुष्टा तेनैव[51] वाक्येन दृष्ट्वाऽतिप्रियमात्मनः[52] ॥ ३२ ॥
व्याजहार महाघोरं कैकेयी भृशमप्रियम् ।
यथा च[53] धर्मं[53] शपसे[54] वरं मह्यं ददासि च ॥ ३३ ॥
तच्छृण्वन्तु समागम्य देवाः शक्रपुरोगमाः ।
चन्द्रादित्यौ ग्रहाश्चैव नभो रात्र्यहनी दिशः ॥ ३४ ॥
जगच्च पृथिवी चैव सह गन्धर्वराक्षसैः ।
निशाचराणि भूतानि गृहेषु गृहदेवताः ॥ ३५ ॥
यानि चान्यानि सत्त्वानि जानीयुर्भाषितं तव[55] ।
सत्यसन्धो महाभागो[56] धर्मज्ञः सुसमाहितः ॥ ३६ ॥
वरं मह्यं ददात्येतं[57] तन्मे शृणुत देवताः ।
इति देवी महेष्वासं परिगृह्याभिगम्य[58] च ॥ ३७ ॥
ततो वाचमुवाचेदं[59] वरदं काममोहितम् ।
पुरा देवासुरे युद्धे वरौ दत्तौ त्वया[60] नृप[60] ॥ ३८ ॥
परितुष्टेन मे देव[61] तौ वरौ त्वं प्रयच्छ मे ।
यस्त्वयाऽयं समारंभो रामं प्रति समाहितः ॥ ३९ ॥

---

50 के, पं—विकांक्षितु० । 51 अ, कु, पं—तेनाथ । 52 के—दृष्ट्वा-पिप्रिय० । 53 अ, कु—धर्मेण । पं—तु धर्म्मं । 54 पं—श्रयसे । के—'श्रयसे' इति विभिन्नमस्यां पार्श्वे लिखितम् । 55 अ, कु—वचः । 56 अ, कु—महाराजो । 57 अ, कु—०त्येष । पं—०त्येतत् । 58 अ, कु—०भिहाय्य । 59 अ, कु—वच उवाचेदं । 60 पं—त्वयानघ । 61 अ, कु—चेदानीं ।

अनेनाप्नोतु भरतो यौवराज्याभिषेचनम् ।
वनं गच्छतु रामश्च चीराजिनजटाधरः ॥ ४० ॥
नव पंच च वर्षाणि वरावेतौ वृणोम्यहम् ।
यदि सत्यप्रतिज्ञोऽसि वनं रामं विसर्जय ॥ ४१ ॥
भरतं चापि मे पुत्रं यौवराज्ये ऽभिषेचय[62] ।
एभिर्वचोभिः कैकेय्या हृदि विद्धो नराधिपः ॥ ४२ ॥
भयेन हृष्टरोमाऽभूद्व्याघ्रीं वीक्ष्य[63] यथा मृगः ।
सीदन् दुःखेन महता स तेनाभिहतो नृपः ॥ ४३ ॥
असंवृतायां विमना भूमावुपविवेश सः ।
अहो धिगिति चाप्युक्त्वा शोकार्तः पतितः क्षितौ ॥ ४४ ॥
मोहमभ्यागमत्सद्यो वाक्शल्याभिहतो हृदि ।
चिरेण च पुनः संज्ञा प्रतिलभ्यार्तमानसः ॥ ४५ ॥
कैकेयीमब्रवीत् क्रुद्धो दुःखशोकसमन्वितः ।
नृशंसे भ्रष्टचारित्रे[64] कुलस्यास्य विनाशिनि ॥ ४६ ॥
किं कृतं तव रामेण मया वा पापदर्शने[65] ।
यदतीत्यापि कौशल्यां रामस्त्वामनुवर्त्तते ॥ ४७ ॥
तस्यैव त्वमनर्थाय किमर्थं वै समुद्यता ।
त्वं मया ऽत्मविनाशाय भवनं संप्रवेशिता[66] ॥ ४८ ॥
राजपुत्रीति विज्ञाय व्याली तीक्ष्णविषा[67] यथा[67] ।
जीवलोको यदा सर्वो रक्तो रामगुणैरयम् ॥ ४९ ॥

---

62 प—भिर्षिचय । 63 अ, कु, पं—दृष्ट्वा । 64 अ, कु—दुष्ट० । 65 अ—०दर्शिने । 66 अ, कु, स्व प्र० । 67 अ, कु, प—०नद्याविषा ।

अपराधं कमुद्दिश्य त्यक्ष्यामीष्टमहं सुतम् ।
कौशल्यां वा सुमित्रां वा त्यजेयमपि वा श्रियम् ॥ ५० ॥
जीवितं चात्मनो[68] रामं नैवाहं[69] पितृवत्सलम् ।
नन्दामि हि प्रियं पुत्रं दृष्ट्वा राममहं सदा ॥ ५१ ॥
अपश्यतः क्षणं तं मे न भवेदिह चेतना ।
तिष्ठेल्लोको विना भूमिं सस्यं च[70] सलिलं विना ॥ ५२ ॥
न तु[71] रामं विना लोके[72] तिष्ठेत्[73] प्राणो मम क्षणम्[73] ।
तदलं[74] त्यज्यतामेष निश्चयः पापनिश्चये ॥ ५३ ॥
अपि ते चरणौ मूर्ध्ना स्पृशाम्येष प्रसीद मे ।
स[75] तेन[75] वाक्येन महाऽप्रियेण घोरेण राजा हृदये गृहीतः ।
अदृष्टरूपो विमना बभूव व्याघ्राभिपन्नो बलवानिवोक्षा ॥५४॥
लोकस्य नाथोऽपि विपन्ननाथो भृशं गृहीतो हृदये तथैव ।
पपात भूमौ चरणौ परिस्पृशन् प्रसीद देवीति वचोऽभ्युदीरयन् ॥५५

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे वराभियाचनं
नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

---

68 अ, पु—चात्मनो । 69 अ, पु—न त्यैवं । पं—न चैव । 70 अ, पुं—या । 71 के—च । 72 अ, पु—देहे । 73 अ, पु—तिष्ठेयुरस्मयो मम । पं—०प्राणाश्चैव मम । 74 के—तदयं । 75 के, पं—महेन ।

[चतुर्दशः सर्गः]

अतदर्हं महाराजं पतितं पादयोरपि ।
ययातिमिव पुण्यान्ते[1] देवलोकात्परिच्युतम् ॥ १ ॥
कैकेयी पुनरेवेदं घोरं वचनमब्रवीत् ।
अनन्तदुःखसंवीतमतीवभयदर्शनम्[2] ॥ २ ॥
कीर्त्यसे त्वं सदा[3] सद्भिः सत्यवादी दृढव्रतः ।
मम चेमौ[4] वरौ दत्त्वा किं विचारयसि प्रभो ॥ ३ ॥
एवमुक्तस्तु कैकेय्या राजा दशरथस्तदा ।
प्रत्युवाच ततः क्रुद्धो निःश्वसन्नतिविह्वलः[5] ॥ ४ ॥
मृते मयि गते रामे वनं मनुजपुंगवे[6] ।[7]
हन्तानार्ये ममामित्रे सकामा भव कैकयि[8] ॥[9] ५ ॥
यदा मां गुरवो वृद्धा गुणवन्तो बहुश्रुताः ।
परिप्रक्ष्यन्ति[10] काकुत्स्थं वक्ष्यामि किमहं तदा ॥ ६ ॥
कैकेय्याः प्रियकामेन रामः प्रव्राजितो मया ।
यदि सत्यं वदिष्यामि हास्यं तेषां भविष्यति ॥ ७ ॥[A1]

---

1 पं—दुर्धर्ष । 2 अ, कु—०संविग्नमभीता भय० । पं—०संविग्नमभिते भय० । 3 पं—यदा । 4 अ, कु—चोभौ । 5 कं, पं—०भितिविह्वलः । 6 अ, कु, पं—०कुंजरे । 7 अ, कु, पं—7=9 । 8 अ, कु, पं—केकयि । 9 अ, कु, पं—9=7 । 10 अ, कु—०प्रच्छंति ।

A1 अ, कु, पं—यालिशो यत कामात्मा राज्यं दशरथो ऽन्वशात्[1] ।
स्त्रीजितो यस्त्यजेत्पुत्रं प्रियं ज्येष्ठमकारणे ॥

---

१ अ—०न्वगात् । प—०यगात् ।

गर्हयिष्यन्ति[11] च मां नित्यं[11] स्त्रीजितं सर्वसाधवः ।
गर्हितस्य च मे श्रेयो नेह[12] नामुत्र विद्यते[12] ॥ ८ ॥
स्त्रीजितेन[13] नृशंसेन[13] रामः सर्वगुणान्वितः ।
मया निर्वासितः[14] पुत्रः स महात्मान्तरात्मना[15] ॥ ९ ॥
व्रतैश्च ब्रह्मचर्यैश्च[16] गुरुभिश्चापि कर्षितः[17] ।
सुखकालेऽद्य मे पुत्रः कथं वत्स्यति वै वने ॥[18] १० ॥
अनियोज्यैव तं कृच्छ्रे यदि मे मरणं भवेत् ।
अनुग्रहः परो मे स्यादिति चैवाभिकांक्षये[19] ॥ ११ ॥
प्रियार्हं च सुखार्हं च प्रियं पुत्रं गुणान्वितम् ।
कथं वक्ष्याम्यहं पापो[20] वनं गच्छेति राघवम् ॥ १२ ॥
नृशंसमकृतात्मानं क्लीबसत्त्वं स्त्रिया जितम् ।
निरमर्षं[21] निरुत्साहमल्पवीर्यं धिगस्तु माम् ॥ १३ ॥
अकीर्तिरतुला लोके ध्रुवं[22] परिभवश्च मे । A2
इति राज्ञो विलपतः शोकसंविग्नचेतसः ॥ १४ ॥

---

11 अ, कु, पं—इति मां गर्हयिष्यंति । 12 कु—नेहामुत्र निगद्यते ।
13 कै—स्त्रीजितेनानृशंसेन । 14 अ, कु—च पितृमान् । पं—च पितृघान् । 15 अ, कु—दुरात्मना । पं—त्यकम् । 16 कै-व्रत० । 17 अ, कु—०श्चातिकर्षित । पं—०श्चाभिकर्षित ।
18 अ, कु—सुखकालेन मे पुत्रो वने कृच्छ्रमवाप्स्यति ।
पं—सुखकालोच „ „ „ „
19 अ, कु—चाप्यभिकांक्षितं । पं—चाप्याभिकांक्षितं । 20 कै—पापे ।
21 अ, कु—निरामर्षं । 22 अ, कु—ध्रुव ।
A2 अ, कु—सर्वभूतेषु चावज्ञा यथा पापकृतस्तथा ।

अस्तमभ्यगमत्सूर्यो[23] रजनी चाभ्यवर्त्तत ।
त्रियामा तु भृशार्त्तस्य सा रात्रिरभवत्तदा ॥ १५ ॥
तथा विलपतस्तस्य राज्ञो वर्षशतोपमा ।
दीर्घमुष्णं[24] च[24] निःश्वस्य वृद्धो दशरथो नृपः ॥ १६ ॥
करुणं विललापार्त्तो गगनासक्तलोचनः ।
कैकेयि हा नृशंसाऽसि यन्मामिच्छसि बाधितुम् ॥ १७ ॥
राज्यलोभात्त्वया त्यक्तः प्राणांस्त्यक्ष्याम्यसंशयम् ।
हा पुत्र राम धर्मात्मन्[25] सद्भक्तं[26] गुरुवत्सलम्[27] ॥ १८ ॥
कथं त्वामल्पपुण्योऽहं परित्यक्ष्याम्यसंशयम् ।
हा[28] रात्रे[28] सर्वभूतानां जीविताद्वोपहारिणि ॥ १९ ॥
नेच्छामि[29] हि[29] प्रभातां त्वां[30] तवायं रचितोऽञ्जलिः[30] ।
अथवा गम्यतां शीघ्रं नेमामिच्छामि निर्घृणाम् ॥ २० ॥
अकृतज्ञां चिरं द्रष्टुं कैकेयीं भर्तृघातिनीम् ।
विलप्यैवं ततो राजा कैकेयीमुद्यताञ्जलिः ॥ २१ ॥
प्रसादयामास पुनर्वाक्यं चेदमथाब्रवीत्[31] ।
साधुवृद्धस्य[32] दीनस्य मादृशस्याल्पचेतसः[33] ॥ २२ ॥

---

23 अ, कु—०मभ्यागम० । 24 अ, कु, पं—स दीर्घमुष्णं । 25 अ, कु—भद्रात्मन् । 26 अ, कु—मद्भक्त । पं—सद्भक्त । 27 अ, कु—गुरुवत्सल । पं—गु[रु]वत्सल । 28 अ, कु—हे रात्रि । 29 अ, कु, प—नेच्छाम्यद्य । 30 अ, कु, पं—त्वामभियाचे कृताञ्जलिः । 31 पं—चेवम० । 32 अ, कु—साधिव० । पं—अयुक्तस्य च । 33 अ, कु—त्वद्दशस्याल्पतेजस ।

प्रसादः क्रियतां देवि राज्ञो भर्त्तुर्विशेषतः ।[34]

कृता ते यदि जिज्ञासा मदीया[35] चारुहासिनि ॥O२३ ॥

सत्यमेव स्वभावो मे त्वदधीनो ऽस्मि सर्वदा[36] ।O

यद्यदिच्छसि संप्राप्तुं रामप्रव्राजनादृते ॥ २४ ॥

सर्वस्वमपि च[37] प्राणास्ते ददानि[38] प्रसीद मे ।

शून्येन[39] खलु कैकेयि मयैतद् वाक्यमीरितम् ॥ २५ ॥

कुरु साध्वि प्रसादं मे भीतस्य शरणैषिणः[40] ।

विशुद्धभावस्य[41] सुदुष्टभावा[41] दुःखातुरस्याश्रुकलस्य[42] राज्ञः ।

कृताश्रुपातस्य तथाऽभिधानतोभर्त्तु[43] नृशंसा[44] न चकार संज्ञाम्[45] ।२६

ततः स राजा पुनरेव मूर्च्छितः प्रियां सुदुष्टां प्रतिकूलभाषिणीम् ।

समीक्ष्य पुत्रस्य विवासकारणं क्षितौ विषण्णो[46] निललाप पार्थिवः[47] २७

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो

नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

---

34 अ, कु, पं—शरणागतस्य सुभगे कुरु त्राण प्रसीद मे । 35 कु—मयीय । 36 कु, प—सर्वथा । O अ—नास्ति । 37 अ, कु—या । पं—त्रुटितम् । 38 अ, कु, प—ददामि । के—"नि" इति लिखित्वा पश्चात् तत्रैव "मि" इति कृतम् । 39 अ, कु—सत्येन । 40 अ, कु, पं—०शरणार्थिन । 41 अ, कु—०हि दुष्टभावा । प—विशुद्धबुद्धेरपि शुद्धभावा । 42 अ, कु—भृशार्त्तरूपस्य च तस्य । के—दु खार्त्तक*स्य वि*कलस्य । "क*" इति पश्चादुपरि विहृतम् । "*वि" इत्यपि विहृतम् । 43 अ, कु, पं—०भियाचतो । 44 के—भर्त्तुर्भृशं सा । 45 अ, कु—साम्ना । 46 प—निषण्णो । 47 अ, कु—दु खित ।

[पञ्चदशः सर्गः]

पुत्रशोकातुरं[1] दीनं विसंज्ञं पतितं भुवि ।
विचेष्टमानं भर्तारं कैकेयी वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥
पापं कृत्वेव[2] भो भर्तर्मम दत्त्वा[2] वरद्वयम् ।
शेषे किं भूतले स्वस्थः[3] सत्ये[4] त्वं स्थातुमर्हसि[4] ॥ २ ॥
आहुः सत्यं परं धर्मं धर्मज्ञाः सत्यवादिनः ।
सत्यवादीति[5] च ज्ञात्वा मया त्वमिह[6] याचितः ॥ ३ ॥
कपोतायाभयं दत्त्वा शिविः[7] किल महीपतिः ।
उत्कृत्य[8] च स्वमांसानि दत्त्वा स्वर्गमितो गतः ॥ ४ ॥A1
अलर्कश्चापि राजर्षिर्ब्राह्मणेनाभियाचितः[9] ।
प्रदायोत्कृत्य नेत्रे द्वे[9] नाकपृष्ठमितो गतः ॥ ५ ॥
सत्यप्रतिज्ञस्तस्मात्त्वं[10] प्राक् प्रतिज्ञाय मे वरौ । A2

1 कै—पुत्रशोकात्तरं । 2 पं—०भो भर्त्तस्त्वत्वात । अ, कु—कृत्वेत्रम-परं मम० । कै—०भो भर्त्तमम० । 3 अ, कु—स्वस्र । 4 पं—०स्थातुं-त्वमर्हसि । अ, कु—स्थातुं सत्ये त्वमर्हसि । 5 अ, कु—०यागिति । 6 अ, कु—त्वमभि- । 7 अ, कु—शैव्य० । 8 पं—उत्कृत्य ।

A 1 अ, कु, पं—सरितां च पतिः सत्यां[1] मर्यादां स्थापितां[2] पुरा ।
समयं पालयन्[3] वेलां[4] न लंघयति[5] वेगवान् ॥ ६ ॥

9 अ, कु—स्वे । 10 प—स चाप्रतिज्ञ० । A2 अ, कु—न ददासि च[6] कस्मात्त्वं लुब्ध कापुरुषो यथा ।

१ प—सत्य । २ प—स्थापित । ३ प—पालयन् । ४ कु—वलो० । ५ संलुघयति ।
६ अ—न ।

परित्यज[11] सुतं रामं वनवासाय पार्थिव[12] ॥ ६ ॥
न करिष्यसि चेदद्य वचनं मम कांक्षितम् ।
अग्रतस्ते महाराज[13] परित्यक्ष्यामि जीवितम् ॥ ७ ॥
छलपाशेन कैकेय्या बद्ध एवं[14] नराधिपः ।
न शशाक तदा छेत्तुं बलिः प्रागिव विष्णुना ॥ ८ ॥
विवर्णवदनश्चापि विभ्रान्तनयनो[15] ऽभवत् ।
महाधुर्यः श्रमासक्तो[16] युक्तश्चक्रान्तरे यथा ॥ ९ ॥
विभ्रान्तचित्तनयनो नष्टसंज्ञो ऽतिदुःखितः[17] ।
कृच्छ्रादिव[18] स धैर्येण संस्तभ्यात्मानमात्मना[19] ॥ १० ॥
शोकसंरंभताम्राक्षः कैकेयीमिदमब्रवीत्[20] ।
धिगस्तु पापशीले त्वां नृशंसे पतिघातिनि⁰ ॥ ११ ॥
त्यजामि त्वामहं[21] पापे[21] निर्घृणां निरपत्रपाम् ।⁰
न मे त्वया कृत्यमस्ति क्षुद्रया[22] पापलुब्धया[23] ॥१२॥[A3]
त्वत्कृते चापि भरतं त्यजाम्यनपकारिणम् ।
एवं विलपतस्तस्य राज्ञो दशरथस्य च ॥ १३ ॥

11 अ, कु, पं-परित्यज्य । 12 अ, कु, पं-राघवं । 13 अ, कु, पं—ततो राजन् । 14 पं—एव । 15 अ—विभ्रात० । 16 अ, कु—श्रमायुक्तो । पं-श्रमासक्तो । 17 कु–भ्रष्टमभिवीक्ष्य नि दु:खित. । अ-भ्रष्टसंज्ञोतिदु खित । 18 अ, कु, पं—कृच्छ्रादेव । 19 अ, कु—०श्यात्मानमब्रवीत् । 20 अ, कु, पं—०मभिवीक्ष्य ता । 21 पं—त्वां महापापा । कु—०पापो । O अ-नास्ति । 22 पं—क्षुद्रया । 23 अ, कु, पं-राज्यलुब्धया (कु-लुब्धया)
A3 अ, कु, पं—मन्त्र (पं-तु) यश्च मया पाणिर्गृहीतो यस्त्यजाम्यहम् ।
24 अ, कु—तु ।

जगाम सा निशा कृत्स्ना दुःखार्तस्य महात्मनः ।
अथोपसि प्रभातायां शर्वर्यां द्वारमागतः ॥ १४ ॥
सुमन्त्रः प्राञ्जलिर्भूत्वा बोधयामास पार्थिवम् ।
सुप्रभाता निशा राजंस्तवेयं भद्रमस्तु ते ॥ १५ ॥
बुध्यस्व नरशार्दूल श्रियं भद्राणि चाप्नुहि ।
पूर्णचन्द्रोदये पूर्णो वर्द्धते सागरो यथा ॥ १६ ॥
सर्वर्द्धिविभवैः पूर्णस्तथा[25] वर्द्धस्व भूपते ।
यथा रविर्यथा सोमो यथेन्द्रो वरुणो यथा ॥ १७ ॥
नन्दन्त्यृद्ध्या श्रिया चैव तथा नन्दस्व[26] भूपते ।
ततः स राजा सूतस्य प्रतिबोधनमङ्गलम् ॥ १८ ॥
श्रुत्वाऽतिशोकसंतप्तस्तमाभाष्येदमब्रवीत्[27] ।
सूत किं दुःखितं त्वं मामस्तुत्यं[28] स्तोतुमिच्छसि ॥ १९ ॥
वचोभिरेभिरार्त्तं[29] मां[30] भूयस्त्वं[30] परिकृन्तसि[30] ।
सुमन्त्रस्तु[31] तदा[31] श्रुत्वा भर्तुर्दीनस्य भाषितम् ॥ २० ॥
सहसा व्रीडितः[32] किंचित्तस्माद्देशादपागमत् ।
अत्रान्तरे पापशीला कैकेयी पुनरब्रवीत् ॥ २१ ॥
वाक्प्रतोदेन[33] भर्तारं[33] सीदन्तं तुदतीव सा ।

---

25 अ, कु, पं—पूर्णस्तथा । 26 अ, कु, पं—त्वं नंद । 27 अ, कु—श्रुत्वा हि दुःखसं० । पं—श्रुत्वातिदुःखसं० । 28 कै—०मस्तोत्यं । 29 पं—०रेव राजानं । 30 अ, कु, पं—०स्त्वमनुकृंतासि । 31 अ, कु, पं—०स्तनद्वच । 32 पं—पीडित । 33 अ, कु, पं—भर्तारं वाक्प्रतोदेन ।

*किमेवं भाषसे दीनं वाक्यं त्वं[34] प्राकृतो[34] यथा ॥ २२ ॥
*राममाहूय निःसंधं वनायाशु[35] विसर्जय ।
*यदि सत्यप्रतिज्ञो ऽसि कुरु मे वचनं प्रियम् ॥ २३ ॥
*नायं कालो विषादस्य न मोहस्योपपद्यते ।
*प्रव्राज्य रामं भरतं यौवराज्ये ऽभिषिच्य[36] च[36] ॥ २४ ॥
*निःसपत्नां[37] च मां कृत्वा भवाद्य निर्गतज्वरः ।
*स पुनर्वाक्प्रतोदेन पीडितो नरपुंगवः ॥[38] २५ ॥
*राजा शोकार्तिसन्तप्तः[39] सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ।
*सत्यपाशनिबद्धो[40] ऽसि सूत संभ्रान्तमानसः[41] ॥ २६ ॥
*रामं द्रष्टुमिहेच्छामि तं च शीघ्रमिहानय ।
इति राज्ञो वचः श्रुत्वा कैकेयी तदनन्तरम् ॥ २७ ॥
स्वयमेवाब्रवीत्सूतमिदं सा[42] त्वरयन्त्युत[42] ।
नरेन्द्रवचनात्सूत गच्छ रामं[43] त्वमानय[43] ॥ २८ ॥
यथा च शीघ्रमेवैति तथैव त्वरयस्व[44] च[44] ।
कैकेय्या वचनं श्रुत्वा सुमंत्रः प्रीतमानसः ॥ २९ ॥

---

*एते श्लोका शोडशे सर्गे (३७—४२) किञ्चित्पाठभेदेन पुनरुक्ता । 34 अ, कु, पं—सुप्राकृतो (प—तं) । 35 अ, कु, पं—०वनायाद्य । 36 अ—भिषेचयत । पं—भिषिच्यत । 37 पं—०पत्नीं । 38 अ, कु—स तुनो वाक्प्रतोदेन प्रतोदेनेव पुङ्गव । 39 अ, कु—०कामिसं० । पं—०काग्निसं० । 40 अ, कु—०पाशाविव० । 41 अ, कु, पं—०सूत वि० । 42 अ, कु—संत्वरयंत्युत । 43 अ, कु, पं—त्वं राममानय । 44 कु—त्वरयस्वयम् । अ—त्वरयस्वयम् । पं—त्वरयस्व तं ।

ततः स रामानयने समुत्सुको द्रुतः सुमन्त्रोऽवततार मन्दिरात् ।
रथं समायोजय योजयेति वै ब्रुवंस्तुरंगाधिकृतं वरेण्यम् ॥ ३० ॥
ततः सुमन्त्रः प्रययौ रथेन[45] महीपतेर्द्वारमतीत्य सत्वरः ।
विनिर्गतश्चापि ददर्श धिष्ठितानपावृतान्[46] मन्त्रिपुरोहितांस्तदा ॥ ३१ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रवाक्यं[47] नाम पञ्चदशः सर्गः ॥ १५ ॥



45 अ, कु, पं—त्वरितो विनिर्ययौ महीपतीन् (पं—पते.) द्वारगतो विलोकयन् । 46 अ, कु—०धिष्ठितानुपागतान् । 47 के, ल—नास्ति । अ, कु—कैकेय्युपालंभो (अ—भं) । पं—रामानयनं ।

[षोडशः सर्गः]

ततस्ते मन्त्रिणः सूतं सुमन्त्रं सपुरोहिताः ।
ऊचुरभ्यागतानस्मान् राज्ञ आवेदयस्व ह ॥ १ ॥
पश्यामो न च राजानमुदितश्च दिवाकरः ।
आभिषेचनिकं सर्वं द्रव्यमेवोपकल्पितम् ॥ २ ॥
औदुंबरं भद्रपीठं शातकौंम-विभूषितम् ।
गङ्गायमुनयोश्चैव सङ्गमादाहृतं पयः ॥ ३ ॥
याश्चान्याः सरितः पुण्यास्ताभ्यश्च जलमाहृतम् ।
समुद्रेभ्यश्च सर्वेभ्यः सलिलं समुपाहृतम् ॥ ४ ॥
सर्वबीजानि गन्धश्च[1] रत्नानि विविधानि च ।
वाहनं नरसंयुक्तं दर्भाः सुमनसः प्रियाः ॥ ५ ॥
अहतानि च वासांसि भृंगारं च हिरण्मयम् ।
क्षीरिवृक्षप्रवालाश्च[2] पद्मोत्पलविभूषिताः[3] ॥ ६ ॥
पूर्णकुंभाः स्वलंकृत्य कांचना[4] उपकल्पिताः[4] ।
मंजूकारोचना* चैव लाजा दधि घृतं मधु ॥ ७ ॥
तथैव पुण्यतीर्थेभ्यो मृदापो मंगलानि च ।
चन्द्रांशुविमलं चांबु माणिदण्डे स्वलङ्कृते ॥ ८ ॥
चामरव्यजने श्रीमद्रामार्थमुपकल्पिते ।
पूर्णेन्दुमण्डलाभं च श्रीमन्माल्यविभूषितम् ॥O९ ॥

Oम—स्वत्तम् । 1 म—गंधाश्च । 2 म—क्षीर० । 3 म, ल—वि-मिश्रिता । 4 म, ल—काचना तपकल्पिता । लेखकस्य लिपिनिमित्तक प्रमाद प्रतीयते । * कै— कारोचना । म-कारोचना । O म-स्वत्तम् ।

रामस्य यौवराज्यार्थमातपत्रं प्रकल्पितम् ।
मत्तो गजवरश्चैव रथश्चैव प्रतीक्षते ॥ १० ॥
श्वेतस्तुरङ्गमश्चैव रामार्थमुपकल्पितः ।
अष्टौ कन्याश्च मंगल्याः सर्वाभरणभूषिताः ॥ ११ ॥
रूपयौवनसंपन्ना गणिकाश्च स्वलङ्कृताः ।
श्वेतपुष्पाणि वेणुश्च[6] निस्त्रिंशो धनुरेव च ॥ १२ ॥
हेमदाम्नाऽभ्यलङ्कृत्य ककुद्मान् पाण्डुरो वृषः ।
सिंहासनं व्याघ्रचर्म संसिद्धश्च हुताशनः ॥ १३ ॥
वादित्राणि च सर्वाणि सूतमागधवन्दिनः ।
आचार्या ब्राह्मणा गावः पुण्याश्च मृगपक्षिणः ॥ १४ ॥
पौरजानपदश्रेण्यो नैगमानां गणैः सह ।
एते चान्ये च बहवः प्रीयमाणाः[7] प्रियंवचः ॥ १५ ॥
इक्ष्वाकुराजाभ्युदये यच्चान्यदपि किंचन ।
तत्सर्वं कृतमस्माभिः सूत राज्ञे निवेदय ॥ १६ ॥
इति तैरेवमाज्ञप्तः प्रतीहारो महीपतेः ।
अब्रवीत् तानिदं वाक्यं सुमन्त्रो मन्त्रिसत्तमः ॥ १७ ॥
अहं पृच्छामि वचनात् सुखमायुष्मतां नृपम् ।
राजसन्दर्शनार्थित्वमयमावेदयामि वः ॥ १८ ॥
इत्युक्त्वाऽन्तःपुरद्वारमासाद्य स नरेश्वरम् ।
सुमन्त्रो नृपतिं सुप्तं मत्वा भूयो व्यबोधयत् ॥ १९ ॥
वाग्भिः परमतुष्टाभिरभितुष्टाव पार्थिवम् ।

---

6 के—"धूपश्च" इति पश्चाद्धिकृतम् । ७ म—प्रियमाना ।

सोमः सूर्यश्च काकुत्स्थ शिवो वैश्रवणोऽपि च ॥ २० ॥
अनिलश्चाग्निरिन्द्रश्च विजयं प्रदिशन्तु ते ।
गता भगवती रात्रिरहः शिवमुपस्थितम् ॥ २१ ॥
प्रतिबुध्यस्व नृपते सर्वकल्याणसिद्धये ।
इन्द्रमस्यां हि वेलायामभितुष्टाव मातलिः ॥ २२ ॥
सोऽजयद्दानवान् सर्वांस्तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।
वेदाः[7] सांगास्सर्षिगणा यथा कमलसंभवम् ॥[O]२३ ॥
ब्रह्माणं बोधयन्त्यद्य तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।[O]
आदित्यः सह चन्द्रेण यथा भूतधरामिमाम् ॥ २४ ॥
बोधयन्त्यद्य पृथिवीं तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।
उत्तिष्ठ त्वं महाभाग कृतकौतुकमंगलः ॥ २५ ॥
विरोचमानो वपुषा मेरोरिव दिवाकरः ।
इदं तिष्ठति रामस्य सर्वमत्राभिषेचने ॥ २६ ॥
पौरजानपदश्रेणी नैगमश्चागतो जनः ।
असौ वसिष्ठो भगवान् ब्राह्मणैः सह तिष्ठति ॥ २७ ॥
क्षिप्रमाज्ञप्यतां[8] शीघ्रं[8] राघवस्याभिषेचनम् ।
यथा ह्यगोपाः पशवो यथा सैन्यमनायकम् ॥ २८ ॥
एवं प्रजाः प्रजापाल भवन्ति ह्यनधिष्ठिताः ।
चन्द्रहीना यथा रात्रिः सूर्यहीनमहो यथा ॥ २९ ॥
तथा भवति तद्राष्ट्रं यत्र राजा न दृश्यते ।

---

7 ल—देवा । Oम—स्तवम् । 8 म—ज्ञप्यतां राजन् ।

गता निशेयं काचित्ते सुखेन नृपसत्तम ॥[9] ३० ॥
प्रतिबुध्यस्व राजर्षे[10] राजकार्याणि कारय ।
पुरोधसो मन्त्रिणश्च पौरजानपदास्तथा ॥ ३१ ॥
दर्शनं तेऽभिकांक्षन्ति प्रतिबोद्धुं त्वमर्हसि ।
तं तथा पुनरेत्यात्र बोधयन्तं नराधिपम् ॥ ३२ ॥
अनु(न्व ?)भूयत[11] शोकेन भूय एव नराधिपः ।
स तु शोकाभिसन्तप्तः सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ॥ ३३ ॥
शोकरक्तेक्षणो धीमान् वीक्ष्य वाचाऽवधारितम् ।
सूत किं हतरूपं[12] मामस्तुत्यं स्तोतुमिच्छसि ॥ ३४ ॥
वाक्यैस्तावत्तु मर्माणि मम भूयो निकृन्तसि ।
सुमन्त्रः कुत्सनां कृत्वा दृष्ट्वा दीनं च पार्थिवम् ॥ ३५ ॥
प्रगृहीतांजलिस्तत्र ततः किंचिदपाक्रमत् ।
ततः पापसमाचारा कैकेयी पार्थिवं वचः ॥ ३६ ॥
उवाच परमं तीक्ष्णं वाक्यज्ञा वाक्यमूर्जितम् ।
किमेतद्वदसे वाक्यं राजंस्त्वं प्राकृतो यथा ॥ ३७ ॥
प्रा *रामसाह्वय निस्तब्धं वनमद्य निसर्जय ।
*यदि सत्यप्रतिज्ञोऽसि कुरुष्व वचनं मम ॥ ३८ ॥
*नायं कालो हि शोकस्य न मोहस्योपपद्यते ।
*प्रव्राज्य रामं भरतं यौवराज्येऽभिषिच्य च ॥ ३९ ॥

9 म—यथा नायकहीना वै मुक्तानामावली यथा । 10 म—राजेंद्र । 11 म—अध(?)भूयत । ल—अर्ध(?)भूयत । 12 के—हतरूपं । पश्चात् हरितालेन प्रोंछ्य "किमनुरूपं" इत्येवं विकृतम् ।

*निस्सपत्ना च मां कृत्वा मथाय विगतज्वरः ।
स नुन्नो वाक्यरज्ञेन प्रतोदेनेव सद्धयः ॥ ४० ॥
*ततः स राजा सूतं त पुनरेवाभ्यभाषत ।
सुमन्त्र नैव सुप्तो ऽस्मि रामं त्वं क्षिप्रमानय ॥ ४१ ॥
*सत्यपाशनिबद्धो ऽस्मि सूत संभ्रान्तमानसः ।
*रामं द्रष्टुमिहेच्छामि तं च शीघ्रमिहानय ॥ ४२ ॥
सुमन्त्रस्तु वचः श्रुत्वा सभार्यस्य नृपस्य ह ।
निर्जगाम सुसंभ्रान्तस्तस्माद्राजनिवेशनात् ॥ ४३ ॥
निष्क्रम्य चैन त्वरितं राममानयितुं तदा ।
रथेन जविताश्वेन राममानयितुं गृहात् ॥ ४४ ॥
जनौघ राजमार्गस्थं प्रतिव्यूह्यमुपागतम् ।
शृण्वन् वाचः कथयतां रामाभ्युदयसंयुताः ॥ ४५ ॥
रामोऽद्य युवराजत्वं प्राप्स्यते नृपशासनात् ।
अहो महोत्सवो[13] ऽस्माकमद्यायं भविता पुरे ॥ ४६ ॥
अद्याहोऽनुगृहीताः स्म यत्साधुजनवत्सलः ।
युवराजः किलाद्यायमस्माकं भविता पुरे ॥ ४७ ॥
पालयिष्यति नो रामः पिता पुत्रानिवौरसान् ।
इति तस्य जनौघस्य वचः[14] शृण्वन्[14] समन्ततः ॥ ४८ ॥
ययौ सुमन्त्रस्त्वरितो राममानयितुं गृहात् ।
ततो ददर्श रुचिर[15] कैलाससदृशप्रभम् ॥ ४९ ॥

13 कै—महोत्साहो । 14 म—०श्शृण्वन् वाच । 15 कै—'रुधिर" इति पूर्वं लिखित, पश्चात् 'रुचित" इति विकृतम् ।

[रामवेश्म सुमंत्रस्तु त्रिविष्टपसमप्रभम्][16]
महाकवाटपिहितं[17] वितर्दिशतशोभितम् ॥
कांचनप्रतिमैकाग्रं[18] मणिविद्रुमतोरणम् ॥ ५० ॥
शारदाभ्रघनप्रख्यं दीप्तपावकसप्रभम्[19] ।
दामभिर्वरमाल्यैश्च सुमहद्भिरलंकृतम् ॥ ५१ ॥
मुक्तामणिभिराकीर्णं जनैरंजलिसंहितैः[20] ।
गन्धान् मनोज्ञान् विसृजद्यथा मलयपर्वतः ॥ ५२ ॥
सारसैश्च मयूरैश्च विनदद्भिर्विराजितम् ।
मनश्चक्षुश्च भूतानामाददानमिव श्रिया[21] ॥ ५३ ॥
चन्द्रभास्करसंकाशं कुबेरसदनोपमम् ।
महेन्द्रसद्मप्रतिमं नानापक्षिसमाकुलम् ॥ ५४ ॥
मेरुवेश्मोपमं सूतो रामवेश्म ददर्श ह ।
ततः समासाद्यमहाधनं महत् प्रहृष्टरोमा स बभूव सारथिः ।
मृगैर्मयूरैश्च समाकुलं सदा गृहं च रामस्य शचीपतेरिव ॥ ५५ ॥
स तत्र कैलासनिभाः स्वलंकृताः प्रविश्य कक्ष्यास्त्रिदशालयोपमाः ।
उपस्थितैर्मागधसूतनन्दिभिस्तथैव वैतालिकसौख्यशायिकैः ॥ ५६ ॥

---

16 म, ल—नास्ति । 17 कै—"०कवाट०" इति पूर्वं लिखितं पश्चात् "०कपाट०" इति शोधितम् । 18 कै—०प्रतिमैकाग्रं । 19 कै—"०दीप्त…समप्रभम्" इति त्रुटितं लिखितं, पश्चात् "दीप्तवंतसमप्रभम्" इत्थं पूरितम् । 20 कै—०पांजलि० । 21 कै—प्रिया ।

अभिष्टुवद्भिर्गुणतो नृपात्मजं समावृतं राजपथं ददर्श सः ।
समस्तकक्ष्यं पुरुषैरलंकृतं विनीतवेशैर्बहुभिः-सुरंजितम् ॥ ५८ ॥
विवेश रामस्य महात्मनो गृहं महीयमानो नृपमन्त्रिसत्तमैः ।
सितं च शैलोत्तमशृंगसन्निभं महाविमानप्रतिमं जनौघवत् ।
स मोज्यमानः प्रविवेश तद्गृहं संपूज्यमानो नृपमन्त्रिसत्तमैः ॥५९॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रप्रेषणं
नाम षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

[सप्तदशः सर्गः]

जनौघवत्यः[1] सोऽतीत्य पट्कक्ष्यास्तस्य[2] वेश्मनः ।
प्रविभक्तां[3] ततः कक्ष्यां[4] सप्तमीमाससाद ह[5] ॥ १ ॥
युवाभिः पुरुषैर्गुप्तां प्रासकार्मुकधारिभिः[6] ।
अप्रमादिभिरेकाग्रैर्भक्तिमद्भिरलंकृतैः ॥ २ ॥
तथा कंचुकिभिः[7] शुद्धैः[7] कषायाम्बरधारिभिः ।
रक्षितामनलंकारैः स्त्र्यध्यक्षैर्वेत्रपाणिभिः ॥ ३ ॥
ते दृष्ट्वागतं सूतं रामप्रियचिकीर्षवः[9] ।
समार्याय[10] च[10] रामाय समुपेत्याचचक्षिरे[11] ॥ ४ ॥
श्रुत्वैवाभ्यागतं तं[12] तु दूतमभ्यर्हितं[13] पितुः ।
रामः प्रवेशयामास सत्कृत्य[14] गृहमात्मनः[14] ॥ ५ ॥
स तं धनदसंकाशमुपविष्टं स्वलंकृतम् ।
ददर्श सूतः पर्यङ्के[15] सौवर्णे[16] राङ्कवाश्रिते[17] ॥ ६ ॥
वराहरुधिराभेण सुश्लक्ष्णेन महाभुजम् ।
अनुलिप्तं महार्णेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥ ७ ॥

1 अ, कु—०कीर्णाः । पं—०कीर्णा. । 2 अ, कु—कक्षास्तस्य । 3 अ, कु—अविभक्तां । 4 अ, कु, पं—कक्षां । 5 कु—शः । अ, पं—स॰ । 6 अ, कु, पं—०पाणिभि॰ । 7 अ, कु, पं—०वृद्धैः । 8 पं-०वासिभि॰ । अ, कु—काषायांबरवासिभिः । 9 पं—०चिकीर्षया । 10 अ, कु, पं—सह भार्याय । 11 अ, कु, पं—प्रणिपत्य न्यवेदयन् । 12 अ, कु, पं—च । 13 अ, कु, पं-सूतमभ्यर्हितं । 14 अ, कु, पं-सत्कृत्यालयमात्मनः । 15 अ, कु, पं—सौवर्णे । 16 अ, कु, पं—पर्यंके । 17 कै—०वारिते । अ—०धाचिते । पं—०वास्तृते । कु—०वाचिते ।

बालव्यजनधारिण्या सीतया पार्श्वसंस्थया ।
सपद्मया सेव्यमानं श्रियेव मधुसूदनम् ॥ ८ ॥
तरुणादित्यसदृशमुज्ज्वलन्तमिव[18] श्रिया ।
ववन्दे राममभ्येत्य सुमन्त्रो विनयान्वितः ॥ ९ ॥
दृष्ट्वा[19] चैनं सुखं प्रह्वो विहारशयनासने ।
उवाचानन्तरमिदं सुमन्त्रो राजशासनात्[20] ॥ १० ॥
कौशल्या सुप्रजा देवी देव[21] त्वां द्रष्टुमिच्छति ।
कैकेयीसहितो राजा[22] गम्यतां यदि रोचते ॥ ११ ॥
एवमुक्तः सुमन्त्रेण रामो राजीवलोचनः ।
शिरसा प्रतिगृह्याज्ञां पितुः सीतामथाब्रवीत् ॥ १२ ॥
सीते देवश्च देवी च समागम्य परस्परम् ।
मम चिन्तयतो[23] नूनं यौवराज्याभिषेचनम् ॥ १३ ॥
ध्रुवं मे[24] यतते माता[24] कैकेयी मत्प्रियेप्सया[25] ।
अद्यैव मां[26] यौवराज्ये[26] प्रतिपादयितुं स्वयम् ॥ १४ ॥
नूनं रहसि राजानं त्वरयत्येव[27] मत्कृते[27] ।
अथवा सहिता राज्ञा मां प्रियं वक्तुमिच्छति ॥ १५ ॥

---

18 अ, कु, पं—प्रज्वलंतमिव । 19 अ, कु—पृष्ट्वा । 20 अ, कु—शासनं । 21 अ, कु—देवस् । पं—देवदेवस् । म—देवस्त्वं । 22 अ, कु—राम । 23 अ, कु—मंत्रयतो । 24 पं—यतति माता मे । 25 अ, कु—०येछया । 26 अ, कु—मे यौवराज्यं । 27 पं—प्रतापत्येव । अ, कु—मत्कृते त्वरयत्यसौ ।

यादृशी परियत्सीते दूतश्चायं यथाविध.[28] ।
ध्रुव[23] संप्रति मां राज.[29] यौवराज्ये[30]ऽभिषेक्ष्यति.[30] । १६ ॥
तस्माच्छीघ्रमहं गत्वा पश्यामि जगतीपतिम् ।
एकं रहसि कैकेय्या सुखासीनं गतज्वरम् ॥ १७ ॥
इह त्वं परिवारेण सुखमास्स्व रमस्व च ।
इति सम्मानिता सीता भर्त्रा स्वसितलोचना ॥ १८ ॥
द्वारान्तमनुवव्राज[31] मंगलान्यपि दध्युर्ष.[32] ।
राज्यं द्विजातिभिर्जुष्टं राजसूयाभिषेकवत् ॥ १९ ॥
कर्तुमर्हति ते राजा वासवस्येव लोककृत् ।
दीक्षितं व्रतसंपन्नं वराजिनधरं शुचिम ॥ २० ॥
कुरंगशृंगपाणि च पश्यन्ती त्वां भवाम्यहम ।
पूर्वां दिशं वज्रधरो दक्षिणां पातु ते यमः ॥ २१ ॥
वरुणः पश्चिमामाशां धनेशस्तूत्तरां दिशम् ।
अथ सीतामनुज्ञाप्य कृतकौतुकमंगलः ॥ २२ ॥
निश्चक्राम सुमन्त्रेण सह रामो निवेशनात् ।
पर्वतादिव निष्क्रम्य[33] सिंहो गिरिगुहाशयः ॥ २३ ॥
मध्यमायां समेयाय कक्ष्यायामर्थिभिर्द्विजैः ।
स सर्वानर्थिनो दृष्ट्वा समेत्य प्रतिनन्द्य[34] च ॥ २४ ॥
मेघनादसमारावं मणिहेमविभूषितम् ।

---

28 अ, कु–तथा० । 29 अ, कु–ध्रुवमद्येव राजा मां । प–ध्रुवे राज्ये ध्रुवं राजा । 30 के—०पेक्ष्यते । पं—मं(मा) संप्रत्यभिषेक्ष्यति । 31 म—द्वारं तमनुत (ध) व्राज । ब—द्वारान्तरमनुव्राज । 32 कै—दध्युषी । म—दर्ध्यषी । 33 म—निष्क्रान्ता । 34 म—०नर्म्यं ।

तथा पावकसंकाशमारुरोह रथोत्तमम् ॥ २५ ॥
धयाग्रं पुरुषव्याघ्रो राजितं राजनन्दनः ।
मुष्णन्तामिव चक्षूंपि प्रभया सूर्यवर्चसम् ॥ २६ ॥
करेणुशिशुकल्पैश्च युक्तं परमवाजिभिः ।
सहस्रहयसंयुक्तं रथमिन्द्र इवाशुगम् ॥ २७ ॥
प्रययौ तूर्णमास्थाय राघवो ज्वलितं श्रिया ।
स पर्जन्य इवाकाशे स्वनवान् वै निनादयन् ॥ २८ ॥
केतनान्निर्ययौ श्रीमान्[35] महाऽभ्रादिव चन्द्रमाः ।
छत्रचामरपाणिस्तु राघवो लक्ष्मणोऽनुजः ॥ २९ ॥
जुगोप भ्रातरं भ्राता रथमास्थाय पृष्ठतः ।
ततो हलहलाशब्दस्तुमुलः समपद्यत ॥ ३० ॥
तस्य निष्क्रामतस्तत्र जनौघस्य समन्ततः ।
ततो हयवरा मुख्या नागाश्च घनसन्निभाः[36] ॥ ३१ ॥
अनुजग्मुस्ततो रामं शतशोऽथ सहस्रशः ।
अग्रतश्चास्य सन्नद्धाश्चन्दनागुरुवासिताः ॥ ३२ ॥
खड्गचर्मधराः शूरा जग्मू रामस्य पृष्ठतः ।
अथ वादित्रशब्दांश्च स्तुतिशब्दांश्च वंदिनाम् ॥ ३३ ॥
सिंहनादांश्च शूराणां तदा शुश्राव वै पथि ।
हर्म्यवातायनस्थाभि र्भूषिताभिः समन्ततः ॥ ३४ ॥
आकीर्यमाणः पुष्पैश्च ययौ स्त्रीभिररिन्दमः ।
रामं सर्वानवद्याङ्गं रामाश्च प्रीतिसंयुताः ॥ ३५ ॥

35 म—दीर्घं । 36 म—गिरि० ।

वचोभिरग्र्यैर्हर्म्यस्थाः क्षितिस्थं तं ववंदिरे ।
नूनं नन्दति ते माता कौशल्या मातृनन्दन ॥ ३६ ॥
पश्यन्ती सिद्धमात्रां त्वां पि य[37] राज्यमुपस्थितम् ।
सर्वसीमन्तिनीभ्यश्च सीतां सीमन्तिनी वराम् ॥ ३७ ॥
अभ्यनन्दत वै नार्यो रामस्य हृदयप्रियाम् ।
तया सुचरितं देव्या पुरा नूनं महत्तपः ।
रोहिण्या शशिनो वेह रामसंयोगकाम्यया ॥ ३८ ॥
ततो हलहलाशब्दस्तुमुलस्समजायत ।
उपस्थाने नरेन्द्रस्य निर्मन्दः सुमहान्पथि ॥ ३९ ॥
स राघवस्तत्र कथाभिरामः[38] शुश्राव लोकस्य समागतस्य ।
आत्माधिकारैर्विविधाश्च वाचः प्रहृष्टरूपस्य पुरे जनस्य ॥ ४० ॥
एष स्वयं गच्छति राघवोऽद्य राज्ञः प्रसादात्पृथिवीमलप्स्यत् ।
जाता वयं सर्वसमृद्धकामा येषामयं नो भविता प्रशास्ता ॥ ४१ ॥
लाभो जनस्यास्य यदेष सर्वं प्रपत्स्यते राष्ट्रमिदं चिराय ।
न ह्यप्रियं कश्चन जातु किंचित्पश्येत दुःखं मनुजाधिपेऽस्मिन् ॥४२॥
सुघोषवद्भिश्च हयैस्ससारथिः पुरःस्थितैरर्थिकसूतमागधैः ।
महीयमानः प्रवरैश्च वादकैरभिष्टुतो वैश्रवणो यथा ययौ ॥ ४३ ॥
करेणुमातंगरथाश्वसंकुलं महाजनौघप्रतिपन्नचत्वरम् ।
प्रभूतरत्नं बहुपण्यसंचयं ददर्श रामो रुचिरं महापथम् ॥ ४४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामानयनं
नाम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

---

37 म—पितृ । 38 कै—कथादि राम । म—कथाभिरामा ।

[अष्टादशः सर्गः]

प्रायादेव च काकुत्स्थः संप्रहृष्टसुहृज्जनः ।
शुश्राव राजमार्गस्थः प्रिया वाचो ऽभ्युदीरिताः ॥ १ ॥
एष राज्ञः प्रसादेन राघवो रघुनन्दनः ।
ह्लादयन् पौरहृदयान्यतुलां प्राप्स्यति श्रियम् ॥ २ ॥
जनस्यास्य महानेष लाभो यद्राघवो बली ।
राज्यं प्राप्स्यति दुर्धर्षः सकोशबलवाहनम् ॥ ३ ॥
सुगृहैरभ्रसंकाशैः[1] पाण्डुरैरुपशोभितम् ।
राजमार्गं ययौ रामो मध्येनागुरुधूपितम् ॥ ४ ॥
उत्तमानां च गंधानां क्षौमपट्टांबरस्य च ।
चन्दनानां च मुख्यानामगुरूणां च धूपितम् ॥ ५ ॥
आबद्धाभिश्च मुख्याभि र्मणिभिः स्फटिकैरपि ।
शोभमानमसंबाधं नरेन्द्रपथमुत्तमम् ॥ ६ ॥
संवृतं विविधैः पण्यै[2] र्भक्ष्यैरुच्चावचैस्तथा[3] ।
ददर्श तं राजमार्गं दिव्यं राजसुतस्तथा ॥ ७ ॥
आशीर्वादान् बहून् शृण्वन् सुहृद्भिः समुदीरितान् ।
यथार्हं तांश्च संपूज्य सर्वानेव नरान् ययौ ॥ ८ ॥
पितामहैराचरितं तथैव प्रपितामहैः ।
अद्य[4] संप्राप्य तं मार्गमभिषिक्तोऽनुपालय ॥ ९ ॥
यथा स्म लालिताः पित्रा यथा सर्वैः पितामहैः ।

1 म, ल—स्वगृ० । ०भ—त्यकम् । 2 म, ल—पुण्यै । 3 म—०यचैरपि । 4 कै—अभ्य– ।

ततः सुखतरं सर्वे वत्स्यामस्त्वयि राजनि ॥ १० ॥
अलमद्याभियुक्तेन परमार्थैरलं च नः ।
साधु पश्याम निर्यातं रामं राज्ये प्रतिष्ठितम् ॥ ११ ॥
अतो हि नः प्रियतरं नान्यत् किंचिद् भविष्यति ।
रामाभिषेकादन्यत्र जीवितादपि च प्रियम् ॥ १२ ॥
एताश्चान्याश्च सुहृदामुदासीनकथाः शुभाः ।
आत्मसंपूजिनीः शृण्वन् ययौ रामो महारथः ॥ १३ ॥
न हि तस्मान्मनः कश्चिचक्षुषी वा नरोत्तमात् ।
नरः शशाक चाक्रष्टुमतिक्रान्तेऽपि राघवे ॥ १४ ॥
न पश्यति च यो रामं न वा दृश्येत तेन यः ।
स निन्दितमिवात्मानमवमेने जनस्तदा ॥ १५ ॥
सर्वेष्वेव च धर्मात्मा वर्णेष्वासीद्दयापरः ।
आत्मनो विषयस्थेषु तेन ते तमनुव्रताः ॥ १६ ॥
स राजकुलमासाद्य वृतं मेघोपमैः शुभैः ।
प्रासादशृंगैर्विविधैः कैलासशिखरप्रभैः ॥ १७ ॥
आवारयद्भिर्गगनं विमानैरिव पाण्डुरैः ।
वर्धमानगृहैश्चैव हेमलाजपरिष्कृतैः[5] ॥ १८ ॥
तत्पृथिव्यां गृहं श्रेष्ठं महेन्द्रसदनोपमम् ।
राजपुत्रः पितुः शुभ्रं प्रविवेश गृहोत्तमम् ॥ १९ ॥

---

5 कै—हेमलाज० इति पूर्वं लिखितं पश्चाद् विभिन्नमस्यां "हेमलाज" (="हेमजाल") इत्यङ्कितम् ।

स कक्ष्यां धन्विभिर्गुप्तां प्रविवेश तुरंगमैः ।
पदातिरपरे कक्ष्ये द्वे जगाम नृपात्मजः ॥ २० ॥
स सर्वाः समतिक्रम्य कक्ष्या दशरथात्मजः ।[O]
सन्निवार्य जनं सर्वं शुद्धान्तःपुरमभ्यगात् ॥ २१ ॥
ततः प्रविष्टे पितुरन्तिकं तदा जनः स सर्वो मुमुदे नृपात्मजे ।
प्रतीक्षमाणः पुनरस्य निर्गमं यथोदयं चन्द्रमसः सरित्पतिः॥२२॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे रामोपयानं
नामाष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥



O Om ।

[एकोनविंशः सर्गः]

स ददर्शासने रामो निषण्णं पितरं तु तम् ।
कैकेयीसहितं दीनं मुखेन[1] परिशुष्यता ॥ १ ॥
स पितुश्चरणौ पूर्वमभिवाद्य विनीतवत्[2] ।
ततो ववन्दे चरणौ कैकेय्याः सुसमाहितः[3] ॥ २ ॥
सौमित्रिरपरिश्रान्तः पितुः पादावनन्तरम् ।
ववन्दे परमप्रीतः कैकेय्याश्च तदा पुनः ॥ ३ ॥
अभ्यागतं प्राञ्जलिं तं रामं दृष्ट्वा नराधिपः ।
न शशाकाप्रियं वक्तुं समीपस्थमरिन्दमम् ॥ ४ ॥
रामेत्युक्त्वा च वचनं वाष्पपर्याकुलेक्षणः ।
न शक्तो नृपतिर्दीनः प्रेक्षितुं नाभिभाषितुम् ॥ ५ ॥
तदपूर्वं नरपते दृष्ट्वा रूपं भयावहम् ।
रामो ऽपि भयमापेदे यथा स्पृष्ट्वेव[*] पन्नगम् ॥ ६ ॥
इन्द्रियैरप्रहृष्टैस्तं शोकसन्तापकर्षितम् ।
निःश्वसन्तं महाराजं व्यथिताकुलचेतसम् ॥ ७ ॥
ऊर्मिमालापरिक्षिप्तं क्षुभ्यमाणमिवार्णवम् ।
उपप्लुतमिवादित्यमुक्तानृतमृषिं यथा ॥ ८ ॥
अचिन्त्यकल्पं हि पितुस्तं शोकमवधारयन् ।
बभूव संरब्धतरः समुद्र इव पर्वणि ॥ ९ ॥
चिन्तयामास च तदा रामः पितृहिते[4] रतः ।

---

1 म, ल—मुखेन। 2 कै, म—०वान्। 3 ल—समसाहित। * (स्पृष्ट्वेव)
4 ल—प्रियहिते।

किंस्विदद्यैव नृपति र्न मां प्रेक्ष्याभिनन्दति ॥ १० ॥
तस्य मामद्य संप्रेक्ष्य किमायासः प्रवर्तते ।
ततस्तु पितुरप्रीत्या व्यथितः पितृवत्सलः ॥ ११ ॥
चिन्तयामास धर्मात्मा रामस्तद्वद्धुधा पितुः ।
स दीन इव शोकार्तो विवर्णवदनद्युतिः ॥ १२ ॥
कैकेयीमभिवाद्यैवं रामो वचनमब्रवीत् ।
देवि किं नु मयाऽज्ञानादपराद्धं महीपतेः ॥ १३ ॥
विवर्णवदनो दीनो न हि मामभिभाषते ।
शारीरो मानसो वाऽपि कश्चिद्देवि न बाधते ॥ १४ ॥
सन्तापो वाऽनुतापो वा दुर्लभं हि सदा सुखम् ।
कच्चिन्न[5] किञ्चिद्भरते[6] कुमारे प्रियदर्शने ॥ १५ ॥
शत्रुघ्ने वाप्यकुशलं देवि मातृषु वा पुनः ।
कच्चिन्मया नापकृतमज्ञानादेव मे पिता ॥ १६ ॥
कुपितस्तत्त्वमाचक्ष्व त्वं चैवैनं प्रसादय ।
अतोषयित्वा राजानमकृत्वा च पितुर्वचः ॥ १७ ॥
मुहूर्तमपि नेच्छेयं जीवितुं कुपिते नृपे ।
यतोमूलं नरः पश्येत् प्रादुर्भावमिहात्मनः ॥ १८ ॥
कथं तस्मिन् न वर्तेत प्रत्यक्षमिव दैवते ।
कच्चिन्न परुषं[7] किञ्चिदभिमानात् पिता मम ॥ १९ ॥
उक्तो भवत्या कोपेन येनास्य लुलितं मनः ।
एतदाचक्ष्व मे देवि तत्त्वेन परिपृच्छतः ॥ २० ॥

---

5 कै, म-कच्चिन्नु । ल-किञ्चिन्नु । 6 म-भरते कच्चि । 7 कै, म, ल-पुरुषं ।

किञ्चिन्मितमपूर्वो ऽयं विकारो मनुजाधिपे ।
एवमुक्ता तु कैकेयी राघवेण महात्मना ॥ २१ ॥
अकृतार्थमना देवी भावं रामस्य वीक्ष्य तम् ।
वीतचिन्ता प्रहृष्टा च रामं वचनमब्रवीत् ॥ २२ ॥
राजा न कुपितो राम व्यसनं न च किञ्चन ।
किंचिन्मनोगतं त्वस्य त्वद्भयान्न च भाषते ॥ २३ ॥
प्रियत्वादप्रियं वक्तुं नास्य वाणी प्रवर्तते ।
यथावश्यं त्वया कार्यं यथानेन प्रतिश्रुतम् ॥ २४ ॥
एष मह्यं वरं दत्त्वा त्वदर्थमभिमृश्य च ।
पश्चात्सन्तप्यते राजा यथाऽन्यः प्राकृतस्तथा ॥ २५ ॥
अतिसृज्य[8] ददानीति वरं मह्यं विशांपतिः ।
स निरर्थं गतजले सेतुबंधनमिच्छति ॥ २६ ॥
त्वत्कृते न त्यजेद्राजा यथा सत्यं तथा कुरु ।
यदयं वक्ष्यति नृपः शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥ २७ ॥
तत्करिष्यसि चेत्सर्वमाख्यास्यामि ततस्त्वहम् ।
यदा त्वाभिहितं राज्ञा राम सम्पादयिष्यसि ॥ २८ ॥
ततो ऽहमभिधास्यामि न ह्येष त्वां प्रवक्ष्यति ।
एतत्तु वचनं श्रुत्वा कैकेय्या समुदाहृतम् ॥ २९ ॥
उवाच व्यथितो रामस्तां देवीं नृपसन्निधौ ।
अहो धिङ्नार्हसीदं मां वक्तुं देवीदृशं वचः ॥ ३० ॥

8 म—अभिसृज्य ।

अहं हि वचनाद्राज्ञः पतेयमपि पावकम् ।
भक्षयेयं विषं वापि मज्जेयमपि वा जले ॥ ३१ ॥
नियुक्तो गुरुणा पित्रा नृपेण च हितेन च ।
तद् ब्रूहि वचनं देवि यद्राज्ञः[9] प्रसमीहितम्[10] ॥ ३२ ॥
प्रतिज्ञातं करिष्ये च रामो ऽसत्यं न भाषते ।
तमार्जवसमायुक्तमनार्या सत्यवादिनम् ॥ ३३ ॥
उवाच रामं कैकेयी मन्थरावाक्यमोहिता ।
पुरा देवासुरे युद्धे पित्रा ते मम राघव ॥ [illegible]
रक्षितेन वरौ दत्तौ सशल्येन महारणे ।
द्वौ वरौ याचितो राजा भरतस्याभिषेचनम् ॥ [illegible]
दण्डकारण्यगमनं भवतो ऽद्यैव राघव ।
यदि सत्यप्रतिज्ञं त्वं पितरं कर्तुमिच्छसि ॥ ३६ ॥
आत्मानं च नरश्रेष्ठ मम वाक्यमिदं शृणु ।
सन्निदेशः पितुस्ते ऽयं प्रतिज्ञातं ह्यनेन[11] मे ॥ ३७ ॥
त्वया त्वरण्ये वस्तव्यं नव वर्षाणि पञ्च च ।
भरतश्चाभिषिच्येत यदेतदभिषेचनम् ॥ ३८ ॥
त्वदर्थं विहितं राज्ञा तेन सर्वेण राघव ।
सप्त सप्त च वर्षाणि दण्डकारण्यमाश्रितः ॥ ३९ ॥
अभिषेकमिमं[12] त्यक्त्वा जटाचीरधरो भव ।
भरतः कोशलपुरे[13] प्रशास्तु वसुधामिमाम् ॥ ४० ॥

---

9 म-राज्ञा । 10 कै-प्रसमीक्षिताम् । म-प्रसमीक्षितं । 11 कै—ह्यवेन ।
12 ट—०मिदं । 13 कै०, ट, म—कोसल० ।

नानारत्नसमाकीर्णां सवाजिरथकुञ्जराम् ।
एवं ते पितुरादेशः कृतो राम भविष्यति ॥ ४१ ॥
स तु तद्वचनं श्रुत्वा कैकेय्या समुदाहृतम् ।
प्रहस्यानन्तरं वाक्यमुवाच रघुनन्दनः ॥ ४२ ॥
देव्येवमस्तु वत्स्यामि नव वर्षाणि पञ्च च ।
जटाचीरधरो ऽरण्ये प्रतिज्ञां पालयन् पितुः ॥ ४३ ॥
इद तु ज्ञातुमिच्छामि किमर्थं नाभिभाषते ।
महीपति मां दुर्धर्षो यथापूर्वमरिन्दमः ॥ ४४ ॥
मन्युर्नात्र त्वया कार्यो ब्रवीम्येष तवाग्रतः ।
यास्यामि भव सुप्रीता वनं चीरजटाधरः ॥ ४५ ॥
हितेन गुरुणा पित्रा कृतज्ञेन नृपेण च ।
नियुज्यमानो विस्रब्धं किं न कुर्यामहं प्रियम् ॥ ४६ ॥
व्यलीकं मानसं त्वेकं हृदयं दहतीव मे ।
स्वयं मा नाह यद्राजा भरतस्याभिषेचनम् ॥ ४७ ॥
यद् भ्रूते न महाराजा मम चैन प्रवासनम् ।
अहं हि सीतां राज्यं च प्राणानिष्टान् धनानि च ॥ ४८ ॥
हृष्टो भ्रात्रे स्वयं दद्या भरताय* प्रणोदतः ।
किं पुनर्मनुजेन्द्रेण स्वयं पित्रा प्रणोदितः ॥ ४९ ॥
देव्याश्च प्रियमाकाङ्क्षन् प्रतिज्ञामनुपालयन् ।
तदाश्वासय मां देवि किं न्विदं** यन्महीपतिः ॥ ५० ॥

---

* भरतायाप्रणोदित इति साधु 14 कै—०न्विद् ।

वसुधाऽऽसक्तनयनो[15] भृशमश्रूणि[16] मुञ्चति ।
गच्छन्तु चैवानयितुं दूताः शीघ्रजवैर्हयैः ॥ ५१ ॥
भरतं मातुलगृहादद्यैव नृपशासनात् ।
आनीयतां[17] महाभाग[18] राज्ये चैवाभिषिच्यताम्[19] ॥ ५२ ॥
दण्डकारण्यमेषोऽहमितो गच्छामि सत्वरः ।
अविचार्य पितुर्वाक्यं समा वस्तुं चतुर्दश ॥ ५३ ॥
संहृष्टा तस्य तद्वाक्यं कैकेयी सन्निशम्य ह ।
प्रस्थापनं श्रद्दधती त्वरयामास राघवम् ॥ ५४ ॥
एवं भवतु यास्यन्ति दूताः शीघ्रजवैर्हयैः ।
भरतं मातुलकुलादुपावर्तयितुं द्रुताः[20] ॥ ५५ ॥
नैव त्वहं क्षमं मन्ये औत्सुक्याद्धि विलम्बनम्[21] ।
राम तस्मादितः क्षिप्रं वनं त्वं गन्तुमर्हसि ॥ ५६ ॥
व्रीडान्वितः स्वयं यच्च[22] नृपस्त्वां नाभिभाषते ।
मा च[23] ते संशयोऽस्त्वन्यो मा मन्युं कुरु राघव ॥ ५७ ॥
यावत्त्वं न वनं यातः पुरादस्मादपि त्वरन् ।
तावन् न ते पिता राम स्वास्थ्यं[24] प्राप्नोति[25] दुःखितः ॥५८॥
निमीलितेक्षणो राजा श्रुत्वैतद्दारुणं वचः ।
कैकेय्यां शङ्कमानायां लुब्धायां रामनिश्चयम् ॥ ५९ ॥

---

15 ङ—वसुधासंप० । 16 घ, ङ, म—०मश्रूणि । 17 घ, म—आनीय तं । 18 म—०भागे । 19 म—०ताम् । 20 म—गृहम् । 21 म—विलम्बना । 22 घ, ङ, म—यद्य । 23 घ—मे । 24 म—स्वास्थ्यं । ङ—स्वास्थ्यं (!) । 25 म—प्राप्तोति ।

सुदीर्घं हा हतो ऽस्मीति वाक्यमुक्त्वा सुदुःखितः ।
मूर्च्छामुपागमद् भूयः शोकवाष्पपरिप्लुतः ॥ ६० ॥
मूर्च्छितश्चापतत्तास्मिन् पर्यङ्के हेमभूषिते ।
अथ रामो ऽपि दुर्धर्षः कैकेय्याऽभिप्रणोदितः ॥ ६१ ॥
कशयेवाहतो वाजी वनं गन्तुं कृतत्वरः ।
तदप्रियमविश्रान्तो वचनं मरणोपमम् ॥ ६२ ॥
श्रुत्वाऽप्यव्यथितो रामः कैकेयी मिदमब्रवीत् ।
नाहमर्थपरो देवि लोकानावस्तुमुत्सहे ॥ ६३ ।
विद्धि मामृषिभिस्तुल्यं केवलं धर्ममास्थितम् ।
यदत्र भवतां किञ्चिच्छक्यं कर्तुं प्रियं मया ॥ ६४ ॥
प्राणानपि परित्यज्य सर्वथा कृतमेव तद् ।
न ह्यतो धर्मचरणादन्यदस्त्यधिकं भुवि ॥ ६५ ॥
यथा पितरि शुश्रूषा तस्य वा वचनक्रिया ।
अनुक्तो ऽप्यत्र गुरुणा भवत्या वचनादहम् ॥ ६६ ॥
वने वत्स्यामि विजने नव वर्षाणि पञ्च च ।
नूनं त्वमपि कल्याणि संभावयसि किञ्चन ॥ ६७ ॥
यत्त्वया भरतस्यार्थे राजा विज्ञापितः स्वयम् ।
इष्टान् भोगान् प्रियान् दारानपि वा जीवितं प्रियम् ॥६८॥
सर्वंच वचनाद्द्यां भरताय महात्मने ।
राजानं दुःखितं कृत्वा पुत्रार्थे राज्यलुब्धया ॥ ६९ ॥
अम्ब किं नाम संप्राप्तं त्वया फलमभीप्सितम् ।
अहं मातरमापृच्छ्य वैदेहीं प्रविहाय च ॥ ७० ॥

अद्यैव वनवासाय गच्छामि सुखिनी भव ।
भरतः पालयन् राज्यं शुश्रूषेत यथा नृपम् ॥ ७१ ॥
तथा भवत्या कर्तव्यमेष धर्मः सनातनः ।
इति रामवचः श्रुत्वा शोकबाष्पपरिप्लुतः ॥ ७२ ॥
ईषत्ससंज्ञो नृपतिर्भूयो मोहमुपागमत् ।
श्रुत्वा चैवाप्रियाख्यानं राममातुस्तदप्रियम् ॥ ७३ ॥
अन्तःपुरचरा नार्यः प्रद्वेषभयशङ्किताः ।
अतो नाभ्यागमंस्तत्र कौशल्यायै निवेदितुम् ॥ ७४ ॥
निपीड्य चरणौ रामो विसंज्ञस्य महीपतेः ।
कैकेय्याश्चापि धर्मात्मा निर्जगाम महाद्युतिः ॥ ७५ ॥
त बाष्पपरिरुद्धाक्षो लक्ष्मणो पृष्ठतो ऽन्वगात् ।
लक्ष्मणः परमक्रुद्धः सुमित्राकुलनन्दनः ॥ ७६ ॥
गमने च मतिं चक्रे वनवासाय चैव हि ।
आभिषेचनिकं भाण्डं कृत्वा रामः प्रदक्षिणम् ॥ ७७ ॥
शनैर्जगाम साक्षेपो[26] दृष्टिं तत्राविधारयन् ।
स रामः पितरं कृत्वा कैकेयीं च प्रदक्षिणम् ॥ ७८ ॥
निष्क्रम्यान्तःपुरात्तस्मात्तं ददर्श सुहृज्जनम् ।
दृष्ट्वा च सस्मितमुखः प्रतिपूज्य यथार्हतः ॥ ७९ ॥
जगाम त्वरित द्रष्टुं मातरं स्वं निवेशनम् ।
दुःखमन्तर्गतं तस्य न कश्चिद्बुबुधे जनः ॥ ८० ॥

---

26 म—सोपेक्षो ।

लक्ष्मणं वर्जयित्वैकं धृतिसंयतचेतसम् ।
न ह्यस्य राजलक्ष्मीं तां राज्यनाशो ऽपकर्षति ॥ ८१ ॥
लोककान्तस्य कान्तत्वाच्छीतरश्मेरिव क्षयः ।
न चापि धनसंपूर्णां त्यजतो ऽस्य वसुन्धराम् ॥ ८२ ॥
यतेरिव विमुक्तस्य लक्ष्यते चित्तविक्रिया ।
धारयन् मनसा दुःखमिन्द्रियाणि नियम्य च ॥ ८३ ॥
जगाम चात्मवान् वेश्म मातुरप्रियशंसकः ।
तथैव रामः स्वजनं समागमे प्रहर्षयन् हृष्टमना रघूद्वहः ।
जगाम तामर्थविपत्तिमात्मनो विचिन्तयन्मातुरथो निवेशनम् ।८४।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वनवासप्रतिज्ञानाम
एकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

[विंशः सर्गः]

रामो ऽथ दुःखसन्तप्तः श्वसन्निव भुजङ्गमः ।
जगाम सहितो भ्रात्रा कौशल्याया निवेशनम् ॥ १ ॥
सो ऽपश्यत् पुरुषांस्तत्र वृद्धान्[1] बन्धुवरांस्तथा[1] ।
स्वस्थान् विनयसम्पन्नान् धिष्ठितान्[2] पितुराज्ञया ॥ २ ॥
तैः कृताञ्जलिभिस्तत्र विवेश्याप्रतिवारितः ।
प्रथमां राघवः कक्ष्यां मातरं द्रष्टुमातुरः[3] ॥ ३ ॥
प्रविश्य प्रथमां कक्ष्यां द्वितीयायां ददर्श सः ।
ब्राह्मणान् वेदविदुषो वृद्धान् राजपुरस्कृतान् ॥ ४ ॥
निवेश मातुर्भवनं रामस्त्वरितमानसः ।
कौशल्याऽपि तदा देवी परं नियममास्थिता ॥ ५ ॥
अकरोत् प्रयता पूजां देवानां नियतव्रता ।
आशंसन्ती च पुत्रस्य यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ६ ॥
सा शुक्लाम्बरसंवीता तत्पराऽनन्यमानसा ।
प्रविश्य चैव त्वरितो रामो मातुर्निवेशनम् ॥ ७ ॥
ददर्श मातरं तत्र देवागारे यतव्रताम् ।
कृताञ्जलिपुटां चैव स्थितां मङ्गलवादिनीम् ॥ ८ ॥
अर्चयन्तीं पितॄंश्चैव देवांश्चानन्यमानसाम् ।
तामवेक्ष्य ततो रामो ववन्दे विनयात् ततः ॥ ९ ॥
उवाच चैनामभ्येत्य रामोऽहमिति नन्दयन् ।

---

1 म—वृद्धवधारपस्तथा। 2 म, ङ—विष्ठितान्। 3 कै, ङ—द्रष्टुमाचरः। म—दृष्टमातर.।

साऽथ दृष्ट्वैव तनयं मातृनन्दनमागतम् ॥ १० ॥
अभ्यनन्दत वात्सल्याद् वत्सं गौरिव वत्सला ।
स मात्रा समभिप्रेत्य परिष्वज्याभिनन्दितः ॥ ११ ॥
पूजयामास तां देवीमदितिं मघवानिव ।
तमुवाच ततो हृष्टा कौशल्या प्रियमात्मजम् ॥ १२ ॥
प्रपूजयन्ती पुत्रस्य शिववृद्ध्यर्थमाशिषः ।
वृद्धानां पुत्र सर्वेषां राजर्षीणां महात्मनाम् ॥ १३ ॥
प्राप्नुह्यायुश्च कीर्तिं धर्मं च स्वकुलोचितम् ।
पित्रा निसृष्टामतुलामव्ययां श्रियमाप्नुहि ॥ १४ ॥
हताभिनः श्रियायुक्तः पितॄन् नन्दय पुत्रक ।
सत्यप्रतिज्ञं पितरं पश्य राघव मा चिरम् ॥ १५ ॥
अद्य हि त्वां पिता राम यौवराज्येऽभिषेक्ष्यति ।
एवं ब्रुवाणां कौशल्यां रामो वचनमब्रवीत् ॥ १६ ॥
कैकेयीवाक्यसन्तप्त ईषद्व्याकुलचेतनः ।
अम्ब न त्वं प्रजानासि महद्भयमुपागतम् ॥ १७ ॥
तव दुःखाय महते वैदेह्या लक्ष्मणस्य च ।
कैकेय्या भरतस्यार्थे राज्यं राजाऽभियाचितः ॥ १८ ॥
सत्येन परिगृह्यादौ तेन चास्यै प्रतिश्रुतम् ।
भरताय महाराजो यौवराज्यं प्रदास्यति ॥ १९ ॥
मां पुनर्वनवासाय नियोजयति साम्प्रतम् ।
सोऽहं वत्स्यामि वर्षाणि वने देवि चतुर्दश ॥ २० ॥

स्वादूनि हित्वा भोज्यानि फलमूलकृताशनः ।
इति रामवचः श्रुत्वा सा पपात तपस्विनी ॥ २१ ॥
कौशल्या दुःखसन्तप्ता निकृत्ता कदली यथा ।
स तां निपतितां दृष्ट्वा भूमौ मातरमातुराम् ॥ २२ ॥
राम उत्थापयामास दुःखितां गतचेतनाम् ।
उपावृत्योत्थितां दीनां वडवामिव विह्वलाम् ॥ २३ ॥
संमार्ज्य पाणिना रामः पांसुना परिगुण्ठिताम् ।
अथ किञ्चित्समाश्वस्ता कौशल्या दुःखमोहिता ॥ २४ ॥
उदीक्ष्य रामं प्रोवाच बाष्पगद्गदया गिरा ।
नैव राम यदि त्वं मे जायेथाः शोकवर्द्धनः ॥ २५ ॥
न चैनाहमिदं दुःखं प्राप्नुयां त्वद्वियोगजम् ।
एकमेव हि वन्ध्याया दुःखं भवति पुत्रक ॥ २६ ॥
अप्रजाऽस्मीति न त्वादृगिष्टापत्यनियोगजम् ।
न प्राप्तपूर्वं कल्याणं मया पतिपरिग्रहात् ॥ २७ ॥
आशंसिताऽस्मि रुचिरं त्वत्तोऽपि प्राप्नुयामिति ।
तदद्य निष्फलं जातं मम राम निचिन्तितम् ॥ २८ ॥
दुःखानामेव पुत्राहं विहिताऽत्यन्तभागिनी ।
सा बहून्यमनोज्ञानि वाचश्च हृदयच्छिदः ॥ २९ ॥
सहिष्ये न सपत्नीनामवराणां वरा सती ।
इतोऽपि वै दुःखतर मम राम भविष्यति ॥ ३० ॥
त्वयि सन्निहिते तावादेव मे राम निक्रिया ।
प्रोषिते त्वयि सुव्यक्त नैव शक्ष्यामि जीवितुम् ॥ ३१ ॥

यदि मां प्रीयते काचित् सम्यङ न (च ?) परिवर्तते ।
सर्वा एव तु ता द्वेष्टि कैकेयी वीक्ष्य मत्कृते ॥ ३२ ॥
साऽहं बहून्यनिष्टानि वाचश्च हृदयच्छिदः ।
सहिष्ये खलु कैकेय्यास्त्वयि राम वनं गते ॥ ३३ ॥
तदसह्यमहं दुःखं सोढुं पुत्रक नोत्सहे ।
अथैव मरणं मेऽस्तु को वाऽर्थो जीवितेन मे ॥ ३४ ॥
अद्य जातस्य वर्षाणि दश चाष्टौ च ते ऽनघ ।
क्षपितानीह कांक्षन्त्या त्वत्तो दुःखपरिक्षयम् ॥ ३५ ॥
नियमैरुपवासैश्च कर्पयन्त्या⁰ कलेवरम⁰ ।
दुःखं संवर्द्धितो राम मया दुःखितया ह्यसि ॥ ⁰३६ ॥
नियमाश्चोपवासाश्च⁰ ये मया त्वत्कृते कृताः ।
त एते विफला जाता वनं संप्रस्थिते त्वयि ॥ ३७ ॥
दुःखौघेन परिक्लिष्टं हृदयं सीदतीव मे ।
दुर्बल विपरिक्लिष्टं नदीकूलमिवाम्भसा ॥ ३८ ॥
ममैव नूनं मरणं न विद्यते न चानकाशोऽस्ति ममक्षये* क्वचित् ।
यदन्तकोऽद्यैव न मां प्रधर्षते गृहीतशोकाऽस्मि निगृह्य जीवितम् ३९।
यदि ह्यकाले मरणं स्वयेच्छया लभेयं कश्चिद्वहुदुःखदुःखिता ।
भवेयमद्येव सर्जानिता ध्रुवं सुदुःखिता राम विनाकृता त्वया ।४०।
दृढ च नून हृदय सुमहत ममायस यच्छतधा न दीर्यते ।
त्वयेत्रमुक्ते च तदा मृता ह्यहं ध्रुव हि मृत्युर्मम नैव विद्यते ॥४१॥

---

* (यमक्षय ?) । 4 म—दृढ ।

इदं तु ते दुःखमतीव यन्मया सुदुष्करं दुःखमनर्थकं तु* वः* ।
प्रसादिता ये च कृताशया मया निरर्थकं पुत्र हृदि प्रहर्षती ॥४२॥
भृशमसुखमवाप्य तत्तु सा नृपमहिषी विललाप दुःखिता ।
व्यसनिनमिव वीक्ष्य राघवं सुतामिव बद्धमवेक्ष्य केसरी' ॥ ४३ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याविलापो
नाम विंशः सर्गः ॥ २० ॥

---

* म—श्रुवा (ततः ?) । 5 म—किन्नरी ।

[एकविंशः सर्गः]

पुनरेव सुदुःखार्ता कौशल्या राममब्रवीत् ।
न श्रोतव्यं त्वया राम पितुः कामवतो वचः ॥ १ ॥
इहैव वस किं तेऽसौ राजा वृद्धः करिष्यति ।
न गन्तव्यं त्वया वत्स जीवन्तीं मां यदीच्छसि ॥ २ ॥
तथा तामातुरां दृष्ट्वा कौशल्यां राममातरम् ।
उवाच लक्ष्मणः श्रीमांस्तत्कालसदृशं वचः ॥ ३ ॥
न रोचते ममाप्येतद् यदार्ये राघवो वनम् ।
त्यक्त्वा राज्यश्रियं गच्छेद् वृद्धवाक्यवशं गतः ॥ ४ ॥
विपरीतश्च वृद्धश्च विषयैश्च प्रधर्षितः ।
नृपः किमिव न ब्रूयाद् चोद्यमानः समन्मथः ॥ ५ ॥
देवसत्त्वं मृदुं शान्तं[1] रिपूणामपि वत्सलम् ।
अनेक्षमाणः को धर्मं त्यजेत्पुत्रमकारणम् ॥ ६ ॥
पुनर्बालस्य वृद्धस्य स्त्रीजितस्य विशेषतः ।
कः कुर्याद्वचनं तस्य राजधर्मार्थविद्बुधः ॥ ७ ॥
यावदेव न जानाति कश्चिदर्थमिमं नरः ।
तावदेव मया सार्द्धमात्मस्थं[2] कुरु शासनम् ॥ ८ ॥
भृत्ये ते मयि पार्श्वस्थे राज्यकार्यार्थमुद्यते[3] ।
यौवराज्याभिषेकस्य विघातं कः करिष्यति ॥ ९ ॥
निर्मनुष्यामयोध्यां हि कुर्यां राम शितैः शरैः ।

1 म—दान्तं । 2 के, ल, म—सार्धं॰ । 3 के—॰मुद्यते । ल, म—॰मुद्यते ।

यौवराज्ये विघातं ते कः कुर्वीत नृपाज्ञया ॥ १० ॥
भरतस्यापि वा पक्षं यो गृह्णीयादचेतनः ।
तं पापमहमद्यैव प्रेषयामि यमक्षयम् ॥ ११ ॥
नायमव्यक्तिकालस्ते तेजो दर्शय राघव ।
क्षमी ह्येकरसो राम लोकेन परिभूयते ॥ १२ ॥
कैकेय्या नियतं राजा भेदितो ऽद्य भविष्यति ।
त्वया तस्य निभिन्नस्य श्रोतव्यं न कथञ्चन ॥ १३ ॥
कं च धर्मं समाश्रित्य त्वामसौ त्यक्तुमिच्छति ।
निग्रहो ऽयं कृतो ऽनेन त्वया सह मयैव च ॥ १४ ॥
कस्य शक्तिः श्रियं दातुं भरताय बलादिव ।
प्रविविक्षति रामोऽयं यदि दीप्तं हुताशनम् ॥ १५ ॥
पूर्वमेव ततो देवि प्रविष्टं मोपधारय ।
सर्वभावानुरक्तोऽस्मि रामं भ्रातरमग्रजम् ॥ १६ ॥
न्यायवृत्तेन सत्येन पादौ चैवालभे तव ।
अद्य पश्यन्तु मे वीर्यं सर्वशो युधि मानवाः ॥ १७ ॥
रामाज्ञया दुःखशल्यमहमद्योद्धरामि ते ।
इत्येतद्वचनं श्रुत्वा लक्ष्मणस्य महात्मनः ॥ १८ ॥
उवाच रामं कौशल्या दुःखशोकपरिप्लुता ।
भ्रातुस्ते वचनं राम श्रुतं भक्तियुतं[4] हितम् ॥ १९ ॥
एतदेव विमृश्याशु क्रियतां यदि रोचते ।

---

4 ख—०युक्तं ।

न मे सपत्न्या वचनाद् वनं गन्तुमितोऽर्हसि ॥ २० ॥
शोकपावकसन्तप्तां मां विमुच्यारिधर्षण ।
धर्मं च यदि धर्मात्मन् पुराणमनुवर्तसे ॥ २१ ॥
शुश्रुषुर्मामिहस्थश्च चर धर्ममनुत्तमम् ।
पुरा मातुर्नियोगाद्धि शक्रः[5] परपुरञ्जय ॥ २२ ॥
भ्रातॄन् जघान सापत्न्याद्राज्यं चापि[6] दिवौकसाम् ।
शुश्रूषुर्जननीं तत्र स्वगृहे नियतो वसन् ॥ २३ ॥
परेण तपसा युक्तः काश्यपस्त्रिदिवं गतः ।
यथैव राजा पूज्यस्ते तथाऽहमपि पुत्रक ॥ २४ ॥
त्वया ममापि वचनान्न गन्तव्यमितो वनम् ।
न चैव त्वद्विहीनाऽहं जीवेयमिति मे मतिः ॥ २५ ॥
मामुपेक्ष्य च राम त्वं न वनं गन्तुमर्हसि ।
गन्तव्यं यदि चावश्यं मयैव सहितो व्रज ॥ २६ ॥
त्वया सह मम श्रेयस्तृणानामपि भक्षणम् ।
यदि मां सम्परित्यज्य वनं यास्यसि राघव ॥ २७ ॥
ततोऽहं प्रायमासिष्ये न हि शक्ष्यामि जीवितुम् ।
मातृहा निरयं[7] घोरं तेनावाप्स्यसि[8] कल्मषम् ॥ २८ ॥
विलपन्तीं तथा दीनां कौशल्यां शोकमूर्च्छिताम् ।
उवाच रामो धर्मात्मा वचनं धर्मसंहितम् ॥ २९ ॥

5 ल—चक्र । म—शुक्रा । 6 कै, ल, म—चाप । कै कोषे "चापि" इत्येवं पश्चात् संशोधितम् । 7 ल—निमयं । 8 ल—त्वमवाप्स्यसि ।

किमेतद्देवि धर्मज्ञे स्नेहविक्लवया त्वया ।
भाषितं स्मर धर्मं त्वमात्मानं स्वकुलं तथा ॥ ३० ॥
भर्तारं परमोदारं ततो मातः प्रशाधि माम् ।
जानतोऽपि हि मातॄणां दुःखं पुत्रप्रवासजम्[9] ॥ ३१ ॥
नास्ति शक्तिः पितुर्वाक्यं प्रतिकूलयितुं मम ।
प्रसादये त्वा शिरसा गन्तुमिच्छाम्यहं वनम् ॥ ३२ ॥
न खल्वेतन्मयैतेन क्रियते पितृशासनम् ।
अरण्यवासः साधूनां विशेषेण प्रशस्यते ॥ ३३ ॥
इदं च मे कथयतां ब्राह्मणानां परिश्रुतम् ।
पुरा कृतं पितृवचो यदन्यैरपि साधुभिः ॥ ३४ ॥
जामदग्न्येन रामेण जनन्याः किल धीमता ।
शिरश्छिन्नं परशुना क्रुद्धस्य पितुराज्ञया ॥ ३५ ॥
कण्डुना[10] चाऽपि सिद्धेन वनाश्रमनिवासिना ।
महर्षिणा गौर्विशस्ता तथैव पितुराज्ञया ॥ ३६ ॥
अस्माकं पूर्वकैश्चापि खनद्भिः पितुराज्ञया ।O
भूतलं सगरापत्यैर्महासत्त्ववधः कृतः ॥ ३७ ॥
तदेतन्न मयैकेन क्रियते पितृशासनम् ।
प्रायशः पितृभिः सद्भिर्गतो मार्गोऽनुगम्यते ॥ ३८ ॥
करिष्ये वचनं तस्मात्पितुरद्य प्रसीद मे ।
पितुर्हि वचनं कुर्वन्न कश्चिन्न[11] प्रशस्यते ॥ ३९ ॥
इत्युक्त्वा चैव कौशल्यां रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।

9 म—०प्रवासनं । 10 म—कातना । O के, ल । 11 ल—किंचिन्न ।

जानामि लक्ष्मणाहं ते भक्तिमानमनुत्तमम् ॥ ४० ॥
मदर्थमपि ते प्राणा अपि जानामि राघव ।
दुःखशल्यमिवाज्ञानात्संघट्टयसि मे पुनः ॥ ४१ ॥
तदेव तावद्दुःखं मे यदसौ मत्कृते नृपः ।
दुःखेन महताऽऽविष्टः शेते मोहमुपागतः ॥ ४२ ॥
कैकेय्या स्त्रीस्वभावेन पातितो धर्मसङ्कटे ।
अहो कृच्छ्रमहो दुःखं तत्पापं कर्तुमिच्छसि ॥ ४३ ॥
धर्मज्ञस्य पितुः कोऽत्र मादृशो राज्यलिप्सया ।
उत्क्रम्य शासनं जीवेत्सर्वलोकविगर्हितः ॥ ४४ ॥
मा भूत्स कालः सौमित्रे यदहं शासनं पितुः ।
इच्छेयं समतिक्रम्य मुहूर्तमपि जीवितुम् ॥ ४५ ॥
अभिप्रायमविज्ञाय नैवं मां वक्तुमर्हसि ।
साधु लक्ष्मण संशाम्य मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥ ४६ ॥
धर्मस्थितिः परो लाभो धर्मो धारयते धृतः ।
न च धर्मो धृतो मेऽन्यः पितुराज्ञामृतेऽनघ ॥ ४७ ॥
करिष्यामीति संश्रुत्य यदहं पितृशासनम् ।
न कुर्यां यदि सौमित्रे सर्वथैव धिगस्तु माम् ॥ ४८ ॥
सोऽहं न शक्ष्यामि पितुर्नियोगमतिवर्तितुम् ।
पितुर्ह्यनुमतं तन्मे कैकेय्या समुदाहृतम् ॥ ४९ ॥
तदेतामुत्सृजानार्यां क्षत्रविद्याऽऽकुलां मतिम् ।
धर्ममाश्रित्य मद्[12] बुद्धिमनुवर्तितुमर्हसि ॥ ५० ॥

12 के, ल म—मद् ।

इत्युक्त्वा वचनं रामो लक्ष्मणं लक्ष्मीवर्द्धनम् ।
उवाच भूयः कौशल्यां प्राञ्जलिः शिरसा नतः ॥ ५१ ॥
अनुजानीहि मां देवि करिष्ये शासनं पितुः ।
शापिताऽसि मया प्राणैः पुनरागमनेन च ॥ ५२ ॥
तीर्णप्रतिज्ञः कुशली पादौ द्रक्ष्यामि ते पुनः ।
गच्छेयं त्वदनुज्ञातो निर्व्यलीकेन चेतसा ॥ ५३ ॥
यशो ह्यहं देवि न राज्यकारणात् परित्यजेयं सुकृतेन ते शपे ।
अदीर्घकाले नरलोकजीविते वृणोमि धर्मं न महीमधर्मतः ॥५४॥
प्रसादये त्वां शिरसा यतव्रते प्रसीद मे कर्तुमविघ्नमर्हसि ।
वनं गमिष्यामि नृपाज्ञया ह्यहम् प्रदेह्यनुज्ञां शिरसा नतस्य मे ॥५५॥
प्रसादयन्नरवृषभः स मातरं बहूक्तवान् जिगमिषुरेव दण्डकम्[13] ।
अथात्मज भृशमति[14]-देविनं तदा चकार सा हृदि जननी पुनः पुनः॥५६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽनुनयो
नाम एकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

13 कै, ल—दंडकाम् । 14 म—०मपि ।

[द्वाविंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा मातरं रामो भूयो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
दृष्ट्वा तथैव सामर्षं निःश्वसन्तमिवोरगम् ॥ १ ॥
यो ऽयं मदभिषेकार्थं तव लक्ष्मण संभ्रमः ।
तमेनार्हसि कर्तुं त्वं मत्प्रस्थाने ससंभ्रमम् ॥ २ ॥
यस्या मदभिषेकार्थे मनो विपरितप्यते[1] ।
माता मे सा यथा भूयः शङ्कते न तथा कुरु ॥ ३ ॥
न बुद्धिपूर्वं नाज्ञानान्मातॄणां मातृनन्दन ।
कृतपूर्वमहं वीरः* स्मरामि क्वचिदप्रियम् ॥ ४ ॥
तस्माच्छङ्काकृतं दुःखं मुहूर्त्तमपि लक्ष्मण ।
गच्छेम्न वेति मा चाभूच्छङ्का मयि महीपतेः ॥ ०५ ॥
अभिषेकाभिलापं च मुञ्चेमं मम लक्ष्मण ।०
संप्रस्थेयाहमिच्छामि वनं गन्तुमितः पुरात् ॥ ६ ॥
मयि चीराजिनधरे जटामण्डलधारिणि ।
गतेऽरण्यं च कैकेय्या भविष्यति मनःसुखम् ॥ ७ ॥
मयि प्रव्रजिते देवो कृतकृत्यं सुनिर्वृतम् ।
आत्मानमपि जानातु पितुश्चानृण्यमस्तु मे[2] ॥ ८ ॥
एवं मे निश्चिता बुद्धिर्मनश्चैव समाहितम् ।
न विलंबितुमिच्छामि मुहूर्त्तमपि कर्हिचित् ॥ ९ ॥
कारणं तु कृतान्तोऽत्र सौमित्रे मद्विनिग्रहे ।
यौवराज्याभिषेकस्य तथास्य विनिग्रहे ॥ १० ॥

---

1 फे—विपरिजर्नते । *(वीर) Oम । 2 ल—ते ।

कैकेयी च प्रकृत्यैव सदा मां प्रति वत्सला ।
सत्यं मत्परिपीडार्थं बलादेव विमोहिता ॥ ११ ॥
तदुक्तं परुषं[3] यच्च तत्कृतान्तकृतं स्मर ।
नित्यं मातृषु मे प्रीतिरविशेषेण लक्ष्मण ॥ १२ ॥
सर्वासामविशेषेण तासामपि तथा मयि ।
अनुक्तपूर्वं कैकेय्या यदुक्तं परुषं रुषा ॥ १३ ॥
कथं प्रकृतिकल्याणी राजर्षिकुलजा सती ।
ब्रूयाद्विप्राकृतस्त्रीव मां तथा पितृसन्निधौ ॥ १४ ॥
दैवस्वभावसंसिद्धिरचिन्त्येति च मे मतिः ।
तन्नूनं पतितं मूर्ध्नि मम भाग्यविपर्ययात् ॥ १५ ॥
कथं दैवेन सौमित्रे योद्धुमुत्सहते सह ।
यस्येह निग्रहोपायः कथंचन[4] न[4] विद्यते ॥ १६ ॥
सुखदुःखभयोद्वेगलाभालाभभवाभवाः ।
नृणां भवन्ति दैवेन न भवन्ति च लक्ष्मण ॥ १७ ॥
अवश्यभावि व्यसनं ममैतदिति पश्यतः ।
व्याहते ऽप्यभिषेके मे परितापो न विद्यते ॥ १८ ॥
तस्मात्त्वमपि मे बुद्धिमनुवर्तितुमर्हसि ।
प्रतिसंचिंतयात्मानं मा च शोके मनः कृथाः ॥ १९ ॥
न लक्ष्मणास्मिन्मम राज्यविघ्ने माता यवीयस्याभिशङ्कनीया ।
न चैव राजाऽत्र विशङ्कनीयो दैवं हि कोऽतिक्रमितुं समर्थः ॥२०॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणानुनयो नाम द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

---

[3] के, ळ, म—पुंरुष । [4] म—न कथचन ।

[त्रयोविंशः सर्गः]

इति ब्रुवति रामे तु लक्ष्मणो ऽधोमुखः स्थितः ।
दुःखामर्षपरीतात्मा दध्यौ विप्लुतचेतनः ॥ १ ॥
स बद्ध्वा भ्रुकुटिं रोषाद् भ्रुवोर्मध्ये नरर्षभः ।
निशश्वास महासर्पो बिलस्थ इव रोषितः ॥ २ ॥
रुषितस्य तथा साक्षाद् भ्रुकुटीकुटिलं मुखम् ।
क्रुद्धस्येव मृगेन्द्रस्य विबभौ भूरितेजसः ॥ ३ ॥
विनिर्धूयाग्रहस्तं च प्रभिन्न इव कुञ्जरः ।
तिर्यगूर्ध्वं च संप्रेक्ष्य शिरः संकम्प्य चासकृत् ॥ ४ ॥
खड्गं परिमृषन् रोषाच्छत्रुपक्षविदारणम् ।
संरंभामर्षताम्राक्षस्ततो भ्रातरमब्रवीत् ॥ ५ ॥
अस्थाने संभ्रमो यस्ते जातो ऽयं गमनं प्रति ।
धर्मलोपभयाद्देव[1] लोकनादभयेन वा ॥ ६ ॥
कथमीदृगसंभ्रान्तस्त्वद्विधो वक्तुमर्हति ।
क्लीबं वाक्यमशौटीर्यं शौटीरः[2] क्षत्रियान्वयः ॥ ७ ॥
तेजःक्षात्रं समालंब्य[3] प्रमादक्तुं न चार्हसि ।
क्लीबा हि दैवमेवैकं प्रशंसन्ति न पौरुषम् ॥ ८ ॥
प्रतीपमपि शक्रोऽपि व्यसनायाभ्युपागतम् ।
दैवं पुरुषकारेण प्रतिषेद्धुमरिन्दम ॥ ९ ॥
कैकेयीं च नरेन्द्रं च कस्मात्कार्येण शंससि ।

---

1 म—०लोपभयाद्देव । 2 ळ, म—शौटीर. । 3 कै, म—समालभ्य ।

तयोर्न प्रतिपत्तव्यं तस्मात्पापानुबन्धयोः ॥ १० ॥
धर्मोऽप्युपायाः सन्त्यन्ये कुशलैः परिचिन्तिताः ।
तैरुपायैरर्थसिद्धैर्मोऽनर्थं नेतुमर्हसि ॥ ११ ॥
यदि चाऽर्यं स्वयं कर्तुं त्वमेवं न व्यवस्यसि ।
मां नियुङ्क्ष्व करिष्ये ऽहं वचनं यदनन्तरम् ॥ १२ ॥
लोकविद्विष्टमुत्सृज्य तस्माल्लोकप्रियं कुरु ।
यदर्थं बुद्धिमोहो ऽयमीदृशस्त्वामुपागतः ॥ १३ ॥
सो ऽपि धर्मो मम द्वेष्यो यत्प्रसंगाद्विमुह्यसि ।
लोकस्याप्रियमारब्धं कैकेय्याः केवलं प्रियम् ॥ १४ ॥
एतत् कार्यं नरेन्द्रेण कामतो न तु धर्मतः ।
अतिसृष्टश्चाऽभिषेकं[4] ते पुनः प्रत्यवगृह्यतः ॥ १५ ॥
तत्प्रतीपे कृते चात्र कलुषं[5] नोपपद्यते ।
क्षुद्रायाः पापमानायाः प्रद्विषन्त्या विशेषतः ॥ १६ ॥
कैकेय्या वचनं क्षुद्रं नैव त्वं कर्तुमर्हसि ।
यौवराज्याभिषेके च त्वामुपामन्त्र्य धर्मतः ॥ १७ ॥
कथं नाम स्थितो धर्मे कुर्यात्तदनृतं नृपः ।
पापबुद्धिरियं राज्ञो दैवेनापकृता यदि ॥ १८ ॥
तदाऽप्युपेक्षणीयो ऽर्थो नैव बुद्धिमता भवेत् ।
निष्क्रमो हीनवीर्यो यः स दैवमनुवर्तते ॥ १९ ॥
अनिष्क्रमस्तु तेजस्वी न दैवमनुवर्तते ।
दैवं पुरुषकारेण यतते यो ऽतिवर्तितुम् ॥ २० ॥

---

4 छ—अभि० । 5 म—स्विल (स्वि)षं ।

न स दैवविपन्नार्थः कदाचिदपि सीदति ।
लोकः पश्यतु कृत्स्नो ऽद्य दैवपौरुषयोरिदं ॥ २१ ॥
अन्तरं कार्यसंसिद्धौ यद्युत्थातुं त्वमिच्छसि ।
अद्य तत्पौरुषहतं दैवं पश्यन्तु मानवाः ॥ २२ ॥
तव राज्यविघाताय प्रतीपं समुपागतम् ।
निरङ्कुशमिवोद्दामं गजं मदबलोद्धतम् ॥ २३ ॥
प्रतीपमागतं दैवं पौरुषेण निवर्तये ।
लोकपालाः सहेन्द्रेण यौवराज्याभिषेचनम् ॥ २४ ॥
प्रतिहन्तुं न शक्तास्ते किमुतैको नराधिपः ।
यैर्निवासस्तवारण्ये मिथ्या राम समर्थितः ॥ २५ ॥
अहं विनाशयिष्यामि तानेवाद्य बलान्वितः ।
प्रतीपमागतं दैवं पौरुषेण निवर्तये ।[O] २६ ॥
प्रतीपमपि दुःखाय तव दैवमुपागतम् ।
प्रमनिष्पाते राम त्वां मत्पौरुषपराहतम् ॥ २७ ॥
बहुवर्षसहस्रान्तं प्रजापाल्यमनुत्तमम् ।
आर्यपुत्राः करिष्यन्ति वनवासं गते त्वयि ॥ २८ ॥
पूर्वराजर्षिवृत्तेन वनवासो विधीयते ।
पुत्रेष्वन्ते विनिक्षिप्य राज्यं वयसि पश्चिमे ॥ २९ ॥
स त्वं समर्थो धर्मज्ञ धर्मलोपविशङ्कया ।
कैकेय्या वचनाद् धर्म्यं स्वं राज्यं त्यक्तुमिच्छसि ॥ ३० ॥
प्रतिजानामि ते सत्यं मा भूवं वीरशब्दभाक् ।

Oम ।

यदि प्रतीपं दैवं ते न हरिष्याम्युपागतम्[6] ॥ ३१ ॥
फलमेवास्य दैवस्य प्रतीपस्य निवर्तये ।
तवैव तेजसेच्छामि दैवं लोकान्निवर्त्तितुम् ॥ ३२ ॥
अविपह्यतमं लोके विपह्यं केन किंचन ।
त्वदर्थमुत्सहे ह्येकः परिवर्त्तयितुं जगत् ॥ ३३ ॥
मङ्गलैरभिषिच्यस्व तत्र त्वं निर्वृतो भव ।
अलमेको[7] महीपाल महीं पालयितुं बलात् ॥ ३४ ॥
न शोभार्थमिमौ बाहू न धनुर्भूषणाय मे ।
नासिरा बन्धनार्थे मे न शराः[8] स्थाणहेतवः[8] ॥ ३५ ॥
अमित्रदमनार्थं मे सर्वमेतचतुष्टयम् ।
न चार्थमभिकांक्षेयं यशः शत्रुवधो मम ॥ ३६ ॥
असिना तीक्ष्णधारेण विद्युच्चलितवर्चसा ।
प्रगृहीतेन कः शक्तो वज्री वा मत्समो न च ॥ ३७ ॥
खड्गधाराहता मेऽद्य पतन्तु नरराशयः ।
प्रावृट्काले समागम्य विद्युतेव समाहताः । ३८ ॥
खड्गनिष्पेषनिष्पिष्टैर्गहनास्तदुरास्तथा ।
पत्त्यश्वरथमातंगैर्मही भवतु सर्वशः ॥ ३९ ॥
बद्धगोधांगुलित्राणे प्रगृहीतशरासने ।
कथं पुरुषकारस्स्यात् पुरुषाणां मयि स्थिते ॥ ४० ॥
अभ्यस्तान् विविधे काले निशितान् रुधिराशनान् ।

6 ख—हरिष्य० । म—वि[ह]न्यंमुपा० ।
7 फै, ख—अहमेको महीपालं । 8 म—शायस्तुण० ।

विप्रमोक्ष्याम्यहं बाणान् नृवाजिगजमर्मसु ॥ ४१ ॥
अद्य मे सुप्रभावस्य प्रभावः प्रभविष्यति ।
राज्ञश्चाप्रभुतां कर्तुं प्रभुत्वं च तव प्रभो ॥ ४२ ॥
अद्य चन्दनसाराणां केयूराणां धनस्य च ।
वस्त्रनां च विमोक्षस्य सुहृदां पूजनस्य च ॥ ४३ ॥
अभिरूपमिमौ बाहू राजन् कर्म करिष्यतः ।
अभिषेके तु विघ्नस्य शत्रूणां ते निबर्हणम् ॥ ४४ ॥
तद्ब्रूहि को ऽद्यैव नियोज्यतां मया त्वनासुहृत्प्राणयशः सुहृज्जनैः ।
यथा तवेयं वसुधा वशे भवेत् तथाऽद्य मां शाधि तवास्मि किंकरः॥४५
प्रगृह्य मन्युं परिगृह्य पौरुषं स लक्ष्मणो राममभिप्रसादयन् ।
उवाच भूयोऽपि पितुर्विनिग्रहे यतस्व रामैष विनिश्चयो मम ॥४६॥
इति वचनमुदारसत्त्वयुक्तं तदभिसमीक्ष्य तु लक्ष्मणस्य रामः ।
मधुरतरमुवाच सोऽर्थयुक्तं परिकुपितं पितरं प्रति प्रतीतः ॥ ४७ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसंरंभो
नाम त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

[चतुर्विंशः सर्गः]

भक्त्या रामस्य संरब्धं लक्ष्मणं पितरं प्रति ।
श्लक्ष्णैः सानुनयैर्वाक्यैः शमयामास राघवः ॥ १ ॥ २९
सौमित्रे नैतदाश्चर्यं मद्भक्त्या त्वं[1] यदिच्छसि[1] ।
व्यसनार्णवसंमग्नमुद्धर्तुं मां बलादिव ॥ २ ॥
पुण्यशीलस्तु धर्मात्मा सत्यव्रतपरायणः ।
पार्थिवो नानृतः कर्तुं न्याय्यो लोके गुरुर्मया ॥ ३ ॥
सत्यप्रतिज्ञं कृत्वा हि पितरं धर्मवत्सलम् ।
पुण्यां कीर्तिमवाप्स्यामि प्रेत्य चेह च शाश्वतीम् ॥ ४ ॥
यदि त्वस्ति मयि स्नेहो भक्तिर्वा यदि[2] लक्ष्मण ।
ततो निवर्तयैनां त्वं पापां बुद्धिं समुत्थिताम् ॥ ५ ॥
धर्मात्मनः श्रुतवतः कृतज्ञस्य महात्मनः ।
पितुरस्याप्रियं कर्तुं नेच्छामि मनसाऽप्यहम् ॥ ६ ॥
यदीच्छसि प्रियं कर्तुं मम त्वं यदभीप्सितम् ।
इतो[3] मयि गते भक्त्या शुश्रूष्यो नृपतिस्त्वया ॥ ७ ॥
निर्व्यलीकेन मनसा प्रत्यक्षं दैवतं यथा ।
*एतन्मे परमं वाक्यं भक्तितः कर्तुमर्हसि ॥ ८ ॥
*यथा मां प्रति नोत्कण्ठां करोति वसुधाधिपः ।
तथा शुश्रूषयितव्योऽसौ त्वया मयि विनिर्गते ॥ ९ ॥

---

1 म—यत्तु मिच्छसि । 2 म—तव । 3 म—इते । छ—ततो । *म—नास्ति ।

मातरश्च विशेषेण शुश्रूष्याः सर्वथा त्वया ।
तथा यथा न तप्येयु वनवासं गते मयि ॥ १० ॥
भरतश्चापि धर्मात्मा द्रष्टव्यो ऽहमिव त्वया ।
परिपाल्यश्च यत्नेन मम प्रियचिकीर्षुणा ॥ ११ ॥
इमां धर्मधुरं गुर्वीमहं वक्ष्यामि लक्ष्मण ।
भरतेन सहेमां त्वं गुर्वीं राज्यधुरं वह ॥ १२ ॥
इत्युक्तवचनं रामं बभाषे लक्ष्मणस्तदा ।
अप्रकम्प्यं स्थितं[4] धर्मे पुरन्दरमिवानुजः ॥ १३ ॥
लोकनाथ गतिर्या ते सा ममापि भविष्यति ।
वने वत्स्याम्यहमपि शुश्रूषानिरतस्तव ॥ १४ ॥
त्वया त्यक्तामहमपि परित्यक्ष्ये पुरीमिमाम् ।
त्वदृते न हि वस्तुं मे स्वर्गे ऽपि रमते मनः ॥ १५ ॥
यद्यस्ति मयि ते स्नेहो भक्तोऽयं वीर मामिति ।
ततो मामनुगच्छन्तं न निवर्तयितुमर्हसि ॥ १६ ॥
वने निवसतस्तेऽहं नानावनविचारिणः ।
आहरिष्यामि स्वादूनि मूलानि च फलानि च ॥ १७ ॥
सहायस्ते भविष्यामि दुर्गेषु विषमेषु च ।
आज्ञाकरस्ते भृत्यो ऽहं भविष्यामि महावने ॥ १८ ॥
सर्वभावानुरक्तं मा न परित्यक्तुमर्हसि ।
पश्य मामार्यपुत्र त्वं पूज्यश्चासि गुरुश्च मे ॥ १९ ॥

---

4 म—स्थिरं ।

पानीयमाहरिष्यामि पुष्पमूलफलानि च ।
साधयिष्यामि चाहारं वनेषु वसतः प्रभो ॥ २० ॥
अनुजानीहि मामार्य निश्चितं धर्मवत्सलम् ।
अनुगन्तुं कृतमतिं कृतज्ञं शरणागतम् ॥ २१ ॥
न निवर्तयितव्यो ऽहं सर्वथा रघुनन्दन ।
न हि राम त्वया त्यक्तो जीवेयमिति मे मतिः ॥ २२ ॥
न निवर्तयितुं शक्या बुद्धिरेषा मम स्थिरा ।
स भवाननुजानातु ममाप्यागमनं वने ॥ २३ ॥
सो ऽनुनीतो बहुविधं लक्ष्मणेन यशस्विना ।
बाढमित्यब्रवीद्रामो लक्ष्मणं भ्रातृवत्सलम् ॥ २४ ॥
सह यास्यामि सौमित्रे त्वया दुर्गं महद्वनम् ।
भवान् हि मे परो बन्धुः सखा भक्तः प्रियश्च मे ॥ २५ ॥
तथा तु रामं गमने धृतव्रतं समीक्ष्य देवी वचनं भृशातुरा ।
उवाच भूयो हृदयेन[5] तप्यता सुखोचिता दुःखपरिप्लुता भृशम् ।२६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणानुनय-
श्चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

---

5 क., ख, म—हृदयेन ।

[पञ्चविंशः सर्गः]

तं समीक्ष्य व्यवसितं पितुर्वचनपालने ।
कौशल्या[1] बाष्पसन्दिग्धं वचो धर्मिष्ठमब्रवीत् ॥ १ ॥
यदि धर्मं पुरस्कृत्य पुत्र वर्तितुमिच्छसि ।
ततो मद्वचनं धर्म्यं शृणु धर्मभृतां[2] वर ॥ २ ॥
त्वं हि लब्धो मया कृच्छ्रैस्तपोभिर्नियमैस्तथा ।
वचनं मे त्वया कार्यमतः पुत्र विशेषतः ॥ ३ ॥
आशया परया राम शिशुश्च परिपालितः ।
तत्समर्थो ऽद्य मां दीनां परिरक्षितुमर्हसि ॥ ४ ॥
पश्याद्य पुत्र मां चाद्यजीवितेन[3] नियोजिताम् ।
न सकामां सपत्नीं मे कैकेयीं कर्तुमर्हसि ॥ ५ ॥
न चापि परिशक्ताऽहं[4] विप्रकारान् पृथग्विधान् ।
सोढुं सकाशात् कैकेय्याः[5] परिभूता विशेषतः ॥ ६ ॥
नित्यकालं सपत्नीभिर्भृशं विप्रकृता सती ।
पुत्रच्छायां समाश्रित्य भवाम्यद्य समाहिता[6] ॥ ७ ॥
साऽहमद्य न शक्ष्यामि जीवितुं शर्वरीमिमाम् ।
फलिनी[7] पादपेनेव फलकाले वियोजिता ॥ ८ ॥
न पुत्रक वचः कार्यं स्त्रीविधेयस्य भूपतेः ।
कामचारप्रवृत्तस्य दुष्कृतेष्वशुचेरिव[8] ॥ ९ ॥

---

1 कै, ल, म—कोसल्या । 2 म—धर्मवृतं । 3 म, ल०—चाद्य०— । 4 म—राम शक्ताहं । 5 कै, म—कैकेय्या । 6 के—समाहृता । 7 ल—फलता । 8 म, ल—दुष्कृतेषु शुचेरिव ।

यो ऽतीत्य धर्मं पौराणमिक्ष्वाकूणां कुलोचितम् ।
त्वामतिक्रम्य भरतमभिषेक्तुमिहेच्छति ॥ १० ॥
अपि चेयं पुरा गीता गाथा सर्वत्र विश्रुता ।
मनुना मानवेन्द्रेण तां श्रुत्वा मे वचः कुरु ॥ ११ ॥
गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः ।
कामचारप्रवृत्तस्य न कार्यं ब्रुवतो वचः ॥ १२ ॥
दश विप्रानुपाध्यायो गौरवेणातिरिच्यते ।
उपाध्यायाद्दश[9] पिता गौरवेणातिरिच्यते ॥ १३ ॥
पितॄन् दश च मातैका सर्वां च पृथिवीमपि ।
गौरवेणाभिभवति को ऽस्ति मातृसमो गुरुः ॥ १४ ॥
पतिता गुरवस्त्याज्या न तु माता कदाचन ।
गर्भधारणपोषाभ्यां तेन माता गरीयसी ॥ १५ ॥
साऽहं ते[10] पितृतो राम धर्मतो गौरवाधिका ।
माननीया विशेषेण यथा धर्मविदो विदुः ॥ १६ ॥
अतो ममापि ते कार्यं शासनं गुरुवत्सल ।
अभिषिच्यस्व धर्मेण राज्ये राजीवलोचन ॥ १७ ॥
यदि त्वमेतन्मम भाषितं हितं कुलोचितं सत्पुरुषैं निषेवितम् ।
यथावदुक्तं न करिष्यसे ततश्चिराय यास्यामि यमक्षयं ततः ॥१८॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्यावाक्यं
नाम पञ्चविंशः सर्गः ॥ २५ ॥

---

9 (उपाध्यायान् दश) । 10 ल—हि ।

[षड्विंशः सर्गः]

अथानुनेतुं चक्रे ऽसौ मातरं यत्नमास्थितः ।
प्रश्रितैर्मधुरैर्वाक्यै हेंतुमद्भिश्च राघवः ॥ १ ॥
मम चैव भवत्याश्च राजा प्रभवति प्रभुः ।
न प्रभुत्वमतस्ते ऽस्ति मम देवि निवर्तने ॥ २ ॥
दातुमर्हसि मे ऽनुज्ञां देवि धर्मभृतां वरे ।
वनवासाय वर्षाणि नवपञ्च च सुव्रते ॥ ३ ॥
भर्ता हि दैवतं स्त्रीणां भर्ता चेश्वर उच्यते ।
अतस्ते शासनं भर्तु र्न व्याहन्तव्यमेव हि ॥ ४ ॥
पुनरागमनं मे ऽद्य त्वमाशंसितुमर्हसि ।
यतव्रता नित्यमेव भर्तुराराधने रता ॥ ५ ॥
तीर्णप्रतिज्ञ एष्यामि त्वत्प्रसादादहं पुनः ।
अरिष्टं कुशली चैव तस्मात्संशाम्य मा शुचः ॥ ६ ॥
कुले जाताऽसि विस्तीर्णे राज्ञाममिततेजसाम् ।
सद्गुणाख्यातयशसां कोशलानां महात्मनाम् ॥ ७ ॥
कुलशीलसमाचारे धर्मिष्ठा नियतव्रता ।
सा कथं शासनं भर्तुरतिवर्तितुमर्हसि ॥ ८ ॥
दैवतं ते गुरुश्चैव भर्ता देवि प्रसीद मे ।
मत्स्नेहान्नार्हसे तस्य मतमुत्क्रम्य वर्तितुम् ॥ ९ ॥
निर्विचारं मया कार्या गुरोराज्ञा महात्मनः ।
श्रेयो ह्येवं भवत्याश्च मम चैव विशेषतः ॥ १० ॥
कार्पण्याद्बालभावाद्वा न कुर्यां चेत्पितुर्वचः ।

ततोऽहं प्रेषितव्यः स्यां भवत्या विनयज्ञया ॥ ११ ॥
किं पुनर्यस्य मे देवि स्वभावनियता मतिः ।
भूयो विवर्धनीयैव भवत्या विनयज्ञया ॥ १२ ॥O
न ते राजा किंचिदपि वक्तव्यो मदपेक्षया ।
प्रतीपमप्रियं वापि न वक्तव्यः प्रसीद मे ॥ १३ ॥
कैकेयी वा महाभागा भरतो वा महायशाः ।
स्वल्पमप्यप्रियं वाक्यं न वक्तव्यौ प्रसीद मे ॥ १४ ॥O
यथाऽहमेवं द्रष्टव्यो भरतः सर्वदा त्वया ।
कैकेयी भगिनीवच्च[1] द्रष्टव्या सर्वदा त्वया ॥ १५ ॥
विरुध्यन्ते न बलिभि र्बुद्धिमन्तः कथञ्चन ।
बलहीनैरपि तथा विरुध्यन्ते न संहतैः ॥ १६ ॥
तत्कथं सह पित्राऽहं विरुध्येयं महात्मना ।
भ्रात्रा वा भरतेनाद्य भक्तेनानपकारिणा ॥ १७ ॥
धर्मात्मना विनीतेन प्राणेभ्योऽपि प्रियेण च ।
कथं नाम विरुध्येयं सह तेन महात्मना ॥ १८ ॥
पित्रा दत्तं यौवराज्यं भरतो यद्यवाप्स्यति ।
तत्र दोषोऽस्ति कस्तस्य भरतस्य महात्मनः ॥ १९ ॥
अतिसृष्टं पुरा राज्ञा कैकेयी भर्तृतो वरम् ।
यदि गृह्णाति कस्तस्या दोषस्तत्र ब्रवीहि मे ॥ २० ॥
राज्ञा च प्राक्प्रतिश्रुत्य ददावस्यै यदा वरम् ।
भीतोऽनृतात्ततो राज्ञः को दोषः सत्यवादिनः ॥ २१ ॥

O ल । 1 म—भगिनीवैषा ।

व्यक्तमेव परं धर्मं भर्ता ते देवि मन्यते ।
चलेद्धि राजा धर्माच्चेन्न सकामो भविष्यति ॥ २२ ॥
सा त्वं सद्वृत्तकुशला छिन्नधर्मार्थसंशया ।
न धर्मज्ञं नरपतिं दोषतो गन्तुमर्हसि ॥ २३ ॥
प्रसीदानुनयामि त्वां नानुशास्मि कथञ्चन ।
अनुजानीहि मां देवि वनवासाय दीक्षितम् ॥ २४ ॥
एवं स रामो गतबुद्धिभावो वनं प्रवेष्टुं सह लक्ष्मणेन ।
भूयो वचः सानुनयं बभाषे स्वां मातरं धर्मभृतां वरिष्ठः ॥ २५ ॥
यशो ह्यहं केवलराज्यकारणान्न पृष्ठतः कर्तुमलं महोदयम् ।
अदीर्घकाले नरलोकजीविते वृणे बलान्नाद्य महीमधर्मतः ॥ २६ ॥
प्रसादये त्वां शिरसा यतव्रते प्रसीद मे कर्तुमविघ्नमस्तु ते ।
वनं गमिष्याम्यहमाज्ञया पितुः प्रदेह्यनुज्ञां शिरसा नतस्य मे ॥२७॥
प्रसादयन्नरवृषभः स मातरं बहूक्तवान्जिगमिषुरेव दण्डकाम् ।
अथात्मजं भृशपरिदेवितं तदा चकार सा हृदि जननी पुनः पुनः २८

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽनुनयो-
नाम षड्विंशः सर्गः ॥ २६ ॥

[सप्तविंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा जननीं रामो धर्मात्माऽनुनयं वचः ।
स्थितां धर्मपरां दीनां पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
त्वया देवि मया चैव स्थेयं नृपतिशासने ।
राजा भर्ता गुरुश्चैव सर्वेषामीश्वरेश्वरः ॥ २ ॥
इमानि तु विहृत्यैव नववर्षाणि पञ्च च ।
वने पुनरुपावृत्तः स्थास्यामि वचने तव ॥ ३ ॥
इत्युक्ता सा प्रियं पुत्रं बाष्पपर्याकुलं वचः ।
उवाचेदं सपत्नीनां वस्तुं मध्ये न मे क्षमम् ॥ ४ ॥
नय मामपि पुत्र त्वं वनं वन्यमृगाकुलम् ।
यदि ते गमने बुद्धिः कृता पितुरवेक्षया ॥ ५ ॥
तां तथा ब्रुवतीं रामः पुनर्वचनमब्रवीत् ।
जीवत्पत्न्याः स्त्रिया भर्ता दैवतं परमं स्मृतः ॥ ६ ॥
भवत्या मम चैवाद्य राजा प्रभवति प्रभुः ।
अतो नार्हाम्यहं नेतुं त्वामितो नगराद्वनम् ॥ ७ ॥
न चानुगन्तुं न्याय्यो ऽहं जीवत्पत्न्या त्वयापि वा ।
महात्मा वाऽमहात्मा वा पतिरेव गतिः स्त्रियाः[1] ॥ ८ ॥
किं पुनर्नृपति देवि महात्मा दयितश्च ते ।
भरतश्चापि धर्मात्मा विनीतो गुरुवत्सलः ॥ ९ ॥
असंशयं यथैवाहं पुत्रस्ते धर्मतस्तथा ।
मत्तो ऽधिकतरां पूजां भरतात्त्वमवाप्स्यसि ॥ १० ॥

1 म—स्त्रियः ।

न हि किञ्चिदकल्याणं तस्मादाशंसयाम्यहम् ।
यथा तु मयि निष्क्रान्ते पुत्रशोकेन मे पिता ॥ ११ ॥
अतिमात्रं न सन्तप्येत्तथा त्वं कर्तुमर्हसि ।
कार्यैः प्रत्यग्रतयासि न तथा चाऽप्यपह्वरः ॥ १२ ॥O
पत्यौ वृद्धे यथा कार्यस्त्वया मच्छोककर्शिते ।
या धर्मचारिणी नारी पतिं पतिपरायणा ॥ १३ ॥
नानुवर्तेत यत्नेन न सा सद्भिः प्रशस्यते ।
भर्तृव्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा ॥ १४ ॥
इह कीर्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गे महीयते ।
तस्मात्सदैव भर्तुस्त्वं शुश्रूषानिरता गृहे ॥ १५ ॥
स्थातुमर्हसि धर्मो हि सत्स्त्रीणामेष शाश्वतः ।
गार्हस्थ्यधर्मरतया देवाराधनशीलया ॥ १६ ॥
भर्तृचित्तानुवर्तिन्या भर्ता सेव्य इह त्वया ।
ब्राह्मणान् वेदविदुषः पूजयन्ती यतव्रता ॥ १७ ॥
वसेह भर्तृसहिता ममागमनकाङ्क्षिणी ।
द्रक्ष्यसे भर्तृसहिता ममाभ्यागमनं पुनः ॥O १८ ॥
यदि राजा मद्विहीनो धारयिष्यति जीवितम् ।
इति सानुनयं वाक्यं श्रुत्वा धर्मार्थसहितम् ॥ १९ ॥O
रामेणोक्ता बभाषेऽथ कौशल्या साश्रुलोचना'O ।
गच्छ पुत्र शिवं तेऽस्तु कुरुष्व पितृशासनम् ॥ २० ॥O

O ल । ०ट । O म । 2 के, ल—साश्रु० ।

स्वस्तिमन्तमरिष्टं त्वां द्रक्ष्यामि पुनरागतम् ।
शुश्रूषा निरता भर्त्तुर्भविष्यामि यथाऽऽत्थ माम् ॥ २१ ॥

यच्चान्यदपि कर्तव्यं करिष्ये तत्सुखी व्रज ।
तथा तु रामं वनवासनिश्चितं समीक्ष्य देवी गतसत्त्वचेतना ।
बभूव भूयः सहसैव दुःखिता सगद्गदं बाष्पकलप्रलापिनी ॥ २२॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽऽश्वासनं
नाम सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

[अष्टविंशः सर्गः]

समाश्वस्य ततो भूयः कौशल्या राममब्रवीत् ।
मास्राक्षरपदं[1] वाक्यमिदं बाष्पाकुलेक्षणा ॥ १ ॥
अदृष्टदुःखो धर्मात्मा सर्वभूतहिते रतः ।
मया दशरथाज्जातः[2] कथं दुःखमवाप्स्यसि ॥ २ ॥
यस्य प्रेष्याश्च दासाश्च स्वादून्यन्नानि[3] भुञ्जते ।
तस्य पुत्रः प्रियो वन्यं भोक्ष्यसे मुनिभोजनम् ॥ ३ ॥
कः श्रद्दध्यादिदं श्रुत्वा कस्य वा न भयं भवेत् ।
राज्ञा निर्वासितः पुत्रः प्रियोऽतिगुणवानिति ॥ ४ ॥
अयं धक्ष्यति मा पुत्र लोकवाक्यहुताशनः ।
वियोगार्तिसमुद्भूतस्त्वद्गुणौघमयेन्धनः[4] ॥ ५ ॥
चिन्ताऽऽयासमहाधूमस्त्वद्वियोगानिलेरितः ।
मा प्रधक्ष्यत्यय नून निःश्वासायासपावकः ॥ ६ ॥
त्वया विहीनामनशा शोकाग्निरनिशं ज्वलन् ।
प्रधक्ष्यति यथा कक्ष्यं चित्रभानुर्हिमात्यये ॥ ७ ॥
वत्सलत्वाद्यथा धेनुः स्वं पुत्रमभिधावति ।
तथा त्वामनुयास्यामि वात्सल्यादभिधावती ॥ ८ ॥
इति मातुर्निगदितं मातुः सकरुणाक्षरम् ।
श्रुत्वा रामोऽब्रवीद्वाक्यं कौशल्यां शोककर्षिताम् ॥ ९ ॥
कैकेय्या वञ्चितो राजा मयि चारण्यमाश्रिते ।

1 क—साम्राक्षर० । ल—मास्राक्षर० । म—सस्राक्षर । 2 ल—दशरथाज्ज्ञात । म-दशरथो जात । 3 म स्वादून्यश्नाति । 4 के-स्त्वद्गुणौघ० ।

भवत्या च परित्यक्तो न मन्ये वर्तयिष्यति ॥ १० ॥
भर्तुश्चैव परित्यागः शस्यते न कथञ्चन ।
स भवत्या न कर्तव्यो मनसाऽपि विगर्हितः ॥ ११ ॥
यावज्जीवति ते भर्ता भर्ता हि तव दैवतम् ।
सर्वात्मना सयत्नात्त्वमाराधयितुमर्हसि ॥ १२ ॥
राजा हि ते प्रभाविता प्राणानां जीवितस्य च ।
अनुगन्तु मतो देवि न मामर्हसि सर्वथा ॥ १३ ॥
इत्येवमुक्ता रामेण कौशल्या धर्मदर्शिनी ।
तथेत्युवाच दुःखार्त्ता रामं संप्रस्थितं वनम् ॥ १४ ॥
विनिश्चितं तथा रामं विज्ञाय गमनोन्मुखम् ।
प्रास्थानिकं राममाता[5] कर्तुं समुपचक्रमे[5] ॥ १५ ॥
सा निगृह्य ततो बाष्पमुपस्पृश्य जलं शुचि ।
चकार देवी रामस्य ततः स्वस्त्ययनक्रियाम् ॥ १६ ॥
सुमनोभिश्च गन्धैश्च मनोज्ञैर्बलिभिस्तथा ।
देवानभ्यर्च्य विधिवत्प्रणम्य च शुभव्रता ॥ १७ ॥
गन्धमाल्यहविःशेषं रामाय प्रतिपाद्य च ।
मूर्ध्नि चैनमुपाघ्राय परिष्वज्य च पीडितम् ॥ १८ ॥
रक्षोघ्नीमोषधीं पाणौ दक्षिणे च बबन्ध सा ।
रामस्वस्त्ययनार्थं हि मन्त्रमेनं जजाप च ॥ १९ ॥
स्वस्ति ते कुरुतां ब्रह्मा शिवो विष्णुः प्रजापतिः ।

---

5 म—०कर्तु संघाम्चक्रमे । कै—स्वस्त्य राममाता कर्त्तुं प्रचक्रमे ।

स्वस्ति कुर्वन्तु ते साध्या[6] मरुतश्च महर्षिभिः[7] ॥ २० ॥
स्वस्ति धाता विधाता च स्वस्ति पूषा भगोऽर्यमा ।
वरुणः स्वस्ति राजा च करोतु मनुभिः सह ॥ २१ ॥
स्वस्ति मित्रः सहादित्यैः स्वस्ति रुद्रा दिशन्तु ते ।
दिशश्च विदिशश्चैव मासाः संवत्सराः क्षपाः ॥ २२ ॥
दिनानि च मुहूर्त्ताश्च स्वस्ति पुत्र दिशन्तु ते ।
यन्मंगलं महेन्द्रस्य सर्वैः देवैः कृतं पुरा ॥ २३ ॥
वृत्रं हन्तुं प्रयातस्य वत्स तत्ते ऽस्तु मंगलम् ।
यन्मंगलं सुपर्णस्य विनताऽकल्पयत्पुरा ॥ २४ ॥O
अमृतार्थे प्रयातस्य तत्ते भवतु मंगलम् ।
वेदाः[8] सांगास्तथाऽऽदित्या मन्त्रा आथर्वणाश्च ये।२५
धृतिः[9] स्मृतिश्च[9] मेधा च पान्तु त्वां पुत्र सर्वशः ।
सिद्धा देवर्षयः सर्वे तथा ब्रह्मर्षयोऽमलाः ॥ २६ ॥
नागाः सुपर्णाः पितरो रक्षन्तु त्वां समन्ततः ।
स्कन्दश्च सुरसेनानीस्तथैव च महेश्वरः ॥ २७ ॥
सप्तर्षयो नारदश्च सोमः शुक्रो बृहस्पतिः ।
नक्षत्राणि ग्रहाश्चान्ये तथा नक्षत्रदेवताः ॥ २८ ॥
ज्योतींपि चैव दिव्यानि पान्तु त्वां पुत्र सर्वतः ।
महावने विचरतो मुनिवेशधरस्य ते ॥ २९ ॥
उग्ररूपविषा नागाः सौम्यरूपा भवन्तु ते ।
राक्षसाश्च पिशाचाश्च यक्षाश्च पिशिताशनाः ॥ ३० ॥

6 ल—सख्या । 7 ल—(सहर्षिभिः ?) । 8 ल—देवाः । 9 म—विप्र ।

शिवा भवन्तु ते पुत्र व्यालाश्चारण्यवासिनः[10] ।
पतंगा वृश्चिकाः कीटा दंशाश्च मशकैः सह ॥ ३१ ॥
सरीसृपाश्चोग्रविषाः शिवाय विचरन्तु ते ।
महागजा वराहाश्च खड्गयः[11] सिंहास्तथैव च ॥ ३२ ॥
ऋक्षाश्च महिषाश्चैव शिवास्ते सन्तु पुत्रक ।
ये चामिषाशिनो रौद्रा नानारूपा मृगद्विजाः ॥ ३३ ॥
मयाऽभियाचितास्त्वेते शिवाः सन्तु वने चराः ।
स्वस्ति तेऽस्त्वान्तरिक्षेभ्यः पार्थिवेभ्यश्च पुत्रक ॥ ३४ ॥
दिव्येभ्यश्चैव भूतेभ्यो वनचारिभ्य एव च ।
सर्वलोकप्रभुर्ब्रह्मा वृषभांकस्तथैव च ॥ ३५ ॥
त्रिलोकनाथश्च वने रक्षन्तु त्वां जनार्दनः ।
आगमास्ते शिवाः सन्तु सिध्यन्तु च मनोरथाः ॥ ३६ ॥
सुखेन यातु कालस्ते स्वस्ति प्राप्नुहि राघव ।
संसिद्धार्थमरोगं त्वामयोध्यां पुनरागतम् ॥ ३७ ॥
द्रक्ष्यामि त्वां कदा पुत्र जुष्टं राजश्रिया पुनः ।
इत्युक्त्वा मूर्ध्न्युपाघ्राय परिष्वज्याभिनन्द्य च ॥ ३८ ॥
पुनरागमनायेह गच्छ पुत्रेत्युवाच तम् ।
शीघ्रं त्वां पुनरायातं पश्येयं सह लक्ष्मणम् ॥ ३९ ॥
वनवाससमुत्तीर्णं नवं चन्द्रमिवोदितम् ॥ ४० ॥
मयाऽर्चिता देवगणाः शिवादयो महर्षयश्चैव पितामहो महान् ।
इतः प्रयातस्य वनं चिराय ते हितैषिणः सन्तु मयाऽभियाचिताः ॥४१

10 कै—व्याडाश्चारण्य० । 11 म, ल—खड्गा ।

इत्येवमश्रुप्रतिपूर्णलोचना समाप्य च स्वस्त्ययनं कृताञ्जलिः ।
प्रदक्षिणं चैव चकार राघवं पुनः पुनः सा परिपीड्य सस्वजे ॥४२॥
तथा तु देव्या स कृतप्रदक्षिणश्चकार मूर्ध्ना चरणाभिवन्दनम् ।
स चापि सौमित्रिरमित्रकर्षणो जगाम चामंन्य च ता स्वमालयम्॥४३

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्यास्वस्त्ययनं
नाम अष्टविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

[एकोनत्रिंशः सर्गः]

कौशल्यामभिनाद्यैवमनुमान्य च राघवः ।
कृतस्वस्त्ययनो मात्रा प्रतस्थे सहलक्ष्मणः ॥ १ ॥
निराजयन् राजमार्गं राजपुत्रो[1] जनैर्वृतम् ।
हरन्निव जनौघस्य हृदयानि जगाम सः ॥ २ ॥
वैदेह्यपि च तत्कालं तत्पराऽनन्यमानसा ।
आशंसन्ती च सा भर्तुर्यौवराज्याभिषेचनम् ॥○३ ॥
देवान् पितॄंश्च सत्कृत्य तथा नियतमानसा ।○
अभिज्ञा राजधर्माणां राजपुत्री धृतव्रता ॥ ४ ॥
प्रद्वारासक्तनयना भर्तृदर्शनलालसा ।
तस्थौ स्ववेश्ममध्ये सा रामागमनकांक्षिणी ॥ ५ ॥
प्रविवेशाथ सहसा रामो वेश्मात्मनस्तदा ।
भक्तिमद्भिर्जनैः कीर्णे ह्रिया किञ्चिदधोमुखः ॥ ६ ॥
ईषद्दीनमुखः क्षामो मनोदुःखसमन्वितः ।
नातिहृष्टमनाः सीतां प्रविश्याथ ददर्श सः ॥ ७ ॥
तत्परां वेश्ममध्यस्थां विनयावनतां स्थिताम् ।
विनयाचारसंपन्नां प्राणेभ्योऽपि प्रियां प्रियाम् ॥ ८ ॥
सा च दृष्ट्वा भर्तारं प्रत्युद्गम्य प्रणम्य च ।
वामपार्श्वे स्थिता देवी रामं दीनमुखं तदा ॥ ९ ॥
अभिवीक्ष्य वरारोहा वेपमानेदमब्रवीत् ।
दृष्ट्वान्तर्गतदुःखार्तं किमेतदिति विह्वला ॥ १० ॥

1 म—राजपुत्रो राजमार्गं । ○ म ।

किं न बार्हस्पतो योगो युक्तः पुष्येण राघव ।
प्रोच्यते ब्राह्मणैस्तज्ज्ञैर्येन त्वमतिदुर्मनाः ॥ ११ ॥
कस्माच्छतशलाकेन पूर्णेन्दुप्रतिमेन ते ।
आवृतं वदनं चारु छत्रेण न विराजते ॥ १२ ॥
चामरव्यजनाभ्यां च चारुपद्मदलेक्षणम् ।
न वीज्यते ते ऽद्य मुखं कस्मात् पूर्णेन्दुसुप्रभम् ॥ १३ ॥
यौवराज्याभिषिक्तं च सूतमागधनन्दिनः ।
वाग्मिनो न स्तुवन्ति त्वां कस्माद्राघव शंस मे ॥ १४ ॥
न ते क्षौद्रं च दधि च ब्राह्मणा वेदपारगाः ।
मूर्ध्नि राज्याभिषेकार्थं दध्युश्च विधिवन्न किम् ॥ १५ ॥
कस्मात्प्रकृतिमुख्यास्ते श्रेणिमुख्याश्च राघव ।
किंकरा नाद्य तिष्ठन्ति यौवराज्याभिषेचने ॥ १६ ॥
निप्रसूता गजवृषाः शुभलक्षणलक्षिताः ।
पृष्ठतो नानुयान्ति त्वां कस्मादद्याभिषेचने ॥ १७ ॥
शुभलक्षणसंपन्नः श्वेतश्च तुरगोत्तमः ।
न ते ऽद्य याति पुरतः कस्माच्छ्रीविजयावहः ॥ १८ ॥
एवं ब्रुवाणां तां रामो जातशंकां च मैथिलीम् ।
उवाचेदं वचो वीरः[2] सत्त्वगांभीर्यमास्थितः ॥ १९ ॥
राजर्षिकुलसंभूते धर्मज्ञे सत्यवादिनि ।
शृणु मैथिलि धीरा त्वं भूत्वा वाक्यमिदं मम ॥ २० ॥
राज्ञा सत्यप्रतिज्ञेन पित्रा दशरथेन मे[3] ।

---

2 म—धीरा । 3 ल—च ।

कैकेय्यै प्रीतमनसा दत्तौ किल वरौ पुरा ॥ २१ ॥
ममोपकृत्य चैवाद्य यौवराज्याभिषेचनम् ।
प्रचोदितेन समये धर्मज्ञेनापवर्जितौ ॥ २२ ॥
मया वर्षाणि वस्तव्यं चतुर्दश वने प्रिये ।
भरतेनाप्ययोध्यायां राज्ञा भाव्यमनिन्दिते ॥ २३ ॥
सो ऽहं त्वामागतो द्रष्टुं प्रस्थितो निर्जनं वनम् ।
आपृच्छे धैर्यमालंव्य[4] मामनुज्ञातुमर्हसि ॥ २४ ॥
श्वश्रूं[5] च[6] श्वशुरं चैव वस त्वं समुपाश्रिता ।
शुश्रूषा परमा भूत्वा यावदागमनं मम ॥ २५ ॥
मद्व्यपाश्रयजं[7] मानमाश्रित्य वरवर्णिनि ।
भरतस्य समीपे ऽहं न ते स्तुत्यः कथञ्चन ॥ २६ ॥
ऐश्वर्यमदमत्ता हि न सहन्ते परस्तवम् ।
तस्मात्त्वया गुणाः स्तुत्या भरतस्याग्रतो न मे ॥ २७ ॥
अहं हि[7] पितरं सत्यं चिकीर्षुस्तन्नियोगतः ।
वनमद्यैव यास्यामि कुरु त्वं हृदयं स्थिरम् ॥ २८ ॥
मयि याते च कल्याणि वनं मुनिजनप्रियम् ।
व्रतोपवासरतया भवितव्यं त्वया प्रिये ॥ २९ ॥
कल्यउत्थाय देवानां कृत्वा पूजाभिवादनम् ।
नन्दितव्यो दशरथः पिता मे दैवतं यथा ॥ ३० ॥
मातरश्चैव मे सर्वा यथाक्रममशेषतः ।

---

4 कै, ल—०मालंब्य । म—०मालमय । 5 कै, ल—श्वश्रू । 6 ल—०श्रयणं । 7 ल—च ।

त्वयाऽर्चनीयाः सततं समा हि मम मातरः ॥ ३१ ॥
भ्रातरौ चापि मे सीते प्राणेभ्यो ऽपि प्रियावुभौ ।
त्वया भरतशत्रुघ्नौ द्रष्टव्यौ भ्रातृपुत्रवत् ॥ ३२ ॥
न वक्तव्यो ऽप्रियं सीते मत्प्रीत्या भरतस्त्वया ।
स हि राजा गुरुश्चैव देशस्यास्य प्रियश्च मे ॥ ३३ ॥
आराधिता हि राजानो देवताश्चोपसेविताः ।
अनुग्रहैर्योजयन्ते भक्तान् घ्नन्ति विपर्यये ॥ ३४ ॥
औरसानपि पुत्रांश्च विहिंसन्त्यपकारिणः ।
अनुगृह्णन्ति च प्रीत्या परानप्युपकारिणः ॥०३५ ॥
त्वं च तेनेह वर्तव्या वनं हि प्रोषिते मयि ।
तस्मात् साम्नैव लिप्सेथाश्चैलपिण्डभृति[8] ततः ॥ ३६ ॥
मम माता च कौशल्या वृद्धा मच्छोककर्षिता ।
मत्प्रियार्थं प्रिये सीते शुश्रूष्याऽनन्यचिन्तया ॥ ३७ ॥
सोऽहं गमिष्यामि महावनं प्रिये त्वयाऽपि[9] वस्तव्यमिहाज्ञया मम ।
यथा व्यलीकं न करोमि कस्यचित् तथा त्वया कार्यमितो गते मयि।३८

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतानुशासनं
नाम एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥

O म । 8 कै, ख—लिप्सेथा० । 9 म—त्वयाधि ।

[त्रिंशः सर्गः]

इत्यप्रियमिदं वाक्यं श्रुत्वा सा प्रियभाषिणी ।
साभ्यसूयमिव भर्तारं सीता वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
आर्यपुत्र पिता माता भ्रातरो बान्धवाः सुताः ।
प्रेत्य चैवेह चाश्नन्ति स्वं स्वं कर्मफलं पृथक् ॥ २ ॥
न पितुः कर्मणा पुत्रः पिता वा पुत्रकर्मणा ।
सुखमाप्नोति दुःखं वा स्वं स्वं कर्माभिजायते ॥ ३ ॥
भार्यैका पतिभोज्यानि भुंक्ते पतिपरायणा ।
साऽहं त्वामनुयास्यामि यत्र यत्र गमिष्यसि ॥ ४ ॥
शपे ऽहं ते प्रमादेन जीवितेन च राघव ।
यथा नेच्छाम्यहं वस्तुं स्वर्गे ऽपि रहिता त्वया ॥ ५ ॥
त्वं मे नाथो गुरुश्चैव गतिर्दैवतमेव च ।
गमिष्यामि त्वया सार्धमेष मे निश्चयः परः ॥ ६ ॥
यदि त्वमुद्यतो गन्तुं दुर्गं कण्टकितं वनम् ।
अहं तवाग्रे यास्यामि मृद्नन्ती[1] वृक्षकण्टकम्[2] ॥ ७ ॥
न पिता नात्मजो नात्मा न माता न सुहृज्जनः ।
गतिर्भवति सत्स्त्रीणां पतिस्त्वेकः परा गतिः ॥ ८ ॥
ईर्ष्यादोषं समुत्सृज्य पीतशेषमिवोदकम् ।
नय मां वीर विस्रब्धां पापं मयि न विद्यते ॥ ९ ॥
हर्म्यप्रासादभवनविमानेभ्यो ऽपि मे प्रभो ।
त्वत्पादाश्रयणं[3] श्रेयः स्वर्गादपि च दुर्लभम् ॥ १० ॥

---

1 पे—मृद्नन्ति । 2 ल—०कण्टकान् । 3 ल—०श्रयणं ।

कुरु प्रसादं गच्छेयं त्वयाऽद्य सहिता वनम् ।
सिंहकुञ्जरशार्दूलवराहर्क्षनिषेवितम् ॥ ११ ॥
सुखं वने ऽपि वत्स्यामि तवOपादव्यपाश्रयात्O ।
विहरन्ती त्वया सार्धं यथेन्द्रभवने तथा ॥O१२ ॥
शुश्रूषमाणाOवत्स्यामिOपादौ ते नियतव्रता ।
रममाणा त्वया सार्धं काननेषु सुगन्धिषु ॥ १३ ॥
न ममाभिभवे शक्तो महेन्द्रो ऽपि त्वदाश्रयात् ।
अतो नार्हसि मां भक्तां निर्वर्जयितुमातुराम् ॥ १४ ॥
शतक्रतुसमः शौर्ये विष्णुतुल्यपराक्रमः ।
त्वं हि लोकत्रयस्यास्य समर्थः प्रतिपालने ॥ १५ ॥
त्वया सह भविष्यामि फलमूलकृताशना ।
दुर्भरा न भविष्यामि वने ते ऽहं कथञ्चन ॥ १६ ॥
इच्छामि सरितः शैलान् सरांसि च वनानि च ।
द्रष्टुं वल्कलसंवीता त्वया नाथेन रक्षिता ॥ १७ ॥
हंसकारण्डवाकीर्णाः पद्मिन्यो विमलोदकाः ।
अवगाह्याभिरस्ये ऽहं त्वयैव सह राघव ॥ १८ ॥
वनोद्देशेषु रम्येषु नानाकुसुमगन्धिषु[4] ।
रन्तुमिच्छामि[5] मुदिता त्वयाऽहं सह राघव ॥ १९ ॥O
सहस्राण्यपि वर्षाणि वहूनि सहिता त्वया ।
समतीतानि मन्ये ऽहं यथैकदिवसं तथा ॥ २० ॥
स्वर्गे ऽपि वामं रहिता त्वया वीर न कामये ।

O म । 4 ङ—नानार्थेषु मगन्धिषु । 5 ङ—रंतु० ।O म ।

नरकश्चापि मे स्वर्गाद्विशिष्टः स्यात्त्वया सह ॥ २१ ॥
पित्रा चाप्यनुशिष्टाऽस्मि मात्रा च स्वजनेन च । *
विना भर्त्रा न वस्तव्यं त्वयेति रघुनन्दन ॥ २२ ॥
अतः प्रणम्य याचे त्वां गमने कृतनिश्चया ।
न मामर्हसि सन्देष्टुमितिकर्तव्यतां प्रति ॥ २३ ॥
वनं गमिष्यामि सह त्वयाऽहं न मां नृवीर प्रतिषेद्धुमर्हसि ।
वने निवत्स्यामि यथा पितुर्गृहे तथैव पद्भ्यामभिरक्षिता त्वया ।२४॥
अनन्यभावामनुरक्तचेतसां त्वया वियुक्तां मरणाय निश्चिताम् ।
नयस्व मां साधु कुरु प्रियं च मे मया न भारो गुरुतामुपैष्यति ।२५।
इति ब्रुवाणामपि धर्मवादिनीं नेतुं न रामो दयितां व्यवस्यति ।
निवर्त्तयिष्यन् हि स तां तदा प्रियामुवाच दोषान् वनवासिनामथ २६।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतावाक्यं
नाम त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

---

* म, ल—तव ।

[एकत्रिंशः सर्गः]

तां तथा ब्रुवतीं रामः प्रियां भार्यामनुव्रताम् ।
उवाचेदं बहून् दोषान् वनवासमुदाहरन् ॥ १ ॥
सीते महाकुलीनाऽसि धर्मज्ञाऽसि यशस्विनि ।
सत्यं मद्वचनं कार्यं श्रोतुमर्हस्यनिन्दिते ॥ २ ॥
मनो हि त्वयि निक्षिप्य शरीरेणैव केवलम् ।
गमिष्याम्यवशः सीते काननं पितुराज्ञया ॥ ३ ॥
तस्माद् यथा वदामि त्वां तथा त्वं कर्तुमर्हसि ।
वनवासे हि बहव इमे दोषा महात्यया ॥ ४ ॥
तच्छ्रुत्वा त्यज्यतां भीरु वनवासकृता मतिः ।
तथानुकंपयैवाहं वनदोषान् सुदारुणान् ॥ ५ ॥
संजानानो ह्यहं न त्वां वनं नेतुं समुत्सहे ।
वनेषु सन्ति शार्दूला आसन्नजनघातिनः ॥ ६ ॥
भेतव्यं हि सदा तेभ्यस्तेन दुःखं प्रिये वनम् ।
तथैव हरयो नागा बहवः सन्ति कानने ॥० ७ ॥
अतिमात्रं विनिघ्नन्ति तेन दुःखं वनं प्रिये ।
अत्यम्बु चातिशीतं च तृड्बुभुक्षे तथैव च ॥ ८ ॥०
भयानि च बहून्यत्र तेन दुःखं प्रिये वनम् ।०
सर्पाः सरीसृपाश्चान्ये वृश्चिकाश्च महाविषाः ॥०९ ॥
चरन्ति गहने ऽरण्ये तेन दुःखं प्रिये वनम् ।०
गिरिकन्दरजातानां नानाऽरण्यनिवासिनाम् ॥ १० ॥

---

० के । ० म ।

उद्वेजनानां सिंहानां श्रूयन्ते निनदा वने ।
सिंहर्क्षमृगशार्दूलवराहोरगवारणाः ॥ ११ ॥
प्राणाभिघातिनो घोरास्तथाऽन्या मृगजातयः ।
यद्व्य[ः] सन्ति वने दुर्गे न गन्तव्यं ततो वनम् ॥ १२ ॥
तथा कुटिलगा नागा महाविवरशायिनः ।
दृश्यन्ते चात्र मार्गेषु वृश्चिकाश्च महाविषाः ॥ १३ ॥
पतंगा मक्षिकाः कीटा दंशाश्च मशकैः सह ।
सन्त्यरण्येषु वैदेहि तेन दुःखं महावनम् ॥ १४ ॥
अगाधाः पङ्कवत्यश्च महानक्रकुलाकुलाः ।
सरितः सन्त्यरण्यानि नदीकंदरवन्ति च ॥ १५ ॥
कक्ष्यवृक्षक्षुपलता गहनानि शुचिस्मिते ।
सन्त्यटव्यश्च वैदेहि तस्माद्दुःखतरं वनम् ॥ १६ ॥
सुप्यते तृणशय्यासु पर्णशय्यासु चाबले ।
स्वयंकृतासु दुःखासु भूतले निर्जने वने ॥ १७ ॥
आहाराश्चैव कर्तव्या बदरामलकेंगुदैः ।
तथा श्यामाकनीवारपियालकट्वुतिन्दुकैः[1] ॥ १८ ॥
वन्येष्वलभ्यमानेषु वने मूलफलेषु वै ।
बहून्यहानि वस्तव्यं निराहारैर्वनाप्रियैः ॥ १९ ॥
वल्कलाजिनपर्णानि वसितव्यानि कानने ।
वनेषु भवितव्यं च दीर्घश्मश्रुजटाधरैः ॥ २० ॥
दीर्घरोमधरैश्चैव मलपङ्कसमाचितैः ।

1 ल—०प्रियाल० ।

वातातपविशुष्काङ्गैः प्रिये दुःखमतो वनम् ॥ २१ ॥
स्थाने वीरासनं सेव्यमुपचाराश्च मैथिलि ।
कर्तव्या दुश्चराश्चैव नियमा वनवासिभिः ॥ २२ ॥
ग्रीष्मे पञ्चतपोभिश्च वर्षास्वभ्रावकाशकैः[2] ।
जलवासैश्च शिशिरे भाव्यं वनचरैः प्रिये ॥ २३ ॥
त्वगस्थिमात्रशेषेण तपसा कर्षितेन च ।
मया ते तत्र का प्रीतिः का रतिर्वा भविष्यति ॥ २४ ॥
*मां वा समनुगच्छन्त्या नियमव्रतशीलया ।
*त्वयापि हि वने तत्र का रतिर्मे भविष्यति ॥ २५ ॥
वातातपविशीर्णाङ्गीं तपोनियमकर्षिताम् ।
कथं द्रक्ष्याम्यरण्ये त्वां भृशं हि दयिताऽसि मे ॥ २६ ॥
तदलं ते वनं गन्तुं वनचर्या न ते क्षमा ।
विमृशन् वनदोषं हि पश्यामि दयिते वनम् ॥ २७ ॥
तत्र स्थास्यापि मे नित्यं हृदये त्वं निवत्स्यसि ।
इहस्थाऽपि न दूरे त्वं प्रिया हि भवती[3] मम ॥ २८ ॥
एवं वने नेतुमनिश्चितो ऽभावुक्त्वा प्रियां तां निरराम रामः ।
अथोत्तरं सा सुदती सुदीना सीता पुनर्वाक्यमिदं जगाद ॥ २९ ॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे सीतावनदोषदर्शनं
नाम एकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥

---

2 फै—वर्षस्व० । ल—वर्षस्व० । * फै, ल—नास्ति । 3 फै—भवतो ।
पश्चात् "भवती" इति एतम् । ल—भवती ।

[द्वात्रिंशः सर्गः]

अथ तद्वचनं श्रुत्वा सीता रामस्य दुःखिता ।
प्रसक्ताश्रुमुखी वाक्यं भर्तारमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥
वनवासे त्वया दोषा य एते परिकीर्तिताः ।
तानार्यपुत्र मन्ये ऽहं त्वद्भक्त्या सर्वशो गुणान् ॥ २ ॥
त्वद्बाहुगुप्तां न च मामपि देवः शतक्रतुः ।
शक्तो ऽभिभवितुं लोके कुतो ऽन्ये वनचारिणः ॥ ३ ॥
सिंहव्याघ्रवराहादीनुक्तवानसि यान्वने ।
दुरासदान्न मे तेभ्यो भयं किञ्चन[1] विद्यते ॥ ४ ॥
त्वद्बाहुबलगुप्तायाः कुतो मे ऽसुबलं[2] भवेत् ।
विपत्तिरपि वा तत्र श्रेयो मे नेह जीवितम् ॥ ५ ॥
त्वया वा सह गन्तव्यं त्वदनुज्ञातया वनम् ।
त्वत्परित्यक्ता वापि त्यक्तव्यं जीवितं मया ॥ ६ ॥
नारी भर्तृपरित्यक्ता जीवन्त्यपि सुदुःखिता ।
मृता भवत्यार्यपुत्र तस्माच्छ्रेयो ऽद्य मे मृतम् ॥ ७ ॥
अपि चैवाहमादिष्टा लक्षणज्ञैर्द्विजातिभिः ।
वने ते विजने सीते वस्तव्यमिति राघव ॥ ८ ॥
तेषां लक्षणिनां श्रुत्वा वचस्तत्सत्यवादिनाम् ।
वनवासस्पृहा नित्यं हृदि मे परिवर्तते ॥ ९ ॥
स चेदवश्यं प्राप्तव्यः सिद्धादेशस्तथा मया ।
सह त्वया भवतु मे न हीच्छामि तमन्यथा ॥ १० ॥

1 ल—किंचिन्न । 2 म, ल—तुंभयं ।

प्राप्तादेशा भविष्यामि गत्वाऽहं सहिता त्वया ।
कालश्चायं समुत्पन्नः सत्यास्ते सन्तु वै द्विजाः ॥ ११ ॥
वनवासे च जानामि दुःखानि विविधान्यहम् ।
प्राप्यन्ते यानि मुनिभिर्वनवासे यतात्मभिः ॥ १२ ॥
कन्ययैव मया सर्वे वनदोषाः श्रुताः पुरा ।
भिक्षुक्याः साधुवृत्तायाः कथयन्त्याः पितुर्गृहे ॥ १३ ॥
प्रसादये त्वां शिरसा नय मामपि राघव ।
वनवासो हि सुभृशं कांक्षितो मे त्वया सह ॥ १४ ॥
कृतकृत्यो ऽसि भद्रं ते गमनं प्रति राघव ।
पुण्या हि वनचर्येयं त्वया मे सह कांक्षिता ॥ १५ ॥
पूताऽनया भविष्यामि पुण्यया वनचर्यया ।
विहरन्ती त्वया सार्धं हृदयोत्सवभूतया ॥ १६ ॥
स्पृहणीया भविष्यामि लोके ऽमुष्मिन्निहैव च ।
भर्त्तारमनुगच्छन्ती भर्त्ता स्त्रीणां हि दैवतम् ॥ १७ ॥
त्वयैव सह संयोगः प्रेत्यभावे ऽपि मे भवेत् ।
इति चानुगमिष्यामि त्वामहं कृतनिश्चया ॥ १८ ॥
मया कथयतां पूर्वं श्रुतं प्रत्यक्षदर्शिनाम् ।
ब्राह्मणानां निसर्गेण धर्मनिश्चयवादिनाम् ॥ १९ ॥
भर्तारं किल या नारी छायेवानुगता सदा ।
अनुगच्छति गच्छन्तं तिष्ठन्तमनुतिष्ठति ॥ २० ॥
तद्भावनिरता नित्यं तत्संयोगपरायणा ।
तमेव भूयो भर्त्तारं सा प्रेत्याप्यनुगच्छति ॥ २१ ॥

अनुरक्तां प्रियां भार्यां सुव्रतां पतिदेवताम् ।
न त्वं रोचयसे नेतुं मामितः केन हेतुना ॥ २२ ॥
तुल्यशीलव्रताचारां छायामनुगतामिव ।
नेतुमर्हसि मां वीर वनं मुनिजनप्रियम् ॥ २३ ॥
यदि मां निश्चितां गच्छन्न नेतुं त्वमिहेच्छसि ।
सत्येनालभ्य ते पादौ न भविष्याम्यसंशयम् ॥ ॥ २४ ॥
इत्युक्त्वा प्ररुरोदाथ मैथिली शोककर्षिता ।
शोकोर्म्यैरभिवर्पन्ती दुःखजैरश्रुबिन्दुभिः ॥ २५ ॥
पीनोन्नतावपतितौ स्नपयन्ती[1] पयोधरौ ।
दुःखामर्षपरीताङ्गी सुस्वरं कलभाषिणी ॥ २६ ॥
एवमार्त्तामपि तु तां विलपन्तीं सुदुःखिताम् ।
रामः प्रियामनुगतां नेतुं नैव व्यवस्यति ॥ २७ ॥
दध्यौ चाधोमुखः किंचिद्विप्लुतामभिवीक्ष्य ताम् ।
वनवासगतान् दोषान् बहुधाऽपि विचारयन् ॥ २८ ॥
विमनसमभिवीक्ष्य चिन्तयन्तं जनकसुता पतिमप्रतीतरूपम् ।
भृशतरमभिरोपताम्रनेत्रा वचनमुवाच पुनर्निगृह्य बाष्पम् ॥ २९ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतानुनयो
नाम द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

---

१ म—स्नापयंती ।

[त्रयस्त्रिंशः सर्गः]

रामस्य तां मतिं बुद्ध्वा मैथिली कृतनिश्चया ।
रोषात्प्रस्फुरमाणौष्ठी पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
उन्मत्तेवातिपश्यन्ती भर्तारं विपुलेक्षणा ।
रोषावेशात् क्षिपन्तीव प्रणयादभिमानिनी ॥ २ ॥
कृतार्थं मन्यते मूढः स आत्मानं पिता मम ।
रामं जामातरं लब्ध्वा स्त्रीं पुरुषमानिनम् ॥ ३ ॥
अनृतं बत लोकोऽयमज्ञानादनुपश्यति ।
तेजस्वी राम एवैकः सूर्यो वा द्युतिमानिति ॥ ४ ॥
किं वा पश्यन् विषण्णस्त्वं कुतो वा भयमस्ति ते ।
त्यक्तुमिच्छसि मां येन प्रियां नान्यपरायणाम्[1] ॥ ५ ॥
द्युमत्सेनसुतं धीरं सत्यवन्तमनुव्रताम् ।
सावित्रीमिव मां विद्धि भर्तृगतिपरायणाम् ॥ ६ ॥
त्वत्तोऽन्यां हि गतिं गन्तुं मनसाऽपि न कामये ।
त्वया नाथ परित्यक्ता नेच्छामि भरताद् भूतिम् ॥ ७ ॥
कौमारीं दयितां भार्यां स्वयमाहृत्य मां कथम् ।
शैलूषीमिव योषार्थमन्यस्मै दातुमिच्छसि ॥ ८ ॥
न तेऽहमपराध्यामि कर्मणा मनसाऽपि वा ।
वाचा वा स कथं मां त्वं त्यक्तुमिच्छस्यकारणात् ॥ ९ ॥
यदि वाप्यपराधस्ते मया कश्चित्पुरा कृतः ।
अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानात् क्षामये त्वां प्रसीद मे ॥ १० ॥

---

1 ख—चानन्यपरायणाम् ।

आर्यपुत्र परित्यज्य न मां त्वं गन्तुमर्हसि[2] ।
वासः स मे स्वर्गभूतस्त्वया सह भविष्यति ॥ ११ ॥
पृष्ठतस्तव गच्छन्त्या विहारे शयने ऽपि वा ।
न भविष्यति मे नाथ मार्गे ऽप्यध्वपरिश्रमः ॥ १२ ॥
कुशकाशशरेषीकास्तथैव द्रुमकण्टकाः ।
मार्गे मम भविष्यन्ति स्पर्शे[3] कौशेयसन्निभाः ॥ १३ ॥
शय्याश्च वनवासे मे वन्यपर्णतृणास्तृताः ।
रांकवाजिनसंस्पर्शा भविष्यन्ति सह त्वया ॥ १४ ॥
महावातसमुद्भूतं यन्मामवकरिष्यति ।
रजो रमण तन्मे ऽङ्गे परार्घ्यमिव चन्दनम् ॥ १५ ॥
शाद्वलेषु यदा शेष्ये विविक्तेषु च राघव ।
कुशास्तरणतल्पेषु किं मे सुखतरं ततः ॥ १६ ॥
यन्मे मूलफलं वन्यं वने दास्यसि राघव ।
स्वादु वा यदि वाऽस्वादु तद्भवत्यमृतोपमम् ॥ १७ ॥
न बन्धूनां स्मरिष्यामि न मातु र्न पितुर्वने ।
वसन्ती भवता सार्धं स्वादुमूलफलाशना ॥ १८ ॥
न[4] मत्कृतं[4] व्यलीकं ते तत्र किंचिद् भविष्यति ।
भविष्यामि न चैवाहं तत्र भारस्तवानघ ॥ १९ ॥
यस्त्वया सह स स्वर्गो नरकश्च त्वया विना ।
कुरु मे दयितं कामं गच्छेयं सहिता त्वया ॥ २० ॥
त्वया त्यक्ता हि नेच्छामि जीवितुं रघुनन्दन ।

2 कै—गंतुमिच्छामि । 3 कै—स्पर्शे– । 4 ल—नमस्कृत्यं ।

त्वद्वियोगभयोद्विग्नां त्रायस्व शरणागताम् ॥ २१ ॥
अथ नेच्छसि चेन्नेतुं मामेवं समनुव्रताम् ।
विषमद्यैव भोक्ष्ये ऽहं पश्यतस्ते नृपात्मज ॥ २२ ॥
इदं हि दुःखं संसोढुं मुहूर्त्तमपि नोत्सहे ।
किं पुनर्दशवर्षाणि त्रीणि चैकं च राघव ॥ २३ ॥
इति शोकाग्निसन्तप्ता विलप्य जनकात्मजा ।
पादयो निंपपाताथ भर्त्तुर्गमनलालसा ॥ २४ ॥
उक्त्वा वाक्यं सकरुणं त्रायस्व नृप मामिति ।
रुरोद पतिता तत्र सुस्वरं मृदुभाषिणी ॥ २५ ॥
स तस्याः करुणैर्वाक्यैः हृदि क्षत इवातुरः ।
मुमोच बाष्पं शोकोष्णं बाष्पसंरुद्धलोचनः ॥ २६ ॥
तस्य शोकाश्रुपूर्णाभ्यां प्रियाकारुण्यजं तदा ।
सुस्राव वारि नेत्राभ्यां पङ्कजाभ्यामिवोदकम् ॥ २७ ॥
स तामुत्थाप्य शनकैः पादयोः पतितां प्रियाम् ।
उवाच वचनं रामो मधुरं परिसान्त्वयन् ॥ २८ ॥
न कामये स्वर्गमपि त्वदृते ऽहमपि प्रिये ।
न च मे ऽस्ति भयं किंचिदपि साक्षात् स्वयंभुवः ॥ २९ ॥
धर्मं तु वर्त्तितं भीरु सद्भिराचरितं जनैः ।
नातिवर्त्तितुमिच्छामि वेलामिव महोदधिः ॥ ३० ॥
तथा गुरुनियोगं च परं धर्मं विदुर्बुधाः ।
तं चातिक्रमितुं नालमहं शक्तः कदाचन ॥ ३१ ॥
स यथैवानुदिष्टो ऽस्मि पित्राऽऽहूय महात्मना ।

तथा वर्तितुमिच्छामि स हि धर्मः सनातनः ॥ ३२ ॥
तथा तत्र च जिज्ञासु निश्चयं शुभनिश्चये ।
उक्तयान्न नयिष्ये ऽहमिति शक्तो ऽपि रक्षितुम् ॥ ३३ ॥
यदर्थं चैव सीते त्वां नेच्छामि शुभदर्शने ।
वनवासभवैर्दुःखैर्योक्तुं त्वां सुखभागिनीम् ॥ ३४ ॥
कृतनिश्चया महाभागा वनाय मदपेक्षया ।
न त्यक्तुं त्वं मया शक्या कीर्त्तिरात्मवता यथा ॥ ३५ ॥
एहि गच्छ मया सार्धं यथा ते रुचितं प्रिये ।
इच्छामि हि प्रियं कर्तुं नित्यं ते ऽहमनिन्दिते ॥ ३६ ॥
ब्राह्मणेभ्यस्तु साधुभ्यो वासांस्याभरणानि च ।
संश्रितेभ्यस्तथाऽन्येभ्यो[१] देहि दानानि जानकि ॥ ३७ ॥
गुरुं चामन्त्रय शुभे ततो व्रज मया सह ।
इति भर्त्राऽभ्यनुज्ञाता मत्वा गमनमात्मनः ॥ ३८ ॥
क्षिप्रमेव च सा देवी दातुमेवोपचक्रमे ।
ततः प्रहृष्टा परिपूर्णमानसा यशस्विनी भर्तुरवेक्ष्य मानसम् ।
प्रचक्रमे दातुमथो मनीषिणां धनानि वासांसि च भूषणानि च ।३९।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीताऽभिप्राय-
जिज्ञासा नाम त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥

---

१ घ, ङ—संश्रितेभ्य० । म—संश्रितेभ्य० ।

[चतुस्त्रिंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा राघवः सीतां समाहूय च लक्ष्मणम् ।
उवाचेदं वचः श्रीमानवेक्ष्य प्रश्रयानतम् ॥ १ ॥
प्रियः प्राणसमो भ्राता सहायश्च सखा च मे ।
तस्मात्प्रणयतो ऽहं त्वां यद्ब्रवीमि कुरुष्व तत् ॥ २ ॥
वनं त्वया न गन्तव्यं मया सह कथञ्चन ।
इहैव हि महाभारो[1] वोढव्यो भवताऽनघ ॥ ३ ॥
इति रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणो दीनमानसः ।
बाष्पपर्याकुलमुखः शोकं सोढुमशक्नुवत् ॥ ४ ॥
प्रणम्य चरणौ भ्रातुः परिरभ्य च पीडितम् ।
सीतायाश्च महाप्राज्ञस्ततो राघवमब्रवीत् ॥ ५ ॥
अनुज्ञातो ऽस्मि भवता पूर्वमेव वनं प्रति ।
वनं गन्तुमितः कस्मान्निवर्तयसि मां पुनः ॥ ६ ॥
न निवर्त्तयितव्यो ऽहं जीवन्तं मां यदीच्छसि ।
शरणं त्वां प्रपन्नो ऽस्मि प्रसीदार्य क्षमस्व माम् ॥ ७ ॥
इति ब्रुवन्तं तं रामस्ततो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
प्रह्वं नतेन शिरसा वेपमानं कृताञ्जलिम् ॥ ८ ॥
गते त्वयि मया सार्धं यथा ते ऽत्युचितं[2] प्रियम् ।
को भरिष्यति कौशल्यां सुमित्रां च यशस्विनीम् ॥ ९ ॥
अभिवर्षति कामैर्यो मातरौ नौ नराधिपः ।
स कामवशगो व्यक्तं न द्रक्ष्यति यथा पुरा ॥ १० ॥
स कामवशमापन्नो महाराजः पिताऽऽवयोः ।

---

1 थे—महान् भागे । 2 म—त्युचितं ।

भरते राज्यमासज्य कैकेय्या वशमागतः ॥ ११ ॥
राज्यैश्वर्यमदान्धा हि कदाचिदपि कैकयी ।
असाधु प्रतिपद्येत सपत्नीनामचेतना ॥ १२ ॥
ते मातराविहस्थेन समाश्वास्य विशेषतः ।
परिपाल्ये च सौमित्रे यावदागमनं मम ॥ १३ ॥
यथैवाहं तथैव त्वं तयोरिह भविष्यसि ।
बंधुस्त्रायनं चैव दुःखेम्यश्चैव रक्षिता ॥ १४ ॥
इति रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणः श्रीमतां वरः ।
कृताञ्जलिरिदं भूयो रामं वचनमब्रवीत् ॥ १५ ॥
मद्विधानां सहस्राणि कौशल्या बिभृयाद्विभो ।
यस्याः सहस्रं ग्रामाणां निसृष्टमुपजीवनम् ॥ १६ ॥
त्वदपेक्षश्च भरतः पूजयिष्यत्यसंशयम् ।
कौशल्यां च सुमित्रां च परमं यत्नमास्थितः ॥ १७ ॥
नय मामनपेक्षस्त्वं वनवासकृतोद्यमम् ।
शिष्यः प्रेष्यः सहायश्च भविष्यामि वने तव ॥ १८ ॥
खनित्रपिटके गृह्य खड्गपाणिधनुर्धरः ।
अग्रतस्ते गमिष्यामि पन्थानं परिशोधयन् ॥ १९ ॥
धन्यानि चाहरिष्यामि पुष्पमूलफलानि च ।
शय्योपकरणार्थं च द्रुमपर्णतृणानि च ॥ २० ॥
त्वमार्य सह वैदेह्या वनवासे ऽभिरंस्यसे ।
रक्षतस्त्वां गमिष्यन्ति जाग्रतो मम रात्रयः ॥ २१ ॥
आर्य शिष्यो ऽस्मि दासो ऽस्मि भक्तो ऽस्म्यनुगतस्तथा ।
तवाहं सर्वदा साधो प्रसीद नय मामपि ॥ २२ ॥

वाक्येनानेन तु प्रीतो रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
आगच्छ व्रज सौमित्रे आपृच्छस्व सुहृज्जनम् ॥ २३
ये च राज्ञे ददौ दिव्ये महात्मा वरुणः स्वयम् ।
धनुषी ते गृहाण त्वमक्षय्यानिषुधींश्च तान् ॥ २४ ॥
अभेद्ये च तनुत्राणे गृहाण लघुनी शुभे ।
खड्गौ च विमलाकाशसदृशौ विमलच्छदौ ॥ २५ ॥
यथाचार्यगृहे नित्यं धनुस्तिष्ठति मे ऽर्चितम् ।
तदानयाथ गत्वा त्वं त्वरावानिह लक्ष्मण ॥ २५ ॥
इत्युक्तो लक्ष्मणः शीघ्रं स्वमापृच्छ्य सुहृज्जनम् ।
आचार्यकुलमागम्य ते जग्राहायुधोत्तमे ॥ २७ ॥
स ते आदाय धनुषी स खड्गे शुचिनन्धने ।
दर्शयामास रामाय निर्यबन्ध च यत्नवान् ॥ २८ ॥
तमुवाचागत रामो लक्ष्मणं प्रियदर्शनम् ।
काले त्वमागतः शीघ्रं काङ्क्षिते मम लक्ष्मण ॥ २९ ॥
दातुमिच्छामि विप्रेभ्यो धनरत्नार्थसञ्चयम् ।
बहुभृत्यानलपधनास्तस्मादानय मे द्विजान् ॥ ३१ ॥
ये चास्मत्सुहृदो भक्ता निवसन्तीह लक्ष्मण ।
तेषां चापि प्रदास्यामि सर्वेषामुपजीवनम् ॥ ३१ ॥
वासिष्ठपुत्रं च सुयज्ञमार्यं तमानयाशु प्रवरं द्विजानाम् ।
प्रियं सखायं मम वीर्यवन्तं तं तर्पयिष्ये प्रथमं प्रदानैः ॥ ३२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसन्देशो
नाम चतुर्स्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥

[पञ्चत्रिंशः सर्गः]

भ्रातुः शासनमाज्ञाय लक्ष्मणस्त्वरितः स्वयम् ।
सुयज्ञगृहमागम्य प्रविश्य च विनीतवत् ॥ १ ॥
अग्न्यागारमभ्येत्य सुयज्ञं लक्ष्मणो ऽब्रवीत् ।
हे सुयज्ञ द्विजश्रेष्ठ सखा ते द्रष्टुमिच्छति ॥ २ ॥
श्रुत्वैतल्लक्ष्मणवचः सुयज्ञो ऽतित्वरान्वितः ।
प्रविवेशाभ्युपागम्य रामवेश्म सलक्ष्मणः ॥ ३ ॥
तमागतं वेदविदं सीतया सह राघवः ।
अभ्युत्थायार्चयामास प्रदानैरभिकांक्षितैः ॥ ४ ॥
कुण्डलांगदकेयूरमुक्ताहारविभूषणैः ।
सुमहार्हैश्च वासोभिर्धनधान्यैश्च पुष्कलैः ॥ ५ ॥
तमुवाच ततो रामः सीतयाभिप्रचोदितः ।
सखायं दयितं काले सुयज्ञं वेदपारगम् ॥ ६ ॥
हारं च ते हेमसूत्रं शुभान्याभरणानि च ।
वासांसि चैव दिव्यानि ब्राह्मणैतान् प्रयच्छति ॥ ७ ॥
रांकवास्तरणं चैव पर्यंकं सर्वकाञ्चनम् ।
सपादपीठं भार्यायै सखे सीता ददाति च ॥ ८ ॥
नागं शत्रुंजयं नाम यं मह्यं मातुलो ददौ ।
तं ते ददाम्यलंकृत्य सहस्रेण गवां सह ॥ ९ ॥
प्रतिगृह्य च तत्सर्वं सुयज्ञो मन्त्रविद्धनम् ।
रामाय सह वैदेह्या संप्रायुंक्ताशिषः शुभाः ॥ १० ॥
सुयज्ञं संविभज्यैवमन्यांश्चैव द्विजान् द्विजान् ।

अन्येभ्यो ऽपि ददौ रामः सुहृद्भ्यःकामतो धनम् ॥ ११ ॥
भृत्यप्रेष्यजनेभ्यश्च विभवस्यानुरूपतः ।
शिल्पिभ्यश्चोपकारिभ्यो ददौ रामो महायशाः ॥ १२ ॥
ततो भ्रातरमाभाष्य लक्ष्मणं राघवो ऽब्रवीत् ।
ददस्व त्वमपि क्षिप्रं द्विजाग्रेभ्यो ऽर्हतो धनम् ॥ १३ ॥
सुहृद्भ्यश्चात्मना कामानीप्सितानपवर्जय ।
गोभिर्धनैश्च धान्यैश्च भोजनाच्छादनेन च ॥ १४ ॥
इष्टांस्तर्पय सौमित्रे ब्राह्मणान् वेदपारगान् ।
सुहृदश्चार्हतः सर्वान् कामैः संविभजेप्सितैः ॥ १५ ॥
अगस्त्यं कौशिकं चैव गार्ग्यं शाण्डिल्यमेव च ।
समाहूयाभिवर्ष त्वं धनरत्नौघवृष्टिभिः ॥ १६ ॥
*सुहृन्मां परया भक्त्या य उपास्ते सदैव सः ।
*आचार्यस्तैत्तिरीयाणां तमानय यतव्रतम् ॥ १७ ॥
*तस्मै दानानि दास्यामि रत्नानि विविधानि च ।
*रुचिराणि च वासांसि यावन्मनो ऽभिकांक्षति ॥ १८ ॥
सूतं चित्ररथं नाम सखायं मे त्वमानय ।
तस्मै दास्यामि विभवान् यथार्हानभिकांक्षितान् ॥ १९ ॥
ये च मे वन्दिनः सन्ति ये चान्ये परिचारिकाः ।
सर्वांस्तर्पय कामैस्तान् समाहूयाशु लक्ष्मण ॥ २० ॥
चैलप्रक्षालका ये च ये च नः श्मश्रुयोजकाः ।
अनुलेपकाः सेवकाश्च हासकाः स्नापकाश्च ये ॥ २१ ॥

---

* के. नास्ति ।

संवाहकाः सलिलदाः पुरतोवाचकाश्च ये ।O
तेषां निष्कसहस्रं त्वं वृत्यर्थमुपकल्पय ॥ २२ ॥
भोजनार्थं दशशतं शालीनां पृथगुत्सृज ।
व्यञ्जनार्थं च सौमित्रे गोसहस्रमुपाकुरु ॥ २३ ॥
मल्लानां योधकानां च रथोद्वर्त्तनशालिनाम् ।
क्रीडकानां च निष्कानां सहस्रमपवर्जय ॥ २४ ॥
कौशल्यां प्रेष्यवर्गश्च यः शुश्रूषति लक्ष्मण ।
सुमित्रां चैव तस्मै त्वं सहस्रे द्वे समुत्सृज ॥ २५ ॥
भिक्षाभुजो द्विजा ये च कौशल्यां मातरं मम ।
पर्युपासन्ति ये तेभ्यो द्वे सहस्रे समुत्सृज ॥ २६ ॥
तथैव च सुमित्रां ये भिक्षवः समुपासते ।
तेभ्यश्चैव द्विजातिभ्यः सहस्रमपवर्जय ॥ २७ ॥
न सीदति यथा कश्चिन्मयि विप्रोषिते वनम् ।
अनुजीविजनः सौम्य तथा त्वं कर्तुमर्हसि ॥ २८ ॥
न मे ऽस्त्यदेयं साधुभ्यो मन्त्रविद्भ्यो हि लक्ष्मण ।
यो मे ऽस्ति विभवः कश्चित्तं विश्राणय सर्वशः ॥ २९ ॥
यथोद्दिष्टं ददौ तेभ्यः क्रमनिक्रमजीवितम् ।
संविभज्य ततो रामः सर्वानाहूय सो ऽब्रवीत् ॥ ३० ॥
कार्या भवद्भिर्नोत्कण्ठा रक्ष्यं चेदं गृहं मम ।
लक्ष्मणस्य च यत्नेन यावदागमनं मम ॥०३१ ॥
अनुजीविजनं राम इत्युक्त्वा शोककर्षितम्[1] ।

O ल।०ल।1 ल—कोशगर्वितम्।

धनाध्यक्षानुवाचेदं समाहूय पुनर्वचः ॥ ३२ ॥
यदस्ति वित्तशेषं मे सर्वमेवावशेषतः ।
आनयध्वं प्रदास्यामि तदप्यङ्गमशेषतः ॥ ०३३ ॥
इत्युक्ताः समुपाजह्रुर्धनशेषमशेषतः ।
रामाज्ञया धनाध्यक्षाः समुपादाय सर्वतः ॥ ३४ ॥
तद्धनं विकलानाथकृपणेभ्यश्च राघवः ।
दरिद्रेभ्यश्च साधुभ्यो ददौ सर्वमशेषतः ॥ ३५ ॥
अथ वृद्धो दरिद्रश्च बहुभृत्यजनो द्विजः ।
उपायाद्भिक्षितुं रामं त्रिजटो नाम विश्रुतः ॥ ३६ ॥
स रामभवनं प्राप्य प्रविश्याथानिवारितः ।
उवाच राममासाद्य वेपमान इदं वचः ॥ ३७ ॥
दरिद्रो ऽस्म्यसमर्थश्च बालपुत्रश्च राघव ।
मामाप्यर्हसि वित्तेन संविभक्तुं यथार्हतः ॥ ३८ ॥
तमुवाच ततो रामो वृद्धं परिहसन्निव ।
विप्रमाङ्गिरसं दीनं वित्तार्थिनमुपागतम् ॥ ३९ ॥
गवां सहस्रमस्त्येव यदविश्राणितं मया ।
ततो गृहाण यावत्त्वं स्वयं शक्नोषि रक्षितुम् ॥ ४० ॥
इति रामवचः श्रुत्वा त्रिजटो रामसन्निधौ ।
स ह्यात्मनो दृढां कक्ष्यां बद्ध्वा संभ्रान्तमानसः ॥ ४१ ॥
दण्डमुद्यम्य सहसा प्रतस्थे गोधनं प्रति ।
वृद्धभावाद्वेपमानो गाः स कालयितुं स्वयम् ॥ ४२ ॥
तमुवाच ततो रामस्त्रिजटं द्विजसत्तमम् ।

० ङ।

परिहासः कृतो ब्रह्मन् निवर्त्तस्व किमिच्छसि ।
एतच्चैव सहस्रं ते गवां गोपैरहं सह ॥ ४४ ॥
धनं दास्यामि भूयश्च यावदिच्छसि शाधि माम् ।
इत्युक्तस्त्रिजटो वव्रे यजेयमिति राघव ॥ ४५ ॥
तस्मै रामो ददौ द्रव्यं प्रभूतं यज्ञसिद्धये ।
स तं सभार्यस्त्रिजटो यथेप्सितं प्रतिग्रहं प्राप्य समृद्धमानसः ।
प्रशस्य रामं मुदितो जगाम ह प्रजासु रामस्य यशः प्रकाशयन् ॥४६॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वित्तविश्राणनं
नाम पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

[षट्त्रिंशः सर्गः]

दत्त्वा तु सह वैदेह्या ब्राह्मणेभ्यो धनानि सः ।
जगाम पितरं द्रष्टुं सीतया सह राघवः ॥ १ ॥
आयुधानि गृहीत्वाऽसौ सर्वोपकरणानि च ।
लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा तस्मान्निष्क्रम्य वेश्मनः ॥ २ ॥
तौ गृहीताऽऽयुधौ वीरौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
राजमार्गं समेयातां सीतयाऽनुगतौ तदा ॥ ३ ॥
ततश्च वेश्मशृंगाणि हर्म्याणि च समन्ततः ।
ददृशुस्तौ तदारुह्य पौरजानपदास्त्रियः ॥ ४ ॥
अन्तरं राजमार्गे च नासीज्जनपदावृते ।
तदातुरास्ते प्रस्थाने रामस्यामिततेजसः ॥ ५ ॥
पदातिं त समायात सभार्यं सहलक्ष्मणम् ।
ऊचुर्दृष्ट्वा बहुविधा वाचो दुःखसमन्विताः ॥ ६ ॥
अनुप्रयाति यं यान्त चतुरङ्गं महद्बलम् ।
तमिमं सीतया सार्धमनुगच्छति लक्ष्मणः ॥ ७ ॥
सुरैश्वर्यरसज्ञोऽपि भक्तिमानतिवीर्यवान् ।
अनृतं पितरं कर्तुं धर्मात्मा नायमिच्छति ॥ ८ ॥
या न शक्या पुरा द्रष्टुं देवैराकाशगैरपि ।
सीतां तामद्य पश्यन्ति राजमार्गे पृथग्जनाः ॥ ९ ॥
सहजेनांगरागेण भूषितां वरवर्णिनीम् ।
विवर्णतां नायिष्यन्ति सीतां शीतोष्णवायवः ॥ १० ॥

नूनं दशरथो ऽन्येन भूतेनाविष्टचेतनः ।
यथा विवासयेदद्य प्रियं पुत्रमकारणम् ॥O ११ ॥
यदि हि स्यादनाविष्टः सत्त्वेनान्येन केनचित् ।O
कथं विवासयेदेनमकस्माद्गुणसागरम् ॥O१२ ॥
को ह्यार्यो निर्गुणमपि त्यजेत्पुत्रमचेतनः ।O
किमु यस्य गुणैः कृत्स्नलोकोऽयमनुरञ्जितः ॥ १३ ॥
आनृशंस्यं क्षमा शीलं श्रुतं सत्यं पराक्रमः ।
शोभयन्ति गुणा राममेते सुप्रस्थिता भुवि ॥ १४ ॥
विवासेनाद्य' तेनास्य' दुःखितोऽद्य महाजनः ।
औदकानीव सत्त्वानि सलिलस्य परिक्षयात् ॥ १५ ॥
लोकनाथस्य रामस्य पीडया पीडितं जगत् ।
अपर्वणीव सोमस्य राहुग्रहनिपीडया ॥ १६ ॥
परिभोगप्रसादानां परित्राणसुखस्य च ।
तथाऽभयप्रदानस्य दाता गच्छति नो वनम् । १७ ॥
साधुलक्ष्मणवत्सर्वे त्यक्तभोगपरिग्रहाः ।
राममेवानुगच्छामः किं नो दारैर्धनेन वा ॥ १८ ॥
सपुत्रधनदाराश्च सपशुद्रव्यसंचयाः ।
गच्छामस्तत्र यत्रायं साधु गच्छति राघवः ॥ १९ ॥
विहारोद्यानशयनं सनरासनसाधनम् ।
परित्यज्यानुगच्छामस्तुल्यदुःखा नृपात्मजम् ॥ २० ॥
समुद्धृतनिधानानि शीर्णघस्तोच्छ्रयाणि च ।
प्रक्षीणधान्यकोषाणि हीनसंमार्जनानि च ॥ २१ ॥

O सं । । म—०येनास्य येनद्य ।

पिशाचप्रेतरक्षोभि र्जुष्टान्युच्छ्रितभोजनैः ।
अलक्ष्मीन्यमनोज्ञानि परित्यक्तानि दैवतैः ॥ २२ ॥
अस्मत्त्यक्तानि वेश्मानि कैकेयी प्रतिपद्यताम् ।
वनं नगरमेवास्तु यत्र गच्छति राघवः ॥ २३ ॥
अस्माभिस्तु परित्यक्तं पुरं संपद्यतां वनम् ।
यत्र वत्स्यति रामोऽयं पुरं तत्र भविष्यति ॥ २४ ॥
बिलानि दंष्ट्रिणः सर्वा वनानि मृगपक्षिणः ।
अस्मत्त्यक्तं प्रपद्यन्तां सेव्यमानं त्यजन्तु च ॥ २५ ॥
एताश्चान्याश्च विविधा वाचः पौरजनेरिताः ।
शृण्वन् रामो ययौ मार्गे वनवासकृतोद्यमः ॥ २६ ॥
अवेक्षमाणोऽपिजनं तदाऽऽर्त्तमनार्त्तरूपः प्रहसन्निवाथ ।
जगाम रामः पितरं दिदृक्षुः सत्यप्रतिज्ञं पितरं चिकीर्षुः ॥२७॥
आसाद्य चेक्ष्वाकुकुलप्रदीपो रामः पितुर्वेश्म तथाऽऽर्यवृत्तः ।
व्यतिष्ठत प्रेक्ष्य ततो नियोगे स्थितं सुमन्त्रं प्रतिहारमिष्टम् ॥२८॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे पौरवाक्यं नाम
षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

[सप्तत्रिंशः सर्गः]

प्रागेवानागते रामे सभार्ये सहलक्ष्मणे ।
अनन्तरमतीवार्तो विललापाकुलो नृपः ॥ १ ॥
हन्तानार्ये ममामित्रे सकामा भव कैकयि ।
मृते मयि गते रामे वनं मनुजकुञ्जरे ॥ २ ॥
त्यजामि भरतं त्वां च जीवितं चेदमात्मनः ।
प्रशाधि विधवा राज्यं निर्घृणे रहिता मया ॥O३ ॥
अहं हिनोमि रामेण त्यक्तो जीवितमात्मनः ।
न भविष्यामि ते पापे भूयो ऽप्येवं वशानुगः ॥ ४ ॥O
केन मन्त्रयसे मूढे किं समर्थयसे शुभम् ।
मम जीवितनाशाय करोषेदं मतमीदृशम् ॥ ५ ॥O
अरण्यं व्रजतां रामो भरतश्चाभिषिच्यताम् ।
इति कस्य मतं पापं मन्नाशाय दुरात्मनः ॥ ६ ॥O
बालो ऽप्यमी कथं राज्य भरतः कारयिष्यति ।
ज्येष्ठे तिष्ठति राज्यार्हे रामे राजीवलोचने ॥ ७ ॥
अज्ञाता कालरात्रीव भार्यारूपेण कैकयि ।
कथं त्वं क्षीणपुण्येन मयोढा मन्दबुद्धिना ॥ ८ ॥
व्याली घोरविषेव त्वं मयाऽबुद्ध्या निषेविता ।
त्वया दष्टो वियुज्येऽहं प्राणैरिष्टैः सुतेन[1] च[1] ॥ ९ ॥
स्त्रीणां धिगस्त्वनार्याणां कृतघ्नानां विशेषतः ।
त्यजन्ति वशगान् भर्तॄन् या लुब्धा राज्यकाम्यया ॥ १० ॥

O म । 1 ञ—मुने मुने ।

निर्घृणे निरनुक्रोशे कीदृशं हृदयं तव ।
शरणागतं[2] याचमानं यस्मान्मा त्यक्तुमिच्छसि ॥ ११ ॥
माऽयं नृशंसे ते लोकः परो माऽस्तु सुखावहः ।
यन्मां प्रियेण पुत्रेण नियोजयसि दुःखितम् ॥ १२ ॥
उचितः शिबिका-यानं रथयानं च मे सुतः ।
कान्तारवनदुर्गाणि कथं पद्भ्यां गमिष्यति ॥ १३ ॥
स्वादूनामन्नपानानामुचितो ऽयं ममात्मजः ।
सुकुमारो विलासी च मृष्टाभरणभूषितः ॥ १४ ॥
कषायाणि च वन्यानि मूलानि च फलानि च ।
वल्कलाजिनसंवीतः स कथं भक्षयिष्यति ॥ १५ ॥
अपि नाम स धर्मात्मा विनीतो गुरुवत्सलः ।
मयाऽसि पितृमान् पुत्र स्त्रीवशेनाकृतात्मना ॥ १६ ॥
शीलवृत्तगुणज्येष्ठ प्राणेभ्यो ऽपि प्रियं सुतम् ।
कथं त्यक्तुं गुणाराम राम ध्यायेत मे मनः ॥ १७ ॥
नृशंसो ऽहमनार्यो ऽहं सर्वथैव धिगस्तु माम् ।
शुश्रूषुं स्त्रीजितः पुत्र दयितं यस्त्यजाम्यहम् ॥ १८ ॥
किं मां वक्ष्यति लोको ऽयं नृशंसं पापकारिणम् ।
वसिष्ठो वामदेवश्च जावालिः कश्यपस्तथा ॥ १९ ॥
किं मां वक्ष्यन्ति श्रुत्वेद तथा ऽन्ये ब्रह्मवादिनः ।
विश्वामित्रादयः सिद्धास्तपोवननिवासिनः ॥ २० ॥
पृथिव्यां पृथिवीपालाः किं मां वक्ष्यन्ति साधवः ।

---

2 ह—चरणागत ।

युक्तो ऽस्म्ययशसा लोके पतितश्चास्मि सर्वथा ॥ २१ ॥
कैकेय्यै राज्यलुब्धायै अतिसृज्य वरद्वयम् ।
हा हतोऽस्मि विनष्टोऽस्मि दग्धोऽस्मि चपलेन्द्रियैः ॥ २२ ॥
कैकेय्या वशमापन्नः पापायाः पापमोहितः ।
गुरुभिर्ब्रह्मचर्यैश्च कृच्छ्रैर्बालो ऽपि कर्शितः ॥ २३ ॥
सुखकाले ऽद्य पुत्रो मे दुःखमेवोपभोक्ष्यते ।
अनियोज्यैव दुःखेषु रामं राजीवलोचनम् ॥ २४ ॥
तदेव मरणं[3] मे स्याद्यदि पापं च[4] नाप्नुयाम्[4] ।
इति राजा दशरथः पुत्रशोकाकुलेन्द्रियः ॥ २५ ॥
अनिन्ददात्मनाऽऽत्मानं सुरां पीत्वेव वेदवित् ।
एवं विलपतस्तस्य दुःखार्तस्य महीपतेः ॥ २६ ॥
उपेत्यावेदयामास सुमन्त्रो राममागतम् ।
ततः स राजा समुपागतं सुतं सुमन्त्रतो वेत्य भृशार्तमानसः ।
प्रवेश्यतामाश्विति तं तदा वचः सुमन्त्रमुद्वीक्ष्य तदाऽभ्यधात्प्रभुः॥२७

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो नाम सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

3 घ—हरणं । ख—मरणं । 4 ख—न चाप्नुयाम् ।

[अष्टात्रिंशः सर्गः]

प्रवेश्यतां राम इति वाक्यमुक्त्वा नराधिपः ।
तीव्रशोकसमाविष्टो भूयो मोहमुपागमत्[1] ॥ १ ॥
मुहूर्तमिव निश्चेष्टो भूत्वा मोहपरायणः ।
प्रतिलेभे ततः संज्ञां सिंहासनगतो नृपः ॥ २ ॥
लब्धसंज्ञं च तं भूयः सुमन्त्रः पृथिवीपतिम् ।
उपेत्य प्राञ्जलिर्वाक्यमुवाचेदं सुदुःखितः ॥ ३ ॥
दत्त्वा धनानि विप्रेभ्यो भृत्येभ्यश्चोपजीवनम् ।
स्वरश्मिभिरिवादित्यः ख्यातो लोके गुणांशुभिः ॥ ४ ॥
आज्ञां ते शिरसाऽऽदाय वनं गन्तुं कृतक्षणः ।
लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा सीतया च नराधिप ॥ ५ ॥
द्रष्टुं ते ऽभ्यागतः पादौ तं पश्य यदि मन्यसे ।
इति राजा सुमन्त्रस्य श्रुत्वा वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥
आकाश इव शुद्धात्मा निश्चयो ऽयं सुदुःखितः ।
सुमन्त्रानय मे क्षिप्रं यावन्तो हि परिग्रहाः ॥ ७ ॥
दारैः परिवृतस्तं हि द्रष्टुमिच्छामि राघवम् ।
इत्युक्तो ऽन्तःपुरं गत्वा सुमन्त्रो वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥
आर्याः[2] क्रन्दति राजा नश्चिरं[3] तत्र हि गम्यताम् ।
एवमुक्ताः स्त्रियः सर्वाः सुमन्त्रेण त्वराऽन्विताः ॥ ९ ॥
तत्राजग्मुर्नृपं द्रष्टुं भर्तुराज्ञाय शासनम् ।

---

1 कै, म, ल, व—०मुपागतम् । ०मुपागमत् इति कै कोपे विभिन्न-मस्यां संशोधितम् । 2 व, म—आर्या । 3 ल—न ।चिरं ।

अर्द्धसप्तशता नार्यो रूपवत्यः स्वलंकृताः ॥ १० ॥
उपेयुस्ताः पतिं द्रष्टुं कैकेय्या सहितं तदा ।
समवेक्ष्यागतान् दारानशेषेण ततो नृपः ॥ ११ ॥
सुमन्त्रानय मे क्षिप्रं पुत्रमित्यभ्यभाषत ।
ततः सुमन्त्रस्त्वरितो रामं लक्ष्मणमेव च ॥ १२ ॥
प्रवेशयामास गृहं राज्ञस्तां चैव मैथिलीम् ।
दृष्ट्वैव च तमायान्तं दूराद्रामं कृताञ्जलिम् ॥ १३ ॥
उत्पपातामनादार्तो राजा स्त्रीमध्यतस्तदा ।
आगच्छ पुत्र रामेति परिष्वक्तुमुपागतम् ॥ १४ ॥
अप्राप्यैव च संभ्रान्तः पपात नृपतिः सुतम् ।
सीदन्तं तं समभ्येत्य रामः संभ्रान्तमानसः ॥ १५ ॥
अप्राप्तमेव धरणीं परिगृह्याङ्कमास्थितम् ।
शनैरुत्थाप्य संमूढं तस्मिन्नेवासने पुनः ॥ १६ ॥
लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा सीतया च न्यवेशयत् ।
वीजनेनोपवेश्यैनं वीजयामास मूर्च्छितम् ॥ १७ ॥
ततः स्त्रीणां महाक्राद:[1] संजज्ञे राजवेश्मनि ।
मुहूर्तादिव तं रामो लब्धसंज्ञं महीपतिम् ॥ १८ ॥
उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा शोकार्णवपरिप्लुतम् ।
आपृच्छे त्वां महाराज सर्वेषामीश्वरो ऽसि नः ॥ १९ ॥
प्रस्थितं वनवासाय संपश्य कुशलेन माम् ।
लक्ष्मणं चानुजानीहि वैदेहीं च महीपते ॥ २० ॥

---

1 म, ल—महानादः ।

निवर्त्यमानावपि हि न निवर्त्याविमौ मया ।
अतो नो वनवासाय गमने कृतनिश्चयान् ॥ २१ ॥
लक्ष्मणं मां च सीतां च समनुज्ञातुमर्हसि ।
अनुज्ञाकांक्षिणं राममिति मत्वा महीपतिः ॥ २२ ॥
उवाच प्रेक्ष्य दीनात्मा बाष्पपर्याकुलेक्षणः ।
वरप्रदानात्कैकेय्या पुराऽहं राम वंचितः ॥ २३ ॥
तस्मान्निगृह्य मां मूढं राजा भवितुमर्हसि ।
एवमुक्तो नृपतिना रामो धर्मभृतां वरः ॥ २४ ॥
पितरं प्रणिपत्येदं प्रत्युवाच कृताञ्जलिः ।
भवान्पिता गुरुश्चैव राजा भर्ता प्रभुश्च मे ॥ २५ ॥
दैवतं पूजनीयश्च गरीयान् धर्मएव च ।
भवन्नियोगे स्थातव्यं मया राजन् प्रसीद मे ॥ २६ ॥
न निवर्तयितव्योऽहं भव सत्यप्रतिश्रवः ।
राजा वर्षसहस्राय भवानेवास्तु नः प्रभो ॥ २७ ॥
यथा त्वया प्रतिज्ञातं कैकेय्यास्तत्तथा कुरु ।
त्वां चेत्कृत्वाऽहमनृतं राज्यमिच्छेयमित्युत ॥ २८ ॥
त्रैलोक्यस्यापि कृत्स्नस्य न तत्काले भविष्यति ।
श्रुत्वा तु वचनं रामात्सत्यपाशगतो नृपः ॥ २९ ॥
उवाच करुणं वाक्यं बाष्पगद्गदया गिरा ।
निश्चितं यदि ते राम मत्प्रियार्थमितो वनम् ॥ ३० ॥
गन्तुं पुरादितः पुत्र ततो गच्छ मया सह ।
न हि त्वया विरहितो राम जीवितुमुत्सहे ॥ ३१ ॥

मया त्वया च रहिते राजाऽस्तु भरतः पुरे ।
इति ब्रुवाणं नृपतिं रामो वचनमब्रवीत् ॥ ३२ ॥
नार्हामि त्वमितो गन्तुं मया सह वनं प्रभो ।
नानुवृत्तिस्त्वया कार्या मम राजन् कथंचन ॥ ३३ ॥
प्रसीद तात धर्मेण योक्तुमर्हसि नो भवान् ।
सत्यप्रतिज्ञमात्मानं कर्तुमर्हसि मानद ॥ ३४ ॥
स्वधर्मं स्मारयामि त्वां राजन्नोपदिशामि ते ।
स्वधर्मतो ऽत्र मत्स्नेहाच्च्यवितुं न त्वमर्हसि ॥ ३५ ॥
एवमुक्तो दशरथो रामं वचनमब्रवीत् ।
कीर्तिमायुर्बलं शौर्यं धर्मं चाप्नुहि शाश्वतम् ॥ ३६ ॥
यशसो वृद्धये भूयः पुनरागमनाय च ।
अरिष्टं गच्छ पन्थानं सत्यत्वं परिपालयन् ॥ ३७ ॥
इमां तु रजनीमेकामिह त्वं वस्तुमर्हसि ।
अद्य भुक्त्वा मया सार्धं भोगानिष्टान्धनानि च ॥ ३८ ॥
समाश्वास्य सुदुःखार्तां मातरं वै गमिष्यामि ।
इति रामो वचः श्रुत्वा पितुरार्तस्य धीमतः ॥ ३९ ॥
उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा राजानं शोकविह्वलम् ।
समुत्सृज्य सुखं भूयो न निवर्तितुमुत्सहे ॥ ४० ॥
यानद्य भोगान् प्राप्स्यामि को मे श्वस्तान् प्रदास्यति[१] ।
तस्माद्गमनमेवाहं वृणोमि न निवर्तितुम् ॥ ४१ ॥
धन-रत्न चिता भूमिरियं मद्व्यमसंश्रया ।

---

१ वै—प्रदास्यति ।

सहस्त्यश्वरथग्रामा भरताय प्रदीयताम् ॥ ४२ ॥
त्यजेयं दयितान् प्राणानिष्टान् भोगान् धनानि च ।
भवन्तमनृतं कर्तुं न त्विच्छेयं कदाचन ॥ ४३ ॥
अपगच्छतु ते दुःखं नृपते मद्वियोगजम् ।
क्षुभ्यन्ति त्वद्विधा नैवं साधवः सागरोपमाः ॥ ४४ ॥
न राज्यप्राप्तिमिच्छामि न सुखानि महीपते ।
त्वत्प्रतिज्ञातमिच्छामि सत्यं कर्तुं प्रशाधि माम् ॥ ४५ ॥
अनुजानीहि मां शीघ्रं वनवासकृतोद्यमम् ।
अनुग्रहं परं मन्ये त्वत्सत्यपरिपालनम् ॥ ४६ ॥
इयं सराष्ट्रा सपुरा च मेदिनी मया विसृष्टा भरताय दीयताम् ।
अहं च सत्यं भवतोऽनुपालयन् वनं गमिष्यामि तपो निषेवितुम् ४७
मयाविसृष्टां भरतो महीमिमां सहाद्रिशैलां सपुरां सकाननाम् ।
शिवां सुसीमामनुशास्तु वीर्यवांस्त्वया यदुक्तं नृपते तथास्तु तत् ४८
तथा न मे पार्थिव धीयते मनो महत्स्वपि प्रीतिसुखेषु वर्तितुम् ।
[illegible]था निदेशे तव शिष्टसम्मते व्यपेतु दुःखं तव मद्वियोगजम् ॥४९॥
[illegible]दं हि नैवानघ राज्यमव्ययं न चापि भोगानि सुखानि कामये ।
[illegible] जीवितं त्वामनृतेन योजयन् वृणोमि राजन् सुकृतेन ते शपे ॥५०॥
फलानि मूलानि च भक्षयन् वने गिरींश्च पश्यन् सरितः सरांसि च ।
वने निवत्स्यामि सुखी गतज्वरो व्यपेतु दुःखं तव मद्वियोगजम् ५१
इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथसमाश्वासनं
नामाष्टात्रिंशः सर्गः ॥ ३८ ॥

---

७ य—दर्पयतु ।

[एकोनचत्वारिंशः सर्गः]

ततः सुमन्त्रं नृपतिः पीडितः स्वप्रतिज्ञया ।
दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य शशासाहूय मन्त्रिणम् ॥ १ ॥
चतुरङ्गं बलं भूरि शस्त्राभरणभूषितम् ।
राघवस्यानुयात्रार्थं क्षिप्रमेवोपकल्प्यताम् ॥ २ ॥
रूपयौवनशालिन्यो विलासिन्यो महाधनाः ।
अनुयान्तु कुमारस्य रत्यर्थं रुचिराननाः ॥ ३ ॥
सुहृदो ये ऽनुरक्ताश्च रामं राजीवलोचनम् ।
ते वनमनुगच्छन्तु संविभक्ता महाधनैः ॥ ४ ॥
कोशाध्यक्षाश्च ते सर्वे कोशमादाय सर्वशः ।
गच्छन्तमनुगच्छन्तु रामं राजीवलोचनम् ॥ ५ ॥
मृगयां विहरन् भोगान् भुञ्जंश्चायमभीप्सितान् ।
वनेऽप्यपि वसन् रामो मुक्त्वा राज्यं सुखानि च ॥ ६ ॥
यावान्मद्विभवः कश्चिद् यावदस्त्युपजीवनम् ।
अशेषेणैव तत्सर्वं राममेवानुगच्छतु ॥ ७ ॥
ददद्दानानि तीर्थेषु विसृजंश्च धनानि मे ।
रामो ऽयं वनवासे ऽपि राज्यधर्मं समश्नुताम् ॥ ८ ॥
भरतो ऽप्युद्धृतधनामयोध्यां पालयिष्यति ।
सर्वकामैः पुनः श्रीमान् रामः संपद्यतां वनम् ॥ ९ ॥
ब्रुवत्येवं दशरथे कैकेय्या भयमस्पृशत् ।
आस्यं शुशोष चैवास्याः स्वरश्चैव व्यभिद्यत ॥ १० ॥
सा विवर्णमुखा दीना राजानमिदमब्रवीत् ।

संरंभामर्षताम्राक्षी क्रोधपर्याकुलेक्षणा ॥ ११ ॥
हृतसारमिदं राष्ट्रं पीतमण्डां सुरां यथा ।
दत्त्वाऽप्यश्रद्धया मे त्वं भविष्यस्यनृती नृप ॥ १२ ॥
एवं नृशंसया भूयो वाक्शरैरभिपीडितः ।
कैकेय्या दुःखितो राजा तामिदं वाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥
वहतां वै धुरं गुर्वीमसह्यां साधुगर्हिताम् ।
नृशंसे किं तुदसि मां वाक्प्रतोदैः पुनः पुनः ॥ १४ ॥
एवं ब्रुवन्तं राजानं कैकेयी पुनरब्रवीत् ।
पापस्वभावा वचनं परुषं घोरनिश्चया ॥ १५ ॥
तवैव पूर्वः सगरो ज्येष्ठं पुत्रं किलात्यजत् ।
असमञ्जसमत्युग्रं तथा त्वं राघवं त्यज ॥ १६ ॥
एवमुक्तो धिगित्युक्त्वा राजा दशरथस्तदा ।
दध्यौ व्रीडाऽन्वितः किञ्चिच्छिरः संकंपयन्निव ॥ १७ ॥
ततो वृद्धो महामात्यः सिद्धार्थो नाम विश्रुतः ।
भृशं बहुमतो राज्ञः कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ १८ ॥
पुरा ऽसमंजसं देवि सगरः पृथिवीपतिः ।
हेतुना त्यक्तवान् येन ब्रुवतस्तन्निबोध मे ॥ १९ ॥
असमञ्जाः समादाय पौराणां दारकान् गले ।
सरय्वामाशु चिक्षेप दौःशील्यादिति मे श्रुतम् ॥ २० ॥
तेन विप्रकृताः क्रुद्धाः पौराः सगरमब्रुवन् ।
असमञ्जसमेकं वा त्यजास्मान्वा महीपते ॥ २१ ॥

1 कै, म—तथैव ।

तानुवाच ततो राजा किं कारणमिति प्रभुः ।
तं तथा रुपिताः सर्वे पौरा राजानमब्रुवन् ॥ २२ ॥
पुत्रस्तवैष दौःशील्यादेवं किल स दारकान् ।
गले क्रोशत आदाय सरय्वां क्षिपति प्रभो ॥ २३ ॥
इति तेषां वचः श्रुत्वा पौराणां सगरो नृपः ।
तत्याज दयितं पुत्रं तेषां स प्रियकाम्यया ॥ २४ ॥
अविनीतमेवं नृपतिः सगरस्त्यक्तवान् सुतम् ।
गुणवन्तं सुतं राजा रामं त्यक्ष्यत्ययं कथम् ॥ २५ ॥
इति सिद्धार्थवचनं श्रुत्वा दशरथो नृपः ।
शोकव्याकुलया वाचा कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ २६ ॥
अनुव्रजामि स्वयमेव रामं राज्यं परित्यज्य सुखानि चैव ।
त्वमप्यनार्ये भरतेन सार्धं यथा सुखं भुंक्ष्व चिराय राज्यम् ॥२७॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सिद्धार्थवाक्यं नामैकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥ ३९ ॥

[चत्वारिंशः सर्गः]

कैकेय्या वचनं श्रुत्वा पितुर्दशरथस्य च ।
अन्वभाषत धर्मात्मा रामस्तत्र महामनाः ॥ १ ॥
त्यक्तसर्वस्वभोगस्य[1] वन्याहारनिषेविणः[2] ।
अनुयात्रेण मे कार्यं[3] किं राजन्[3] निर्जने वने ॥ २ ॥
यो हि हित्वा द्विपश्रेष्ठं गजकक्ष्यां वहेन्नृप ।
किं कार्यमृदया तस्य त्यजतः कुञ्जरोत्तमम् ॥ ३ ॥
तथा मम नियुक्तस्य ध्वाजिन्या किं प्रयोजनम् ।
सर्वमेवानुजानामि चीराण्येव तु केवलम् ॥ ४ ॥
खनित्रपिटके चोभे सशिक्ये वरये नृप ।
चतुर्दश हि वर्षाणि वने वत्स्यामि निर्जने ॥ ५ ॥
अथ चीराणि कैकेयी स्वयमादाय राघवम् ।
उवाच परिधत्स्वेति निर्लज्जं[4] जनसंसदि[4] ॥ ६ ॥
परिगृह्य तु[5] ते चीरे कैकेय्या हस्ततस्ततः ।
विहाय वाससी सूक्ष्मे रामः परिदधे स्वयम् ॥ ७ ॥
अन्वेव लक्ष्मणश्चापि विहाय वसने शुभे ।
चीरे परिदधे वीरस्तथैव पितुरग्रतः ॥ ८ ॥
अथात्मपरिधानाय पीते[6] कौशेयवासमी ।
दृष्ट्वा समुद्यते चीरे कैकेय्या जनकात्मजा ॥ ९ ॥
लज्जमाना स्थिता पार्श्वे रामस्य शुभदर्शना ।

---

1 म—० सर्वस्य० । 2 के, घ—०निवासिन । 3 म—राजन् किं कार्य । 4 म—निर्लज्जाज्जनसंसदि । 5 म—च । 6 म—पीत— ।

जग्राह भृगमुद्विग्ना मृगी दृष्ट्वेव वागुराम् ॥ १० ॥
परिगृह्य च ते चीरे सीता बाष्पाविलेक्षणा ।
गन्धर्वराजप्रतिमं भर्तारमिदमब्रवीत् ॥ ११ ॥
आर्यपुत्र कथं चीरमहं बध्नामि शंस मे ।
इत्युक्त्वा चीरमेकं सा स्वस्मिन् स्कन्धे समासजत्[7] ॥ १२ ॥
द्वितीयं च परिदधे चीरमादाय मैथिली ।
तां चीरवसनां दृष्ट्वा भर्तृनाथामनाथवत् ॥ १३ ॥
प्रचुक्रुशुः स्त्रियः सर्वा धिग्धिगित्येव चाब्रुवन् ।
तं विक्रन्दं नृपः श्रुत्वा स्वस्त्रीभिः समुदीरितम् ॥ १४ ॥
चिच्छेद जीवितश्रद्धां सुखश्रद्धां च दुःखितः ।
स निःश्वस्योष्णमिक्ष्वाकुर्भार्यां तामिदमब्रवीत् ॥ १५ ॥
रामस्यैकस्य गमने वरं याचितवत्यसि ।
न सौमित्रेर्न जानक्या नृशंसे दुष्टचारिणि ॥ १६ ॥
किमर्थमनयोश्चीरे ददास्यशुभदर्शने ।
पापे पापसमाचारे नृशंसे कुलपांसनि[8] ॥ १७ ॥
कैकेयि न च सौमित्रिर्न सीता गन्तुमर्हति ।
ननु पर्याप्तमेतावत् पापे रामविवासनम् ॥ १८ ॥
किं ते भूय इदं कर्तुं मति निरयगामिनि ।
इति ब्रुवाणं पितरं रामः संप्रस्थितो वनम् ॥ १९ ॥
अवाक्शिरसमासीनमिदं वचनमब्रवीत् ।
इयं धर्मज्ञ कौसल्या माता मम तपस्विनी ॥ २० ॥

7 कै, थ—समास्पृशत् । 8 ट—०पांसिनि ।

वृद्धा चाक्षुद्रशीला च सुभृशं त्वामनुव्रता ।
मद्वियोगाद् भृशं राजन्निमग्ना शोकसागरे ॥ २१ ॥
मदनुग्रहार्थं कृपणा त्वत्तो रक्षणमर्हति ।
यथा न दुःखितेयं स्यात्त्वया नाथेन नाथिनी ॥ २२ ॥
मदपेक्षया तथा राजन् सदेमां द्रष्टुमर्हसि ।
इमां महेन्द्रोपम तात दुःखितामवेक्षितुं[9] त्वं जननीं ममार्हसि ।
यथा वनस्थे मयि शोककर्शिता न जीवहीना यमसादनं व्रजेत् ॥२३॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामस्य[10] चीरपरिग्रहो
नाम चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥

---

9 कै, थ, ल—दु खिता अवेक्षितु । 10 म—राम— ।

[एकचत्वारिंशः सर्गः]

मुनिवेशधरं रामं दृष्ट्वैवंवादिनं नृपः ।
भार्याभिः सह सर्वाभिः शुशोच च रुरोद च ॥ १ ॥
न चैनं शोकदुःखार्तः शशाकाभिनिरीक्षितुम् ।
न चाभिभाषितुं[1] राजा शशाकैनं सुदुःखितः ॥ २ ॥
स मुहूर्तमिव ध्यात्वा दुःखमीलितलोचनः ।
विललापातुरो दीनो राममेवानुचिन्तयन् ॥ ३ ॥
नूनं मया कृताः पूर्वं विपुशाः पुत्रवत्सलाः ।
यथा पुत्र वियुज्ये ऽहं त्वयाऽतिकृपणो ऽवशः ॥ ४ ॥
अकाले देहिनां मृत्युर्नूनं तावन्न विद्यते ।
नियुज्यमानो यन्मृत्युं नाधिगच्छाम्यहं त्वया ॥ ५ ॥
लोककान्तं प्रियं पुत्रं कुशचीरधरं वनम् ।
प्रस्थितं पश्यतो मे ऽद्य हृदयं किं न दीर्यते ॥ ६ ॥
यत्र पुत्र मया काले लालनीयो ऽसि सर्वदा ।
दुःखे महति तत्र त्वां योजयामि धिगस्तु माम् ॥ ७ ॥
एकस्याः खलु कैकेय्याः कृते ऽयं दुःखितो जनः ।
इत्युक्त्वा निपपातोर्व्यां राजा मूर्च्छां जगाम च ॥ ८ ॥
संज्ञां च प्रतिलभ्याथ मुहूर्तात् स महीपतिः ।
अश्रुपूर्णेक्षणो वाक्यं सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ॥ ९ ॥
युक्त्वा रथं मदीयं त्वं शीघ्रमानय वाजिभिः ।
तेन प्रापय मे पुत्रं वनं मुनिजनप्रियम् ॥ १० ॥

---

1 घ, म, ल—०भाषितुं ।

एतन्मन्ये गुणवतां गुणानां फलमुच्यते ।
पित्रा मात्रा च यः साधुरेव निरस्यते सुतः ॥ ११ ॥
इति राज्ञा समादिष्टः सुमन्त्रस्त्वरयन्निव ।
आजगाम रथं राज्ञो युक्त्वा परमवाजिभिः ॥ १२ ॥
उपनीय च मयुक्तं रथं रत्नविभूषितम् ।
राज्ञो निवेदयामास युक्तं इत्यभितोषितः ॥ १३ ॥
कोशाध्यक्षमथाहूय स्वममात्यं नराधिपः ।
उवाचेदं वचो धर्म्यं शोकव्याकुलिताक्षरम् ॥ १४ ॥
वासांसि त्वं महार्हाणि भूषणानि वराणि च ।
वर्षाण्येतानि संख्याय वैदेह्यै प्रतिपादय ॥ १५ ॥
इति राज्ञा समादिष्टो गत्वा कोशगृहं तु सः ।
प्रायच्छच्छीघ्रमानीय वैदेह्यै सर्वमेव तत् ॥ १६ ॥
ततो निवासयामास तानि वासांसि मैथिली ।
भूषयामास चात्मानं भूषणैस्तैर्वरानना ॥ १७ ॥
ततो विराजयामास तद्वेश्म सुविभूषिता ।
विमलेव प्रभा सौरी व्यभ्रं वितिमिरं नभः ॥ १८ ॥
तथा तु सा मैथिलपार्थिवात्मजा विभूषिता प्रीतिकरैर्विभूषणैः ।
विदिद्युते द्यौरिव तोयदागमे शतह्रदा पत्रशतैरलङ्कृता ॥ १९ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतालङ्कारिको
नामैकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

[द्विचत्वारिंशः सर्गः]

अलंकृतां तु वैदेहीं द्योतमानामिव श्रियम् ।
विभूषितां परिष्वज्य श्वश्रूर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
स्नेहान्मूर्धन्युपाघ्राय माता दुहितरं यथा ।
गच्छन्तं वनवासाय त्वं राममनुगच्छसि ॥ २ ॥
त्वामतोऽनुसमाधास्ये कार्यं ते हृदि मद्वचः ।
सत्कृता लालिताश्चापि वैदेहि प्राकृताः स्त्रियः ॥ ३ ॥
न स्मरन्त्युपकारं हि न प्रीतिं न च सौहृदम् ।
रूपयौवनसंसर्गात् सुभावेन च दर्पिताः ॥ ४ ॥
तत्त्वया नावमन्तव्यः पुत्रो मम धनच्युतः ।
दैवतं हि पतिः स्त्रीणां सधनो निर्धनोऽपि वा ॥ ५ ॥
मद्वियोगकृतं दुःखं वनवासकृतं तथा ।
न संस्मरेद्यथा रामस्तथा कार्यं हि मैथिलि ॥ ६ ॥
इति श्वश्र्वा समादिष्टा सीता भर्तृपरायणा ।
कृताञ्जलिः स्थिता प्रह्वा कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ ७ ॥
आर्ये करिष्येऽभ्यधिकं शासनं ते यथाऽऽत्थ माम् ।
अभिज्ञा ह्यस्मि[1] सत्स्त्रीणां धर्माचारस्य सर्वशः ॥ ८ ॥
न मां पृथग्जनसमामार्ये त्वं मन्तुमर्हसि ।
रामाद्विचलिता नालमहं सूर्यादिव प्रभा ॥ ९ ॥
नातन्त्री वाद्यते वीणा नाचक्रो वर्तते रथः ।
नापतिः सुखमाप्नोति[2] नारी यद्यपि सुप्रजा ॥ १० ॥

1 के—हृदि । 2 कै, ग—०प्नोति ।

मितं ददाति हि पिता मितं माता मितं सुतः ।
अमितस्य तु दातारं भर्त्तारं का न पूजयेत् ॥ ११ ॥
साऽहं सुखानां सर्वेषां दातारं दैवतं पतिम् ।
कथमार्ये ऽवमन्येयं[3] यथाऽन्याः प्राकृताः स्त्रियः ॥ १२ ॥
किं च मन्ये देवतानामनुग्राह्याऽस्मि[4] साम्प्रतम् ।
यन्मे प्रकृतिकल्याणीं श्रद्धां वर्धयसे पुनः ॥ १३ ॥
भर्तुः प्रियनिमित्तं हि त्यजेयमपि जीवितम् ।
पाणिप्रदानसमयात्प्रभृत्येवं व्रतं मम ॥ १४ ॥
विप्रयुक्ता हि रामेण कन्दर्पेणेव रूपिणा ।
पतेयं पर्वताग्राद्वा विशेयं वा हुताशनम् ॥ १५ ॥
प्रमाणं तन्मया कार्यं यदग्निगुरुसन्निधौ ।
सलाजकुसुमः पाणिः पीडितो राघवेण मे ॥ १६ ॥
इतरा लघुसत्त्वा हि स्त्रियो यौवनविभ्रमात् ।
भर्त्तारमवमन्यन्ते संश्लिष्टाश्च कुबांधवैः ॥ १७ ॥
स्वयं कामान्न वक्तव्यमार्ये ऽहं पतिदेवता ।
यथा भर्त्तरि वर्तिष्ये तथा श्रोष्यसि सज्जनात् ॥ १८ ॥
राज्यनाशं वने वासं त्वद्वियोगं च राघवः ।
प्रयतिष्ये तथा कर्त्तुं यथा नातिस्मरिष्यति ॥ १९ ॥
सीतायास्तद्वचः श्रुत्वा कौशल्या हृदयंगमम् ।
शुद्धसत्त्वा मुमोचाश्रु सहसा दुःखहर्षजम् ॥ २० ॥
परिष्वज्य च कौशल्या मैथिलीं जनकात्मजाम् ।

3 च—वमन्येहं । 4 छ, म—दैवता० ।

उवाच परमप्रीता गद्गदस्खलिताक्षरम् ॥ २१ ॥
अनाश्चर्यमिदं पुत्रि वचनं तव मैथिलि ।
या त्वं विदार्य वसुधां सीते मत्स्यमिवोदिता ॥ २२ ॥
जनकस्य नरेन्द्रस्य मैथिलस्य महात्मनः ।
यशसश्च गुणानां च सीते त्वमसि भूषणम् ॥ २३ ॥
अहं यशस्या धन्या च यस्यास्त्वं समुपस्थिता ।
गुणज्ञा च कृतज्ञा च धर्मज्ञा च यशस्विनी ॥ २४ ॥
निर्वृत्ताऽहं भविष्यामि त्वया सह वनं गते ।
रामे राजीवपत्राक्षे ह्ययोध्यां पुनरागते ॥ २५ ॥
वनेषु खलु ते पुत्रि भाव्यमस्याप्रमत्तया ।
लक्ष्मणस्य च वीरस्य देवरस्य विशेषतः ॥ २६ ॥
एवं सन्दिश्य सीतां तु प्रशस्य च यशस्विनीम् ।
मूर्ध्न्युपाघ्राय सस्नेहं कौशल्या राममब्रवीत् ॥ २७ ॥
नित्यं राघव सीताया भवितव्यं समीपतः ।
लक्ष्मणस्य च भक्तस्य त्वया वीरस्य मानद ॥ २८ ॥
कर्तव्यश्चाप्रमादस्ते वने प्रचुरपादपे ।
तां प्राञ्जलिरभिक्रम्य मातृमध्ये व्यवस्थिताम् ॥ २९ ॥
रामोऽपि धर्म्यं धर्मज्ञो मातरं वाक्यमब्रवीत् ।
अम्ब सीतां समाश्रित्य यत्त्वं मामनुशाससि ॥ ३० ॥
लक्ष्मणो दक्षिणो बाहुश्छायेव मम मैथिली ।
नेयं त्यक्तुं मया शक्या कीर्तिरात्मवता यथा ॥ ३१ ॥
गृहीतशरचापस्य कुतोऽस्ति हि भयं मम ।

अपि त्रयाणां लोकानामीश्वराद्वा शतक्रतोः ॥ ३२ ॥
अम्ब मा दुःखिनी भूस्त्वं पश्यतं पितरं मम ।
क्षयो ऽस्य वनवासस्य भविष्यत्यचिरेण मे ॥ ३३ ॥
अस्य राज्ञः प्रसादेन वर्षाण्येतानि मे शुभे ।
शिवेनैव गमिष्यन्ति यथैकदिवसं तथा ॥ ३४ ॥
स्वस्तिमन्तमरोगं मां पुनरभ्यागतं वनात् ।
स्वैरेव सुकृतैः पुण्यैर्ध्रुवं द्रक्ष्यसि मा शुचः ॥ ३५ ॥
एतावदभिनीतार्थमुक्त्वा स जननीं वचः ।
अर्धसप्तशतास्तत्र ददर्शान्या निमातरः ॥ ३६ ॥
समुपेत्य च मातॄस्ताः कृताञ्जलिरिदं वचः ।
उवाच रामो धर्मात्मा प्रश्रयावनतस्तदा ॥ ३७ ॥
संवासात्पुरुषः कश्चिद्विश्वासाद्वा ऽपराध्यति ।
क्षन्तव्यमपराद्धं मे सर्वाश्चामन्त्रयामि वः ॥ ३८ ॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यदन्यदपि किञ्चन ।
अपराद्धं तदद्याहं सर्वशः क्षमयामि वः ॥ ३९ ॥
अथ जज्ञे महांस्तत्र तासां नृपतियोषिताम् ।
क्रौञ्चीनामिव संक्रन्द एवं ब्रुवति राघवे ॥ ४० ॥
मुरज पणव-वेणु-नादितं दशरथवेश्म बभूव यत्पुरा ।
विलपितपरिदेवितस्वनैर्व्यसनभवैस्तदभूद्विनादितम् ॥ ४१ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथस्त्रीविलापो
नाम द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥

[त्रिचत्वारिंश सर्गः]

कृताञ्जलिस्ततो रामो लक्ष्मणश्च महायशाः ।
वैदेही चैव राजानं प्रतिजग्मुः प्रदक्षिणम् ॥ १ ॥
कृत्वा प्रदक्षिणं चैनं प्रणिपत्यानुमान्य च ।
रामः शोकपरिम्लानां जननीमभ्यवादयत् ॥ २ ॥
अन्वेव लक्ष्मणश्चैनां रुदतीमभ्यवादयत् ।
ततो मातुः सुमित्रायाः पादौ जग्राह लक्ष्मणः ॥ ३ ॥
तं वन्दमानं रुदती परिष्वज्य च पीडितम् ।
स्नेहान्मूर्धन्युपाघ्राय सुमित्रा पुत्रमब्रवीत् ॥ ४ ॥
अरिष्टं गच्छ पन्थानं सह रामेण लक्ष्मण ।
शुश्रूष भ्रातरं ज्येष्ठं रामं लोकहिते रतम् ॥ ५ ॥
मत्पुत्रेण त्वया पुत्र तारिताऽहं मयांधया ।
यस्त्वं त्यक्त्वा प्रियान् दारान् मां च राममनुव्रतः ॥ ६ ॥
समस्थो विषमस्थो वा रामस्ते परमा गतिः ।
प्राणैरपि प्रियतरो ज्येष्ठो भ्राता गुरुश्च ते ॥ ७ ॥
तस्मादस्याप्रमत्तस्त्वं शरीरं परिपालय ।
विजने वसतो ऽरण्ये सीतया रमतः सह ॥ ८ ॥
एष पुत्र सतां धर्मो यं त्वामिच्छामि सेवितुम् ।
उचितं वः कुले पुत्र भ्रातृज्येष्ठानुपालनम् ॥ ९ ॥
भ्राता ज्येष्ठो ऽग्रतश्च रामो राजीवलोचनः ।
त्वया पुत्र वने सेव्यः परिपाल्यश्च सर्वथा ॥ १० ॥
दानं दीक्षा तपश्चैव तनुत्यागो मृधे ऽपि वा ।

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम् ॥ ११ ॥
अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात यथासुखम् ।
इत्युक्त्वा लक्ष्मणं पुत्रं सुमित्रा राममब्रवीत् ॥ १२ ॥
त्वया ऽपि पुत्र रक्ष्यो ऽयं लक्ष्मणः शत्रुकर्षण ।
भक्तो ऽनुरक्तो ऽनुगतो भ्राता भृत्यः सुहृच्च ते ॥ १३ ॥
त्वया ऽयं सर्वथा रक्ष्यस्त्वं चैवानेन राघव ॥
एवमस्त्विति रामस्तां सुमित्रां प्रत्यभाषत ॥ १४ ॥
चक्रे कृताञ्जलिश्चैनामभिवाद्य प्रदक्षिणम् ।
ततः सुमन्त्रः काकुत्स्थं प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥
विनीतवदुपागम्य मातलिर्वासवं यथा ।
राजपुत्र नमस्ते ऽस्तु युक्तो ऽयं ते महारथः ॥ १६ ॥
अनेन त्वां हि नेष्यामि यत्र मां राम वक्ष्यसि ।
चतुर्दश हि वर्षाणि वस्तव्यानि त्वया वने ॥ १७ ॥
राज्यार्थिन्या पिता ते ऽयं कैकेय्या यानि याचितः ।
तं वरार्ह रथं युक्तं सीता हृष्टेन चेतसा ॥ १८ ॥
आरुरोह वरारोहा कृत्वाऽलंकारमात्मनः ।
वनवासं हि संख्याय वासांस्याभरणानि च ॥ १९ ॥
भर्तारमनुगच्छन्त्यै सीतायै श्वशुरो ददौ ।
तथैवायुधजातानि तूणांश्च कवचानि च ॥ २० ॥
रथोपस्थमभिन्यस्य सखित्रपिटकं च तत् ।
अथ ज्वलनसंकाशं चामीकरविभूषितम् ॥ २१ ॥
तमारुरुहतुः क्षिप्रं भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

सीतातृतीयावारूढौ दृष्ट्वा तूर्णमनोदयन् ॥ २२ ॥
सुमन्त्रः संहितानश्वान् वायुवेगसमाञ्जवे ।
प्रयाते तु महारण्यं चिररात्राय राघवे ॥ २३ ॥
बभूव नगरं सर्वं क्रोधपूर्णं बलं च तत् ।
तत्समाकुलसंभ्रान्तं मत्तसंकुपितद्विपम् ॥ २४ ॥
हयशिञ्जितनिर्घोषं पुरमासीन्महास्वनम् ।
ततः सबृद्धबाला हि पुरी परमपीडिता ॥ २५ ॥
राममेवाभिदुद्राव घर्मार्त्तः सलिलं यथा ।
पार्श्वतः पृष्ठतश्चैव जनाः पुरनिवासिनः ॥ २६ ॥
अश्रुपूर्णमुखाः सर्वे तमूचुर्भृशदुःखिताः ।
संयच्छ वाजिनः सूत शनैर्याह्यथवा पुनः ॥ २७ ॥
रामस्य द्रष्टुमिच्छामो मुखचन्द्रं महात्मनः ।
हृदयाणि हरत्येष सर्वेषां नरचन्द्रमाः ॥ २८ ॥
पश्यामस्तावदेवैनं कदा द्रक्ष्यामहे पुनः ।
प्रस्थितो दुर्गमध्वानं नाथो नो भक्तवत्सलः ॥ २९ ॥
कदैनं वनकान्ताराद्द्रक्ष्यामः पुनरागतम् ।
आयसं हृदयं नूनं राममातुः सुसंहतम् ॥ ३० ॥
यन्न दीर्णं प्रिये पुत्रे वनवासाय निर्गते ।
एकैव कृतपुण्येयं वैदेही तनुमध्यमा ॥ ३१ ॥
या ऽनुगच्छति गच्छन्तं छायेवानुपमं पतिम् ।
त्वं च लक्ष्मण सिद्धार्थः कृतपुण्यश्च यः प्रियम् ॥ ३२ ॥
भक्त्याऽनुगच्छसि ज्येष्ठं भ्रातरं धर्मवत्सलम् ।

एष ते महती सिद्धिरेष ते ऽभ्युदयो महान् ॥ ३३ ॥
एष स्वर्गस्य ते पन्था यद्राममनुगच्छसि ।
एवं ब्रुवंतस्ते पौरा बाष्पवेगमुपागतम् ॥ ३४ ॥
यदा न शेकुः संरोद्धुं दुःखार्ता रुरुदुस्ततः ।
क नु गन्तासि दुःखार्तानस्मानुत्सृज्य राघव ॥ ३५ ॥
नयास्मानपि यत्र त्वं गन्तुं राम समुद्यतः ।
अथ राजा वृतः स्त्रीभिर्दीनाभिर्दीनमानसः ॥ ३६ ॥
निर्जगाम प्रियं पुत्रं द्रष्टुमिच्छन् स्वयं गृहात् ।
क्रंदन्तीनां ततः स्त्रीणां शुश्रुवे तत्र निस्वनः ॥ ३७ ॥
करेणूनामिवाक्रन्दो बद्धे गतशिशौ वने ।
स च राजा दशरथो गतश्रीर्न बभौ तदा ॥ ३८ ॥
यथा पूर्णः शशी काले ग्रहेणोपहतद्युतिः ।
ततो हा हेति करुणः शब्दः समभवन्महान् ॥ ३९ ॥
दुःखितं प्रेक्ष्य राजानं सदारं निर्गतं गृहात्
हा रामेति जना केचिद्धा राजन्निति चापरे ॥ ४० ॥
क्रोशमाना नृपं तत्र परिवव्रुः समन्ततः ।
तमवेक्ष्य ततो रामः पितरं शोकविह्वलम् ॥ ४१ ॥
पदातिमनुगच्छन्तं दारैः स्वैः परिवारितम् ।
देव्या कौशल्यया सार्धं विह्वलं तं पदे पदे ॥ ४२ ॥
धर्मपाशस्थितो दीनो नाशक्रोदभिभाषितुम् ।
पदाती तौ तु दुःखार्त्तौ दृष्ट्वा शोकसमन्वितौ ॥ ४३ ॥

पितरां नोदयामास शीघ्रं याहीति सारथिम् ।
न हि सन्दर्शनं रामस्तयोर्दुःखपरीतयोः ॥ ४४ ॥
शशाक सोढुं दुःखार्तः स्तोत्रार्दित इव द्विपः ।
हा पुत्र राम हा सीते हा हा लक्ष्मण पश्य माम् ॥ ४५ ॥
इति राजा च[^] देवी च क्रोशन्तावभ्यधावताम् ।
रामलक्ष्मणसीताश्च मृजन्तो वारि नेत्रजम् ॥ ४६ ॥
असकृत्तामवैक्षन्त नृत्यन्तीमिव मातरम् ।
तिष्ठ तिष्ठेति राजा हि याहि याहीति राघवः ॥ ४७ ॥
सुमंत्रस्य बभूवात्मा गोचक्रान्तरितो यथा ।
नाश्रौषमिति राजानं सूत[6] वक्ष्यसि सङ्गमे[ट] ॥ ४८ ॥
चिरं दुःखस्य जातोऽयमिति रामस्तमब्रवीत् ।
स रामस्य मतं बुद्ध्वा सुमन्त्रो दीनमानसः ॥ ४९ ॥
अञ्जलिं नृपतेर्बद्ध्वा नोदयामास तान् हयान् ।
शीघ्रं प्रजावितरथैः प्रयान्तमथ राघवम् ॥ ५० ॥
यदा न शेकुरन्वेतुं पौराणां ताः स्त्रियस्तदा ।
न्यवर्तन्त सुदुःखार्ता निराशा रामदर्शने ॥ ५१ ॥
मनोभिराशुवेगैश्च न न्यवर्तन्त सर्वशः ।
यमिच्छेच्च पुनर्द्रष्टुं न तं दूरमनुव्रजेत् ॥ ५२ ॥
वसिष्ठप्रमुखा विप्रा इत्यूचुस्तं नृपं तदा ।
तेषां तदा तद्वचनं स राजा श्रुत्वा गुरूणां परिगृह्य बाष्पम् ।
तस्थौ प्रयान्तं सुतमीक्षमाणो विषादमोहव्यथितान्तरात्मा ॥५३॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामनिर्याणं
नाम त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥

[^] ग—श । 6 ग-पूर्व ग्रहयामि० । ट घक्ष्यामि संगमेपि गा ।

[चतुश्चत्वारिंशः सर्गः]

तस्मिन्प्रयाते त्वरितं पुराद्रामे कृताञ्जलौ ।
आर्तशब्दो हि संजज्ञे स्त्रीणामन्तःपुरे तदा ॥ १ ॥
अनाथस्य जनस्यास्य दुर्बलस्य तपस्विनः ।
यो गतिः शरणं चासीत्स नाथः क नु गच्छति ॥ २ ॥
न क्रुध्यत्यभिशस्तो ऽपि क्रोधनीयानि वर्जयन् ।
क्रुद्धान् प्रसादयन् सर्वान् स नाथः क नु गच्छति ॥ ३ ॥
कौशल्यायां महातेजा यथा मातरि वर्तते ।
तथा सर्वासु वर्तेत महात्मा क नु गच्छति ॥ ४ ॥
कैकेय्या क्लिश्यमानानां राज्ञा च कुपितेन यः ।
परित्राता च गोप्ता च रक्षिता क नु गच्छति ॥ ५ ॥
अबुद्धिर्बत किं राजा विपरीतमतिर्नु किम् ।
यो नाथं सर्वभूतानां परित्यजति राघवम् ॥ ६ ॥
इति राजमहिष्यस्ता विवत्सा इव धेनवः ।
अन्योन्यं संपरिष्वज्य बाहुभ्यां संप्रचुक्रुशुः ॥ ७ ॥
स तमन्तःपुरे घोरमार्तशब्दं महीपतिः ।
श्रुत्वा पुत्रवियुक्तात्मा विषसाद सुदुःखितः ॥ ८ ॥
नाग्निहोत्राण्यहूयन्त सूर्यश्चान्तरधीयत ।
व्यसृजन्कवलान्नागा गावो वत्सान्न चाददुः ॥ ९ ॥
बृहस्पतिबुधार्केन्दुशुक्रांगारकराहवः ।
दारुणाः सोममासाद्य ग्रहाः सर्वेऽव्यवतस्थिरे ॥ १० ॥

विशिखाश्च सधूमाश्च नाग्नयश्च प्रकाशिरे ॥ ११ ॥
अकालानिलवेगेन महोदधिरिवोद्धतः ।
रामे वनं प्रव्रजिते नगरं प्रचचाल च ॥ १२ ॥
दिशः पर्याकुलीभूतास्तिमिरेण समावृताः ।
नागरश्च जनः सर्वो दुःखशोकपरायणः ॥ १३ ॥
आहारे व्यवहारे च न कश्चित्कुरुते मनः ।
बाष्पपर्याकुलमुखो राजमार्गगतो जनः ॥ १४ ॥
न हृष्टो लक्ष्यते कश्चित्सर्वः शोकपरायणः ।O
न ववौ पवनः शीतो न तताप दिवाकरः ॥ १५ ॥
न रराज शशी चापि सर्वमासीत्समाकुलम् ।
सर्वे सर्वं परित्यज्य राममेवान्वचिन्तयन् ॥ १६ ॥
ये तु रामस्य सुहृदस्ते सर्वे मूढचेतसः ।
शोकभारसमाक्रान्ताः शयनं न जहुस्तदा ॥ १७ ॥
गर्हयन्तश्च कैकेयीं निन्दन्तश्च महीपतिम् ।
आत्मभाग्यान्यसूयन्तः परं दैन्यमुपागताः ॥ १८ ॥
ततस्त्वयोध्या रहिता महात्मना पुरन्दरेणेव यथा ऽमरावती ।
चचाल सर्वा भयभारपीडिता सनागयोधाश्वरथाकुला तदा ॥१९॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे ऽन्तःपुर विलापो
नाम चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥



O छ ।

[पञ्चचत्वारिंशः सर्गः]

यावत्तु गच्छतस्तस्य राजा रूपं व्यलोकयत् ।
नैनेक्ष्वाकुवरस्तावच्चक्षुषी समुपाहरत् ॥ १ ॥
यावद्राजा प्रियं पुत्रं ददर्शात्यन्तधार्मिकम् ।
तावत्प्रववृधे चास्य चक्षुः पुत्रदिदृक्षया ॥ २ ॥
नापश्यत्तु रजो ऽप्यस्य यदा रामस्य भूमिपः ।
तदाऽऽर्तश्च विवर्णश्च पपात धरणीतले ॥ ३ ॥
तस्य दक्षिणमङ्गं तु कौशल्याऽन्वहदङ्गना ।
वामं च साभ्यगात्पापा कैकेयी भरतप्रिया ॥ ४ ॥
तां नयेन च संपन्नो धर्मेण विनयेन च ।
उवाच राजा कैकेयीं समीक्ष्य व्यथितेन्द्रियः ॥ ५ ॥
कैकेयि मा ममाङ्गानि स्प्राक्षीस्त्वं दुष्टचारिणि ।
न हि त्वां स्प्रष्टुमिच्छामि न भार्या त्वं न मे प्रिया ॥ ६ ॥
ये च त्वामनुजीवन्ति नाहं तेषां न ते मम ।
केवलार्थपरा हि त्वा त्यक्तधर्मा त्यजाम्यहम् ॥ ७ ॥
अगृह्णा यच्च ते पाणिमग्निपर्ययणं[1] च यत् ।
अनुजानामि तत्सर्वमिह लोके परत्र च ॥ ८ ॥
भरतश्चेत्प्रतीतः स्याद्राज्यं प्राप्येदमुत्तमम् ।
यन्मे स दद्यात्प्रीत्यर्थं मम तत्समुपागतम् ॥ ९ ॥
अथ रेणुपरिध्वस्तं समुत्थाप्य महीपतिम् ।
न्यवर्तत तदा देवी कौशल्या शोककर्शिता ॥ १० ॥

---

1 के म—पर्यायण ।

इत्येव ब्राह्मणं राजा पदा स्पृष्ट्वेव पन्नगम् ।
अन्वतप्यत धर्मात्मा पुत्रं संत्यज्य राघवम् ॥ ११ ॥
निवर्तित्वा निवर्तित्वा सीदतो रथवर्त्मसु ।
राज्ञस्तस्य वभौ रूपं ग्रस्तस्यांशुमतो यथा ॥ १२ ॥
विललाप च दुःखार्तः प्रियं पुत्रमनुस्मरन् ।
नगरीं तामनुप्राप्तस्त्यक्त्वा पुत्रमनाथवत् ॥ १३ ॥
इमानि हयमुख्यानां वहतां तं ममात्मजम् ।
पदानि श्रुचि दृश्यन्ते स महात्मा न दृश्यते ॥ १४ ॥
स नूनं किञ्चिदेवाद्य वृक्षमूलमुपाश्रितः ।
काष्ठं वा यदि वा ऽश्मानमुपधाय स्वपिष्यति ॥ १५ ॥
उत्थास्यति च मेदिन्याः कृपणः पांसुगुण्ठितः ।
विनिश्वसन्प्रस्रवणे करेणूनामिव द्विपः ॥ १६ ॥
द्रक्ष्यन्ति पुरुषाश्रेमं दीर्घबाहुं वनेचराः ।
राममुत्थाय गच्छन्तं लोकनाथमनाथवत् ॥ १७ ॥
श्यामावदातं रक्ताक्षं चन्द्राननमनिन्दितम् ।
पृथूरस्कं महाबाहुं शार्दूलसमगामिनम् ॥ १८ ॥
सिंहोरस्कं वृषस्कंधं चीरकृष्णाजिनाम्बरम् ।
यदृच्छया देवलोकात्संप्राप्तमिव वासवम् ॥ १९ ॥
सकामा भव कैकेयि विधवा राज्यमाप्स्यसि ।
न ह्यहं तं नरव्याघ्रमृते जीवितुमुत्सहे ॥ २० ॥
इत्येवं विलपन् राजा जनौघेनाभिसंवृतः ।
अपस्मारैरिवाविष्टः स विवेश पुरीं तदा[१] ॥ २१ ॥

१ म—अपस्मारैरिवाविष्टो विवेशापुरमुत्तमम् ।

शून्यचत्वरवेश्मान्तां संवृतापणदेवताम् ।
जनैर्दुःखागमक्लान्तै र्नात्याकीर्णमहापथाम् ॥ २२ ॥
तां स पश्यन्[1] पुरीं राजा राममेवानुचिन्तयन् ।
विलपन् प्राविशद्राजा गृहं सूर्य इवांबुदम् ॥ २३ ॥
कौशल्याया गृहं शीघ्रं राममातुर्नयन्तु माम् ।
इति ब्रुवन्तं राजानमन्वयु[2] र्मार्गदर्शिनः ॥ २४ ॥
तत्र चास्य प्रविष्टस्य कौशल्याया निवेशने ।
अधिरुह्यापि शयनं बभूव लुलितं मनः ॥ २५ ॥
स तच्छुष्कं हृदमिव सुपर्णेन हतोरगम् ।
रामेण रहितं वेश्म वैदेह्या लक्ष्मणेन च ॥ २६ ॥
तत्र दृष्ट्वा महाराजो भुजावुद्यम्य दुःखितः ।
उच्चैः स्वरेण चुक्रोश हा राघव जहासि माम् ॥ २७ ॥
सुखिताः किल तत् काले जीविष्यन्ति नरोत्तमाः ।
प्रतिश्रयन्ते ये रामं द्रक्ष्यन्ति पुनरागतम् ॥ २८ ॥
अथ रात्र्यां प्रपन्नायां कालरात्र्यां विशेषतः ।
अर्धरात्रे दशरथः कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ २९ ॥
न त्वां पश्यामि कौशल्ये साधु मां पाणिना स्पृश ।
रामे मे ऽनुगता दृष्टिरद्यापि न निवर्तते ॥ ३० ॥
तं राममेवानुविचिंतयानं समीक्ष्य देवी शयने नरेन्द्रम् ।
उपोपविश्याधिकमार्त्तरूपा विनिःश्वसन्ती विललाप कृच्छ्रात् ॥३१॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो
नाम पञ्चचत्वारिंश सर्गः ॥ ४५ ॥

---

1 ख—सोपदयत् । 2 के, म—मन्वयन् ।

[षट्चत्वारिंशः सर्गः]

ततः समीक्ष्य शयने सन्नं शोकेन कर्षितम् ।
कौशल्या पुत्रशोकार्त्ता तमुवाच महीपतिम् ॥ १ ॥
राघवे नृपशार्दूल विषं मुक्त्वा द्विजिह्ववत् ।
विहरिष्यति कैकेयी मुक्तं प्राप्तमनोरथा ॥ २ ॥
विवास्य रामं सुभगा लब्धकामा मनस्विनी ।
त्रासयिष्यति मां भूयः कृष्णाहिरिव वेश्मनि ॥ ३ ॥
अस्मिंस्तु नगरे रामश्चरन् भैक्ष्यं गृहे वसन् ।
कामकारो वरं दातुमपि रामं ममात्मजम् ॥ ४ ॥
पातितः स तु कैकेय्या स्थानादिष्टायथेष्टतः ।
प्रदिष्टो रक्षसां भागः पर्वणीवाहिताग्निना ॥ ५ ॥
गजराजगति र्वीरो महाबाहु र्महाधनुः ।
विशत्यरण्यं नूनं स सभार्यो लक्ष्मणान्वितः ॥ ६ ॥
वनेष्वदृष्टदुःखानां कैकेय्या वचनात्त्वया ।
त्यक्तानां वनवासाय का न्ववस्था भविष्यति ॥ ७ ॥
ते भोगहीनास्तरुणाः फलकाले विवासिताः ।
वने वत्स्यन्ति कृपणा मम वत्साः सुदुःखिताः ॥ ८ ॥
अपीदानीं स कालः स्यान्मम शोकापहारकः ।
सभार्यं सहितं भ्रात्रा पश्येयमिह यत्सुतम् ॥ ९ ॥
कदाऽयोध्यां महाबाहुः पुरीं रामः प्रवेक्ष्यति ।
पुरस्कृत्य रथे सीतां पौलोमीमिव वृत्रहा ॥ १० ॥
श्रुत्वैवोपस्थितं रामं कदाऽयोध्या भविष्यति ।
यशस्विनी हृष्टजना पताकाध्वजमालिनी ॥ ११ ॥

कदा प्रेक्ष्य नरव्याघ्रमरण्यात्पुनरागतम् ।
नन्दिष्यति पुरी रम्या समुद्र इव पर्वणि ॥ १२ ॥
कदा प्राणिसहस्राणि राघवौ पुनरागतौ ।
लाजैरवकरिष्यन्ति प्रविशन्तावरिन्दमौ ॥ १३ ॥
कदा परिणतो बुद्ध्या वयसा चामरप्रभः ।
मामुपेष्यति धर्मज्ञः सवत्समिव मातरम् ॥ १४ ॥
कदा सुमनसः कन्या द्विजा गावश्च फलानि च ।
प्रविशन्तौ पुरीं हृष्टौ करिष्यन्ते प्रदक्षिणम् ॥ १५ ॥
प्रविशन्तौ कदाऽयोध्यां द्रक्ष्यामि शुभलक्षणौ ।
उदग्राभरणौ वीरौ निस्त्रिंशवरधारिणौ ॥ १६ ॥
आशासितानि देवेभ्यः कदा तं प्रतिमानदम् ।
रामं दृष्ट्वा प्रदास्यामि देवताभ्यः प्रहर्षिता ॥ १७ ॥
निःसंशयमहं मन्ये मया पूर्वं कदर्यया ।
पातुकामेषु वत्सेषु मातॄणां वारिताः स्तनाः ॥ १८ ॥
माऽहं गामिव वत्सेन वियुक्ता विह्वली कृता ।
कैकेय्या पुरुषव्याघ्र बालवत्सेव गार्बलात् ॥ १९ ॥
तमहं मद्गुणैर्युक्तं सर्वशास्त्रविशारदम् ।
एकपुत्रा विना पुत्रं जीवितुं नोत्सहे चिरम् ॥ २० ॥
न हि मे जीवितुं किञ्चित्सामर्थ्यमिह विद्यते ।
अपश्यन्त्याः प्रियं पुत्रं महाबाहुं महाबलम् ॥ २१ ॥
अयं हि मां तापयते सुदारुणस्तनूजशोकप्रभवो हुताशनः ।
महीमिमां रश्मिभिरुत्तमप्रभो यथा निदाघे भगवान् दिवाकरः ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याविलापो नाम
षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४६ ॥

[बं–४३]=[सप्तचत्वारिंशः सर्गः]=[दा–४५]

अनुरक्ता[1] महात्मानं रामं सत्यपराक्रमम् ।
अनुजग्मुः प्रयान्तं तं वनवासाय मानवाः ॥ १ ॥
निवर्त्यमानाः सुभृशं सुहृद्वर्गेण राघवात् ।
न स्म ते विनिवर्तन्ते रामस्यानुगता रथम् ॥ २ ॥
अयोध्यानिलयानां हि पुरुषाणां महायशाः ।
बभूव गुणसंपन्नः पूर्णचंद्र इव प्रियः ॥ ३ ॥
स याच्यमानः काकुत्स्थः स्वाभिः प्रकृतिभिर्वशी[2] ।
कुर्वाणः पितरं सत्यं वनमेवान्वपद्यत ॥ ४ ॥
अवेक्षमाणः सस्नेहं चक्षुषा प्रपिबन्निव ।
उवाच रामो धर्मात्मा ताः प्रजाः सन्निवर्तयन् ॥ ५ ॥
या प्रीतिर्बहुमानश्च मय्ययोध्यानिवासिनः ।
मत्प्रियार्थमशेषेण भरते सा निवेश्यताम् ॥ ६ ॥
स हि कल्याणचारित्रैः कैकेय्यानन्दवर्धनः ।
करिष्यति यथावद्वः[3] प्रियाणि च हितानि च ॥ ७ ॥
ज्ञानविज्ञानविनयैं र्वृद्धः शीलगुणान्वितः ।
अनुरूपः स वो भर्ता भविष्यति सुखावहः ॥ ८ ॥
स हि राजगुणैर्युक्तो युवराजः समाहितः ।
विनीतश्च सदा यत्तैः कर्त्तव्यं तस्य शासनम् ॥ ९ ॥
ज्ञानवृद्धो वयोवृद्धो मृदुर्वीरो गुणान्वितः ।
प्रगल्भः प्रियवादी च नित्यं बंधुजनप्रियः ॥ १० ॥

---

1 ब—अनुरक्तं । 2 ब—वत्सो । 3 के—यथावर्यः ।

संतप्यते यथाऽसौ न वनवासं गते मयि ।
महाराजस्तथा कार्यं मम प्रियचिकीर्षुभिः ॥ ११ ॥
यथा यथा दाशरथिर्धर्ममेवान्वकीर्तयत् ।
तथा तथा प्रकृतयो राममेवानुवव्रिरे ॥ १२ ॥O1
बाष्पेण पिहितो वीरो रामः सौमित्रिणा सह ।
आचकर्ष गुणै र्बद्ध्वा पौरजानपदं जनम् ॥ १३ ॥
अथ द्विजातयः शीलवृत्तश्रुतगुणान्विताः ।
तपसा भावितात्मानो वचसा च महौजसः ॥ १४ ॥
वयःप्रकंपशिरसो दूरादूचुरिदं वचः ।
वहन्ते जवना रामं भो भो जात्यास्तुरंगमाः ॥ १५ ॥
न गंतव्यं निवर्तध्वं हिता भवत भर्त्तरि ।
कर्णवन्ति[4] हि भूतानि विशेषेण तुरंगमाः ॥ १६ ॥O1
उपवाह्यो हि वो भर्त्ता नापवाह्यः पुराद्वनम् ।
एवमार्त्तप्रलापानां ब्राह्मणानां निशम्य सः ॥ १७ ॥
अवेक्ष्य सहसा रामो रथादवततार ह ।
पद्भ्यामेव जगामाशु सभीतः सहलक्ष्मणः ॥ १८ ॥
सन्निकृष्टपदन्यासो रामो वनपरायणः ।
द्विजाती[न्]हि पदं(दा)ती(र्ती)स्तान् रामश्चारित्रभूषणः ॥O2
न शशाकाग्रणीश्चक्षुः परिमोक्तुमरास्थितः ॥ १९ ॥
गच्छन्तमेव तं दृष्ट्वा वनं संभ्रांतमानसाः ।
ऊचुः परमसंतप्ता रामं वाक्यमिदं द्विजाः ॥ २० ॥

---

4 घ—कर्णयन्ति । O 1 म । O 2 कै, घ, ल ।

अयं ब्राह्मणसंघश्च[5] भवंतमनुगच्छति ।
द्विजाः * स्कंधाधिरूढाभ्यामग्रतो *ऽप्यनुयान्ति हि ॥२१॥
याजिन[6]-मपुच्छानि[7] छत्राण्येतानि यास्यतः ।
पृष्ठतोऽनुप्रयांति त्वां हंसानामिव पंक्तयः ॥ २२ ॥
अनवाप्तातपत्रस्य रश्मिसन्तापितस्य ते ।
पथि छायां करिष्यामः स्वैश्छत्रैर्वाजपेयिकैः ॥ २३ ॥
या हि नः सततं बुद्धि र्वेदमंत्रानुसारिणी ।
त्वत्कृते सा स्मृताऽस्माभिर्वनवासानुसारिणी ॥ २४ ॥
हृदयेष्ववतिष्ठन्ति वेदा ये नः परं धनम् ।
ते यास्यन्ति वनं त्वया त्वद्वाहुबलमाश्रिताः ॥ २५ ॥
न पुनर्निश्चयः कार्यस्त्वत्कृते निश्चिता वयम् ।
वसिष्यन्ति गृहेष्वेव दाराश्चारित्ररक्षिताः ॥ २६ ॥
त्वयि धर्मव्यपेक्षे तु न्याय्यं धर्ममवेक्षितुम् ।
यदि धर्मं न जानामि प्रजानां रक्षणोद्भवम् ॥ २७ ॥
ब्राह्मणा माननीयास्ते प्रजानां हितकाम्यया ।
याचितो ऽसि निवर्तस्व हंसशुक्लशिरोरुहैः ॥ २८ ॥
शिरोभि र्विनयाचारमहीपतनपांसुलैः ।
बहूनां वितता यज्ञा द्विजानां य इहागताः ॥ २९ ॥
तेषां समाप्तिरायत्ता तव वत्स निवर्त्तने ।
भक्तिमन्ति हि भूतानि जंगमाजंगमानि च ॥ ३० ॥

---

5 ल—हि ब्राह्मसंघश्च । * (द्विज—?) * (ऽमग्रयो ?) 6 ल—याजिनां । म—याजि । (याजपेय?) । 7 ल—समुच्छ्रानि । (समुत्थानि) ।

याचन्ते त्वां भृशार्त्तानि कुरु तेषां प्रभो हितम् ।
याचमानेषु तेषु त्वं भक्तिं भक्तेषु दर्शय ॥ ३१ ॥
भक्तानां हि परित्यागस्त्वैव विदितो यथा ।
अनुगन्तुं न शक्ता हि मूलैरुर्वीनिबन्धनैः ॥ ३२ ॥
ऊर्ध्वशाखाः सकरुणं विक्रोशन्तीव पादपाः ।
निश्चेष्टाहारसंचारा वृक्षसकन्धेष्वधिष्ठिताः ॥ ३३ ॥
त्वां पक्षिणोऽपि याचन्ते सर्वभूतानुकम्पितम् ।
एवं विक्रोशतामेव द्विजानां न न्यवर्त्तत ॥ ३४ ॥
तूष्णीमेव ययौ रामो वाग्मी सौमित्रिणा सह ।
गच्छन्नेवाथ सहसा राघवो धर्मवत्सलः ।
ददर्श तमसां तत्र वारयन्तीमिवाग्रतः ॥ ३५ ॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे ब्राह्मणवाक्यं नाम
सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥



4 य—सि ।

[वं-४४]=[अष्टचत्वारिंशः सर्गः]=[दा-४६]

ततः स तमसातीरे वासमाश्रित्य राघवः ।
सीतामुद्दिश्य सौमित्रिमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
प्रथमेयं निशा सौम्य सौमित्रे समुपस्थिता ।
वनवासस्य भद्रं ते नोत्कण्ठितुमिहार्हसि ॥ २ ॥
पश्य शून्यान्यरण्यानि रुदन्तीव समन्ततः ।
यथा निलयसंलीनै र्हीनानि मृगपक्षिभिः ॥ ३ ॥
अयोध्या नगरी शून्या राजधानी पितुर्मम ।
सबालवृद्धा निर्यातानस्मान् शोचति लक्ष्मण[1] ॥ ४ ॥
भरतः खलु धर्मात्मा पितरं मातरं च मे ।
धर्मकामार्थसहितै र्वाक्यैराश्वसयिष्यति ॥ ५ ॥
भरतस्यानृशंसत्वं संचिन्त्याहं पुनः पुनः ।
नानुशोचामि पितरं मातरं चापि लक्ष्मण ॥ ६ ॥
त्वया युक्तं नरव्याघ्र मामनुव्रजता कृतम् ।
ईप्सितव्या हि वैदेह्या रक्षणार्थं सहायता ॥ ७ ॥
अद्भिरेव हि सौमित्रे वसाम्यद्य निशामिमाम् ।
एतद्धि रोचते मह्यं वन्येऽपि विविधे सति ॥ ८ ॥
एवमुक्त्वा तु सौमित्रिं सुमन्त्रमपि राघवः ।
अप्रमत्तस्त्वमश्वेषु भव सूतेत्युवाच ह ॥ ९ ॥
सोऽश्वान् सुमन्त्रः संयम्य भूयस्तं प्रत्युपास्थितः ।
प्रभूतं यवसं दत्त्वा बभूव प्रत्यनन्तरः ॥ १० ॥

---

1 ङ—राघव ।

उपास्य तु शिवां सन्ध्यां दृष्ट्वा रात्रिमुपस्थिताम् ।
रामस्य शय्यां संचक्रे सूतः सौमित्रिणा सह ॥ ११ ॥
तां शय्यां तमसातीरे वृक्षपर्णैः कृतां तदा ।
रामः सौमित्रिमामन्त्र्य सभार्यः संविवेश ह ॥ १२ ॥
प्रक्षालयामास तदा पादौ रामस्य लक्ष्मणः ।
स्वयं सलिलमादाय सीतायाश्चाप्यनन्तरम् ॥ ०१३ ॥
सभार्यं संप्रसुप्तं तं भ्रातरं वीक्ष्य लक्ष्मणः ।०
कथयामास सूताय रामस्य विविधान् गुणान् ॥ १४ ॥
गोकुलाकुलतां नीतं तमसातीरमास्थितः ।
अवसत्तत्र तां रात्रिं रामः प्रकृतिभिः सह ॥ १५ ॥
जाग्रतोरेव सा रात्रिः सारथेर्लक्ष्मणस्य च ।
जगाम तमसातीरे रामस्य ब्रुवतो गुणान् ॥ १६ ॥
उत्थाय चिररात्रे स प्रजाः सुप्ता निशम्य च ।
अब्रवीद्भ्रातरं रामो लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १७ ॥
अस्मद्व्यपेक्षया तात निर्व्यपेक्षास्सुखेष्विमान् ।
वृक्षमूलेषु संसुप्तान् पश्य पौरान् गृहेष्विव ॥ १८ ॥
यथैते निश्चिताः सर्वे यतन्ते ऽस्मन्निवर्तने ।
अपि देहांस्त्यजिष्यन्ति न त्यजिष्यन्ति निश्चयम् ॥ १९ ॥
यावदेव तु संसुप्तास्तावदेव वयं लघु ।
रथमारुह्य गच्छामः पथाऽनेन तपोवनम् ॥ २० ॥
एवमेते निमोक्ष्यन्ति मतिमस्मद्व्यपेक्षणे ।

---

० म ।

अतोऽन्यथाकृते ऽस्माभिर्न तु मोक्ष्यन्ति निश्चयम् ॥ २१ ॥
तात भूयोऽपि नेदानीमिक्ष्वाकुपुरवासिनः ।
स्वपेयुरनुरक्ता मे वृक्षमूलान्युपाश्रिताः ॥ २२ ॥
पौरा ह्यनुगता दुःखाद्विप्रमोच्या नराधिपैः ।
न तु खल्वात्मनो योज्या दुःखेषु पुरवासिनः ॥ २३ ॥
अथाह लक्ष्मणो रामं साक्षाद्धर्ममिव स्थितम् ।
रोचते मे महाप्राज्ञ क्षिप्रमारुह्यतामिति ॥ २४ ॥
ततस्तु सूतस्त्वरितः स्यन्दनेन हयोत्तमान् ।
योजयित्वा तु रामाय प्राञ्जलिः प्रत्यवेदयत् ॥ २५ ॥
मोहनार्थं तु पौराणां सूतं रामो ऽब्रवीद्वचः ।
उदङ्मुखः प्रयाहि त्वं रथमादाय सारथे ॥ २६ ॥
मुहूर्तं त्वरितं गत्वा निवर्तय रथं पुनः ।
यथा च न विदुः पौरास्तथा कुरु समाहितः ॥ २७ ॥
रामस्य वचनं श्रुत्वा तथा चक्रे स सारथिः ।
प्रत्यागम्य तु रामाय स्यन्दनं प्रत्यवेदयत् ॥ २८ ॥
स स्यन्दनमधिष्ठाय राघवः सपरिच्छदः ।
शीघ्रगामाकुलावर्तां तमसामतरन्नदीम् ॥ २९ ॥
संतीर्य च महाबाहुः श्रीमच्छिन्नमकण्टकम् ।
प्रपेदे तमसामार्गमभयं शुभदर्शनम् ॥ ३० ॥
प्रबुध्य पौरास्तु ततो निशाक्षये रथस्य तत्संदद्दृशुर्निवर्तनम् ।
नृपात्मजः सोऽनुगतः पुरीमिति व्यपेक्षया ते नगरं पुनर्ययुः ॥३१॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे तमसातीरनिर्यासो नाम अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥

[वं-४५]=[एकोनपञ्चाशः सर्गः]=[दा-४८।२]

अनुगम्य निवृत्तानां रामं नगरवासिनाम् ।
तद्गतानीव सत्त्वानि बभूवुर्गतचेतसाम् ॥ १ ॥
स्वं स्वं ते गृहमासाद्य पुत्रदारैः समागताः ।
अश्रूणि मुमुचुः सर्वे सुस्वरं बाष्पविह्वलाः ॥ २ ॥
न स्म सद्योमृतान् कश्चित् सुप्रियानपि बान्धवान् ।
तथा शोचत्ययोध्यायां यथा रामविवासने ॥ ३ ॥
न च श्रीराविशत्कञ्चिन्न चैव जुहुवुर्द्विजाः ।
ब्रह्म न प्राभवत्किञ्चिन्न च धर्मोऽभ्यवर्त्तत ॥ ४ ॥
व्यनदन्बाष्पमुत्सृज्य केचित्तत्र सुदुःखिताः ।
शयनेष्वपतंश्चान्ये निकृत्ता इव पादपाः ॥ ५ ॥
इष्टं दृष्ट्वा च नाहृष्यन् विपुलं वा धनागमम् ।
पुत्रं प्रथमजं दृष्ट्वा जननी नाभ्यनन्दत ॥ ६ ॥
कुले कुले रुदन्त्यश्च भर्त्तारं गृहमागतम् ।
नितुदन्ति सुदुःखार्त्ता वाग्भिस्तोत्रैरिव द्विपम् ॥ ७ ॥
किं नु तेषां गृहैः कार्यं किं दारैः किं धनेन वा ।
प्राणैर्वा किं सुखे वापि ये न पश्यन्ति राघवम् ॥ ८ ॥
स एकः पुरुषो लोके लक्ष्मणः सह सीतया ।
यो ऽनुगच्छति काकुत्स्थं रामं परिचरन्वने ॥ ९ ॥
आपगाः कृतपुण्याश्च पद्मिन्यश्च वने शुभाः ।
यासु पास्यति काकुत्स्थो विगाह्य सलिलं शुचि ॥ १० ॥
निचित्रकुसुमापीडा मञ्जरीमधुधारिणः ।

पादपाः पर्वताग्रस्था रमयिष्यन्ति राघवम् ॥ ११ ॥
अकाले ह्यपि मुख्यानि मूलानि च फलानि च ।
दर्शयिष्यन्ति वृक्षेषु गिरीणां राममागतम् ॥ १२ ॥
काननं वापि शैलं वा यं रामो ऽधिगमिष्यति ।
प्रियातिथिमिव प्राप्तं नैनं शक्ष्यति नार्चितुम् ॥ १३ ॥
विचित्रकुसुमैर्वृक्षैः लम्बमञ्जरीधारिभिः ।
विदर्शयन्तो विविधान् धातूंश्चित्रांश्च निर्झरान् ॥ १४ ॥
रमयिष्यन्ति काकुत्स्थ मटव्यश्चित्रकाननाः ।
आपगाश्च तथारूपाः सानुमन्तश्च पर्वताः ॥ १५ ॥
स हि भर्ता सशैलाया वसुमत्या महायशाः ।
धर्मपालश्च लोकस्य वीरो दशरथात्मजः ॥ १६ ॥
यत्र रामो भवेद्भर्ता नास्ति तत्र पराभवः ।
स हि नाथोऽस्य जगतः स गतिः स परायणम् ॥ १७ ॥
युष्माकं राघवो ऽप्यर्थं योगक्षेमं करिष्यति ।
तूर्णं तमनुगच्छामो यावद्दूरं न गच्छति ॥ १८ ॥
पादच्छायासुखं तस्य संश्रयामाकुतोभयाः ।
वयं परिचरिष्यामः सीतां यूयं च राघवम् ॥ १९ ॥
इति पौरस्त्रियो भर्तॄन् दुःखार्तास्तांस्तदाऽब्रुवन्[1] ।
युष्माकं राघवो रक्षन् योगक्षेमं करिष्यति ॥ २० ॥
सीता नारीजनस्यास्य योगक्षेमं करिष्यति ।[O]
स हि शूरो महाबाहुः पुत्रो दशरथस्य वै ॥ २१ ॥
को न[1] तेन प्रतीयेत वामं नोद्विग्नमानसः ।

1 ल-दुःखार्तास्तान्समब्रुवन् । च-सुदुःखार्तास्तदाऽब्रुवन् । O ल ।

संप्रीयेतामनोज्ञेन सोत्कण्ठितजनेन च ॥ २२ ॥
कैकेय्या यदिदं राज्यं स्यादधर्म्यमनाथवत् ।
नात्र नो जीवितेनार्थः कुतः पुत्रैः कुतो धनैः ॥ २३ ॥
या पुत्रं पार्थिवेन्द्रस्य प्रव्राजयति निर्घृणा ।
इच्छेद्यदि महाराजस्तं राज्येनाभिषेचितुम् ॥ २४ ॥
न हि जातु चिरं जीवेद्राजा परमदुःखितः ।
गते दशरथे स्वर्गमधर्मं प्रतिपत्स्यते ॥ २५ ॥
यया[3] पुत्रश्च भर्ता च त्यक्तावैश्वर्यकारणात् ।
न सा संरक्षितुं शक्ता कैकेयी कुलपांसनी ॥ २६ ॥
कैकेय्या न वयं राज्ये भृतका निवसेम हि ।
जीवन्त्यां साधु जीवामः पुत्रैरपि शपामहे ॥ २७ ॥
न हि प्रव्राजिते[4] रामे जीविष्यति महीपतिः ।
मृते दशरथे व्यक्तं विलापस्तदनन्तरम् ॥ २८ ॥
मिथ्या प्रव्रजितो रामः सीता लक्ष्मण एव च ।
भरताय निसृष्टाः[5] स्म[6] क्षुद्राय (रुद्राय) पशवो यथा ॥ २९ ॥
ते विषं पिबतालोड्य क्षीणपुण्याः सुदुर्गताः[7] ।
राघवं चानुगच्छध्वं प्रणाशं मा ऽनुगच्छत[8] ॥ ३० ॥
विलेपुरेनमार्त्तास्ता नगरे नगरस्त्रियः ।
इति स्म ता रामनिमित्तमातुरा यथा पितुर्भ्रातरि वा विवासिते ।
विलप्य दीना रुरुदुः सुदुःखिताः सुतैर्हि तासामधिकः स राघवः ३१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे नगरस्त्रीविलापो
नाम एकोनपंचाशः सर्गः ॥ ४९ ॥

---

2 ब, म–नु । 3 ब, ळ, म यथा । 4 ब, म–प्रवाजिते । 5 ळ–विदिष्टा । 6 कै–स । म सो । 7 ब—सुदुर्गमा । 8 म—मा (मा?) धिगच्छत ।

[वं-४६]=[पञ्चाशः सर्गः]=[दा-४९]

रामोऽपि रात्रिशेषेण तेनैव महदन्तरम् ।
जगाम पुरुषव्याघ्रः पितुराज्ञामनुस्मरन् ॥ १ ॥
तथैव गच्छतस्तस्य प्रभाता रजनी शुभा ।
उपस्थाय ततः सन्ध्यां तथैवाभ्युदिते रवौ ॥ २ ॥
तं स्यन्दनमधिष्ठाय प्रतस्थे राघवस्तदा ।
गोमती माकुलावर्तामतरद्व महानदीम् ॥ ३ ॥
तामुत्तीर्य महाबाहुः श्रीमच्छिवमकर्दमम् ।
प्रतिपेदे तमसामार्गमनुरूपं शिवं शुभम् ॥ ४ ॥
ग्रामान्सुकृष्टसीमांश्च पुष्पितानि वनानि च ।
पश्यन्नेव ययौ शीघ्रैः शनैरेव हयोत्तमैः ॥ ५ ॥
शृण्वन्वाचो मनुष्याणां ग्रामसंवासवासिनाम् ।
राजानं धिग् दशरथं कामस्य वशवर्तिनम् ॥ ६ ॥
नृशंसा वतकैकेयी पापा पापानुबन्धिनी ।
तीक्ष्णा सा भिन्नमर्यादा क्रूरे कर्मणि वर्तते ॥ ७ ॥
या पुत्रमीदृशं राज्ञः प्रवासयति धार्मिकम् ।
अरण्याय महात्मानं सानुक्रोशं जितेन्द्रियम् ॥ ८ ॥
एता[1] वाचो मनुष्याणां पथि ग्रामेषु राघवः ।
शृण्वन्नपि ययौ वीरः कौशल्यानन्दवर्धनः ॥ ९ ॥
गोमतीं चाप्यतिक्रम्य राघवः शीघ्रगैर्हयैः ।
मयूरहंसाभिरुतां ससार सरयूं नदीम् ॥ १० ॥

---

1 म—एवं ।

स मही मनुना राज्ञा दत्ता चेक्ष्वाकवे पुरा ।
स्फीतराष्ट्रवती रामो वैदेहै समदर्शयत् ॥ ११ ॥
सूत इत्येवमाभाष्य सारथिं तमभीक्ष्णशः ।
मत्तहंसस्वनः श्रीमानुवाच पुरुषर्षभः ॥ १२ ॥
कदाऽहं पुनरागत्य सरय्वाः सलिले शुभे ।
मृगयां पर्यटिष्यामि पित्रा मात्रा च सङ्गतः[2] ॥ १३ ॥
इत्येवमभिकांक्षामि मृगयां सरयू तटे ।
गतिर्ह्येषा परा लोके राजर्षिगणसेविता ॥ १४ ॥
स तमध्वान मिक्ष्वाकुः सर्वं मधुरजल्पकः ।
त तमर्थमभिप्रेत्य ययौ वाक्यमुदीरयन् ॥ १५ ॥
गत्वा च देवसङ्काशः शीघ्रं शीघ्रपराक्रमः ।
अथाससाद सायाह्ने शृङ्गवेरपुरं महत् ॥ १६ ॥
निगाह्य सरयूं रम्यां वीरो लक्ष्मणपूर्वजः ।
अयोध्याभिमुखो रामः प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १७ ॥
सोच्छ्वासहृदयः पश्यन्सीतां लक्ष्मणमेव च ।
आपृच्छामि पुरीं[3] श्रेष्ठे काकुत्स्थपरिपालिते ॥ १८ ॥
देवता भवनानि त्वं पालयाना[4] वसान्तिनः* ।
निवृत्तवनवासस्त्वा कृतज्ञो जगतीपतिः ॥ १९ ॥
पुनर्द्रक्ष्यामि पित्रा च मात्रा च सह संगतः ।
ततो रुधिरताम्राक्षो भुजमुद्यम्य दक्षिणम् ॥ २० ॥

---

2 म—संस्कृता । 3 घ, म—पुरे । ल—पुरि । 4 कै, य—"पालय " म—"पाल " ।

उवाचाश्रुमुखो दीनो रामो जानपदान्[5] वचः ।
अनुक्रोशो दया चैव युष्माभिर्दर्शितो मयि ॥ २१ ॥
चिराद्दुःखेन पापी[6]-गम्यतामर्थसिद्धये ।
ते प्रणम्य महात्मानं कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ॥ २२ ॥[O]
विनदन्तो[7] जना घोरं न्यवर्तन्त क्वचित् क्वचित् ।
तथा विलपतां तेषामतृप्तानां च राघवः ॥ २३ ॥
अचक्षुर्विषयं प्रागाद्यथार्कः क्षणदागमे ।
ततो धान्यधनोपेतां दानशीलजनावृताम्[8] ॥ २४ ॥
अकुतश्चिद्भयां क्षेमां चैत्ययूपशतांकिताम् ।
उद्यानोपवनोपेतां संपन्नतरगोरसाम् ॥ २५ ॥
तुष्टपुष्टजनाकीर्णां गोकुलाकुलशोभिताम् ।
प्रेक्षणीयां नरेन्द्राणां ब्रह्मघोषविनादिताम् ॥ २६ ॥
रथेन मनुजव्याघ्रः कोमलामत्यवर्तत[9] ।
संबद्धनिस्त्रिंशमुदारसत्त्वं चीरोत्तरासङ्गधरं युवानम् ।
दृष्ट्वा ऽभिजग्मुर्मुदिता निषादा गुहं पुरस्कृत्य सुकृष्णवर्णाः[10] ॥२७॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे शृङ्गवेरपुरोपगमनं
नाम पञ्चाशः सर्गः ॥ ५० ॥



5 ब, ल—जनपदान् । 6 ल—पापेन । O न । 7 ब—विद० । 8 कै—०र्दताम् । 9 कै, ल—कौसल्यां० । म—कोमल्यां० । 10 ब-सद्वर्ण० ।

[वं-४७]=[एकपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५० । १२]

ततस्त्रिपथगा गङ्गां शीततोयामशैवलाम् ।
ददर्श राघवः पुण्या दिव्यामृषिनिषेविताम् ॥ १ ॥
पवित्रसलिलस्पर्शा हिमवच्छैलसंभवाम् ।O
स्वर्गारोहणनिःश्रेणिं महर्षिगणसेविताम् ॥ २ ॥
समुद्रमहिषीं मिष्टां सारसक्रौञ्चनादिताम् ।
मृगयूथैः पिबद्भिश्च वारणैश्चाभिनादिताम् ॥O ३ ॥
तामूर्मिकलिलावर्तामन्ववेक्ष्य स राघवः ।
सुमन्त्रमब्रवीत्सूतमिहैवाद्य वसामहे ॥ ४ ॥
अविदूरे ह्यय नद्या बहुपुष्पप्रवालवान् ।
सुमहानिङ्गुदीवृक्षो वसामात्रैव सारथे ॥ ५ ॥
लक्ष्मणश्च सुमन्त्रश्च बाढमित्येव राघवम् ।
उक्त्वा तमिङ्गुदीवृक्षं सुमन्त्रोऽभिययौ हयैः ॥ ६ ॥
रामोऽपि यात्वा तं वृक्ष रम्य मिक्ष्वाकुनन्दनः ।
रथादवातरत् तस्मात्ससीतः सहलक्ष्मणः ॥ ७ ॥
सुमन्त्रो ऽप्यवतीयव स्नापयित्वा हयोत्तमान् ।
वृक्षमूलगत राममुपतस्थे कृताञ्जलिः ॥ ८ ॥
तत्र राजा निषादाना रामस्य दयितः सखा ।
धार्मिकः सत्यसन्धश्च गुहो नाम महाबलः ॥ ९ ॥
स श्रुत्वा पुरुषव्याघ्रं रामं विषयमागतम् ।
वृद्धैः परिवृतोऽमात्यै र्ज्ञातिभिश्चाभ्युपागमत् ॥ O१० ॥

O म । 1 थ—०वर्तां ममन्वेक्ष्य । 2 थ-०दयतरत् । Oम ।

ततो निषादाधिपतिं दृष्ट्वा दूरादवस्थितम् ।O1
सह सौमित्रिणा रामः समागच्छद्गुहंप्रति ॥ ११ ॥
तमार्तं संपरिष्वज्य गुहो वचनमब्रवीत् ।
यथा ऽयोध्या तथेदं ते राम किं करवामहे ॥ १२ ॥
स शुचीन्यन्नपानानि गुणवन्ति च राघवे ।
अर्घ्यं चोपानयत्क्षिप्रं वाक्यं चेदमुवाच ह ॥ १३ ॥
भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च लेह्यं च समुपस्थितम् ।
शयनानि च मुख्यानि वाजिनां यवसं तथा ॥ १४ ॥
स्वागतं ते महाबाहो तवेयंO निखिलाO महीO ।
वयं प्रेष्या भवान् भर्त्ता साधु राज्यं प्रशाधि नः ॥O१५ ॥
आज्ञापयO महाबाहोO यथेष्टं रघुनन्दन ।
यथा स्वकं तथैवेदं पुरं किं करवाणि ते ॥ १६ ॥
गुहमेवं ब्रुवाणं तु राघवः प्रत्युवाच ह ।
अर्चिता मानिताश्चैव सर्वथा भवता वयम् ॥ १७ ॥
पद्भ्यामभिगतं चैव स्नेहादाघ्राय मूर्धनि ।
भुजाभ्यां साधुपीनाभ्यां पीडयन् वाक्यमब्रवीत् ॥ १८ ॥
दिष्ट्येह गुह पश्यामि त्वामरोगं सबान्धवम् ।
अपि ते कुशलं राष्ट्रे मित्रेषु च धनेषु च ॥ १९ ॥
यदिदं भवता किञ्चित्प्रीत्यर्थमुपकल्पितम् ।
सर्वं तदनुजानामि न कालो मे प्रतिग्रहे ॥ २० ॥
चतुर्दशसमाः सौम्य वत्स्यन्तं पितुराज्ञया ।

O1 म । Oव । 3 व—०भवगतं ।

कुशचीराम्बरधरं फलमूलाशनं च माम् ॥ २१ ॥
विद्धि प्रणिहितं धर्मे तापसं वनगोचरम् ।
अश्वानां यवसेनार्थी नाहमन्येन केनचित् ॥ २२ ॥
एतावताऽहं भवता भविष्यामि सुपूजितः ।
एते हि दयिता राज्ञः पितुर्दशरथस्य मे ॥ २३ ॥
एतैः सुपूजितैरश्वैर्भविष्याम्यहमर्चितः ।
स एवमुक्तो रामेण गुहो गहनगोचरः ॥ २४ ॥
अश्वानां प्रतिपानं[4] च यवसं चैव सोऽन्वशात् ।
गुहस्तत्रैव पुरुषान् दीयतामिति सत्वरम् ॥ २५ ॥
ततश्चीरोत्तरासङ्गः सन्ध्यामन्वास्य पश्चिमाम् ।
जलमेवाददे रामो लक्ष्मणेनाहृतं स्वयम् ॥ २६ ॥
तस्य भूमौ शयानस्य पादौ प्रक्षाल्य लक्ष्मणः ।
सभार्यस्य ततः पश्चात्तस्थौ वृक्षमुपाश्रितः[5] ॥ २७ ॥
गुहोऽपि सह सूतेन सौमित्रिमनुभाष्य च[6] ।
अन्वजाग्रत्ततो राममप्रमत्तो धनुर्धरः ॥ २८ ॥
तथा शयानस्य च तस्य धीमतो यशस्विनो दाशरथेर्महात्मनः ।
अदृष्टदुःखस्य सुखोचितस्य[7] तदा व्यतीयाय सुखेन शर्वरी ॥२९॥
इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे गुहाश्रमनिवासो
नाम एकपञ्चाशः सर्गः ॥ ५१ ॥

---

4 पै-प्रतिमाना । य, ल-प्रतिमानं । म-प्रतिमानश्च । 5 म—०मुपागतं ।
6 म—ह । 7 म—तथाधितस्य ।

[बं-४८]=[द्विपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५१]

तं जाग्रतमदम्भेन भ्रातुरर्थे महात्मनः ।
गुहः परमसन्तप्तो लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥
इयं तात सुखा शय्या त्वदर्थमुपकल्पिता ।
प्रत्याश्वसिहि साध्वस्यां राजपुत्र निशामिमाम् ॥ २ ॥
न हि रामात्प्रियतरो ममास्ति भुवि कश्चन ।
ब्रवीम्येतदहं सत्यं वीर सत्येन ते शपे ॥ ३ ॥
अस्य प्रसादादाशंसे लोके ऽस्मिन्सुमहद्यशः ।
धर्मावाप्तिं च विपुलामर्थसिद्धिं च केवलाम् ॥ ४ ॥
सोऽहं प्रियतमं[1] रामं शयानं सह सीतया ।
रक्षिष्यामि धनुष्पाणिः सर्वतो ज्ञातिभिर्वृतः ॥ ५ ॥
न मे ह्यविदितं किञ्चिद्वने ऽस्मिंश्चरतः[2] सदा[2] ।
चतुरङ्गं ह्यपि बलं सुमहत्प्रसहाम्यहम् ॥ ६ ॥
लक्ष्मणस्तमुवाचेदं रक्ष्यमाणास्त्वयाऽनघ ।
अनुनीता वयं सर्वे धर्ममेवानुपश्यता[3] ॥ ७ ॥
कथं हि राघवं* भूमौ शयानं* सह सीतया ।
शक्या निद्रा मया लब्धुं जीवितं वा सुखानि वा ॥ ८ ॥
यो न देवासुरैः सर्वैः शक्यः प्रसहितुं युधि ।
तं पश्य गुह संविष्टं तृणेषु सह भार्यया ॥ ९ ॥
यो मात्रा तपसा लब्धो विविधैश्चापि याचितैः ।

---

1 म—०तरं । 2 म—०तरस्सदा । 3 म—०पश्यत । *(राघवे ?) ।
*(शयाने ?) ।

एको दशरथस्यैष पुत्रः सदृशलक्षणः[4] ॥ १० ॥
अस्मिन् प्रव्राजिते राजा न चिरं वर्तयिष्यति ।
विधवा मेदिनी नूनं क्षिप्रमेव भविष्यति ॥ ११ ॥
विनद्य च महानादं श्रमेण च युताः स्त्रियः ।
मूका इव स्थिता नूनमद्य राजनिवेशने ॥ १२ ॥
कौशल्या चैव राजा च तथैव जननी मम ।
नाशंसे[5] यदि जीवन्ति सर्वे ते शर्वरीमिमाम् ॥ १३ ॥
जीवेदपि हि मे माता शत्रुघ्नस्यान्ववेक्षया ।
एतद्दुःखं तु कौशल्या विवत्सा न सहिष्यति ॥ १४ ॥
अनुरक्तजनाकीर्णा शोकदुःखसमन्विता ।
रामव्यसनसन्तप्ता सा पुरी विनशिष्यति ॥ १५ ॥
चिरसंकल्पितं नूनमनवाप्य मनोरथम् ।
रामे राज्यमनिक्षिप्य पिता मे विनशिष्यति ॥ १६ ॥
सिद्धार्थः पितरं वृद्धं तस्मिन्काले ह्युपस्थिते ।
प्रेतकार्येषु सर्वेषु संस्मरिष्यति राघवः ॥ १७ ॥
रम्यचत्वरसंस्थानां सुविभक्तचतुष्पथाम् ।
हर्म्यप्रासादसंबद्धां गणिकागणशोभिताम् ॥ १८ ॥
रथाश्वगजसंबाधां तूर्यनादनिनादिताम्[6] ।
सर्वकल्याणसंपन्नां हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ १९ ॥
आरामोद्यानसंपन्नां समाजोत्सवशालिनीम् ।
सुखिनो विचरिष्यन्ति राजधानीं पितुर्मम ॥ २० ॥

---

4 कै, म—०लक्षणः । 5 कै, म, ल—नाशा मे । 6 म—विना० ।

अपि सत्यप्रतिज्ञेन सार्द्धं कुशलिनो वयम् ।
निवृत्ते वनवासेऽस्मिन्नयोध्यां प्रविशेम हि ॥ २१ ॥
परिदेवयमानस्य दुःखार्तस्य महात्मनः ।
तिष्ठतो राजपुत्रस्य शर्वरी साऽत्यवर्तत[7] ॥ २२ ॥
चिन्ता[8]–ग्रासस्तु सौमित्रि र्निद्रया परिवर्जितः ।
सपत्न्या वेश्म ' कान्तः संकेतप्रतिलब्धया ॥ २३ ॥
रामोपि सह वैदेह्या भार्यया ह्यनुरूपया ।
एकस्मिन्संस्तरे सुप्तः परिणामयितुं निशाम् ॥ २४ ॥
उपधाय बृहन्मूलं पादपस्य यदृच्छया ।
न ह्येवास्य प्रसुप्तस्य निद्रा नेत्रे ह्युपारुधत् ॥ २५ ॥
विप्रलंभश्च राज्यस्य गृहत्यागो वनाश्रयः ।
सममेव त्रयं ताद्धि निद्रां तस्य जहार ह ॥ २६ ॥
तथा तु तस्मिन्ब्रुवति प्रजाहितं नरेन्द्रपुत्रे गुरुसौहृदाद्दृढः ।
मुमोच बाष्पं व्यथयाऽभिपीडितो जरातुरो नाग इव श्वसन्बली ।२७।
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्काण्डे लक्ष्मणविलापो
नाम द्विपञ्चाशः सर्गः ॥ ५२ ॥

---

7 म—सा न्यवर्तत । ल—साऽभ्यवर्तत । 8 म—चिंत्या । ल—चिंतां ।

[वं-४९]=[त्रिपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५२]

प्रभातायां तु शर्वर्यां पृथुवक्षा महाभुजः ।
उवाच रामः सौमित्रिं लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १ ॥
भास्करोदयकालोऽयं गता भगवती निशा ।
असौ सुहृष्टो विहगः कोकिलस्तात कूजति ॥ २ ॥
बर्हिणां चैव निर्घोषः श्रूयते नदतां वने ।
तरामो जाह्नवीं सौम्य शीघ्रगां सागरङ्गमाम् ॥ ३ ॥
विज्ञाय रामस्य मतं सौमित्रिर्मित्रनन्दनः ।
गुहमामन्त्र्य सूतं च सोऽतिष्ठद्भ्रातुरग्रतः ॥ ४ ॥
वस्तस्नायुसमायुक्तां[1] कर्णधारवतीं दृढाम् ।
सुप्रतारां समे तीर्थे क्षिप्रं नावमुपोहत ॥ ५ ॥
तं निशम्य समादेशं सन्निवृत्य गणो महान् ।
उपोह्य नावं रुचिरां गुहाय प्रत्यवेदयत् ॥ ६ ॥
ततः स प्रांजलिर्भूत्वा गुहो वचनमब्रवीत् :
उपस्थितेयं नौर्देव भूयः किं करवाणि ते ॥ ७ ॥
ततः कलापौ[2] सन्नह्य खड्गौ बध्वा च धन्विनौ ।
जग्मतुर्येन वै गङ्गां सीतया सह राघवौ ॥ ८ ॥
राममेव तु धर्मज्ञमभिगम्य विनीतवत् ।
किमहं करवाणीति सूतः प्राञ्जलिरब्रवीत् ॥ ९ ॥
अथाब्रवीद्दाशरथिः[3] सुमंत्रं मंत्रिसत्तमम् ।

---

1 ल—वधास्ना० । घ—ध . स्ना० । म–यथास्ना० । 2 ल–कपालौ ।
3 धै, व—०दाग्थ. ।

स्पृशन्करेण धर्मज्ञो दक्षिणं दक्षिणेन तम् ॥ १० ॥
गच्छ सौम्य निवर्तस्व कृतमेतावता मम ।
पद्भ्यामेव गमिष्यामि सीतया सहितो वनम् ॥ ११ ॥
आत्मानं त्वभ्यनुज्ञातमथाज्ञाय स सारथिः ।
सुमन्त्रः पुरुषव्याघ्रमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १२ ॥
अतर्कितोऽयं लोकेषु पुरुषेणेह केनचित् ।
तव सभ्रातृभार्यस्य वासः प्राकृतवद्वने ॥ १३ ॥
न मन्ये ब्रह्मचर्येऽस्ति स्वधीते वा फलं भुवि ।
मार्दवार्जवयोर्वापि त्वां चेद्व्यसनमागतम् ॥ १४ ॥
सह राघववैदेह्या भ्रात्रा च त्वं वने वसन् ।
रतिं संप्राप्स्यसे वीर त्रींल्लोकान्विजयन्निव ॥ १५ ॥
वयं खलु हता वीर ये त्वया नित्यसान्त्विताः ।
कैकेय्या वशमेष्याम पापाया दुःखभागिनः ॥ १६ ॥
इति ब्रुवन्नात्मसमः सुमन्त्रः सारथिस्तदा ।
दृष्ट्वा वनगतं रामं रुरोद भृशदुःखितः ॥ १७ ॥
ततस्तं विगते बाष्पे सूतं स्पृष्टोदकं शुचिम् ।
रामः सुमधुरं वाक्यं पुनः पुनरुवाच ह ॥ १८ ॥
इक्ष्वाकूणां त्वया तुल्यः सुहृदन्यो न विद्यते ।
यथा दशरथो राजा नानुशोचेत्तथा कुरु ॥ १९ ॥
कामोपहतचेता हि वृद्धश्च जगतीपतिः ।
मद्वियोगाच्च सन्तप्तस्तस्मादेतद्ब्रवीमि ते ॥ २० ॥

घ, म, ल—मातृवा ।

यद्यदाज्ञापयेत् किञ्चित् स महात्मा महाद्युतिः ।
कैकेय्याः प्रियकामार्थं तत्कार्यमविशङ्कया ॥ २१ ॥
एतदर्थं हि राज्यानि प्रशंसन्ति नराधिपाः ।
यदेषां सर्वकालेषु[5] वचो न प्रतिहन्यते ॥ २२ ॥
तद्यथा स महाराजो नालीकमधिगच्छति ।
न[6] चानुचिन्तयति मां[6] सुमन्त्र कुरु तत्तथा ॥ २३ ॥
सूत मद्वचनात्तातं वसिष्ठं च तपस्विनम् ।
उपाध्यायांश्च संप्राप्य ब्रूयास्त्वमभिवादनम् ॥ २४ ॥
कैकेयीं च सुमित्रां च याश्चान्या मातरो मम ।
तां चाल्पभाग्यां कौशल्यां यदि जीवति मां विना ॥ २५ ॥
अदृष्टदुःखं राजानं वृद्धमार्यं जितेन्द्रियम् ।
ब्रूयास्त्वमभिवाद्यैनं मम हेतोरिदं वचः ॥ २६ ॥
न विषादो न सन्तापः कर्तव्यो रामकारणात् ।
लक्ष्मणे वा नरव्याघ्रे सीतायां वा नराधिप ॥ २७ ॥
अपि वर्षसहस्राणि तातस्य वचनाद्वने ।
निहरेम स्थिता धर्मे स्वर्गलोक इवामराः ॥ २८ ॥
व्यसनं हि पितुः पुत्रात् कोऽन्यो व्यपनयिष्यति ।
अणु वा यदि वा स्थूलं धान्वन्तरिरिव व्रणम् ॥ २९ ॥
यस्तु पुत्रो न वचनं पितुः कुर्यादतन्द्रितः ।
आत्मानं पातयेचासौ द्रव्यवानिव निष्क्रियः ॥ ३० ॥
नरके वा पतेद्रामो ज्वलन्तं वा हुताशनम् ।

---

5 थ, ल—सर्वकामेषु । म—सर्वकार्येषु । 6 ल ननु (न) चिंतयति मां कार्यं ।

न तु कुर्वीत तत्कर्म येन वाच्यः पिता भवेत् ॥ ३१ ॥
नैवाहं शोचितव्यस्ते न सीता न च लक्ष्मणः ।
अयोध्यायाश्च्युताः स्मेति निवत्स्यामोऽपि वा वने ॥३२॥
चतुर्दशसु वर्षेषु व्यतीतेषु पुनः पुनः ।
लक्ष्मणं मां च सीतां च द्रक्ष्यमे क्षिप्रमागतान् ॥ ३३ ॥
एवमुक्त्वा महाराजं कौशल्यां मातरं मम ।
अन्याश्च देवीः महिताः कैकेयीं च पुनः पुनः ॥ ३४ ॥
ब्रूयाः मर्वं त्वमारोग्यमथ पादाभिवन्दनम् ।
सूत मद्वचनादेव मीताया लक्ष्मणस्य च ॥ ३५ ॥
विज्ञाप्यश्च महाराजो भरतं शीघ्रमानय ।
राज्ये चैवाभिषेक्तव्यः क्षिप्रमेव नरर्षभः ॥ ३६ ॥
अभिषिक्ते च भरते यौवराज्याय धार्मिके ।
स्वात्मसन्तापजं दुःखं न त्वामभिभविष्यति ॥ ३७ ॥
भरतश्चापि वक्तव्यो यथा राजनि वर्तसे ।
तथा मातृषु वर्तेथाः सर्वास्वेवाविशेषतः ॥ ३८ ॥
यथैव तव कैकेयी सुमित्रापि तथैव ते ।
तथैव तव कौशल्या मम माता विशेषतः ॥ ३९ ॥O
प्रशास्त्विमां गां भरतस्य माता प्रीता सपुत्रा[8] नृपतेः प्रतीता ।
संप्रीयते केकयराजपुत्री महावने नो विनियोज्य वासम् ॥ ४० ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सूतसमादेशो
नाम त्रिपञ्चाशः सर्गः ॥ ५३ ।

---

7 कै, ख, ल—पितुर्भवेत् । O म । 8 म, ल—सुपुत्र ।

[वं—५०]=[चतुःपञ्चाशः सर्गः]

एवं सन्दिशतस्तस्य राघवस्य महात्मनः ।
लक्ष्मणो ऽन्तरमासाद्य सूतं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
कैकेयीं प्रतिसंरब्धो निःश्वसन् भ्रुकुटीमुखः ।
अमर्षा रक्तया दृष्ट्या वसुधामवलोकयन् ॥ २ ॥
ममापि वचनात् सूत वक्तव्यो भवता[1] नृपः ।
प्रणामं शिरसा कृत्वा बहुमानात्पुनः पुनः ॥ ३ ॥
केनायमपराधेन राघवो धर्मवत्सलः ।
गुणज्येष्ठो[2] मम ज्येष्ठो मम भ्राता विवासितः ॥ ४ ॥
सर्वथा भवता राजन् कैकेयीं[4] परिरक्षता[3] ।
नृशंसं च यशोघ्नं च सुमहद्दुष्कृतं कृतम् ॥ ५ ॥
कैकेय्या वचनं श्रुत्वा नृशंसायाः सुदारुणम् ।
पक्षिनघदयं क्षिप्तः पुत्रः किं नाम तत्कृतम् ॥ ६ ॥O
प्रशान्तश्चार्यशीलश्च सर्वभूतप्रियंवदः ।
रामः किमकरोत्पापं त्यक्तोऽयं यत्त्वया वने ॥ ७ ॥
पितृपैतामहं राज्यं प्रतिज्ञां परिरक्षता[5] ।
भयाद् वा यदि वा[6] दत्तमत्र स्वार्थे भवान् प्रभुः ॥ ८ ॥
न तु प्रभवसे त्यक्तुमपराधं विना सुतम् ।
स्त्रीनिधेयतया राजन् गुणवन्तं विशेषतः ॥ ९ ॥
यदपत्येन कर्त्तव्यं यशो धर्मं च रक्षता ।

---

1 कै, ग, ल—भवतो । 2 म—गुणश्रेष्ठो । 3 कै, ग, ०रक्षिता । 4 ग, ल—कैकेयी । 5 कै, म—०रक्षिता । 6 म—ने । Oय ।

तदकर्त्तव्यमप्येतद्राघवेनोपपादितम् ॥O१० ॥
पित्रा यदपि कर्त्तव्यं यशो धर्मं च रक्षता ।O
अनुरूपं च युक्तं च न त्वया तदनुष्ठितम् ॥ ११ ॥
तदस्मान् स्वयमुत्सृज्य स्नेहेन सह पार्थिव ।
शोचितुं नार्हसि पुनः स्वयं पीत्वेव वारुणीम् ॥ १२ ॥
त्वद्विधा हि महात्मानो महाभागा नरर्षभाः ।
परितापैर्न युज्यन्ते चिन्त्य कार्यमनुष्ठितम् ॥ १३ ॥
लक्ष्मणं त्वभिसंक्रुद्धं ब्रुवाणं परुषं वचः ।
विनिवार्याब्रवीद्रामः सूतं दीनमधोमुखम् ॥ १४ ॥
लक्ष्मणो ऽयमभिक्रुद्धः सुमन्त्र यदभाषत ।
परुषं तन्न संश्राव्यो भवता वसुधाधिपः ॥ १५ ॥
वृद्धः करुणवेदी च मत्प्रवासाच्च शोकवान् ।
सहसा परुषं श्रुत्वा सन्त्यजेदपि जीवितम् ॥ १६ ॥
सुमन्त्र परुषं तस्मान्न वक्तव्यो जनाधिपः ।
विप्रियाण्यनुजीव्याणि न पश्यन्ति भवद्विधाः ॥ १७ ॥
न चास्मासु गतं स्नेहं त्यक्तवान् पृथिवीपतिः ।
सत्यपाशेन संबद्धः स्नेहस्त्वस्य न लुप्यते ॥ १८ ॥
कैकेय्या वरदानेन पिता मे ननु मोहितः ।
मां वने त्यक्तवान् पुत्रमवशः सत्ययन्त्रितः ॥ १९ ॥
मुनिवेशधरः क्रुद्धो लक्ष्मणोऽयममर्षितः ।
क्रूरं किमिव न ब्रूयात्परिहार्यं त्वया तु तत् ॥ २० ॥

O म ।

सर्वदैव प्रियं वाच्यः प्रियार्हो नृपतिस्त्वया ।
अभिवादनपूर्वं च कुशलं कुशलो ह्यसि ॥ २१ ॥
नैतत्संभाव्यते सूत पिता पुत्रं यदौरसम् ।
त्यजेन्निरपराधं हि भाविनो ऽर्थवशादृते ॥ २२ ॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसन्देशो नाम
चतुष्पञ्चाशः सर्गः ॥ ५४ ॥

[बं-५१]=[पञ्चपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५२।३७]

निवर्त्यमानो[1] रामेण सुमन्त्रः शोककर्शितः ।
तत्सर्वं वचनं श्रुत्वा स्नेहात्काकुत्स्थमब्रवीत् ॥ १ ॥
उपचारेण यद्वीर ब्रूयां स्नेहेन विक्लवः ।
भक्तिमानिति मद्वाक्यं तन्मे त्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ २ ॥
कथं तु[2] त्वद्विहीनो[2] ऽहं प्रतियास्यामि तां पुरीम् ।
तव तात वियोगेन पुत्रशोकातुरामिव[3] ॥ ३ ॥
सराममिति तावद्धि रथं दृष्ट्वा पुरं तु तत् ।
त्वया विहीनं दृष्ट्वा तु विदीर्यत्येव सा पुरी ॥ ४ ॥
दैन्यं हि नगरी गच्छेद्दृष्ट्वा शून्यमिमं रथम् ।
हतावशेषं स्वं सैन्यं हतवीरमिवाहवे ॥ ५ ॥
दूरेऽपि निवसन्तं त्वां विन्यस्येवाग्रतः स्थितम् ।
चिन्तयन्त्येव तावत्त्वां निराहाराः कृशाः प्रजाः ॥ ६ ॥
आर्तनादो हि यः पौरैर्मुक्तः पूर्वं विवासने ।
रथस्थं मां निशम्यैकं कुर्युः शतगुणं ततः ॥ ७ ॥
अहं किं वाऽपि वक्ष्यामि देवीं तव सुतो मया ।
नीतोऽसौ मातुलकुलं सन्तापस्त्यज्यतामिति ॥ ८ ॥
सत्यं चैव प्रियं चैव ब्रूयां हि वचनं गुरुम् ।
कथमप्रियमेवाहं ब्रूयां गुरुमिदं वचः ॥ ९ ॥
मम शिष्यत्वमापन्ना इक्ष्वाकुकुलवाहिनः ।

1 ङ—०माणो । 2 कै—तद्वद्विहीनो । ख—तु तद्विहीनो । 3 ङ—०मिमाम् ।

कथं चापि त्वया हीनं रथं वक्ष्यन्ति वाजिनः ॥ १० ॥
यदि मे याचमानस्य त्यागमेनं करिष्यसि ।
सरथो ऽग्निं प्रवेक्ष्यामि त्यक्तमात्रो ह्यहं त्वया ॥ ११ ॥
भविष्यन्ति च ते यानि तपोविघ्नकराणि च ।
रथेन प्रतिबाधिष्ये तानि सर्वाणि राघव ॥ १२ ॥
त्वत्कृते न मया प्राप्तं रथचर्याकृतं सुखम् ।
आशंसे त्वत्कृतेनाहं वनवासकृतं सुखम् ॥ १३ ॥
प्रसीदेच्छामि चारण्ये भवितुं प्रत्यनन्तरः ।
वने ऽपि यद्यहं वीर निवसेय त्वदाश्रितः ॥ १४ ॥
परिचर्यां हि ते कृत्वा प्राप्नुयां परमां गतिम् ।
तव शुश्रूषणं सर्वं गमिष्यामि[4] वने वसन् ॥ १५ ॥
अयोध्यां शक्रलोकं वा सर्वमेव त्यजाम्यहम् ।
न हि शक्या प्रवेष्टुं सा मयाऽयोध्या त्वया विना ॥ १६ ॥
राजधानी महेन्द्रस्य यथा दुष्कृतकर्मणा[5] ।
इमे ते ऽपि हया वीर यदि ते वनवासिनः ॥ १७ ॥O
परिचर्यां करिष्यन्ति प्राप्स्यन्ति परमां गतिम् ।
वनवासे क्षयं प्राप्ते ममैष हि मनोरथः ॥ १८ ॥
यदनेन रथेन त्वा प्रापयेयं पुरीमितः ।
चतुर्दश हि वर्षाणि सहितस्य वने त्वया ॥ १९ ॥
क्षणभूतानि यास्यन्ति युगवच्च[6] विपर्यये ।
भक्तवत्सल तिष्ठन्तं भर्तृभक्तगते पथि ॥ २० ॥

---

4 य—भविष्यामि । म करिष्यामि । 5 के–र्मण । Om । 6 य ०पच ।

भृत्यं भक्तं स्थितं सत्ये न मां त्यक्तुं त्वमर्हसि ।
एवं बहुविधं दीनं याचमानं पुनः पुनः ॥ २१ ॥
भृत्यानुकंपी काकुत्स्थ इदं वचनमब्रवीत् ।
जानामि परमां भक्तिं मयि ते भक्तवत्सल ॥ २२ ॥
शृणु चापि यदर्थं त्वां प्रेषयामि पुरीमितः ।
नगरीं त्वां गतं दृष्ट्वा जननी मे यवीयसी ॥ २३ ॥
कैकेयी प्रत्ययं गच्छेदिति रामो वनं गतः ।O
परितुष्टा हि सा देवी वनवासं गते मयि ।
राजानं नातिशङ्केत मिथ्यावादीति धार्मिकम् ॥ २४ ॥O
एष मे परमः कामो यदियं मे यवीयसी ।O
भरते रक्षितं स्फीतं पुत्रे राज्यमवाप्नुयात् ॥ २५ ॥
मम प्रियार्थं राज्ञश्च निवर्तस्व पुरीं व्रज ।
सन्दिष्टश्चापि यानर्थांस्तांस्तान् ब्रूयास्तथा तथा ॥ २६ ॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रविसर्जनं
नाम पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

O च ।

[वं-५२]=[षट्पंचाशः सर्गः]=[दा-५२।६५]

इत्युक्त्वा वचन सूतं सान्त्वयित्वा पुनः पुनः ।
गुहं वचनमक्लीवं रामो हेतुमदब्रवीत् ॥ १ ॥
जटाः कृत्वा गमिष्यामि न्यग्रोधात् क्षीरमानय ।
स क्षिप्रं राजपुत्राय गुहः क्षीरमुपानयत् ॥ २ ॥
लक्ष्मणस्यात्मनश्चैव रामश्चक्रे जटास्ततः ।
वृत्तबाहू नरश्रेष्ठौ जटामण्डलधारिणौ ॥ ३ ॥
अशोभेतामृषिसमौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।[1]
ततो गङ्गामभिमुखः पुण्यां सरितमुत्तमाम् ॥ ४ ॥
राघवः प्रययौ मार्गमास्थितः सहलक्ष्मणः ।
तापसव्रतमाश्रित्य ततो गुहमुवाच ह ॥ ५ ॥
अप्रमादो बले[2] कोशे दुर्गे जनपदे तथा ।
कार्यस्ते गुह राज्यं स्यात् सदा रक्षितुमङ्ग तत् ॥ ६ ॥
ततस्तं समनुज्ञाय गुहमिक्ष्वाकुनन्दनः ।
जगाम वनमव्यग्रः सभार्यः सहलक्ष्मणः ॥ ७ ॥
स तु दृष्ट्वा नदीतीरे नावमिक्ष्वाकुनन्दनः ।
शीघ्रं तितीर्षुर्गंगायां लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥
आरोह त्वं नरव्याघ्र स्थितां नावमिमां शनैः ।
सीतां चारोपय क्षिप्रं परिरभ्य मनस्विनीम् ॥ ९ ॥
स भ्रातुः शासनं कुर्वन् सर्वमप्रतिकूलवत् ।
आरोप्य मैथिलीं पूर्वमारुरोह स्वयं ततः ॥ १० ॥

---

1 म—अत पर आसर्गान्तं त्रुटित भाति । 2 के—यत्नोदे ।

अथारुरोह तेजस्वी स्वयं लक्ष्मणपूर्वजः ।
ततो निषादाधिपतिर्गुहो ज्ञातीनचोदयत् ॥ ११ ॥
आज्ञाय स सुमन्त्रं च सामात्यं चैव तं गुहम् ।
आस्थाय यानं काकुत्स्थश्चोदयामास नाविकान् ॥ १२ ॥
ततस्तैश्चोदिता सा नौः कर्णधारैः समाहता ।
बाहुवेगप्रतिहता गङ्गासलिलमध्यगा ॥ १३ ॥
मध्यं तु समनुप्राप्ता भागीरथ्याः सुमध्यमा ।
वैदेही प्राञ्जलिर्भूत्वा तां नदीमिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥
पुत्रो दशरथस्यायं महाराजस्य धीमतः ।
निदेशं पालयेद्राज्ञस्त्वया गङ्गे ऽभिरक्षितः ॥ १५ ॥
चतुर्दश हि वर्षाणि प्रत्युष्य विजने वने ।
भ्रात्रा सह मया चैव प्रत्यागच्छेत् पुनः पुरीम् ॥ १६ ॥
अतस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता ।
द्रक्ष्ये प्रमुदिता गङ्गे सर्वकामसमृद्धये ॥ १७ ॥
त्वं हि त्रिपथगा देवि ब्रह्मलोकात्प्रवर्तसे ।
भार्या जलधिराजस्य लोकेऽस्मिन्संप्रदृश्यसे ॥ १८ ॥
सा त्वां देवि नमस्यामि प्रशंसामि च शोभने ।
प्राप्तराज्ये नरव्याघ्रे शिवेनैत्य पुनस्त्वया ॥ १९ ॥
गवां शतसहस्राणि वस्त्राण्यन्यच्च पेशलम् ।
ब्राह्मणेभ्यः प्रदास्यामि तव प्रियचिकीर्षया ॥ २० ॥
तथा संभाषमाणा तु सीता गङ्गामनिन्दिता ।
दक्षिणा दक्षिणं तीरं क्षिप्रमेवाभ्युपागमत् ॥ २१ ॥

प्रेपितायां ततो नावि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
तटस्थौ गुहसूतौ तावीक्षन्तौ बाष्पविक्लवौ ॥ २२ ॥
सा वायुवेगाभिहता बाहुवीर्यप्रनोदिता ।
निगृह्य राजपुत्रौ तौ परं पारमुपागमत् ॥ २३ ॥
तीरं तु समनुप्राप्य नावं हित्वा नरर्षभौ ।
प्रणामं चक्रतुर्वीरौ गङ्गायै सुसमाहितौ ॥ २४ ॥
प्रातिष्ठत ततो रामः सभार्यः सहलक्ष्मणः ।A1
स राघवस्ततो धीमान् वनवासाय निश्चितः ॥ २५ ॥
अथाब्रवीन्महाबाहुः सुमित्रानन्दवर्द्धनम् ।
अग्रतो गच्छ सौमित्रे सीता त्वामनुगच्छतु ॥ २६ ॥
पृष्ठतोऽनुगमिष्यामि त्वां च सीतां च पालयन् ।
अद्येव दुःखं वैदेही वनवासस्य वेत्स्यति ॥ २७ ॥
सिंहव्याघ्रवराहाणां निनादं प्रसहिष्यति ।
अनवलोकयमानौ* तां सुमन्त्रो यत्र वै दिशि ॥ २८ ॥
जग्मतुस्तौ धनुष्पाणी सीतया सह तद्वनम् ।
अदर्शनगतौ ज्ञातौ (ज्ञात्वा ?) भ्रातरौ पार्थिवात्मजौ[3] ॥ २९ ॥
गुहः सुमन्त्रः सस्नेहं न्यवर्तेतां ततः पुनः ।
नानाविहगसंघुष्टं वनं तद्व्यवगाहताम् ॥ ३० ॥
सुपुष्पिताग्रैस्तरुभिर्नानाविटपसङ्कुलम् ।
अदूरमथ[4] गत्वा तौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।O ३१ ॥

A1 ल वानप्रस्थरपु वीरो गंगाया सुसमाहित । 3 ल रामलक्ष्मणौ ।
4 कै-सुदूरमथ । O ल ।

अवरोहशताकीर्णं वटमासाद्य तस्थतुः ।
तौ तत्र सुखमासीनौ नातिदूरे ऽभ्यपश्यताम्[5] ॥ ३२ ॥
सुदर्शनामितिख्यातां पद्मिनीं पद्मसङ्कुलाम् ।
हंसकारण्डवाकीर्णां चक्रवाकोपशोभिताम् ॥ ३३ ॥
दर्शयामास काकुत्स्थो वैदेह्या लक्ष्मणस्य च ।
पश्य लक्ष्मण पद्मिन्या यथेदं शोभितं वनम् ॥ ३४ ॥
दिव्यतोयाभिवाहिन्या मन्दाकिन्या यथा दिवम् ।
इहैवाद्य निवत्स्यामः परिश्रान्ता हि मैथिली ॥ ३५ ॥
रम्ये पुष्करिणीतीरे पद्मत्रासितमारुते ।
अथ पुष्करिणीं शीघ्रमवतीर्य तु लक्ष्मणः ॥ ३६ ॥
पद्मानि समृणालानि[6] सुगन्धीनि बहूनि च ।
उत्पाट्य नीत्वा सीतायै प्रीत्यर्थं समुपानयत् ।
आदाय तानि वैदेही सपद्मा श्रीरिवाभवत् ॥ ३७ ॥
त्रयस्ते हि त्रिरात्राय मृणालैः प्राणधारणम् ।
कृत्वा न्यग्रोधमाश्रित्य रात्रौ वासमकल्पयन्[7] ॥ ३८ ॥
गुहेन सार्द्धं तु ततः सुमन्त्रो रामं व्रजन्तं प्रततं समीक्ष्य ।
अथ(ध्व?) प्रकर्षाद्विनिवृत्तदृष्टिर्मुमोच बाष्पं व्यथितान्तरात्मा ३९

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गङ्गावतरणं
नाम षट्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥

---

5 कै–०पश्यनाम् । 6 व—सुमृ० । 7 व—म समकल्पयत् ।

[वं-५३]=[सप्तपंचाशः सर्गः]=[दा-५३]

त न्यग्रोधमुपागम्य सन्ध्यामन्वास्य पश्चिमाम् ।
रामो रमयतां श्रेष्ठः सौमित्रिमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥
अद्य नः प्रथमा रात्रिर्निर्गतानामिव पुरात् ।
यतीनामिव मुक्तानां स्वजनेन भविष्यति ॥[1] २ ॥
मा ते भीर्मा सुखोत्कण्ठा मा व्यथा स्वजनं विना ।
अद्यप्रभृति कर्तव्यं सीताया रक्षणं त्वया ॥ ३ ॥
मया च सततं कार्यमप्रमत्तेन लक्ष्मण ।
तृणान्याहृत्य सौमित्रे मम त्वं शयनं कुरु ॥ ४ ॥
मत्त एवाविदूरे च शयनं रचयात्मनः ।
इत्युक्तो लक्ष्मणश्चक्रे भ्रातुः शय्यामथात्मनः ॥ ५ ॥
वृक्षपर्णैस्तृणैश्चैव तस्याधस्ताद्वनस्पतेः ।
तत्र संनिश्य काकुत्स्थो महार्हशयनोचितः ॥ ६ ॥
चक्रे सह कथा रात्रौ सीतया लक्ष्मणेन च ।
नूनमद्य महाराज' सुखं स्वपिति लक्ष्मण ॥ ७ ॥
सकामया सेव्यमानः कैकेय्या परितुष्टया ।
राज्यलुब्धा नृशंसा च कैकेयी तं नराधिपम् ॥ ८ ॥
आगते भरते प्राणै. कथं न च्यावयेदपि[2] ।
वृद्धोऽनाथश्च नृपतिर्मया चैव विनाकृतः ॥ ९ ॥
नावेक्षते स कामात्मा प्राणास्तस्या वशे स्थितः ।

---

1 ङ अस्मिन् हि विजने रण्ये नावासत्वनिषेविते । 2 कै, म, ङ- त्याव० ।

इदं व्यसनमालोक्य राज्ञः स्वमतिविभ्रमम् ॥ १० ॥
काम एवार्थधर्माभ्यां गरीयानिति मे मतिः ।
को हि विद्वानपि पुमान् प्रमदायाः कृते त्यजेत् ॥ ११ ॥
छन्दानुवर्तिनं पुत्रमिष्टं मामिव लक्ष्मण ।
सुखी च स सुभागश्च[1] कैकेय्या भरतः सुतः ॥ १२ ॥
मुदितः कोशलानेतान् यो भोक्ष्यत्यधिराजवत् ।
स हि सर्वस्य राज्यस्य सुखमद्य करिष्यति ॥ १३ ॥
ताते च तमसा ग्रस्ते मयि चारण्यमाश्रिते ।
यः परित्यज्य धर्मार्थौ काममेवानुवर्तते ॥ १४ ॥
स कृच्छ्रं महदाप्नोति राजा दशरथो यथा ।
मन्ये दशरथान्ताय मम प्रव्राजनाय च ॥ १५ ॥
उत्पन्ना सौम्य कैकेयी राज्यार्थे भरतस्य च ।
अपि नामाद्य कैकेयी सौभाग्यमदगर्विता ॥ १६ ॥
न प्रबाधेत मद्द्वेषात् कौशल्यां मद्विनाकृताम् ।
मत्पक्षग्राहिणीं नूनं सुमित्रां च तपस्विनीम् ॥ १७ ॥
इदानीमपि तस्मात्त्वमयोध्यां गच्छ लक्ष्मण ।
अहमेको गमिष्यामि सीतया सहितो वनम् ॥ १८ ॥
अनाथायास्तु मे मातुर्गत्वा नाथो भवानघ ।
क्षुद्रा चापि नृशंसा च कैकेयी पापनिश्चया ॥ १९ ॥
अमर्षं मम द्वेषात् कौशल्यां पीडयिष्यति ।
ज्ञातिषु ध्रुवमन्यास्तु स्त्रियः पुत्रैर्वियोजिताः ॥ २० ॥

---

[1] भ, म, ल—सुभाग्यश्च ।

जनन्या मम सौमित्रे ततस्तदिदमागतम् ।
मया हि चिरलब्धेन दुःखसंवर्द्धितेन च ॥ २१ ॥
विप्रायुज्यत कौशल्या फलकाले धिगस्तु माम् ।
मा स्म सीमन्तिनी काचिज्जनयेत्पुत्रमीदृशम् ॥ २२ ॥
सौमित्रे योऽहमम्बाया जातः° शोकाय° दुःखदः° ।
शोचन्त्याश्चाल्पभाग्याया न किञ्चिदुपकुर्वता ॥ °२३ ॥
पुत्रेण° किमपुत्राया° मया कार्यमरिन्दम ।
अल्पभाग्या हि मे माता दुःखानामेव केवलम् ॥ २४ ॥
भागिनी न तु सौमित्रे सुखानामिति मे मतिः ।
एको योऽहमयोध्या च पृथिवीं चापि लक्ष्मण ॥ २५ ॥
दहेयमिषुभिः क्रुद्धो नात्र वीर्यमकारणम् ।
अधर्मप्राप्तिभीतोऽहं लोकवादभयेन च ॥ २६ ॥
तेन लक्ष्मण नाद्याहमात्मानमभिषेचये ।
एतच्चान्यच्च विविधं विलप्य बहुदुःखितः ॥ २७ ॥
अश्रुपूर्णमुखो रामो निशि तूष्णीमुपाविशत् ।
विलप्योपरत चैन शान्तार्चिषमिवानलम् ॥ २८ ॥
समुद्रमिव निर्वेगमिति होवाच लक्ष्मणः ।
महासत्त्व न शोकस्य वशमागन्तुमर्हसि ॥ २९ ॥
त्वद्विधा हि न शोचन्ति कृच्छ्रेऽपि व्यसनागमे ।
इदं हि ते न व्यसनमवगच्छामि ते प्रभो ॥ ३० ॥
अनुरागं तु पौराणां मन्ये तेऽभ्युदयागमम् ।

O ल । 4 म—०गच्छाम्यहं ।

अयोध्या सा पुरी कृत्स्ना मंप्रत्यद्यापि दुःखिता ॥ ३१ ॥
न राजते त्वया हीना विचन्द्रा रजनी यथा ।
नैतद्युक्तं च ते राजन् यदिदं परिदेवसे ॥ ३२ ॥
विषादयसि सीतां च मां चैव पुरुषर्षभ ।
न हि सीता त्वया हीना न चाहमपि राघव ॥ ३३ ॥
मुहूर्तमपि जीवावो जलान् मत्स्य इवोद्धृतः[5] ।
न हि तातं न शत्रुघ्नं न सुमित्रां परन्तप ।
अद्याहं द्रष्टुमिच्छामि स्वर्गं चापि विना त्वया ॥ ३४ ॥
स लक्ष्मणस्यार्थवदूर्जितं वचो निशम्य रामो हितमेव चात्मनः ।
विसृज्य शोकं परिरभ्य लक्ष्मणं स्थितोऽस्मि शोकादिति[6] राघवोऽब्रवीत्

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामविलापो
नाम सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

5 य—मत्स्या इवोद्धृताः । 6 कै—लोकादिति ।

[बं-५४]=[अष्टपंचाशः सर्गः]=[दा-५४]

तां तु रात्रिमुषित्वा ते तस्मिन् न्यग्रोधपादपे ।
विमले ऽभ्युदिते सूर्ये तस्माद्वासात्प्रतस्थिरे ॥ १ ॥
यत्र भागीरथी पुण्या यमुनामभिपद्यते ।
ततस्तां दिशमुद्दिश्य विगाह्य सुमहद्वनम् ॥ २ ॥
ते भूमिभागान् विविधान् देशांश्चापि मनोरमान् ।
अदृष्टपूर्वान् पश्यन्तो विचित्रकुसुमाश्रयान् ॥ ३ ॥
पन्थानं क्षेममासाद्य प्रययुः सुमनस्विनः ।
ततो निवृत्ते दिवसे रामः सौमित्रिमब्रवीत् ॥ ४ ॥
प्रयागमभितः पश्य सौमित्रे धूममुद्गतम् ।
अग्नेर्भगवतः केतुं मन्ये सन्निहितं मुनिम् ॥ ५ ॥
नूनं प्राप्ताः स्म संयोगं गङ्गायमुनयोः शिवम् ।
तथा हि श्रूयते शब्दो वारिसंघर्षजो महान् ॥ ६ ॥
दारूणीव विशीर्णानि वनस्थैस्तरुजीविभिः ।
भरद्वाजाश्रमे चैते दृश्यन्ते विविधा द्रुमाः ॥ ७ ॥
त एव क्रमशो गत्वा लम्बमाने दिवाकरे ।
भरद्वाजाश्रमं पुण्यमासेदुः श्रमकर्षिताः ॥ ८ ॥
तदाश्रमपदं प्राप्य रामः सौमित्रिणा सह ।
त्रासयन् सायुधः सुप्तान् निवेश मृगपक्षिणः ॥ ९ ॥
आगत्य चाश्रमद्वारं मुनेर्दर्शनकांक्षया ।
तस्थौ रामः सह श्रीमान् सीतया लक्ष्मणेन च ॥ १० ॥
तौ विदित्वाऽऽगतौ चापि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

प्रवेशयामास मुनिः स्वमाश्रमपदं तदा ॥ ११ ॥
हुताग्निहोत्रमासीनं महाभागं कृताञ्जलिः ।
रामः सौमित्रिणा सार्धं सीतया चाभ्यवादयत ॥ १२ ॥
मृगपक्षिभिरासीनं वृतो मुनिभिरेव च ।
राममागतमभ्यर्च्य सोऽभ्यभाषत वै मुनिः ॥ १३ ॥
न्यवेदयत चात्मानं तस्मै लक्ष्मणपूर्वजः ।
पुत्रौ दशरथस्यावां भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १४ ॥
भार्या ममेयं कल्याणी वैदेही जनकात्मजा ।
मामनुव्रजमानेयं तपोवनमुपागता ॥ १५ ॥
पित्रा प्रव्राज्यमानं मां सौमित्रिश्चानुजः प्रियः ।
स्वयमन्वगमद् भ्राता वनमेव दृढव्रतः ॥ १६ ॥
पित्रा नियुक्तो भगवन् प्रवेक्ष्यामि महद्वनम् ।
धर्ममेव चरिष्यामि पत्रमूलफलाशनः ॥ १७ ॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।
उपानयत धर्मात्मा रामायार्घ्यमृषिस्ततः ॥ १८ ॥
प्रतिगृह्य च काकुत्स्थमासनेनोदकेन च ।
न्यमन्त्रयत मूलैश्च फलैश्च फलभोजनम्[1] ॥ १९ ॥
प्रतिगृह्य तु तां पूजामुपविष्टं स राघवम् ।
भरद्वाजोऽब्रवीद्वाक्यं धर्मयुक्तमिदं हितम् ॥○२० ॥
चिरस्य खलु काकुत्स्थ पश्यामि त्वामिहागतं ।
श्रुतं तव मया चेदं विवासनमकारणात् ॥ २१ ॥○

1 ल—फलभोजिन । Om ।

अवकाशो विविक्तोऽयं रमणीयश्च राघव ।[O]
गङ्गायमुनयोः पुण्यः सङ्गमो लोकविश्रुतः ॥ २२ ॥
इह राम मया सार्धं वस त्वं यदि रोचते ।
वनं साधारणं ह्रीदं तपोवननिवासिनाम् ॥ २३ ॥
इहैव रंस्यसे सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च ।
तमेवं वादिनं रामः कृताञ्जलिरभाषत ।
वसतोऽनुग्रहो मे स्यादिह ब्रह्मंस्त्वया सह ॥ २४ ॥
इतस्तु विषयोऽस्माकमभ्याशे तपतां वर ।
सुदर्शमिव पश्यामि पौराणामिह चागमम् ॥ २५ ॥
अभ्याशे वर्तमानं मां श्रुत्वा दूरादिदृक्षवः ।
आगमिष्यन्ति वैदेहीं मामपि प्रेक्षका जनाः ।
अनेन कारणेनाहमिह वासं न रोचये ॥ २६ ॥
एकान्ते पश्य भगवन्नाश्रमस्थानमुत्तमम् ।
रमते यत्र वैदेही सुखेन जनकात्मजा ।
वसेयं यत्र वैदेह्या सहितो लक्ष्मणेन च ॥ २७ ॥
स्वजनेनापरिज्ञातो निरुद्वेगः सुखी मुने ।
इति रामवचः श्रुत्वा भरद्वाजो महामुनिः ॥ २८ ॥
ध्यात्वा मुहूर्तमेकाग्रो राम वचनमब्रवीत् ।
त्रियोजनमितस्तात गिरिर्यत्र निवत्स्यसि ॥ २९ ॥
महर्षिजनसंजुष्टः[2] सर्वर्तुसुखदः शिवः ।
गोलाङ्गूलाभिनदितो[3] वानरर्क्षनिषेवितः ॥ ३० ॥

---

2 व—०घुष्ट । 3 म—०नदितो ।

चित्रकूट इति ख्यातो गन्धमादनसन्निभः ।
यावद्धि चित्रकूटस्य नरः शृङ्गाण्युदीक्षते ॥ ३१ ॥
तावत्कल्याणमाप्नोति धर्मे च कुरुते मनः ।
ऋषयस्तत्र बहवो विहृत्य शरदां शतम् ॥ ३२ ॥
तपसा दिवमारूढाः सुकृतैकनिषेवणात् ।
तं विविक्तमहं मन्ये वासं ते रघुनन्दन ॥ ३३ ॥
इह वा पुरुषव्याघ्र वस राम मया सह ।
सर्वथा रंस्यसे राम तस्मिन्नाश्रममण्डले ॥ ३४ ॥
लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा वैदेह्या चापि भार्यया[4] ।
एवमुक्त्वा ततः कामैर्भरद्वाजो ऽथ राघवम् ॥ ३५ ॥
सहभार्यं सह भ्रात्रा महर्षिः प्रत्यपूजयत् ।
तस्य भुक्तवतस्तत्र तं मुनिं समुपागतः[5] ॥ ३६ ॥
जगाम रजनी पुण्या विचित्राः शृण्वतः कथाः ।
तस्यां रात्रौ व्यतीतायां सन्ध्यामन्वास्य सानुजः ॥३७॥
उपतस्थे महर्षिं तं तमुवाच ततो मुनिः ।
चित्रकूटमितो गत्वा रमस्व[6] सह सीतया ॥ ३८ ॥
लक्ष्मणेन च विस्रब्धं[7] तत्र त्वं विहरिष्यसि ।
शुचिशीताम्बुवाहिन्या मन्दाकिन्योपशोभिते ॥ ३९ ॥
मन्येऽहं तत्र ते वासं रम्ये स्वादुफलोदके ।
तत्र कुञ्जरयूथानि मृगयूथानि चाभितः ॥ ४० ॥

---

4 य—सीतया । 5 कै, य—समुपागतः । 6 कै, य—रामास्व । म—रामास्व । 7 य—संरब्धं ।

विचरन्ति वनान्तेषु तत्र द्रक्ष्यसि राघव ।
दात्यूह-कोयष्टिक-कोकिलस्वनैर्विनादितं तं वसुधाधरं शिवम् ।
मृगैश्च मत्तैर्बहुभिश्च कुञ्जरैः सुरम्यमासाद्य तमावसाश्रमम् ॥४१॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरद्वाजाभिगमनं
नाम अष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥



[चं-५५]=[एकोनषष्टितमः सर्गः]=[दा-५५]

तौ तत्र रजनीमुष्य सुखमिक्ष्वाकुनन्दनौ ।
अभिवाद्य महर्षिं तं दधतुर्गमने मनः ॥ १ ॥
प्रयातां रजनीं वीक्ष्य[1] भरद्वाजो महामुनिः ।
चित्रकूटस्य पन्थानमुपदेष्टुं प्रचक्रमे ॥ २ ॥
राघव त्वमितो देशान् पश्यन्नावसथान्बहून् ।
नातिदूरे समासाद्य तरेथा[2] यमुनां नदीम् ॥ ३ ॥
कृत्वोडुपं ग्राहवती सा हि नित्य महानदी ।[A]
तस्या नद्याः परे पारे नातिदूरं महाद्रुमः ॥ ४ ॥
सत्यापि* पानितः[3] श्रीमान् न्यग्रोधो हरितच्छदः ।
नानासत्त्वगणावासः[4] श्याम इत्यभिविश्रुतः ॥ ५ ॥
सीताऽपि तं नमस्कृत्य समभ्यर्च्य च पादपम् ।
अभियाचेत कल्याणं वर यदभिकांक्षितम् ॥ ६ ॥
क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलं द्रक्ष्यथ काननम् ।
पलाशबदरीमिश्रं मधूकाम्रवनायुतम्[5] ॥ ७ ॥
स पन्थाश्चित्रकूटस्य गतः सुबहुशो मया ।
रम्यश्चाश्रमयुक्तश्च वनदौषैश्च वर्जितः ॥ ८ ॥
पन्थानमुपदिश्यैवं भरद्वाजो न्यवर्तत ।
रामेण लक्ष्मणेनापि सीतया चाभिवन्दितः ॥ ९ ॥
उपावृत्ते मुनौ तस्मिन् रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।

1 म-प्रेक्ष्य । 2 म-सुखिवा । A । म । श्रीमते रामानुजाय नम शुभं । 3 ल-स चापि पालितः । (सत्याभियाचित: ?) । 4 घ, म -०गुणायास । 5 के, म, ल मधुका० ।

कृतपुण्योऽसि सौमित्रे मुनिर्यन्माऽनुकम्पते ॥ १० ॥
इति तौ पुरुषव्याघ्रौ कथयन्तौ यशस्विनौ ।
सीतामथाग्रतः कृत्वा कालिन्दीं जग्मतुस्तदा ॥ ११ ॥
तत्र बद्ध्वोडुपं काष्ठैर्वेणुभिश्चापि तीरजैः ।
सीतामारोपयाञ्चक्रे रामस्तत्र स्वयं तदा ॥ १२ ॥O
परिगृह्य हृदा बालां कम्पमानां लतामिव ।
सीतामारोप्य रामोऽपि लक्ष्मणं चाप्यरोहयत् ॥ १३ ॥
तेन प्लवेनाश्मवतीं शीघ्रगामूर्मिमालिनीम् ।
तीरजैर्गहनां वृक्षैस्ते ततो यमुनां नदीम् ॥ १४ ॥
सन्तीर्य प्लवमुत्सृज्य प्रणम्य यमुनां नदीम् ।
शीतच्छायं समाभेदुः श्यामं न्यग्रोधपादपम् ॥ १५ ॥
अर्चयित्वा च तं सीताऽयाचतेदं कृताञ्जलिः ।
चिरं जीवतु मे वृक्ष श्वशुरः कोसलेश्वरः ॥ १६ ॥
भर्ता मे देवराश्चैव जीवन्तु भरतादयः ।
कौशल्यां चैव जीवन्तीं पश्येयमिति मैथिली ॥ १७ ॥
ययाचे सं ततोऽभ्येत्य न्यग्रोधं मत्ययाचनम् ।
प्रदक्षिणमुपावृत्य ततस्ते प्रययुस्तदा ॥ १८ ॥
क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलमासाद्य तद्वनम् ।
हत्वा तत्र मृगं मेध्यं भृत्वा तमुपयोज्य° च ॥ १९ ॥
विहृत्य तस्मिन् बहुपक्षिनादिते वने यथेष्टं मृगयूथसेविते ।
ततो निवासार्थमुपाययुः शिवं शुभं नदीतीरसमुत्थितं द्रुमम् ॥२०॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे यमुनातीरनिवासो नाम एकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥

Oम 6 म तमुपयुज्य ।

[बं-५६]=[षष्टितमः सर्गः]=[दा-५६]

अथ रात्र्यां व्यतीतायां सुप्तसुप्तं श्रमालसम् ।
रामस्तूत्थापयामास लक्ष्मणं शनकैस्तदा ॥ १ ॥
मृगाणां शृणु सौमित्रे वल्गु व्यवहारतां[1] वने ।
संप्रतिष्ठामहे भूयो यदि लक्ष्मण मन्यसे ॥ २ ॥
स सुप्तः ससुखं भ्रात्रा लक्ष्मणः प्रतिबोधितः ।
जहौ निद्रां क्लमं चैव तं चैवाध्वपरिश्रमम् ॥ ३ ॥
तत उत्थाय सहसा स्पृष्ट्वा च सलिलं शुचि ।
उपास्य च शुभां सन्ध्यां तत्रैवाभिप्रतस्थिरे ॥ ४ ॥
चित्रकूटस्य पन्थानमासाद्य कृतनिश्चयाः ।
तत्र ग्रामं समुद्दिश्य ययुः शीघ्रपराक्रमाः ॥ ५ ॥
अचिरेण समासाद्य ततश्चित्रपादपम् ।
चित्रकूटवनं रामः सीतां वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥
पश्यैतान् पुष्पितान् सीते मालिनीं सरितं प्रति ।
शिशिरात्ययदग्धान् हि प्रदीप्तानिव किंशुकान् ॥ ७ ॥
कर्णिकारवनं चापि पश्य मन्दाकिनीमनु ।
दीपितं रुचिरैः पुष्पैः प्रदीप्तैः काञ्चनैरिव ॥ ८ ॥
पश्य भल्लातकान् बिल्वान् पनसांस्तिन्दुकांस्तथा ।
फ पुलभारनतांश्चैव तथाऽन्यान् शुभपादपान् ॥ ९ ॥
शक्यमत्र फलैरेव जीवितुं तनुमध्यमे ।
अहो स्वर्गोपमं प्राप्ताश्चित्रकूटमिमं वयम् ॥ १० ॥

---

१ ग–व्याहरणं । २ म–प्रदीप्तैरिव काञ्चनैः ।

पश्य द्रोणप्रमाणानि लम्बमानानि लक्ष्मण ।
चितानि चित्रकूटेऽस्मिन् मधूनि मधुपैः खगैः ॥ ११ ॥
असौ कूजति दात्यूहस्तं शिखी प्रतिकूजति ।
त चोपहसतीवायं कूजश्च जलकुक्कुटः ॥ १२ ॥
परपुष्टरुतं श्रुत्वा गायन्त इव कानने ।
भ्रमरा निचरन्त्येते पुष्पपानकलस्वनाः ॥ १३ ॥
पश्य मन्दाकिनीतीरे कुसुमप्रकरैः प्रिये ।
वितानानीव शुभ्राणि शयनानि द्रुमे द्रुमे ॥ १४ ॥
शिलातलानि नीलानि निमलानि शुचिस्मिते ।
लतावृक्षाश्रितानीह पश्य रम्याणि भामिनि ॥ १५ ॥
मातङ्गयूथनिचिते नानाविहगनादिते ।
नानामृगगणाकीर्णे शैलेऽस्मिन् रम्यकानने ॥ १६ ॥
वैदेहि विचरिष्यामः सुरम्यमत्र वयं प्रिये ।
इह प्राप्स्यसि वैदेहि मया सह परां रतिं[3] ॥ १७ ॥
अवेक्षमाणा एवं ते रम्यां मन्दाकिनीं नदीम् ।
चित्रकूटं समाजग्मु र्नानाकुसुमितद्रुमम् ॥ १८ ॥
तस्य शैलस्य पादे तु विविक्ते सलिलावृते ।
आश्रमं चक्रतुश्चारु भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १९ ॥
गजभग्नान्युपाहृत्य दारूण्युपवनान्तरात् ।
लतावितानसद्धे द्वे चक्रतुः सदने पृथक् ॥ २० ॥

---

3 घ, ङ गतिं ।

वृक्षपर्णैश्च बहुभिश् छादयामासतुस्ततः ।
ते पर्णशाले कृत्वाऽथ शोधयामास लक्ष्मणः ॥ २१ ॥
मृदोपलेपनं चक्रे वैदेही तनुमध्यमा ।
कृत्वाऽऽश्रमपदं रामस्ततो लक्ष्मणमब्रवीत् ॥ २२ ॥
मृगमाहृत्य सौमित्रे चरुं श्रपय मा चिरम् ।
तेन यष्टुमिहेच्छामि चरुणा[4]ऽऽश्रमदेवताः[4] ॥ २३ ॥
इत्युक्तो लक्ष्मणो भ्रात्रा हत्वा कृष्णमृगं वने ।
आहृत्य चानयित्वाऽग्निं श्रपयामास तं चरुम् ॥ २४ ॥
तं मृगं संस्कृतं कृत्वा सुष्टुपक्वं च लक्ष्मणः ।
उवाच राममभ्येत्य कृताञ्जलिरिदं वचः ॥ २५ ॥
आज्ञया ते मयाऽऽहृत्य भृतः कृष्णो मृगो[5] वनात् ।
यष्टुमर्हसि तेन त्वं देवता अभिकांक्षिताः ॥ २६ ॥
इत्युक्तो राघवः स्नात्वा जप्त्वा च विधिवत्तदा । प्त्वा
इन्ध्याग्निं[6] मन्त्रवत्तत्र ततस्तु जुहुवे हविः ॥ २७ ॥
हविर्हुत्वा च देवेभ्यः पितृभ्यस्तदनन्तरम् ।
निर्ववाप पवित्रेषु निर्वापं[7] सजलाञ्जलिम् ॥ २८ ॥
न्युप्य चैव निवापं तं[8] भूतेभ्योऽपि विधानतः ।
चकार बलिनिर्वापं राघवस्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥
लक्ष्मणेन सह भ्राता हुतशेषं ततः स्वयम् ।
उपविश्योपयुयुजे कृते पर्णपुटे शुभे ॥ ३० ॥

---

4 ष, ग, ङ, म–चरुणाश्रम० । 5 म–कृष्णमृगो । 6 ङ इन्ध्याऽग्निं । घ–संदीप्य । 7 ङ–निवार्प । 8 ङ–च ।

परिवेष्य च सीताऽपि तावुभौ भर्तृदेवरौ ।
एकान्तं समुपागम्य ततः शेषमुपाददे ॥ ३१ ॥
अनेकनानाविधपक्षिनादिते विचित्रपुष्पस्तबकोपशोभिते ।
नगोत्तमे तत्र निवासमीयिवां स्तुतोष रामः सहलक्ष्मणस्तदा ॥३२॥
तं रम्यमासाद्य हि चित्रकूटं तां चैव पुण्यां सरितं सुतीर्थाम् ।
मन्दाकिनीं पुष्पफलाढ्यतीरां दुःखं जहुस्ते वनवासमग्रलम् ॥३३॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे चित्रकूटनिवासो
नाम षष्टितमः सर्गः ॥ ६० ॥

[वं-५७]=[एकषष्टितमः सर्गः]=[दा-५७]

स शोचित्वा तु सुचिरं सुमन्त्रेण गुहः सह ।
गङ्गापारगतं रामं जगाम स्वपुरं ततः ॥ १ ॥
अनुज्ञाप्य सुमन्त्रोऽपि योजयित्वा हयान् रथे ।
अयोध्यामेव नगरीं प्रययौ भृशदुर्मनाः ॥ २ ॥
सोऽतीत्य सुबहून् देशान् सरितश्च सरांसि च ।
कालेन नातिमहता ग्रामांश्च नगराणि च ॥ ३ ॥
अयोध्यामाजगामार्तो निश्चेतेऽहनि सारथिः ।
आर्तनारीनरगणां दीनस्वरवतीं सदा ॥ ४ ॥
शून्यामिव च निःशब्दां निरानन्दजनावृताम् ।
प्रम्लानपङ्कजवतीं विजलां पद्मिनीमिव ॥ ५ ॥
निशाकरपरिभ्रष्टां ताराहीनां निशामिव ।
तां दृष्ट्वा चिन्तयन्नेव सुमन्त्रो मन्त्रिसत्तमः ॥ ६ ॥
प्राविशत् तां पुरीं दीनो निर्जनां विगतत्विषम् ।
कच्चित् सरतनिचया सनरा सनराधिपा ॥ ७ ॥
रामशोकाग्निना कृत्स्ना न दग्धेयं पुरी भवेत् ।
इति सञ्चिन्तयन् सूतः प्रविवेश च तां पुरीम् ॥ ८ ॥
सुमन्त्रो व्यथयोपेतः स्यन्दनेन हतत्विषा ।
सुमन्त्रमभियान्तं तु दृष्ट्वा शतसहस्रशः ॥ ९ ॥
क्व राम इति पृच्छन्तो रथमभ्यद्रवन्नराः ।
तेषां शशंस गङ्गायामहमामन्त्र्य राघवम् ॥ १० ॥
अनुज्ञातो निवृत्तोऽस्मि तेनैव सुमहात्मना ।

ते तीर्णमभिमंश्रुत्य वाष्पपर्याकुलेक्षणाः ॥ ११ ॥
अहो धिगिति निःश्वस्य हताः स्मेति विचुक्रुशुः ।
वृन्दशो जल्पतां तेषां शुश्राव स तदा गिरः ॥ १२ ॥
निर्लज्जोऽयं वने त्यक्त्वा रामं पुनरिहागतः ।
महोत्सवसमाजेषु कथं नाम सुनिर्घृणाः[1] ॥ १३ ॥
विहरेम पुनर्दृष्ट्वा विना तं नरकुञ्जरम् ।
किं स्यात् प्रियं जनस्यास्य कांक्षितं किं सुखावहम् ॥ १४ ॥
इदं रामेण नगरं पित्रेव परिपालितम् ।
तं कथं पुण्डरीकाक्षं श्यामं पद्मदलेक्षणम् ॥ १५ ॥
निर्लज्जोऽयं गृहं रामं विसृज्य पुनरागतः ।
एताश्चान्याश्च विविधाः शृण्वन्वाचः स सारथिः ॥ १६ ॥
यत्र राजा दशरथस्तदेव प्रययौ गृहम् ।
अवतीर्य रथात्सूतो राजवेश्म विवेश तत् ॥ १७ ॥
शोकदीर्णजनाकीर्णं[2] मसकक्ष्यं हतत्विषम् ।
ततो दशरथस्त्रीणां शुश्राव परिदेवितम् ॥ १८ ॥
प्रासादशिखरस्थानां दुःखितानामितस्ततः ।
सह रामेण निर्यातो विना राममिहागतः ॥ १९ ॥
सूतः किं नाम कौशल्यां पृष्टः संप्रति वक्ष्यति ।
यथा तु मन्ये दुर्जातं तथा न[4] मरणं ध्रुवम् ॥ २० ॥
प्रिये निवासिते पुत्रे कौशल्या यत्र जीवति ।

---

1 ग, म —म०। 2 ग—शोकादीर्ण०। 3 ग ज, म, क—कौसल्या।
4 ग—तु। म नास्ति। 5 म निर्वासिते। 6 के, ग, ज, म-कौसल्या।

तथाभूतं तु तद्वाक्यं राजस्त्रीणां निशामयन् ॥ २१ ॥
शोकाग्निना दह्यमानो राजवेश्म विवेश सः ।
प्रविश्य च गृहं दीनो राजानं दीनचेतसम् ॥ २२ ॥
अपश्यत् पुत्रशोकार्तं हतसत्त्वौजसं तथा ।
अभिगम्य तदासीनं[7] नरेन्द्रमभिवाद्य च ॥ २३ ॥
सुमन्त्रो रामवचनं यथोक्तं प्रत्यवेदयत् ।
तच्छ्रुत्वा वचनं राजा विसंज्ञो भ्रान्तचेतनः ॥ २४ ॥
निपपातासनाद् भूमौ दुःखशोकसमन्वितः ।
दृष्ट्वा तमासनाद् भूमौ पतितं जगतीपतिम् ॥ ०२५ ॥
अन्तःपुरस्त्रियोऽभ्येत्य बाहूनुच्छ्रित्य चुक्रुशुः ।
सुमित्रया तु तं सार्धं कौशल्या पतितं पतिम् ॥ ०२६ ॥
दीनमुत्थापयामास वचनं चेदमब्रवीत् ।
इमं तस्य महाभाग सूतं दुष्कृतकारिणम् ॥ २७ ॥
वनवासादुपावृत्तं कस्मात्त्वं न तु पृच्छसि ।
यदीदं निर्घृणं कृत्वा लज्जयेवं विमुह्यसि ॥ २८ ॥
उत्तिष्ठ नाथ कालस्ते लज्जितुं मा व्यपत्रपः ।
कस्मादद्य महीपाल न त्वं पृच्छसि मे सुतम् ॥ २९ ॥
नास्तीह काचित् कैकेय्याविसव्धं प्रष्टुमर्हसि ।
एवमुक्त्वा महाराजं कौशल्या शोककर्शिता ॥०३० ॥
धरण्यां निपपातार्ता बाष्पविक्लवभाषिणी ।

---

7 धे-तदासीनं । Om ।

विलप्य पतितां भूमौ कौशल्यां शोककर्षिताम् ॥ ३१ ॥[O]

पतितं च पतिं दृष्ट्वा सुस्वरं रुरुदुःस्त्रियः ।

ततस्तमन्तः पुरनादमुत्थितं स्वनं निशम्य वृद्धास्तरुणाश्च मानवाः ।

स्त्रियश्च सर्वा रुरुदुःसमन्ततो निरीक्ष्य रामस्य रथं महात्मनः ॥३२॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रोपावर्तनं[१]

नामैकषष्टितमः[४] सर्गः ॥ ६१ ॥



(O)म । 8 ग, म नाम ।

[वं-५८]=[द्विषष्टितमः सर्गः]=[दा-५८]

अथ राजा पुनः संज्ञां प्रतिलभ्य समुत्थितः ।
उपविश्यासने सूतं प्रष्टुं समुपचक्रमे ॥ १ ॥
अश्रुपूर्णेक्षणो[1] दीनो नवबद्ध इव द्विपः ।
दीर्घमुष्णं च निःश्वासं स विमुञ्चन् मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥
अथ रेणुपरिध्वस्तं कृताञ्जलिमुपस्थितम् ।
पप्रच्छैनमभिप्रेत्य[2] सुमन्त्रं बाष्पविह्वलः ॥ ३ ॥
क्व सुमन्त्र गतो रामः क्व च वत्स्यति शम मे ।
क्व स्थाने तेन चैव त्वं राघवेण विसर्जितः ॥ ४ ॥
सोऽत्यन्तसुखसंवृद्धः कथमासिष्यते सुतः ।
भूमिपालात्मजो भूमौ कथं स्वप्स्यति वा वने ॥ ५ ॥
कथं च विजनेऽरण्ये याति पद्भ्यामनाथवत् ।
सिंहव्याघ्रसमाकीर्णे सरीसृपसमाकुले ॥ ६ ॥
यं यान्तमनुयान्ति स्म नराश्वरथकुञ्जराः ।
स कथं सुकुमाराङ्गो वने चरति मे सुतः ॥ ७ ॥
सुकुमार्या तपस्विन्या वैदेह्याऽनुगतः कथम् ।
वनं कण्टकितं दुर्गं रामः पद्भ्यां विगाहते ॥ ८ ॥
स चाप्रतिमतेजस्वी सुकुमारो ममात्मजः ।
अनुगच्छति तं भक्त्या भ्रातरं लक्ष्मणः कथम् ॥ ९ ॥
सिद्धार्थस्त्वं कृतार्थश्च येन नेता ममात्मजः ।

1 ङ, च, छ, म—अश्रु० । 2 म—०मभिप्रेक्ष्य ।

तपोदीक्षान्वितौ दृष्टौ नरनारायणाविव ॥ १० ॥
किमाह रामस्तेजस्वी किं च मां लक्ष्मणोऽब्रवीत् ।
किमुवाच च मां साध्वी सीता भर्तृपरायणा ॥ ११ ॥
किं ताभ्यामशितं भुक्तमितः[3] प्रभृति शंस मे।
अशेषतो यथावृत्तं वनं रामस्य गच्छतः ॥ १२ ॥
इति सूतो नरेन्द्रेण नोदितः सज्जमानया ।
उवाच वाचा राजानं व्यथागद्गदया[4] ततः ॥ १३ ॥O
पुरात्प्रभृति वृत्तान्तमशेषेणानिवर्तनात्[5] ।
उक्त्वा ततः परमिमं रामसन्देशमब्रवीत्[6] ॥ १४ ॥
कृत्वा तेऽनुदिशं रामः प्रणामं प्राञ्जलिः सुतः ।
इदं मां संपरिष्वज्य सन्दिदेश कृताञ्जलिः ॥ १५ ॥
सूत मद्वचनाद्गत्वा समासाद्य महीपतिम् ।
शिरसा प्रणिपत्यादौ प्रष्टव्यः कुशलं ततः ॥ १६ ॥
मातरश्चापि ताः सर्वाः प्रष्टव्याः कुशलं त्वया ।
अशेषतः समासाद्य प्रणिपत्याभिवाद्य च ॥ १७ ॥
पृष्ट्वा च कुशलं सूत विज्ञाप्यो मे पिता त्वया ।
अनुग्रहार्थमस्माकं न शोच्योऽहं त्वयेत्युत ॥ १८ ॥
यतः सर्वो हि राजेन्द्र भवितव्यमुपाश्नुते ।
अतो न शोच्योऽस्मि विभो मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥ १९ ॥
कौशल्यापि[7] च मे माता विज्ञाप्या कुशलं त्वया ।

3 ग—भुक्तं यत । म—त्वर्त्तमित । 4 कै, ग—वृथा । Oम । 5 म—०मशेषेण निवर्तनात् । 6 म—रामं मकोशमब्रवीत् । 7 म—कौसल्या । ग, कै, ल, कौसल्या ।

मच्छोककर्शितो राजा न वाच्यः परुषं त्वया ॥ २० ॥
शापिताऽस्मि मम प्राणैः पुनरागमनेन च ।
देववत् पूजनीयस्ते पिता न इति चाब्रवीत् ॥ २१ ॥
परिष्वज्य च वक्तव्यो भरतो वचनान्मम ।
यौवराज्यमवाप्य त्वं पूजयेथा नराधिपम् ॥ २२ ॥
त्वया शुश्रूष्यमाणो हि न शोचति यथा नृपः ।
मत्स्नेहादर्हसि तथा कर्तुमित्यभिनिः श्वसन् ॥ २३ ॥
ममा मातृषु सर्वासु वर्तेथा इति चाब्रवीत् ।
भरतं पृथिवीपाल पुत्रं ते कैकयीसुतम्[8] ॥ २४ ॥
एवमादि वचो धर्म्यं ब्रुवन्नेव नराधिप ।
बाष्पवेगोपरुद्धात्मा मुमोचाश्रूणि[9] ते सुतः ॥ २५ ॥
ईषद्रोषपरीतस्तु सौमित्रिरिदमब्रवीत् ।
केनायमपराधेन राज्ञा पुत्रो निवासितः ॥ २६ ॥
मया तातद्धनेत् किञ्चित् कार्कश्याद्विप्रियं[10] कृतम् ।
आर्यस्य तु परित्यागे कारणं नोपलक्ष्यते ॥ २७ ॥
यदि प्रव्राजितो रामः कैकेय्याः प्रियकारणात् ।
वरदाननिमित्तं वा न कृतं साधु सर्वथा ॥ २८ ॥
निरुद्धं धर्मकीर्तिभ्यां गञ्जेदं बुद्धिलाघवात् ।
अयशस्यं कृतं मन्ये मत्पुत्रस्य निवासनम् ॥ २९ ॥
मम तातस्य तातस्य पितृस्नेहोऽस्मि कश्चन ।

8 ख, ग—कैकयी० । 9 ग—ममोचाश्रूणि । ख, के, ञ—मुमोचाश्रूणि ।
10 ग—कर्कश्याद्वि० ।

पिता माता सुहृद् भ्राता रामो बन्धुर्गुरुश्च मे ॥ ३० ॥
लोकप्रियमिमं त्यक्त्वा लोकनाथं च राघवम् ।
राज्ञा किमिव कल्याणं भरतादभिकांक्षितम् ॥ ३१ ॥
सुमन्त्र भरतश्चैव वाच्यस्ते राजसन्निधौ ।
अमर्षयसि चेत् किंचिच्चं राज्याद्विप्रतिक्रियाम्[11] ॥ ३२ ॥
ततो मातृषु सर्वासु ममतामभ्युपागतः ।
राज्याभिमानमुत्सृज्य वर्तस्वेत्यादिदेश ह ॥ ३३ ॥
जानकी तु विनिःश्वस्य वाष्पसन्नाक्षरा नृप ।
भूतापहतचित्तेव निरीक्षन्ती मनस्विनी ॥ ३४ ॥
अदृष्टपूर्वव्यसना राजपुत्री यशस्विनी ।
पर्यश्रुनयना[12] दीना नैव मां किञ्चिदब्रवीत् ॥ ३५ ॥
उदीक्षमाणा भर्तारं मुखेन परिशुष्यता ।
मुमोच केवलं वाष्पं मां निवृत्तमवेक्ष्य सा ॥ ३६ ॥
स चापि रामोऽश्रुमुखः[13] कृताञ्जलिर्ननाम पादौ तव शोकविह्वलः ।
तथैव सीता रुदती तनावला नृदेव पादौ शिरसा नमस्यति ॥ ३७ ॥
इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे रामसन्देशाख्यानं
नाम द्विषष्टितमः सर्गः ॥ ६२ ॥

---

11 ल—त्क्रियम् । 12 म—पर्यस्य० । घ, ल, कै—पर्यस्त्र० । 13 थ, फं, ल, म—०ऽस्रमुखः ।

[बं–५९]=[त्रिपष्ठितमः सर्गः]=[दा–५९]

इति ब्रुवाणं सन्देशं सुमन्त्रं मन्त्रिसत्तमम् ।
ब्रूहि शेषं पुनरिति राजा वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा सुमन्त्रो बाष्पविक्लवम् ।
कथयामास भूयोऽपि रामवृत्तान्तविस्तरम् ॥ २ ॥
जटाः कृत्वा महाराज चीरवल्कलधारिणौ ।
गङ्गामुत्तीर्य तौ वीरौ प्रयागाभिमुखौ गतौ ॥ ३ ॥
अग्रतो लक्ष्मणो याति ततो मध्येऽथ जानकी ।
रामस्तुपृष्ठतो याति पालयन् रघुनन्दनः ॥ ४ ॥
तांस्तथा गच्छतो दृष्ट्वा निवृत्तोऽस्म्यवशस्तदा ।
ततो मम निवृत्तस्य तुरगा बाष्पविक्लवाः ॥ ५ ॥
राममेवानुपश्यन्तो ह्रेषमाणा[1] विचुक्रुशुः ।
उभाभ्यां राजपुत्राभ्यां ततः कृत्वाऽहमञ्जलिम् ॥ ६ ॥
त्वद्गौरवभयाद् राजंस्त्वरावान् पुनरागतः ।
गुहेन सह कृत्स्नं च तत्रैकदिवसं स्थितः ॥ ७ ॥
आशया यदि रामो मां पुनराह्वयेदिति ।
विषयेषु नरव्याघ्र रामव्यसनकर्षिताः ॥ ८ ॥
अपि वृक्षाः परिम्लानाः सपुष्पस्तबकांकुराः ।
सवाप्याः सरितश्चासन् सुतप्तकलुषोदकाः ॥ ९ ॥
प्रम्लानपुष्कराश्चासन् पद्मिन्यो विगतत्विषः ।

1 थ, ल, म—हेर ।

ध्यानैकचित्ताः स्तिमिता न विचेरुर्मृगद्विजाः ॥ १० ॥
आसीच्च रामशोकेन निष्कूजमिव[2] काननम् ।
जलजानि च सत्त्वानि स्थलजानि च सर्वशः ॥ ११ ॥
स्थानेभ्यः स्तंभितानीव[3] सर्वतो नाचलन्नृप ।
पुरे राष्ट्रे च ते राजन् पौरजानपदे जने ॥ १२ ॥
तं न पश्याम्यहं कञ्चिद् यो न शोचति ते सुतम् ।
अयोध्यां प्रविशन्तं मां गर्हयन्ति समन्ततः ॥ १३ ॥
पौरा दुःखाभिमन्तप्ता विना राममुपागतम् ।
विमानहर्म्यप्रासादगवाक्षस्थाश्च योषितः ॥ १४ ॥
उत्सृज्याभ्यागतं रामं मां दृष्ट्वा चुक्रुशुर्भृशम् ।
अश्रुपूर्णेक्षणा[4] दीना निरीक्षन्त[5] उपागतम्[5] ॥ १५ ॥
हा नृशंस क्व ते रामः स नीत इति चाब्रुवन् ।
नामित्राणां न मित्राणां नोदासीनजनस्य च ॥ १६ ॥
अहमार्ततया कञ्चिद्विशेषमुपलक्षये ।
दीनातुरा[6]ऽऽर्तपुरुषा[6] प्रम्लानोपवनद्रुमा ॥ १७ ॥
परिदेवितार्तकरुणा[7] रुदितस्वननादिता ।
निरुत्साहा निरानन्दा निर्वषट्कारमङ्गला[8] ॥ १८ ॥

---

2 कै, ल—निष्कुजमिव । 3 च—स्तंभितान्येच । 4 कै, व, ल—अस्तु० । म—आस्त्र० । 5 ल—निरीक्षन्तमुपाग० । 6 कै—दीनार्त्तपात्तपुरुषा । म—दीनातुरात० । य—दीनातुरात्तु० । ल—दीनात्तरातु० । 7 कै—परिदेवित्तांतकरुणा । म—परिदेवितात० । य परिदेविताकरुणा । 8 के–
9 निर्विषंकारमंगला । म, ल—निर्वषंकार० ।

रामप्रव्रजनार्तेयं[9] पुरी ते न विराजते ।
इत्येवमादि करुणं सुमन्त्रवचनं ततः ॥ १९ ॥
श्रुत्वोवाच नृपो दीनो बाष्पगद्गदया गिरा ।
मिथ्योपचारात् कैकेय्या वञ्चितेन कथं मया ॥ २० ॥
न मन्त्रितं विमूढेन धर्मज्ञैर्गुरुभिः सह ।
केनाहं मोहितः पापो यन्मया सह मन्त्रिभिः ॥ २१ ॥
असंमन्त्र्य विमूढेन सहसा साहसं कृतम् ।
भवितव्यं तथा तेन रामेणामिततेजसा ॥ २२ ॥
मया तु तावदशिवं प्राप्तं तद्विप्रवासनात् ।
इदानीमपि सूत त्वं गत्वा रामं निवर्तय ॥ २३ ॥
नाहं शक्तो विना रामं जीवितुं दैवमोहितः ।
गतागतेन वा कालो दीर्घ एव भविष्यति ॥ २४ ॥
मामेव रथमारोप्य क्षिप्रं रामं प्रदर्शय ।
सिंहस्कन्धो महाबाहुः क्वासौ लक्ष्मणपूर्वजः ॥ २५ ॥
यदि जीवामि साध्वेनं पश्येयं सह सीतया ।
पूर्णेन्दुकान्तवदनं चारुपद्मदलेक्षणम् ॥ २६ ॥
यदि रामं न पश्यामि यास्यामि यमसादनम् ।
सुमन्त्र यदि ते किञ्चिन्मया पूर्वं कृतं प्रियम् ॥ २७ ॥
तदा प्रापय मां रामं प्राणा हि त्वरयन्ति माम् ।
रामप्रवाससलिले बाष्पशोकोर्मिमालिनि ॥ २८ ॥
अगाधव्यसने[10] मग्नो घोरेऽहं शोकसागरे ।

9 म—प्रमार्जनं सार्यं । 10 ब—अगाध० ।

इष्टपुत्रवियोगार्तिदुःखितेन गतायुषा ॥ २९ ॥
मयाऽयं जीवता सूत दुस्तरः शोकसागरः ।
हा राम रामानुज हा हा वैदेहि पतिव्रते ॥ ३० ॥
न मां जानीत दुःखार्तं म्रियमाणमनाथवत् ।
कोन्वस्ति दुःखिततरो मया दुष्कृतकर्मणा ॥ ३१ ॥
योऽहमन्तर्गतप्राणो नैव द्रक्ष्यामि राघवम् ।
इति स्म[11] राजा करुणं महायशा विलप्य दुःखोपहतेन चेतसा ।
गतासुकल्पः सहसैव मूर्च्छितः पपात भूयोऽपि नृपासनात् तदा॥३२
इति विलपति पार्थिवे विमूढे भृशकरुणं पतिते पुनर्धरण्याम् ।
अतिभृशमतिशोकदुःखसक्ता करुणतरं विललाप राममाता ॥ ३३ ॥

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो नाम
त्रिषष्टितमः सर्गः ॥ ६३ ॥



11 कै—इति स ।

[व–६०]=[चतुष्षष्टितमः सर्गः]=[दा–६०]

सा तु भूतोपसृष्टेव गतसत्त्वेव चासुखा ।
विललापातुरा देवी कौशल्या पतिता क्षितौ ॥ १ ॥
नय मामपि तत्राशु यत्र रामः सलक्ष्मणः ।
सुमन्त्र नहि रामेण विना जीवितुमुत्सहे ॥ २ ॥
सयोजय रथं साधु नय मामपि काननम् ।
अथ मां न नयस्याशु गमिष्यामि यमक्षयम् ॥ ३ ॥
बाष्पोपरुद्धया वाचा पुरस्तात् सज्जमानया ।
वाक्यमाश्वासयन् देवीं सूतः प्राञ्जलिरब्रवीत् ॥ ४ ॥
त्यक्तुमर्हसि कल्याणि शोकं पुत्रवियोगजम् ।
तत्रापि स सुखी रामो रंस्यते देवि निर्वृतः ॥ ५ ॥
लक्ष्मणो ह्यस्य तेजस्वी पादौ परिचरन् वने ।
वससीतः परं लोकमर्जयन् धर्मनिर्जितम् ॥ ६ ॥
विजनेऽपि वने सीता भर्तुर्बाहुव्यपाश्रया ।
देवि स्वर्गोपमे स्थाने सह रामेण वत्स्यति ॥ ७ ॥
नास्या दैन्यं विषादं वा सुसूक्ष्ममपि लक्षये ।
वने यथोचितो वासो वैदेह्याः प्रतिभाति मे ॥ ८ ॥
नगरोपवने रम्ये यथाऽरमत सा पुरा ।
विजनेऽपि तथाऽरण्ये रंस्यते देवि मा शुचः ॥ ९ ॥
वैदेही सह रामेण पूर्णचन्द्रनिभानना ।
अतुलां विन्दते प्रीतिं तां न शोचितुमर्हसि ॥ १० ॥
तद्गतं हृदयं तस्यास्तदधीनं च जीवितम् ।

अयोध्याऽपि भवेत्तस्या रामेण रहिताऽटवी ॥ ११ ॥
पथि पृच्छति वैदेही ग्रामांश्च नगराणि च ।
रामं कमलपत्राक्षं सरांसि सरितस्तथा ॥ १२ ॥
रामलक्ष्मणयोर्मध्ये सीता राजति ते स्नुषा ।
विष्णुवासवयोर्मध्ये यथा श्रीरिवरूपिणी ॥ १३ ॥
अध्वनि श्रमसन्तापदुःखैरप्याततपेन च ।
अध्वनि श्रमसन्तापदुःखैरप्याततपेन च ।
न विमुञ्चति[1] वैदेही चन्द्रांशुसदृशीं प्रभाम् ॥ १४ ॥
सदृशं शतपत्रस्य पूर्णचन्द्रसमद्युति ।
वदनं कृत्स्नमार्तायाः सीताया न विलुप्यते ॥ १५ ॥
प्रकृत्या ऽलक्तकस्पर्शौ लाक्षारससमप्रभौ ।
तथैव रेजतुस्तस्याश्चरणौ पद्मवर्चसौ ॥ १६ ॥
इदानीमपि वैदेही तत्र सन्न्यस्तभूषणा ।
सुरूपशोभया हीना शोभते ऽप्यधिकं वने ॥ १७ ॥
इदानीमपि वैदेही बालैरनुगता मृगैः ।
नूपुरामुक्तचरणा खेलं गच्छति जानकी ॥ १८ ॥
गुप्ता पुरुषसिंहेन सिंहेनेव गिरेर्गुहा ।
दुष्प्रधर्षा दुष्प्रधर्षं सर्वेषां वनचारिणां ॥ १९ ॥
सिंहं वने गजं वाऽपि व्याघ्रं वा प्रेक्ष्य जानकी ।
न त्राममेति गच्छन्ती वने भर्तृव्यपाश्रया ॥ २० ॥
तथैव रामः पुत्रस्ते लक्ष्मणश्चैव वीर्यवान् ।

---
1 ख—चै० । 2 ख—त्रासमव ।

उदारवपुषौ वीरौ न म्लानिमधिगच्छतः ॥ २१ ॥
परस्परप्रियहितं कुर्वाणौ प्रियवादिनौ ।
न पितुर्नैव मातुश्च नान्यस्य स्मरतो वने ॥ २२ ॥
न ते शोच्यास्त्वया देवि परस्परहिते रताः ।
इदं हि चरितं तेषां ख्यातिं लोकेषु यास्यति ॥ २३ ॥
य शोकं परिगृह्य मानसं महर्षिकल्पस्तपसि व्यवस्थितः ।
तो मूलफलाशनः स ते सुतो महात्मा कुरुते महत्तपः ॥२४॥
सुमन्त्रेण हितार्थवादिना निवार्यमाणाऽपि सती सुतप्रिया ।
प्रलापाद्विरराम दुःखिता नरेन्द्रपत्नी प्रियपुत्रलालसा ॥२५॥
र्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽऽश्वासनं
नाम चतुष्षष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

[वं-६१]=[पञ्चषष्टितमः सर्गः]=[दा-६१]

प्रत्याश्वस्तं तु राजानमुत्थाय भृशदुःखितम् ।
कौशल्या ऽऽश्वासयामास शयने शोकविक्लवम्[1] ॥ १ ॥
अश्रूणि मार्जयन्ती च विलपन्ती च दुःखिता ।
भूयः प्रत्यागतप्राणमिदं वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥
यदिदं त्रिषु लोकेषु प्रथितं ते महद्यशः ।
पुत्रप्रव्राजनात्तत्ते प्रणष्टमिव लक्षये ॥ ३ ॥
को हि नाम प्रियं पुत्रं त्यजेदनपकारिणम् ।
प्रतिश्रुत्य सतां मध्ये यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ४ ॥
यदि चावश्यदातव्यः प्रियार्थं ते वरः प्रभो ।
किमर्थं ते प्रतिज्ञातं रामस्याऽप्यभिषेचनम् ॥ ५ ॥
अनृताद्यदि वा भीतः प्रव्राजयसि वा वनम् ।
प्रतिज्ञायाभिषेक्ता ऽस्मि श्वस्त्वामित्यभिमन्त्रितम् ॥ ६ ॥
स्त्रीहेतोः प्रथमं दत्त्वा विप्रलब्धस्त्वया सुतः ।
पश्योभयं विचार्यतत्तथाप्यनृतवागसि ७ ॥
इक्ष्वाकूणामयं वंशः सत्यनाक् प्रथितः क्षितौ ।
तत्र त्वया यौवराज्यं प्रतिज्ञायानृतं कृतम् ॥ ८ ॥
श्लोकश्चायं महाराज पौराणः प्रथितः क्षितौ ।
सत्यं पुरा तुलयता स्वयं गीतः स्वयम्भुवा ॥ ९ ॥
अश्वमेधसहस्रं च सत्यं च तुल्या धृतम् । तया
अश्वमेधसहस्राद्धि सत्यमेवातिरिच्यते ॥ १० ॥

---

1 ए—०विह्वलम् । Om ।

जीवितेनाप्यतः सत्यं भुवि रक्षन्ति साधवः ।
न हि सत्यात्परो धर्मस्त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ ११ ॥
सत्यात्समभवत्सोमः सोमाद् ब्रह्म ततोऽमृतम ।
अद्भ्योऽग्निरग्नेः पृथिवी भूमेर्भूतानि जज्ञिरे ॥ १२ ॥
भूतेभ्यश्च विसर्गोऽयं पुनरावर्तकः स्मृतः ।
एवमेष विसर्गश्च सत्ये देव प्रतिष्ठितः ॥ १३ ॥
सत्येनार्कः प्रतपति सत्येनाप्यायते शशी ।
सत्येनामृतमुद्भूतं सत्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ १४ ॥
वृषश्चतुष्पाद् भगवान् धर्मः सत्ये प्रतिष्ठितः ।
द्यौरन्तरिक्षं पृथिवी सत्येनैव ध्रियन्त्युत ॥ १५ ॥
सत्येनैकेन यांल्लोकान् यान्ति सत्यव्रता नराः ।
न यान्तिताननृतिका इष्ट्वा क्रतुशतैरपि ॥○१६ ॥
सत्यप्रतिज्ञा नृपते राजानः सत्यवादिनः ।○
पथिभिस्तेऽत्र गन्तव्यं गता यैस्ते पितामहाः ॥ १७ ॥
ह्ययेव कथिता सद्भिः पन्थानां वदतां वर ।
अहिंसा चैव सत्यं च यत्र धर्मः प्रतिष्ठितः ॥ १८ ॥
तदिदं रक्षितं सद्भिः सत्यमुत्पादितं त्वया ।
धर्मं चैनं समास्थाय त्वयैवोन्मथितं यशः ॥ १९ ॥
वाति गन्धः सुमनसां प्रतिवातं कथञ्चन ।
धर्मयुक्तमनुष्याणां वाति गन्धः समन्ततः ॥ २० ॥
चन्दनानां महार्हाणामगुरूणां तथा प्रभो ।

○ङ ।

नावस्थायाः[2] चिरं गन्धो यथा कीर्तिमयो नृणाम ॥२१॥
स तवायं गुणहरो गन्धो लोके चरिष्यति ।
अशुभस्यास्य महतः कर्मणः शाश्वतीः समाः ॥ २२ ॥
इदं मन्ये सुमहती भ्रूणहत्या त्वया कृता ।
प्रियार्थं वसुधा दत्ता रामः प्रव्राजितो वनम् ॥ २३ ॥
दिष्ट्या न याचितं त्वेतद्रामोऽयं वध्यतामिति ।
नत्वेतदपि कैकेय्या दुर्लभं त्वयि राजनि ॥ २४ ॥
न ह्यद्भुतमिद लोके यद्वदध्या बलवत्तरैः ।
ईश्वरैर्दुर्बलः क्रुध्यः क्रतौ पशुरिवानलः ॥ २५ ॥
धृष्यन्ते[3] हि नरा लोके दुर्बला बलवत्तरैः ।
आक्रम्यमाणा निर्जने सिंहैरिव महाद्विपाः ॥ २६ ॥
स मे सुतः सुशक्तो ऽपि धर्मं प्रति तु दुर्बलः ।
अतः सकामानुरसृज्य मा च त्यक्त्वा वनं गतः ॥ २७ ॥
किं तु मे त्वामुपालभ्य राजन् परुषया गिरा ।
परस्य कृत्वा किं मन्युमात्मभाग्येष्वसाधुषु ॥ २८ ॥
अनुनीता ऽस्मि रामेण गच्छता बहुविस्तरम् ।
न मे वाच्यः पिता किञ्चिद्भवत्येति पुनः पुनः ॥ २९ ॥
न मदर्थं त्वया वाच्यो रूक्ष मातः पिता मम ।
वाग्भिरुद्वेजनीयाभिरिति मां राघवोऽन्वशात् ॥ ३० ॥
माऽहं तेनानुशिष्टा ऽपि पुत्रस्नेहबलात्कृता ।
अवशा त्वा ब्रवीम्येतन्मया शोकमहार्णवे ॥ ३१ ॥

---

2 म—नावस्थाया । च ल—नावस्थया ।

का हि नामाप्रियं ब्रूयाद् भर्तारमिह मद्विधा ।
स्मरन्ती सत्कुले जन्म विनयं चापि जानती ॥[3]३२ ॥
*लोके हि पुरुषः स्त्री वा तथा तत् कुरुते स्वयम् ।
*यथा मधुरमुग्रं वा शृणोति लभतेऽपि वा ॥ ३३ ॥
नूनं हि मम भाग्यानां वैमुख्याद् राघवस्य च ।
अचिन्त्यत्वाच्च दैवस्य त्वमेतत् कृतवान्नृप ॥ ३४ ॥
न खल्वहं त्वा नृप दोषतो ब्रवीम्यनीश्वरं हीश्वरदैशिकं जगत् ।
दशा कृतान्तोपहतेयमाखिला किमत्र शक्यं पुरुषेण चेष्टितुम्[4] ॥३५॥
अतो नियोगात् तव सत्यवादी सत्यां प्रतिज्ञां नृप पालयंस्ते ।
इतो महात्मा वनमेव रामो गतः सुखान्यप्रतिमानि हित्वा ॥३६॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्योपालम्भो
नाम पञ्चषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

3 ख—पृष्यंते । *म—नास्ति । 4 ख—चिंतिताम् ।

[बं-६२]=[षट्षष्टितमः सर्गः]=[दा-६१]

तथा तु बहु कौशल्या विलप्य क्रोधमूर्च्छिता[1] ।
अनिकृष्यैव रोषस्य पुनरेवाभ्यभाषत ॥ १ ॥
त्वया-यस्त्वनियुक्तोऽपि भक्त्या राममनुव्रतः ।
लक्ष्मणोऽनुगतः प्रेम्णा तं शोचामि विशेषतः ॥ २ ॥
यो ऽभिषेके प्रतिहते मम पुत्रस्य धीमतः ।
निःसृतो धनुरादाय तूर्णमश्रुतविस्तरः ॥ ३ ॥
क्रोधेन महता ऽऽविष्टो रामराज्यापहारणम् ।
न स जानाति धर्मात्मा स्वगृहादग्निमुत्थितम् ॥ ४ ॥
गृहीतचीरं यो दृष्ट्वा राघवं प्रियराघवः ।
पूर्वमेव सचीरो ऽभूत्तस्य शोचामि धीमतः ॥ ५ ॥
क्रियमाणं नरेन्द्रेण मम निर्विषयं सुतम् ।
योऽनुयातः स्वयं भक्त्या भ्रातरं भ्रातृवत्सलः ॥ ६ ॥
लक्ष्मणं तमहं रामाच्छोचाम्यद्य विशेषतः ।
राज्ञो महेन्द्रकल्पस्य जनकस्य महात्मनः ॥ ७ ॥
सुतां तामनवद्याङ्गीं वैदेहीं चिन्तयाम्यहम् ।
अत्यन्तसुखसंवृद्धा लालिता[2] पितृवेश्मनि ॥ ८ ॥
अत्यन्तसुकुमाराङ्गी श्यामा पद्मदलेक्षणा ।
या सुखानि परित्यज्य सर्वांश्च ज्ञातिबान्धवान् ॥ ९ ॥
पतिं याऽनुसृता यान्तं किमवस्थाऽद्य सा सती ।
कथं सा सुतनुः साध्वी सुकुमारी सुखोचिता ।

---

1 के, ग, ल—बहु० । 2 के, ग, ल—लाडिता ।

शीतमुष्णं च वर्षं च वैदेही प्रसहिष्यति ॥ १० ॥
या श्राम्यति गृहेऽप्यस्मिश्चरन्ती वसुधातले ।
कथं सा विजनेऽरण्ये वैदेही प्रचलिष्यति[3] ॥ ११ ॥
भुक्त्वा स्वादूनि भोज्यानि श्लक्ष्णानि जनकात्मजा ।
कथं धन्यान्यभोज्यानि कटुतिक्तानि भोक्ष्यते ॥ १२ ॥
शयनानि महार्हाणि पुरा संसेव्य मैथिली ।
कथं पर्णावृतां भूमिमधिवत्स्यति मे स्नुषा ॥ १३ ॥
वेणुवीणास्वनैः सुप्ता लालिता या विबोध्यते ।
तन्वङ्गी सा कथं घोरैर्बहुपक्षिमृगारुतैः[4] ॥ १४ ॥
पुरा मुख्यानि वस्त्राणि परिधाय यशस्विनी ।
कथं सा कुशचीराणि गात्रैः संधारयिष्यति ॥ १५ ॥
सुललाटं सुकेशान्तं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।
सुदतं सुहनुस्‍ङ्कं पूर्णचन्द्रसमप्रभम् ॥ १६ ॥
धूयमानं वने वातै र्निपीतं चार्करश्मिभिः ।
कथं तच्चारु वदनं तस्या वैवर्ण्यमेष्यति ॥ १७ ॥
देवराजप्रतीकाशो यशस्वी पुरुषर्षभः ।
ध्वजो नृपकुलस्यास्य किमवस्थः स संप्रति ॥ १८ ॥
नूनं स्वपिति मेदिन्यां महार्हशयनोचितः ।
भुजं परिघसङ्काशमुपधाय महाभुजः ॥ १९ ॥
चारुघोणं विशालाक्षं पूर्णचन्द्रसमद्युति ।
कदा द्रक्ष्यामि रामस्य मुखं पद्मदलेक्षणम् ॥ २० ॥

---

3 म, ल—विचरिष्यति । 4 ख—॰मृगारुतैः ।

धात्रा मे हृदयं नूनमश्मसारमयं कृतम् ।
हीनं यद्रामचन्द्रेण न विदीर्णं सहस्रधा ॥ २१ ॥
एतद् ते कृपणं कर्म कृतं लोकविगर्हितम्[5] ।
निरस्ताः परिधावन्ति त्रयस्ते यन्महावने ॥ २२ ॥
यदि पञ्चदशे वर्षे न रामः पुनरेष्यति ।
ततस्त्यक्ष्याम्यहं प्राणान् न कार्यं जीवितेन मे ॥ २३ ॥
सर्वथा ह्यागतो रामः प्रवासात्पुरुषर्षभः ।
न स तां श्रियमन्विच्छेद्दीयमानामपि स्वयम् ॥ २४ ॥
भरतेनोपभुक्तां हि पृथिव्यां विपुलां श्रियम् ।
नोपभोक्ष्यति धर्मज्ञः परभुक्तामिव स्रजम् ॥ २५ ॥
न हि सिंहः परालीढमामिषं भोक्तुमर्हति ।
नृसिंहो भरतालीढं रामो राज्यं न भोक्ष्यते ॥ २६ ॥
आज्यं तिलाः समिधेन कुशा यूपाः[6] स्रुचस्तथा ।
नैतानि यातयामानि कल्पन्ते[7] पुनरध्वरे ॥ २७ ॥
अतो राज्यमिदं पश्चात् ततो भ्रातु र्यवीयसः ।
नाभिपत्तुमलं रामः पीतसोममिवाध्वरे ॥ २८ ॥
न चेमां धर्षणां रामो ह्यसहिष्यदमर्षणः ।
नाधारयिष्यद्यदि ते गौरवं मन्दरोपमम् ॥ २९ ॥
शितैः शरैः स हि क्रुद्धो दारयेदपि मन्दरम् ।
त्वां तु नोत्सहते वक्तु धर्मात्मा पितृगौरवात् ॥ ३० ॥

---

5 च—लोके० । 6 के—यूपा । प्र—यूप । 7 के, म—कल्पंते ।

ससोमार्कग्रहगणं नभस्ताराविचित्रितम् ।
पातयेद्यो भुवि क्रुद्धः स त्वां न व्यतिवर्तते ॥ ३१ ॥
आचालयेद्दारयेद्वा महीं शैलशताचिताम् ।
यस्तेजस्वी स ते पुत्रो गौरवान्नातिवर्तते ॥ ३२ ॥
एवंवीर्यो महासत्त्वस्त्वया ख्यातपराक्रमः ।
जनयित्वाऽऽत्मना त्यक्तो जलजेनात्मजो यथा ॥ ३३ ॥
अनेन ते ऽतिक्रमेण मन्ये ऽहं पृथिवीपते ।
त्वत्तः श्रियमतिक्रान्तां कीर्तिं पापान्तरादिव[8] ॥ ३४ ॥
द्विजातिभिरयं धर्मः शास्त्रदृष्टः सनातनः ।
गुरोर्दुष्टान्महाराज गौरवं विनिवर्तते ॥ ३५ ॥
गुरुर्दुष्टः परित्याज्यस्तथा माता तथा पिता ।
यो ह्यनर्थाय कल्पेत स तु शत्रुर्न बान्धवः ॥ ३६ ॥
न त्वेवं भविता कोपस्त्वयि रामस्य राघव ।
त्वया यदि कृतं पापं न स धर्माच्चलिष्यति ॥ ३७ ॥
एवमुक्त्वा तु कौशल्या विलपन्ती यशस्विनी ।
ततो हेत्वर्थसंयुक्तं पुनरेवाब्रवीद्वचः ॥ ३८ ॥
प्रथमा गतिरात्मैव द्वितीया गतिरात्मजः ।
सन्तो गतिस्तृतीयोक्ता चतुर्थी धर्मसंश्रयः ॥ ३९ ॥
एतेभ्यः परिभ्रष्टो गतिभ्यस्त्वं नराधिप ।
वने परित्यजन् रामं साधुं सुतमकारणम् ॥ ४० ॥
न हि रामं परित्यज्य चिरं शक्तोऽसि जीवितुम् ।

8 ङ—पापांतरामिव ।

मद्धर्मोपार्जिताल्लोकात् कैकेय्यर्थे परिच्युतः ॥ ४१ ॥
मत्यं कीर्तिं च मां चैव त्यक्त्वा रामं सुतं च मे ।
प्राणांस्त्यक्ष्यसि दुःखार्त्तः सर्वथा ऽस्मि हता त्वया ॥ ४२ ॥
हता त्वयेयं नगरी सराष्ट्रा कीर्त्तिश्च धर्मश्च तथैव चात्मा ।
अहं सपुत्रा नृपनागराश्च सर्वे हताः कैकयिराज्यदानात् ॥४३॥
एता गिरो निष्ठुरदारुणाक्षराः श्रुत्वाऽथ[1] राजा सुतशोकदुःखितः ।
विनिःश्वसंश्चापि निमीलितेक्षणः शुशोच रामं हतसत्त्वचेतनः ॥४४॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याप्रलापो
नाम षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥



१ च—श्रुत्वा च ।

[वं-६३]=[सप्तषष्टितमः सर्गः]=[दा-६२]

कौशल्ययैवं नृपति र्वाक्शरैरभिपीडितः[1] ।
प्रमोह शयने शुभ्रे दुःखेनामीलितेक्षणः ॥ १ ॥ [N
प्रतिलभ्य ततः संज्ञां समुन्मील्य च लोचने ।
परिपार्श्वस्थितां दृष्ट्वा कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ [३
नार्हस्युरसि मे क्षारं निषेक्तुं सुतवत्सले । [N
पुत्रशोकार्तमनसो हृदयं मे विदीर्यते ।
असह्यान्यकृतप्रज्ञे[2] वाग्वज्राणि विमुञ्चसि ॥ ३ ॥ [N
ननु भर्तेव साध्वीनां गुणवान्निर्गुणोऽपि वा ।
दैवतं च गतिश्चेति महापूज्यतमो मतः ॥ ४ ॥ [८
क्षमस्वातिक्रमं देवि भृशार्तस्त्वां प्रसादये ।
हन्तुमर्हसि मै भूयो दैवेन निहतं न माम् ॥ ५ ॥ [N
जाने त्वां देवि धर्मज्ञां दृष्टलोकपरावराम् ।
अतो नार्हसि मे भूयो वक्तुमेतादृशं वचः ॥ ६ ॥ [९
इति राज्ञोऽतिकरुणं श्रुत्वा दीनस्य भाषितम् । [१०पू
पुत्रशोकं परित्यज्य कौशल्या पतिवत्सला ॥ ७ ॥ [N
शिरस्यञ्जलिमाधाय[3] भृशं संभ्रान्तमानसा । [११पू
शिरसा नृपतेः पादौ प्रणिपत्येदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ [N
अतिक्रमं मे नृपते त्वमिमं क्षन्तुमर्हसि ।

फे, घ, म—वाग्छरै० । ङ—वाक्करै० । 2 फै, य, ङ—०हारहत- । म—०न्याहुते प्राज्ञेर् । 3 च, म—०मादाय ।

१०] अनार्यं हि मयोक्तोऽसि पुत्रशोकविमूढया ॥ ९ ॥ [N
देवभूतेन भर्त्रा या चमितं (तुं?) न प्रपद्यते ।
११] कृताञ्जलि भृशार्तेन हता सेह परत्र च ॥ १० ॥ [N
क्षमस्व राजन्नार्ताया व्यतिक्रममिमं प्रभो ।
१२] प्रभुश्चैवेश्वरश्चासि मम रामस्य चोभयोः ॥ ११ ॥ [N
जानामि धर्मं धर्मज्ञ जाने त्वां सत्यवादिनम् ।
१३] पुत्रशोकार्तयेदं तु मया किमपि भाषितम् ॥ १२ ॥ [१४
शोको नाशयते प्रज्ञां शोको नाशयते श्रुतम् ।
१४] शोको धृतिं नाशयति नास्ति शोकसमं तमः ॥ १३ ॥ [१५
सोढुं शक्योऽग्निसंस्पर्शः शस्त्रस्पर्शश्च दारुणः ।
१५] न तु शोकभवं दुःखं संसोढुं नृप शक्यते ॥ १४ ॥ [१६
सर्वज्ञा धृतिमन्तोऽपि छिन्नधर्मार्थसंशयाः ।
१६] मुनयोऽप्यत्र मुह्यन्ति शोकोपहतचेतसः ॥ १५ ॥
पञ्चपाणि गतान्यद्य दिवसानि सुतस्य मे ।
१७] तानि वर्षशतानीव दुःखार्ताया गतानि मे ॥ १६ ॥ [१७
तद्गतासक्तचित्तायाः शोकौघो मे प्रवर्धते ।
१८] जलौघवेगो गङ्गाया महानिव तपात्यये ॥ १७ ॥ [१८
एष शोकमहाशत्रुः सुबद्धानपि मानवान् ।
N] प्रसह्य हरते वृक्षान्नदीरय इवोल्वणः[4] ॥ १८ ॥ [N
एव सभापमाणायास्तस्याः सुकरुणं वचः ।

4 के—इवोल्वण ।

१९] कौशल्याया जगामास्तं सविता दिवसक्षये ॥ १९ ॥ [१९
एवं प्रह्लादितो वाक्यैर्मध्यैः[5] कौशल्यया नृपः ।
२०] शोकश्रमपरिम्लानः शनैर्निद्रावशं ययौ ॥ २० ॥ [२०

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथप्रसादनं नाम सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥



—5 के, म—मध्ये ।

[वं-६४]=[अष्टषष्टितमः सर्गः]=[दा-N]

एवं तु विलपन्तीं तां कौशल्यां प्रमदोत्तमाम् ।
१] इदं धर्यान्वितं वाक्यं सुमित्रा धर्म्यमब्रवीत् ॥ १ ॥
दिव्यैर्गुणगणैर्युक्तः पुत्रस्ते देवि राघवः ।
२] पितुर्नियोगे तिष्ठन्तं न तं[1] शोचितुमर्हसि ॥ २ ॥
नादेवसत्त्वा नाप्रज्ञाः पुरुषा नाल्पदर्शनाः ।
३] पितुर्नियोगे तिष्ठन्ति न चाकल्याणभागिनः ॥ ३ ॥
यत् तवार्ये गतः पुत्रो हित्वा राज्यं सुखानि च ।
४] प्राप्स्यं तेन सुमहत् कल्याणमिति मे मतिः ॥ ४ ॥
सद्भिराचरिते धर्म्ये[2] यशस्ये वर्त्मनि स्थितम् ।
५] पुत्रं धर्मभृतां श्रेष्ठं न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ ५ ॥
अस्यानुवर्तते वृत्तं लक्ष्मणो यो ममात्मजः ।
६] तमप्यसौ नार्हसि त्वं शोचितुं भ्रातृवत्सलम् ॥ ६ ॥
अरण्यवासदुःखानि जानन्त्यपि च जानकी ।
७] सुखसंवर्धिता त्यक्त्वा गृहवाससुखानि च ॥ ७ ॥
अनुगच्छति भर्तारं या सा धर्मपरायणा ।
८] तां यशोभाजनां[3] धन्या नैव शोचितुमर्हसि ॥ ८ ॥
यशःपताका विपुलां त्रिषु लोकेषु विश्रुताम् ।
९] तद्वन्यते[4] न[5] ते पुत्रस्तं न शोचितुमर्हसि ॥ ९ ॥
रामस्य विपुलं सत्त्वं विज्ञायोदारचेतसः ।
१०] न गात्राण्यंशुभिः सूर्यः सन्तापयितुमर्हति ॥ १० ॥

1 व-त्वं । 2 के, म धर्मे । 3 व-०भजता । 4 म-उतन्ये । 5 के, म, ल-च ।

आदाय सुरभीन् गन्धान् वनेभ्यः सगुणोऽनिलः ।
११] पुत्रं ते नातिशीतोष्णः संसेविष्यति कानने ॥ ११ ॥
भूमावपि शयानं तं वैदेह्या सह राघवम् ।
१२] पितेवांशुकरैः स्पृष्ट्वा ह्लादयिष्यति चन्द्रमाः ॥ १२ ॥
अस्त्राणि यस्मै दिव्यानि विश्वामित्रो ददौ स्वयम् ।
१३] तं त्वं सर्वास्त्रनिद्धांसं कथं शोचितुमर्हसि ॥ १३ ॥
कीर्त्या श्रिया भार्यया च नित्यं स निसृमिर्युतः[6] ।
१४] धृतिमांश्च महासत्त्वः स रामो राज्यमर्हति ॥ १४ ॥
यान्यद्य पुत्रशोकार्ता कौशल्येऽश्रूणि मुञ्चसि ।
१५] आनन्दजानि तानि त्वं रामे मोक्ष्यस्युपस्थिते[7] ॥ १५ ॥
पुत्रस्ते यशसा लोकान् व्याप्य धर्मभृतां वरः ।
१६] चतुर्दशानां वर्षाणामन्ते भोक्ष्यति मेदिनीम् ॥ १६ ॥
कुशचीराम्बरमपि यं यान्तं नरकुञ्जरम् ।
१७] श्रीरिवानुगता सीता तस्य किं नाम दुर्लभम् ॥ १७ ॥
तव पुत्रो वरः पुंसां वनवासादुपागतः ।
१८] प्रलम्बभुजः पादौ संस्पृशन् ह्लादयिष्यति ॥ १८ ॥
तं पादौ वन्दमानं तु दृष्ट्वा राजीवलोचनम् ।
१९] मेघराजीव शैलेन्द्रं वर्षस्यानन्दजाश्रुभिः ॥ १९ ॥
निशम्य तल्लक्ष्मणमातृवाक्यं रामस्य मातुर्नरदेवपत्न्याः ।
शनैः स शोकः प्रशमं जगाम वृष्ट्या यथाऽग्निः परिषिच्यमानः॥२०॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमित्रावाक्यं
नाम अष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

---

6 के-०र्भृतः । 7 के-मोक्षस्यु० । ०म-मोक्षोस्यु० ।

[वं–६५]=[एकोनसप्ततितमः सर्गः]=[दा–६३]

रामे मनुजशार्दूले[1] सानुजे वनमाश्रिते । [N
१] राजा दशरथः श्रीमानापदं समपद्यत ॥ १ ॥ [१पू
रामलक्ष्मणयोरेवं विवासाद् वासवोपमः ।
२] जग्राहोपप्लवगतः तमः सूर्य इवांशुमान् ॥ २ ॥ [२
स षष्ठे दिवसे रामं शोचन्नेव महायशाः ।
३] अर्धरात्रे प्रबुद्धः सन् सस्माराथ स्वदुष्कृतम् ॥ ३ ॥ [४
स्मृत्वा च देवीं कौशल्यामभिभाष्येदमब्रवीत् । [५
४] यदि जागर्षि कौशल्ये शृणु मेऽनहिता वचः ॥ ४ ॥ [N
यदाचरति कल्याणि[2] नरः कर्म शुभाशुभम् ।
५] सोऽवश्यं फलमाप्नोति तस्य कालक्रमागतम् ॥ ५ ॥ [६
गुरुलाघवमर्थानामारंभे ह्यवितर्कयन् ।
६] दोषतो गुणतश्चैव बाल इत्युच्यते बुधैः ॥ ६ ॥ [७
तद्यथाऽऽम्रवनं छित्त्वा[3] पलाशवनमाश्रयेत् ।
७] पुष्पं छित्त्वा[4] फल प्रेप्सु निराशः स्यात् फलागमे ॥ ७ ॥ [८
सोऽहमाम्रवनं छित्त्वा[5] पलाशवनमाश्रितः० ।
८] बुद्धिमोहात् परित्यज्य रामं शोचामि दुर्मतिः ॥०८ ॥ [१०
तच्च लक्ष्येण कौशल्ये[6] तरुणेन धनुष्मता ।०
९] कौमारे० शब्दवेधित्वा०-त्सहसा दुष्कृतं कृतम् ॥९॥ [११
तदिदं मामनुप्राप्तं फलं पापस्य कर्मणः ।

---

1 ल—०शार्दूला । 2 म—कर्माणि । 3 म—हित्वा । 4 म-गता* ।
5 म—मिता (त्वा ?) ० के । 6 ब, ल, म—कोसल्ये ।

१०] भक्षितस्य विषस्येव विपाके जीवितान्तकम् ॥ १० ॥ [१२
अविज्ञानाद्यथा कश्चित्पुरुषो भक्षयेद्विषम् ।
११] तथा मयाऽप्यविज्ञानात् पापं कर्म पुरा कृतम् ॥ ११॥[१३
कौशल्ये[7] त्वय्यनूढायां युवराजो भवाम्यहम् ।
१२] अथ प्रावृडनुप्राप्ता मनःसंहर्षणी मम ॥ १२ ॥ [१४
[१३] आदाय हि रसं भौमं विवस्वांश्चण्डरोचिषा ।
N] अगस्त्यचरितामाशामुपावर्तत भानुमान् ॥ १३ ॥ [१५
आधूण्याना दिशः सर्वाः स्निग्धा वद्‌धिरे घनाः ।
१४] मुदा विजह्रिरे चापि तथा सारङ्गबर्हिणः ॥ १४ ॥ [१६
आकुलाविलतोयानि स्रोतांसि[9] विजलान्यपि । [१९पू
१५] उन्मार्गजलवाहीनि बभूवुर्जलदागमे ॥ १५ ॥ [N
मेघजेनाम्बुना भूमि र्भूरिणा परितर्पिता ।
१६] उन्मत्तशिखिसारङ्गा बभौ हरितशाद्वला ॥ १६ ॥ [N
एतस्मिन्नीदृशे काले वर्तमाने घनागमे ।
१७] बद्ध्वा तूणौ धनुष्पाणिः सरयूमगमं नदीम् ॥ १७ ॥ [N
धनुर्व्यायामशीलत्वाच्छब्दवेधचिकीर्षया ।
१८] तस्या नद्यास्तदा तीर्थं विविक्तमुपसृत्य च ॥ १८ ॥
निपाने निशि वन्यानां मृगाणां सलिलार्थिनाम् । [२१पू
१९] स्थितस्तत्राहमेकान्ते रात्रौ विततकार्मुकः ॥ १९ ॥ [N
तत्राहं महिषं वन्यं गजं वा तीरमागतम् ।
२०] अन्यं वाऽपि मृगं हन्मि शब्दं श्रुत्वाऽभ्युपागतम् ॥२०॥[२१

7 के, ब, म, ल—कोसल्ये । 8 ब, म—संहर्षिणी । 9 के-श्रोतांसि ।

अथाह पूर्यमाणस्य जलकुंभस्य निस्वनम् ।
२१] अचक्षुर्विषयेऽश्रौषं वारणस्येव बृंहितम् ॥ २१ ॥ [२२
ततः सुपुंखं निशितं शरं सन्धाय कार्मुके ।
२२] तस्मिन्[10] शब्दे शरं क्षिप्रमसृजं दैवमोहितः ॥ २२ ॥ [२३
शरे चाभ्यणव तस्मिन् मुक्ते निपातिते तदा ।
२३] हा हतोऽस्मीति करुणां मानुषेणेरितां गिरम् ॥ २३ ॥ [२५
कथमस्मद्विधे शस्त्रं निपात्यैतत् तपस्विनि । [२६पू
२४] केनाय सुनृशंसेन मयि बाणो निपातितः ॥ २४ ॥ [N
प्रविविक्तां नदीं रात्रावुदाहारोऽहमागतः । [२६उ
२५] इषुणाऽभिहतः केन कस्येहापकृतं मया ॥ २५ ॥ [२७पू
ऋषेः सन्न्यस्तशस्त्रस्य वने वन्येन जीवतः । [२७उ
२६] कथं नृशंसं शस्त्रेण मद्विधस्य निधीयते ॥ २६ ॥ [२८पू
वृद्धस्यान्धस्य दीनस्य वल्कलाजिनवाससः । [२८उ
२६] केनाहं घातितः पुनः कश्चाप्यर्थोऽस्य मद्वधे ॥२७॥ [२९पू
इमं निष्फलमारभ केवलानर्थसहितम् । [२९उ
२७] को विद्वान् साधु मन्येत शिष्येणेव गुरोर्वधम् ॥२८॥ [३०पू
नेम तथाऽनुशोचामि जीवितक्षयमात्मनः । [३०उ
२८] मातरं पितरं चान्धौ वृद्धौ शोचामि तौ यथा ॥२९॥ [३१पू
तदन्ध[11] मिथुन[11] वृद्धं दीर्घकालं भृतं मया । [३१उ
२९] कथं मयि मृतेऽनाथं कृपणं वर्तयिष्यति ॥ ३० ॥ [३२पू
तौ चाहं चैव कृपणौ केनागम्य दुरात्मना । [३२उ

---

10 क ब म ल—तस्मि । 11 क—तदन्धमिथुन ।

०] बाणेनैकेन निहताः शाकमूलफलाशनाः ॥ ३१ ॥ [३३पू
इति तां करुणां वाचं श्रुत्वा मे भ्रान्तचेतसः । [३३उ
३१] अधर्मभयभीतस्य करादभ्युच्यतायुधम् ॥ ३२ ॥ [३४पू
सहसाऽभ्युपसृत्यैनमपश्यं हृदि ताडितम् ।
३२] जटाऽजिनधरं बालं विद्धं पतितमम्भसि ॥ ३३ ॥ [३६
स मां कृपणमुद्वीक्ष्य मर्मण्यभिहतो भृशम् । [३७उ
३३] इत्युवाच वचो देवि दिधक्षुरिव तेजसा ॥ ३४ ॥ [३८पू
किं तवापं कृतं क्षुद्र वने निवसता मया । [३८उ
३४] अपो जिघृक्षुर्गुर्वर्थे यदहं ताडितस्त्वया ॥ ३५ ॥ [३९पू
अमू हि कृपणावन्धावनाथौ विजने वने ।
३५] मदीयौ पितरौ वृद्धौ प्रतीक्षेते ममागमम् ॥ ३६ ॥ [४०,
एकेनानेन बाणेन त्वया पाप हतास्त्रयः ।
३६] अहमम्बा च तातश्च कस्माद्वनपराधिनः ॥ ३७ ॥ [३९उ
नूनं न तपसः किञ्चित् फलं मत्ये श्रुतस्य च । [४१उ
३७] यथा मां नाभिजानाति पिता मूढ त्वया हतम् ॥ ३८ ॥ [४२पू
जानन्नपि हि किं कुर्यादन्धत्वादपराक्रमः । [४२उ
३८] छिद्यमानमिवाशक्तस् त्रातुमन्यो नगो नगम् ॥ ३९ ॥ [४३पू
पितुरेव च मे पूर्वं शीघ्रमाचक्ष्व राघव । [४३उ
३९] मा त्वा धक्ष्यति शापेन शुष्कं काष्ठमिवानलः ॥ ४० ॥ [४४पू
इयमेकपदी यातु मम तत् पितुराश्रमम् । [४४उ
४०] तं प्रसादय गत्वाऽऽशु न येन कुपितः शपेत् ॥ ४१ ॥ [४५पू
विशल्यं कुरु मां क्षिप्रं त्वयाऽयं मेऽर्पितः शरः । [४५उ

४१] एष यज्ञाग्निसंस्पर्शः प्राणानुपरुणद्धि मे ॥ ४२ ॥ [४९पू
सशल्यो मरणं नाहं प्राप्नुयां शल्यमुद्धर । [४९उ
४२] न द्विजातिरहं शङ्कां ब्रह्महत्याकृतां त्यज ॥ ४३ ॥ [५०
ब्राह्मणेन त्वहं जातः शूद्रायां वसता वने ।
४३] इति मामब्रवीद् बालो मच्छराभिहतो भृशम् ॥ ४४ ॥ [५१
जलार्द्रगात्रं विलपन्तमेवं
बाणाभिघातार्तमतिश्वसन्तम् ।
४४] तथा सरय्वां तमहं शयानं
दृष्ट्वैव बालं सुभृशं निषण्णः ॥ ४५ ॥ [५२
तस्याथो म्रियतो बाणमुद्धार बलादहम् । [५२उ
४५] यत्नवान् जीविताकांक्षी मुनेस्तत्र विचेतसः ॥ ४६ ॥ [N
शरे तु तस्मिन्नपनीतमात्रे
हिकाऽऽकुलश्वासमुहूर्त्तखिन्नः ।
४६] निचेष्टमानः परिवृत्तनेत्रः
प्राणानमुञ्चत् स मुनेस्तनूजः ॥ ४७ ॥ [N
निधनमुपगते महर्षिपुत्रे
सह यशसा सहसैव मां निपात्य ।
४७] भृशमहमभवं विमूढचेता
व्यसनमवाप्य यतीव संभ्रमत्तः ॥ ४८ ॥ [N

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे ऋषिकुमारवधो नाम [एकोनसप्ततितमः] सर्गः ॥ ६९ ॥

---

12 के, ल—विविष्ट० ।

[च–६६]=[सप्ततितमः सर्गः]=[दा–६४]

ततोऽहं शरमुद्धृत्य दीप्तमाशीविषोपमम् ।
१] अगच्छं[1] कुम्भमादाय पितुरस्याश्रमं प्रति ॥ १ ॥ [३
ततोऽहं कृपणावन्धौ वृद्धावपरिनायकौ ।
२] अपश्यं जनकौ तस्य लूनपक्षाविव द्विजौ ॥ २ ॥ [४
तत्कथाभिरुपासीनौ व्यथितौ पुत्रलालसौ ।
३] पुत्रं[2] दर्शनमायान्तमाकाङ्क्षन्तौ मया हतम् ॥ ३ ॥ [५
तदज्ञानान्महत्पापं कृत्वाऽहं व्याकुलेन्द्रियः ।
४] आश्रमस्थावभिप्रेत्य तावपश्यं तपस्विनौ ॥ ४ ॥ [६
पदशब्दं तु मे श्रुत्वा मुनिर्मामभ्यभाषत ।
५] किं ते चिरायितं पुत्र पानीयं क्षिप्रमानय ॥ ५ ॥ [७
यज्ञदत्त चिरं तात पानीये क्रीडितं त्वया ।
६] उत्कण्ठितेयं माता ते तथाऽहमपि पुत्रक ॥ ६ ॥ [८
यदि किंचिद् व्यलीकं ते मया मात्राऽपि वा कृतम् ।
७] तत् क्षामये[4] त्वां मा भूयश्चिरायेथाः क्वचिद्गतः ॥७॥ [९
अगतेर्गतिरस्त्वं त्वं मे चक्षुश्चक्षुषः ।
८] समासक्तास्त्वयि प्राणाः कस्मान्मां नाभिभाषसे ॥८॥ [१०
तं तथा करुणां वाचं[5] ब्रुवन्तं पुत्रलालसम् ।
९] अहमभ्येत्य शनकैरब्रवं भयविह्वलः ॥ ९ ॥ [११

---

1 म—अग(?)ता (आगतः ?) । 2 के-पुत्र-।ल-अत्र । 3 के, म—०मायंतमा० । 4 के—क्षमये । 5 के—करुणावाचं । म—करुणावाचा ।

वाष्पसक्तेन कण्ठेन धृत्या संस्तम्भ्य[6] वाग्बलम् ।
१०] कृताञ्जलिर्वेपमानो भयाद्वदद्वागिदम् ॥ १० ॥ [१२
क्षत्रियोऽहं दशरथो नाहं पुत्रो मुने तव ।
११] सज्जनावमतं घोरं कृत्वा पापमुपागतः ॥ ११ ॥ [१३
भगवंश्चापहस्तोऽहं सरय्वास्तीरमागतः ।
१२] काङ्क्षन्[7] जिघांसुरज्ञातं मृगं तत्राभ्युपागतम् ॥ १२ ॥ [१४
पूर्यमाणस्य कुंभस्य तत्र शब्दो मया श्रुतः ।
१३] तत्र पुत्रो मयाऽसौ ते निहतो गजशङ्कया ॥ १३ ॥ [१५
तस्याहं रुदितं श्रुत्वा हृदि भिन्नस्य पत्रिणा ।
१४] भीत आगत्य तं देशं तमपश्यं तपस्विनम् ॥ १४ ॥ [१६
भगवन्[8] शब्दवेधित्वान्मयाऽयं[9] गजशङ्कया ।
१५] विसृष्टोऽम्भसि नाराचो येन ते निहतः सुतः ॥१५॥ [१६ []
समुद्धृते मया बाणे प्राणांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ।
१६] भवन्तौ सुचिरं कालं परिशोच्य तपस्विनौ ॥ १६ ॥ [१८
अज्ञानतो मया पुत्रो हतस्ते दयितो मुने ।
१७] शेषमेवं गते तेजो मय्युत्स्रष्टुं त्वमर्हसि ॥ १७ ॥ [१९
स एतदभिसंश्रुत्य मुहूर्तमिव मूर्च्छितः ।
१८] प्रत्याश्वस्यागतप्राणो मामुवाच कृताञ्जलिम् ॥१८॥ [२० २१
यदि त्वमशुभं कृत्वा न वक्ष्यथा.* स्वयं मम ।
१९] लोका अपि ततो दग्धाः समस्ताः शापवह्निना ॥१९॥ [२२

6 म—संस्तभ्य । 7 क, घ, म, ल—काङ्क्ष । 8 क, घ, ल—भगव ।
म—भगवन् । 9 म—छन्द० ।

क्षत्रियैर्ज्ञानपूर्वं च वानप्रस्थवधः कृतः ।
२०] स्थानात्प्रच्यावयेदाशु ब्रह्माणमपि सुस्थितम् ॥२०॥ [२३
सप्तावरास्तथा पूर्वे यत्र वंश्या नराधम ।
२१] पतेयुर्ज्ञानपूर्वं च वधः कृतस्ततो मुनेः ॥२१॥ [२४
हतस्त्वसौ यदज्ञानात्त्वया तेनाद्य जीवसि ।
२२] तस्माद्विफलमप्यद्य राघवाणां भवेत् किल ॥२२॥ [२५
नय मां साधु तं देशं यत्रासौ बालकस्त्वया ।
२३] हतो नृशंस बाणेन ममान्धस्यैकयष्टिका ॥२३॥ [२६पू
तमहं पतितं भूमौ स्प्रष्टुमिच्छामि पुत्रकम् ।
२४] संप्राप्य यदि जीवेयं पुत्रस्पर्शमपार्थिवम् ॥२४॥ [२६उ
रुधिरेणावसिक्ताङ्गं प्रकीर्णाजिनमूर्धजम् ।
२५] सभार्यस्त्वं स्पृशाम्यद्य धर्मराजवशं गतम् ॥२५॥ [२७
अथाहमेकस्तं देशं नीत्वा तौ भृशदुःखितौ ।
२६] तमस्मै स्पर्शयामास सभार्याय मृतं सुतम् ॥२६॥ [२८
पुत्रशोकातुरौ दृष्ट्वा तौ पुत्रं पतितं क्षितौ ।
२७] आर्तस्वरं[10] विसृष्टोभौ तस्योपरि पेततुः ॥२७॥ [२९
माता चास्य मृतस्यापि जिह्वया लिहती मुखम् ।
२८] विललापातिकरुणं मातेवत्सेव विह्वला ॥ २८॥ [N
नन्वहं ते जनक त्वं प्राणेभ्योऽपि प्रिया विभो ।
२९] स कथं दीर्घमध्वानं प्रस्थितो मां नाभाषसे ॥२९॥ [N

संपरिष्वज तावन्मां पश्चात्पुत्र गमिष्यसि । [N

10 म-०स्वनं ।

३०] किं वत्स कुपितो मेऽसि येन मां नाभिभाषसे ॥३०॥ [३०
अनन्तरं पिता चास्य गात्राण्यंतः परिस्पृशन् ।
३१] इदमाह प्रियं पुत्रं जीवमानमिवातुरः ॥ ३१ ॥ [N
ननु तेऽहं पिता पुत्र सह मात्राऽभ्युपागतः ।
३२] उत्तिष्ठ तावदेह्यावां कण्ठे गाढं परिष्वज ॥ ३२ ॥ [N
कस्य चापररात्रेऽहं स्वाध्यायं कुर्वतो वने ।
३३] श्रोष्यामि मधुरं शब्दं पुत्र शास्त्रं जिघृक्षतः ॥ ३३ ॥ [३२
ननु मूलफलं वन्यमाहरिष्यति को वनात् ।
३४] आवयोरन्धयोः पुत्र कांक्षतोः[11] क्षुत्परीतयोः ॥ ३४ ॥ [३४
इमामन्धां च वृद्धां च मातरं ते तपस्विनीम् ।
३५] कथं पुत्र भरिष्येऽहमन्धो गतपराक्रमः ॥ ३५ ॥ [३५
एकाहमपि[12] तावत्त्वं नैव गन्तुमितोऽर्हसि ।
३६] श्वो मया चैव मात्रा च गन्ताऽसि सह पुत्रक ॥३६॥ [३६
उभावपि भवच्छोकादनाथौ[13] न[13] चिरादिव ।
३७] प्राणैः पुत्र नियोक्ष्यावो मरणे कृतनिश्चयौ ॥ ३७ ॥ [३७
इतो वैवस्वतं गत्वा भिक्षिष्ये कृपणः स्वयम् ।
३८] पुनर्भिक्षां प्रदेहीति त्वयैव सहितो गतः ॥ ३८ ॥ [३८
पर्युपास्य त्वं कः सन्ध्यां स्नात्वा हुत्वा च पावकम् ।
३९] ह्लादयिष्यति मे गात्रं कराभ्यां परिसंस्पृशन् ॥ ३९ ॥ [३३
अपापोऽसि यथा पुत्र निहतः पापकर्मणा[14] ।

---

11 के–कांक्षतो । 12 के, ब, म, ल एकाहमपि । 13 घ–ऽदनार्यौ० । म–ऽदनयौ० । ल–ऽदनायौव । 14 के–स्वन० ।

४०] त्वमाप्नुहि तथा लोकान् शूराणामनिवर्तिनाम् ॥ ४० ॥[४०
अपरावर्तिनां लोकाः शूराणां ये तपस्विनाम् ।
४१] यज्वनां च सुवृत्तानां तांस्त्वमाप्नुहि शाश्वतान् ॥४१॥[४१
पू४२] यांल्लोकान् वेदवेदाङ्गपारगा मुनयो गताः ।
पू४४] यांश्चाभयप्रदातारस्तथा यान् सत्यवादिनः ॥ ४२ ॥O [N
उ४४] तां ल्लोकान् मदनुज्ञातो[15] याहि पुत्रक शाश्वतान् । [N
पू४५] न हीदृशे कुले जन्म प्राप्य यान्त्यधमा गतिम् ॥४३॥O [४५पू
उ४५] तस्मादितश्च्युतः स्थानाल्लोकानाप्नुहि शाश्वतान् ।O [N
पू४६] एवमादि विलप्याथ स मुनिः[16] सह[16] भार्यया ॥४४॥ [४६
N] सत्कार लंभयामास दुःखोपहतचेतनः ।
उ४६] ततोऽस्य कर्तुमुदकं प्रतस्थे दीनमानसः ॥ ४५ ॥ [N
अथ दिव्यवपुर्भूत्वा विमानवरमास्थितः ।
४७] मुनिपुत्रस्ततो वाक्यमुवाच पितराविदम् ॥ ४६ ॥ [५०
भवन्तौ परिचर्याहं प्राप्तः पुण्यामिमां गतिम् ।
४८] भवन्तावपि हि क्षिप्रं स्थानमिष्टमवाप्स्यतः[17] ॥ ४७ ॥ [४९
न भवद्भ्यामहं शोच्यो नापि राजाऽपराध्यति । [
४९] भवितव्यमनेनैव[18] येनाहं निधनं गतः ॥ ४८ ॥ [N
एतावदुक्त्वा वचनं मृषिपुत्रो[19] दिवं गतः ।
५०] दिवि दिव्यांबरो राजन् विमानवरमास्थितः ॥ ४९ ॥[५०

15 च—मदनुध्यातो । Om । 16 च, म—०र्भार्यया सह । 17 च—०प्स्यथ । म—प्स्यथ । 18 च—०मनेनैवं । म—०मनेन वै । 19 कै, च—वचनं ऋषि० ।

सोऽपि कृत्वोदकं तस्य पुत्रस्य सह भार्यया ।

५१] तपस्वी मामुवाचेदं कृताञ्जलिमुपस्थितम् ॥ ५० ॥ [५१

कथं त्वं ख्यातयशसां राजर्षीणां महात्मनाम् ।

५२] अविनीतः कुले जात इक्ष्वाकूणां नृपाधम ॥ ५१ ॥ [N

न स्त्रीनिमित्तं वैरं ते क्षेत्रजं न मया सह ।

५३] अथैकेनेषुणा कस्मात् सभार्योऽहं हतस्त्वया ॥ ५२ ॥ [N

अविज्ञानात्तु मे पुत्रो हतो यद् विनयेन वा ।

५४] तथा तस्मादहमपि शप्स्यामि त्वां निबोध मे ॥ ५३ ॥ [५३

पुत्रशोकादहं प्राणान् सन्त्यक्ष्याम्यवशो यथा ।

५५] त्वमप्यन्ते तथा प्राणांस्त्यक्ष्यसे पुत्रलालसः ॥ ५४ ॥ [५४

एवं शापमहं लब्ध्वा स्वपुरं पुनरागतः ।

५६] स ऋषिः पुत्रशोकेन न चिरादिव संस्थितः ॥ ५५ ॥ [५७

स ब्रह्मशापो नियतमद्य मां समुपस्थितः ।

५७] तथा हि पुत्रशोकार्तं प्राणाः सन्त्वरयन्ति माम् ॥ ५६ ॥ [६६पू

चक्षुषा न प्रपश्यामि स्मृतिर्न[20] प्रविलुप्यते ।   [६५उ

५८] स्मृत्वा तौ द्वौ गतौ प्राणास्त्वरयन्ति च मां शुभे ॥ ५७ ॥ [N

यदि मां संस्पृशेद्रामः संभाषेतापि चागतः ।   [६२उ

५९] जीवेयमिति मे बुद्धिः प्राप्यामृतमिवातुरः ॥ ५८ ॥ [N

दृष्ट्वा हि यद्यहं प्राणांस्त्यजेयं दयितं सुतम् ।

६०] प्रेत्यापि च न दक्ष्येयं पुत्रशोकेन दुःखितः ॥ ५९ ॥ [N

अतो नु किं कृच्छ्रतरं किं वा दुःखतरं भवेत् ।   [६६उ

---

20 ङ—र्मे ।

६१] यद्दृष्ट्वा च रामस्य मुखं त्यक्ष्यामि जीवितम् ॥६०॥ [६१पू
रामादर्शनजः शोकः प्राणान् निर्दहतीव मे ।
६२] नदीतीररुहान्[21] वृक्षान्[21] वारिवेगो महानिव ॥६१॥ [७४
निस्तीर्णवनवासं तमयोध्यां पुनरागतम् । [७१उ
६३] द्रक्ष्यन्ति सुखिनो रामं शक्रं स्वर्गादिवागतम् ॥६२०[७२पू
ते देवा न मनुष्यास्ते ये तत् पूर्णेन्दुसन्निभम् । [६८उ
६४] मुखं द्रक्ष्यन्ति रामस्य पुरीं प्रविशतो वनात् ॥ ६३ ॥[६६पू
सुदंष्ट्रं निर्मलं कान्तं चारु पद्मदलेक्षणम् । [६९उ
६५] धन्या द्रक्ष्यन्ति रामस्य तारापतिनिभं मुखम् ॥६४॥[७०पू
शरच्चन्द्रस्य सदृशं कुन्दस्य कमलस्य च । [७०उ
६६] सुगन्धि मम पुत्रस्य धन्या द्रक्ष्यन्ति वै मुखम् ॥६५॥[७१पू
इति रामं स्मरन्नेव शयनीयतले नृपः ।
६७] शनैरुपजगामास्तं शशीव रजनीक्षये ॥ ६६ ॥ [N
हा[22] राम हा पुत्र इति ब्रुवन्नेव[22] शनैर्नृपः ।
६८] तत्याज सुप्रियान् प्राणानायुषोऽन्ते सुदुस्त्यजान् ६७[७५-७७
तथा स दीनं कथयन्नराधिपः
प्रियस्य पुत्रस्य विवाससंकथाम् ।
६९] गतेऽर्धरात्रे शयनीयसंस्थितो
जहौ प्रियं जीवितमात्मनस्तदा ॥ ६८ ॥ [७८

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे ब्रह्मशापाख्यानं
नाम सर्गः ॥ ७० ॥

21 च—०तीरमहावृक्षान् । Om । 22 कै—हे राम हा प्रवन्पुत्र पवमेवा।

[वं–६७]=[एकसप्ततितमः सर्गः]=[दा–६५]

विलप्याथ तमप्येवं तूष्णीभूतं नराधिपम् ।
१] सुप्त इत्यवगम्यार्ता कौशल्या न व्यबोधयत् ॥ १ ॥ [N
अनुक्रन्दन्तं भर्तारं किञ्चिच्छोकश्रमाकुला ।
२] सुष्वाप शयने भूयः पुत्रशोकार्तमानसा ॥ २ ॥ [N
अथ रात्र्यां व्यतीतायां सन्ध्याकाल उपस्थिते ।
३] वन्दिनः पर्युपातिष्ठन् पार्थिवं प्रतिबोधकाः ॥ ३ ॥ [१
तेषां तु तदुपश्रुत्य[1] सूतमागधवन्दिनाम् ।
४] सर्वा बुबुधिरे सुप्ता नृपान्तःपुरयोषितः ॥ ४ ॥ [N
ततः शुचिसमाचारा राजोपस्थानकारिणः ।
५] स्त्रीवर्षवरभूयिष्ठा उपतस्थुर्नराधिपम् ॥ ५ ॥ [७
गन्धाम्बुपरिपूर्णांश्च कुंभान् काञ्चनराजतान् ।
६] उपतस्थुः समादाय स्नापकास्तं नृपालयम् ॥ ६ ॥ [८
मङ्गलालंभनीयानि तथैवान्यमुपस्करम् ।
७] यथायोगमुपाजह्रुरुपचारं विचक्षणाः ॥ ७ ॥ [९
अभ्येत्य चोपचारज्ञाः शयनीये नराधिपम् ।
८] स्त्रियः प्रबोधयाञ्चक्रुरादित्योदयशङ्कया ॥ ८ ॥ [१२
प्रबोध्यमानोऽपि यदा नाबुध्यत स पार्थिवः ।
९] आ सूर्योदयनात् सुप्तस्ततस्ताः शङ्किताः स्त्रियः ॥९॥ [११
ता वेपथुमवाविष्टा राज्ञः प्राणेषु शङ्किताः । [१४उ

1 ब, म—॰दुपाश्रुत्य ।

१०] प्रतिस्रोतस्तृणाग्रेण सदृशं प्रचकंपिरे ॥ १० ॥ [१५पू
अथ तासां परित्रासं दृष्ट्वा दृष्ट्वा च पार्थिवम् ।
११] यत्तदा शङ्कितं पापं तस्य जज्ञे विनिश्चयः ॥ ११ ॥ [१५
ता वेपमाना संभ्रान्ता मृतं दृष्ट्वा नराधिपम् ।
१२] हा नाथ हा मृतोऽसीति पतिता वै विचुक्रुशुः ॥१२॥[१२
तासां तेनार्तनादेन महता शयिते तदा ।
१३] कौशल्या च सुमित्रा च बुबुधाते सुदुःखिते ॥ १३ ॥ [२१
१४] उत्थाय शयनात् क्षिप्रं राजानमुपतस्थतुः । [N
दृष्ट्वा मृतं च भर्तारं ते देव्यावतिदुःखिते ॥ १४ ॥O [२५पू
१५] सुप्तमेवोद्गतप्राणं[2] भृशं चुक्रुशतुस्तदा । [२५उ
तयोस्तद्[3] रुदितं[3] श्रुत्वा सर्वशोऽन्तःपुरस्त्रियः ॥१५॥ N]
१६] सहसा चुक्रुशुस्तत्र कुरर्यस्त्रासिता इव । [N
ईरितोऽन्तःपुरस्त्रीभिरार्ताभिः स स्वनो महान् ॥१६॥[२६पू
१७] पुरीं तां पूरयामास बोधयंश्चैव सर्वशः । [२६उ
ततः संभ्रान्तमनसस्तेन शब्देन बोधिताः ॥ १७ ॥ [N
१८] आविशन्त नृपाहूता नृपवेश्म पराः स्त्रियः[4] । [N
ताश्च ताश्चैव संहत्य[5] शतशोऽथ सहस्रशः ॥ १८ ॥ [N
१९] रुरुदुश्चुक्रुशुश्चैव नृपे पञ्चत्वमागते । [N
अथायोध्या पुरी कृत्स्ना तेन शब्देन बोधिता ॥ १९ ॥ [N
२०] सवृद्धबाला चुक्रोश राजव्यसनकर्षिता । [N

---

2 ल—सुप्तमेवोद्गतं प्राणं । म—सुप्तमेव गतं प्राणं । Oघ । 3 कै—त्तं क्रंदितं । 4 म, ल—पुरस्त्रिय । 5 फै, ल—संहत्य ।

तत्समुद्विग्नमुद्भ्रान्तं पर्युत्सुकजनाकुलम् ॥ २० ॥ [२७पू

२१] परिदेवितार्तस्तनितं रुदितोत्क्रुष्टमाकुलम् । [२७उ

सद्योनिपतितानर्थं निध्वस्तशयनासनम् ॥ २१ ॥ [२८पू

२२] बभूव नरदेवस्य गृहं दिष्टान्तमागतम् । [२८उ

ततो भृशार्ता कौशल्या सुमित्रा चैव दुःखिता ॥२२॥ [N

२३] निपत्य पृथिवीपृष्ठे बहुधैव व्यचेष्टताम् । [N

सपत्न्या सह दुःखार्ता वेष्टमाना धरातले ॥ २३ ॥ [N

२४] पांशुरूषितसर्वाङ्गी[6] कौशल्या न व्यराजत । [N

व्यतीतमाज्ञाय तु पार्थिवर्षभं

यशस्विनं तं परिवार्य ताः स्त्रियः ।

भृशं रुदन्त्यः करुणाक्षरा गिरः

२५] प्रगृह्य बाहून् व्यलपन्त सर्वशः ॥ २४ ॥ [२९

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथमरणं[7] नाम

[एकसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७१ ॥



6 य, म, ळ—पांसुभूषित० । 7 य, म, ळ—जन पुरविलापो ।

[नं–६८]=[द्विसप्ततितमः सर्गः]=[दा–६६]

तमग्निमिव संशान्तं संशोषितमिवार्णवम् ।
१] अस्तं गतमिवादित्यं स्वर्गतं प्रेक्ष्य भूमिपम्[1] ॥ १ ॥ [१
द्विविधेनापि दुःखेन कौशल्या भृशदुःखिता ।
२] भर्तुः पादौ प्रगृह्यार्ता विललाप सुदुःखिता ॥ २ ॥ [२
कृतपुण्योऽसि नृपते शुद्धसत्त्वश्च मानद ।
३] यस्त्वं प्राणान् परित्यज्य नाथ शोचसि राघवम् ॥ ३ ॥ [N
पुत्रशोकसमुद्भूतो दारुणो देहतापनः ।
४] त्वत्प्राणहरणाद् व्याधिर्मामनार्यां न[2] बाधते ॥ ४ ॥ [N
सत्यसन्धे महाभागे प्रधानाभिजनात्मनि ।
५] न हि युष्मद्विधे युक्तो भारः करुणवेदिनि ॥ ५ ॥ [N
अहमेवाशुद्धसत्त्वा नीचा[3] चादृढसौहृदा ।
६] अजीवनार्हा जीवामि या त्वयाऽद्य विनाकृता ॥ ६ ॥ [N
मृत्युरस्यामवस्थायां प्रशस्तस्ते नराधिप ।
७] न तु मे जीवितं[4] ह्यस्यामवस्थायां[4] विगर्हितम् ॥ ७ ॥ [N
अवस्थायामवस्थायां तत्तद् भवति पूजितम् ।
८] पूजितं मरणं तस्य यस्य जीवितमीदृशम् ॥ ८ ॥ [N
यत्र शुद्धस्वभावस्तु पुत्रशोकार्तया मया ।
९] परुषं मुहुरुक्तोऽसि तन्मां दहति किल्बिषम् ॥ ९ ॥ [N
देवोपम नमस्तेऽस्तु शुद्धभाव महीपते ।

---

1 के—पार्थिव । 2 च—तु । 3 के—पूर्व त्रुटित पश्चात् "पापा" इति पदेन, भिन्नहस्तेन पूरितम् । 4 के—जीवितुमस्याम० ।

१०] समन्युर्वाऽसि मयि तत् क्षामये त्वां प्रसीद मे ॥ १० ॥ [N
पुत्रशोकार्तयाऽप्युक्तो यन्मयाऽस्यकृतज्ञया ।
११] तद्देवसत्त्व नामुत्र स्मर्त्तुमर्हसि मेऽनघ ॥ ११ ॥ घ [N
अतिक्रमः कस्य नास्ति निदुषोऽपि महीपते ।
१२] आतिक्रममतो मे त्वं मूढायाः क्षन्तुमर्हसि ॥ १२ ॥ [N
कृत्वाऽनर्थं मूलहरं राज्यलोभाद्विगर्हितम् ।
१३] प्राप्ताऽसि निरय क्षुद्रे कैकेयि दृढनिश्चये ॥ १३ ॥ [N
सकामा भव कैकेयि भुङ्क्ष्व[5] राज्यमकण्टकम् । [३पू
१४] पति प्राणैर्वियोज्येव निकृते निर्वृता भव ॥ १४ ॥ [N
सुखभोगार्थदातारं दैवतं परम पतिम् ।
१५] का त्वन्या त्वदृते नारी लुब्धा प्राणैर्वियोजयेत् ॥ १५ ॥[५
कृत्वा कार्यमकार्यं वा न कीर्तिं निरय न च ।
१६] न धर्मं चापि नाऽधर्मं[6] वेत्सि नैन तथेहितम् ॥ १६ ॥ [N
N] कृत्वा[7](ज्ञा ?)–निमित्ते कैकेयि रघूणा ते[8] कुल हतम् ।[६उ
त्वन्नियोगनियुक्तेन राज्ञा चव महात्मना ।
१७] प्राणेभ्योऽपि प्रियः पुत्रो रामः प्रव्राजितो वनम् ॥O१७॥[N
यथा प्राणैः प्रियो रामस्त्यक्तो राज्ञा महात्मना ।O
१८] तद्वियोगात्तथा तेन त्यक्ताः प्राणाः सुदुस्त्यजाः ॥O१८। [N
वैधव्यमयशश्चेद लोके चेदं विगर्हितम् ।O
१९] लोभात्त्वया त्रयोऽनर्था यत्प्राप्तास्तत्र मे प्रियम् ॥ १९ ॥ [N

5 व—भुक्ता । 6 के—धाऽधर्मं । 7 च, ग—कृत्वा । कै—गृत्वा ।
8 के—नेर्धलेहत । Oके, ब, म । Oग ।

श्रीमानिन्दीवरश्यामश्चारुपद्मदलेक्षणः । [N
२०] पितुर्जीवितनाशाय रामो वनमितो गतः ॥ २० ॥ [८उ
विदेहराजतनया सुकुमारी तपस्विनी ।
२१] त्वत्कृते पापसङ्कल्पे दुःखान्यनुभवत्यसौ ॥ २१ ॥ [९
उग्रं प्रतिभयं नादं घोराणां मृगपक्षिणाम् ।
२२] श्रुत्वा नूनं भयोद्विग्ना रामं श्रयति मैथिली ॥ २२ ॥ [१०
यया बुद्ध्या त्वया रामः पतिं त्यक्त्वा विवासितः ।
२३] धर्मज्ञो भरतस्त्वां तु गर्हयिष्यत्युपागतः ॥ २३ ॥ [N
अनृशंसा पुरा भूत्वा धर्मिष्ठा च पुरा ह्यसि ।
२४] केनेदानीं नृशंसा त्वमधर्मिष्ठा च कैकयि ॥ २४ ॥ [N
कथं चासौ महासत्त्वो दृढं राममनुव्रतः ।
२५] अपापः पापसङ्कल्पे भरतो दूषितस्त्वया ॥ २५ ॥ [N
रामवृत्तानुवर्ती हि भरतः पापनिश्चये ।
२६] नानुवर्तेत ते वृत्तं गर्हयिष्यति चागतः ॥ २६ ॥ [N
नृशंसमप्रशंस्यं[9] च लोके कर्म विगर्हितम् ।
२७] यत्कृत्वा[10] मन्यसे साधु सुकृतं पापनिश्चये ॥ २७ ॥ [N
किं न शोचसि भर्तारं रामं लक्ष्मणमेव च ।
२८] उताहो त्वापि वैदेहीमात्मानं चापि दुःखितम् ॥ २८ ॥ [N
शोचयितव्येषु युगपद् बहुष्वन्येषु वै पृथक् ।
२९] ममापि दुःखभागिन्या मृतं श्रेयो न जीवितम् ॥२९॥ [N
विहाय मां वनं रामो भर्ता च त्रिदिवं गतः ।

9 कै, ब—॰मप्रदास्यं । 10 म, ल—यन्न त्वा ।

३०] सार्थादिव परिभ्रष्टा कुपथे विचराम्यहम् ॥ ३० ॥ [N
महाराज महाबाहो महाप्राज्ञ महाबल ।
३१] महत्यगाधे पतितां पाहि मां शोकसागरे ॥ ३० ॥ [N
सुखोचिता त्वया त्यक्ता त्वन्नाथा त्वत्परायणा ।
३२] त्यक्ता त्वया प्रिये[11] नाथ सर्वथैव धिगस्तु माम् ॥३२॥ [N
न्याय्यं धर्म्यं यशस्यं च मार्गं साधुनिषेवितम् ।
३३] अनुगन्तुं न शक्ष्यामि[12] रामसन्दर्शनाशया ॥ ३३ ॥ [N
किं मया न कृतं साधु भवेदद्य जनाधिप ।
३४] यदि तेऽहं शरीरेण सह दाहमवाप्नुयाम् ॥ ३४ ॥ [N
गच्छन्तं परलोकाय यदि त्वामनुयाम्यहम् ।
३५] सुकृतं न मया तेऽद्य राजन् प्रतिकृतं भवेत् ॥ ३५ ॥ [N
नूनं नैवाहमर्हामि पापा पत्युः सलोकताम् ।
३६] या त्वां चितां समारूढां* नानुवेक्ष्यामि वै चिताम् ॥३६[N
कालस्य वशगो जन्तुर्न मर्त्यः स्वयमीश्वरः ।
३७] जीवितुं वाऽप्यतो न त्वां राजन्नहमनुश्रये ॥ ३७ ॥ [N
क्वासि राम महाबाहो क्वासि लक्ष्मण सुव्रत ।
३८] क्वासि त्वं साध्वि वैदेहि न मां जानासि दुःखिताम् ।३८।[N
कैकय्या वचनाद्राज्ञा श्रुत्वा राम विवासितम् ।
३९] सभार्यो जनको राजा परितप्स्यत्यसंशयम् ॥ ३९ ॥ [७
अवलम्ब्यैव वृद्धश्च वैदेहीमनुचिन्तयन् ।

---

11 व—प्रयेणाथ । ल—प्रयणाथ । म—प्रियेनाथ ।
12 फे—शक्यामि । *(समारूढ ?) ।

४०] सोऽपि शोकाग्निसन्तप्तः परित्यक्ष्यति जीवितम् ॥४०॥ [११
साध्वि भर्तृपरा देवि धन्या खल्वसि मैथिलि ।
४१] समदुःखसुखा या त्वं भर्तारमनुगच्छसि ॥ ४१ ॥ [N
भर्ता बन्धुर्गतिश्चैव गुरुर्दैवतमेव च ।
४२] भर्तैव परमः स्त्रीणामाश्रमस्तीर्थमेव च ॥ ४२ ॥ [N
इति तां पतिशोकस्य पुत्रशोकस्य चान्तरे ।
४३] पतितामातुरां दीनां क्रोशन्तीं कुररीमिव ॥ ४३ ॥ [N
पू४४] सर्वत्रानावृतद्वारो वसिष्ठो भगवानृषिः । [N
N] प्रविश्य राजभवनं वारयामास तां सतीम् । [N
उ४४] व्यादिश्यानाययामास राजस्त्रीभिर्बलादिव ॥४४॥ [N
परिगृह्याथ तामार्तां विलपन्तीमनाथवत् ।
४५] अपनिन्युः प्रकर्षन्त्यः कौशल्यां राजयोषितः ॥ ४५ ॥ [N
ततस्तां विजनीकृत्य मन्त्रिभिः सह सङ्गतः ।
४६] कृत्वा वसिष्ठो[13] भगवान् प्राप्तकालमकारयत् ॥ ४६ ॥ [N
शरीरं कोसलेन्द्रस्य[14] तैलद्रोण्यां न्यवेशयत् ।
४७] मन्त्रयामास सहितो मन्त्रिभिस्तदनन्तरम् ॥ ४७ ॥ [१८
उभौ मातामहकुले चिरं कालं गतावितः ।
४८] कथं भरतशत्रुघ्नावानयामेह चेति वै ॥ ४८ ॥ [N
न हि सत्करणं[15] राज्ञो राजपुत्रैर्विना हितैः ।
४९] मन्त्रिणः कर्तुमर्हन्ति ततो रक्षत भूमिपम् ॥ ४९ ॥ [१९
तैलद्रोण्यां वसिष्ठेन[16] स्थापितं तं नराधिपम् ।
५०] दृष्ट्वा मृतोऽयमित्युक्त्वा स्त्रियः प्ररुरुदुश्च ताः ॥ ५० ॥ [१६
उत्क्षिप्य बाहून् शोकार्ता बाष्पव्याकुललोचनाः ।

---

13 क, ख, म, ल—वसिष्ठो । 14 कै, म—कौसले० ।
15 म—सत्कारम् । 16 क, ख, म, ल—वसिष्ठेन ।

५१] उरः शिरश्च जानूनि जघ्नुः करतलैर्मुहुः ॥ ५१ ॥ [१७
शशिनेव निशा हीना भर्तृहीनेव चाङ्गना ।
५२] न व्यराजत चायोध्या तेन हीना महात्मना ॥ ५२ ॥ [२४
दुःखपर्याकुलजना हाहाभूतजनस्वना[17] ।
५३] विध्वस्तचत्वरपथा विशून्यविपणापणा ॥ ५३ ॥ [२५
हतप्रभा द्यौरिव नष्टभास्करा
व्यपेतचन्द्रेव च निष्प्रभा[18] निशा ।
रराज सा नैव भृशं महापुरी
५४] विनाकृता तेन तदा महात्मना ॥ ५४ ॥ [२८
नराश्च नार्यश्च भृशार्तमानसा
विगर्हयन्तो भरतस्य मातरम् ।
तस्यां नगर्यां नरराजसंक्षये
५५] विलेपुरार्ता न च शर्म लेभिरे ॥ ५५ ॥ [२९

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथतैलद्रोणिसंक्रमणं नाम [द्विसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७२ ॥



---

17 ग—हर्षभूत० । 18 ल—भा । (पूर्वमक्षरद्वयं त्यक्तम्) ।

[वं–६९]=[*त्रिसप्ततितमः सर्गः]=[दा–६७]

व्यतीतायां तु शर्वर्यामादित्यस्योदये ततः ।
१] समेत्य राजगुरवः सभामीयुर्द्विजातयः ॥ १ ॥ [२
वसिष्ठो वामदेवश्च जावालिरथ काश्यपः[1] ।
२] मार्कण्डेयो गौतमश्च मौद्गल्यश्च महातपाः ॥ २ ॥ [३
एते द्विजाः सहामात्यैः पृथग्वाच उदैरयन्[2] ।
३] वसिष्ठमेवाभिमुखाः श्रेष्ठं राजपुरोहितम् ॥ ३ ॥ [४
शर्वरी समतीतेयं क्रूरा वर्षशतोपमा ।
४] शोचतां पुत्रशोकेन मृतं दशरथं नृपम् ॥ ४ ॥ [५
स्वर्गतश्च महाराजो रामश्चारण्यमाश्रितः ।
५] लक्ष्मणश्चापि तेजस्वी रामेण सहितो गतः ॥ ५ ॥ [६
पू६] उभौ भरतशत्रुघ्नौ केकयेषु[3] परन्तपौ ।
N] गिरिव्रजे पुरवरे वसतः मातुलो गतौ ॥ ६ ॥() [७
उ६] इक्ष्वाकुवंशप्रभवः को[4] नु[4] राजा भविष्यति। [N
अराजकमिदं राष्ट्रं विनाशमुपयास्यति । [८उ
७] इक्ष्वाकुः कश्चिदेवेह राजाऽस्माकं विधीयताम् ॥७॥ [८पू
नाराजके जनपदे विद्युन्माली महास्वनः ।
८] अभिवर्षति पर्जन्यो महीं दिव्येन वारिणा ॥ ८ ॥ [९
नाराजके जनपदे बीजमुष्टिः प्रकीर्यते । [१०पू
९] नाराजके पितुः पुत्राः सम्यक् तिष्ठन्ति शासने ॥९॥O [१०उ
*नाराजके पतिं भार्या यथावदनुवर्तते । [१०उ
१०] नाराजके गुरोः शिष्यः शृणोति नियतं हितम् ॥१०॥ [N
स्वं नास्त्यराजके राष्ट्रे प्रशान्तश्च परिग्रहः ।

---

1 ख, म—कश्यपः । 2 के—तदैरयन् । म—तदारयन् । ल—उदीरयन् । 3 के–केकेयेषु (केकेयेषु ?) । Oम । 4 के–केन (प्रमादः)। Oके । * ल—नास्ति ।

११] अराजके स्वात्मनो ऽपि प्रभुत्वं नहि कस्यचित् ॥११॥ [N
नाराजके जनपदे यज्ञशीला द्विजातयः ।
१२] विविधांस्तन्वते यज्ञान् दस्युसंघैः प्रपीडिताः ॥ १२ ॥ [१३
नाराजके जनपदे कारयन्ति नराः सभाः[5] ।
१३] उद्यानानि च रम्याणि प्रपाः पुण्या गृहाणि च ॥ १३ ॥ [१२
नाराजके जनपदे प्रभूतनटनर्तकाः ।
१४] उत्सवाश्च समाजाश्च वर्तन्ते जनहर्षणाः ॥ १४ ॥ [१५
नाराजके जनपदे कश्चिदर्थः प्रसिध्यति ।
१५] व्यवहारा न वर्धन्ते[6] कन्यानां जनहर्षणाः ॥१५॥ [१६
उ१७] नित्योद्विग्नाः प्रजाः सर्वा दुःखिताश्च भवन्त्यपि ।
नाराजके जनपदे विश्वस्ताः कुलकन्यकाः ।O
१८] अलङ्कृता राजमार्गे क्रीडन्ति विहरन्ति च ॥O १६ ॥ [N
नाराजके जनपदे विचरन्त्यकुतोभयाः ।
१९] कामिनः सह कान्ताभिर्विहारोद्यानभूमिषु ॥ १७ ॥ [१९
नाराजके जनपदे धनवन्तः कुटुम्बिनः ।
२०] शेरते विवृतद्वारा विश्वस्तमकुतोभयाः ॥ १८ ॥ [१८
नाराजके जनपदे नराः पण्योपजीविनः[7] ।
२१] पण्यान्यादाय[8] गच्छन्ति देशाद् देशान्तरं तथा ॥१९॥ [२२
नाराजके कृषिकराः कर्षन्ति भयपीडिताः ।
२२] पशवो नाभिवर्धन्ते[10] नित्यं राष्ट्रे ह्यराजके ॥ २० ॥ [N
नाराजके जनपदे चरत्येकचरो वशी ।
२३] भावयंस्तपसाऽऽत्मानं यत्रसायंगृहो[11] मुनिः ॥ २१ ॥ [२३

5 ल—सताः (प्रमाद-)। 6 म—वर्तंते। ल—ववंते। Oकं।
7 ल—पुण्योप०। 8 म, ल—पुण्यान्यादाय। 9 कं—तदा। 10 म, ल—नाभिवर्तंते। 11 व, म, ल—०सायंगृहे।

नाराजके जनपदे योगक्षेमः प्रकल्पते ।
२४] न चाप्यराजकं सैन्यं शत्रून्[12] विजयते युधि ॥२२॥ [२४
नदी शुष्कजला यद्वद्यद्वच्चातृणकं वनम् ।
२५] अगोपाला यथा गावस्तथा राष्ट्रमराजकम् ॥ २३ ॥ [२९
नाराजके जनपदे स्वास्थ्यं भवति कस्यचित् । [३१
२६] हरन्ति दुर्बलानां हि स्वमाक्रम्य बलाधिकाः ॥ २४ ॥ [N
अराजके जनपदे दुर्बलान् बलवत्तराः ।
२८] क्षपयन्ति निरुद्वेगा[13]मत्स्यान्[14]मत्स्या इवाल्पकान् ॥२५॥ [३१
व्युत्क्रान्तधर्ममर्यादा नास्तिका निरपत्रपाः ।
२९] भवन्त्यराजके राष्ट्रे मानवाः क्रूरनिश्चयाः ॥ २६ ॥ [३२
अन्धं तम इवेदं स्यान्न प्रज्ञायेत किञ्चन ।
३०] राजा चेन्न भवेल्लोके विभजन् साध्वसाधु वा[15]॥२७॥ [३६
दस्यवोऽपि न च क्षेमं राष्ट्रे विन्दन्त्यराजके ।
३१] द्वावाददाते ह्येकस्य द्वयोश्च बहवो धनम् ॥ २८ ॥ [N
तस्माद् राजैव कर्तव्य इच्छद्भिः शुभमात्मनः ।
३२] द्विजानां वचनं श्रुत्वा वसिष्ठं मन्त्रिणोऽब्रुवन् ॥ २९ ॥ [N
जीवत्यपि महाराजे महाभाग[16] वयं प्रभो ।
३३] शासने तव तिष्ठामः स नः शाधि[17] तपोधन ॥३०॥ [३७
वसिष्ठ धर्मज्ञ महानुभाव स नः समीक्ष्यार्हसि विप्रवर्य ।
३४] कुमारमिक्ष्वाकुकुलप्रसूतं समाशु राजानमिहाभिषेक्तुम् ॥३१॥ [३८

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे राजप्रशंसा नाम
[त्रिसप्ततितमः] सर्गः [॥ ७३ ॥]

---

12 म—शत्रू [न्?] । ल—शत्रु । 13 क—निरुद्वेगान् । 14 म, ल—मत्स्या । 15 क—साध्वसाधुवत् । म, ल—साधु साधु वा । 16 म—महाभागो । ल—महाभागा । 17 म, ल—शोधि ।

[चं-७०]=[चतुःसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६८]

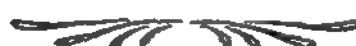
तेषां तद्वचनं श्रुत्वा वसिष्ठः प्रत्युवाच ह ।
१] सुमन्त्रप्रभृतीन् सर्वान् ब्राह्मणांस्तानिदं वचः ॥ १ ॥ [१
योऽसौ मातामहकुले कुमारः श्रीमतां वरः ।
२] भरतो[1] वसति[1] भ्रात्रा शत्रुघ्नेन गतः सह ॥ २ ॥ [२
तमितः शीघ्रगैर्गत्वा नराः प्रजविर्तैर्हयैः ।
३] इहानयन्तु वचनान्नृपस्यामृत्युवादिनः ॥ ३ ॥ [३
इति श्रुत्वा वचस्तस्माद्वसिष्ठाद्राजमन्त्रिणः ।
४] गच्छन्त्विति च सर्वे ते प्रत्यूचुर्हृष्टमानसाः ॥ ४ ॥ [४
ततो जयन्तं सिद्धार्थमशोकं चाब्रवीदिदम् ।
५] वसिष्ठो जपतां श्रेष्ठो दूतानाह तपोधनः ॥ ५ ॥ [५
पुरं राजगृहं गत्वा शीघ्रं प्रजवितैर्हयैः ।
६] त्यक्तशोकैरिदं वाच्यो भरतो वचनात् पितुः ॥ ६ ॥ [६
आह त्वां कुशलं पृष्ट्वा राजा सर्वे च मन्त्रिणः ।
७] त्वरावान् शीघ्रमागच्छ कार्यमात्ययिकं[2] विभो ॥ ७ ॥ [७
न चास्मै प्रेषितो[3] रामो न राजा स्वर्गतस्तथा ।
८] गत्वा भवद्भिरावेद्यः[4] पृष्टैरपि कथञ्चन ॥ ८ ॥ [८
राजार्हाणि विचित्राणि भूषणानि वराणि च ।
९] शीघ्रमादाय राज्ञश्च भरतस्य च यच्छत ॥ ९ ॥ [९
इति ते ज्ञातसन्देशा दूतास्त्वरितमानसाः ।
१०] वसिष्ठेनाभ्यनुज्ञाता ययुः शीघ्रपुरोगमाः ॥ १० ॥ [११
गत्वाऽथ हास्तिनपुरं गङ्गामुत्तीर्य वेगतः[5] ।
११] पञ्चालदेशानाजग्मुस्ततस्ते कुरुजांगलान् ॥ ११ ॥ [१२

---

1 कै—वसति भरतो । 2 कै—०मात्यधिकं । [illegible] म, ल—मोपितो ।
4 कै, य—भवद्भिर्नावेद्यः । म, ल—०मावेद्यः । 5 य—वेगिताः ।

पू१२] पूर्वेण वारुणीतीर्थं[6] कुरुक्षेत्रे सरस्वतीम् । [N
पू१४] शरदण्डां समुत्तीर्य नदीं जलचराकुलाम् ॥ १२ ॥ [१५उ
उ१४] समूलचैत्यमासाद्य वृक्षं सत्योपयाचनम् ।
पू१५] अभिगम्य प्रणम्यैनं त्रिलिङ्गां विविशुः पुरीम् ॥१३॥ [१६
उ१५] अजकूलं ततः प्राप्य बोद्धानां[7] नगरं ययुः ।
उ१७] कथयन्तः कथाश्चित्रा रामलक्ष्मणसंहिताः ॥ १४ ॥ [N
ययुर्मध्येऽतिवेगेन शतरुद्रां[8] जलाकुलाम्[8] ।
१८] विष्णोः पदं वीक्षमाणा विपाशां[9] चैव शाल्मलीम् ॥१५॥ [१९पू
गिरिव्रजं पुरवरं विविशुर्न चिरादिव । [२१उ
१९] सप्तरात्रेण च गत्वा दूतास्ते श्रान्तवाहनाः ॥ १६ ॥ [२१पू
संपूज्यमाना विविशुः पुरं हि ते
ततो ययुः पार्थिववेश्ममुख्यम् ।
प्रजाहितार्थं कुलरक्षणार्थं ।
२०] भर्तुश्च वंशस्य परिग्रहार्थम् ॥ १७ ॥ [२२

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दूतप्रस्थापनं नाम
[चतुःसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७४ ॥



6 के—वारुणीं० । ड—वारुणीं तीर्थो । 7 म, ड—बोद्धानां ।
8 म—शतरुद्रजला० । 9 म—विपशां । ल—विपाशां ।

[वं–७१]=[पञ्चसप्ततितमः सर्गः]=[दा–६९]

यमेव दिवसं दूताः प्रविष्टास्ते गिरिव्रजम्[1] ।
१] भरतेनापि तां रात्रिं स्वप्नो दृष्टो भयावहः ॥ १ ॥ [१
अरि(नि?)ष्टा वेदिनं स्वप्नं दृष्ट्वाऽथ भरतस्तदा ।
२] संस्मरन् पितरं वृद्धमासीदुत्सुकमानसः[2] ॥ २ ॥ [२
आलक्ष्य तस्योत्सुकतां वयस्याः प्रियवादिनः ।
३] आयासमपनेष्यन्तः कथाश्चक्रुरनुत्तमाः ॥ ३ ॥ [३
अवादयन्[3] जगुश्चान्ये ननृतुर्जहसुस्तथा[4] ।
४] नाटकान्यपरे चक्रुर्हास्यानि विविधानि च ॥ ४ ॥ [४
प्रियैर्वयस्यैर्भरतस्तथाऽपि प्रियवादिभिः ।
५] हास्यानि चैवं[5] कुर्वद्भिर्नैवातुष्यत सुदुर्मनाः[6] ॥ ५ ॥ [५
तमब्रवीत् प्रियसखः कश्चिद् व्यथितमानसः ।
६] उपास्यमानः सखिभिः किं सखे नैव हृष्यसि ॥ ६ ॥ [६
समानसुखदुःखानामस्माकमपि राघव ।
७] दुःखमार्तिकरं यत्ते तद् व्यपोहितुमर्हसि ॥ ७ ॥ [N
इत्युक्तो भरतस्तेन प्रत्युवाच महायशाः ।
८] शृणुध्वं यो मया दृष्टः स्वप्नो येनास्मि दुर्मनाः[7] ॥ ८ ॥ [७
दृष्टो मयाऽद्य स्वप्नेन चन्द्रमाः पतितः क्षितौ ।
९] संशुष्कः सागरश्चैव सूर्यो ग्रस्तश्च राहुणा ॥ ९ ॥ [११
अद्राक्षमपि च स्वप्ने पितरं रक्तवाससम् ।
१०] कृष्यमाणं[8] नरैर्बद्ध्वा दक्षिणामभितो दिशम् ॥ १० ॥ [८
पुनश्चाप्येनमद्राक्षं स्नेहार्त्तं[9] मुक्तमूर्धजम् ।

---

1 कै, ल– •व्रजम् । 2 कै– वृद्ध आसीर्युत्सुक॰ । 3 कै, ब म—अवादय । ल—अवादयन् । 4 कै—ननर्तुं॰ । 5 कै—चैव । 6 कै—सदुर्मना । 7 ब, ल—दुःखित । ल—दुःखिता । 8 ब—कृष्यमान । 9 कै—स्नेहार्थे ।

११] पतन्तमद्रिशिखरादगाधे गोमये[10] ह्रदे[10] ॥ ११ ॥ [८
तस्मिन्निमग्नश्चोन्मज्य दृष्टो मे गोमयह्रदात् ।
१२] पिबन्नञ्जलिना तैलं हसन्निव पुनः पुनः ॥ १२ ॥ [९
ततस्तैलोदकं पीत्वा पुनः पुनरधःशिराः ।
१३] तैलेनासिक्तसर्वाङ्ग स्तैलमेवावगाहयन् ॥ १३ ॥ [१०
पीठे कार्ष्णायसे चैनं निषण्णं कृष्णवाससम् ।
१४] प्रहसन्ति च राजानं प्रमदाः कृष्णपिङ्गलाः ॥ १४ ॥ [१४
दृष्टो रासभयुक्तेन रथेन च पिता मया ।
१५] रक्तमाल्याम्बरधरः प्रयातो दक्षिणामुखः ॥ १५ ॥ [१५
प्रदीप्तमम्भसा शान्तं दृष्टवानस्मि पावकम् ।
१६] सीदन्तं च ततोऽद्राक्षं वन्धलग्नं[12] महागजम् ॥ १६ ॥ [१२
विशीर्यमाणः शैलेन्द्रो भग्नश्चैव महाद्रुमः ।
१७] स्वप्ने चाद्य मया दृष्टः पतितश्च महाध्वजः ॥ १७ ॥ [१३
एवमेष मया स्वप्नो[13] दृष्टः[13] पापो[14]भयावहः[14] ।
१८] व्यक्तं रामोऽथवा राजा प्राणांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥१८॥ [१७
यो हि रासभयुक्तेन रथेन परिकृष्यते ।
१९] मृतः स न चिरादेव ध्रुवं याति यमक्षयम् ॥ १९ ॥ [१८
एतन्निमित्तं दीनोऽहं नाभिनन्दामि वो वचः । [१९पू
२०] हर्षस्थाने न हृष्यामि चिन्तयन् स्वप्नदर्शनम् ॥ २० ॥ [N
अस्थाने चापि सोत्कण्ठं मनो विह्वलतीव मे । [१९उ
२१] अस्थाने व्यथितश्चायं देहे[16] देहेश्वरो मम ॥ २१ ॥ [N

---

10 य—गोमयह्रदे । कै—गोमयाह्रदे । म—रोमयाह्रदे ।
11 कै—०मुग्नं । 12 म, ड—बद्धलग्नं । 13 कै—दृष्टः स्वप्नः । 14 ड—पाप० । 15 कै—यमालयं । 16 कै—देही ।

इतात्विषमिवात्मानमद्य चैवोपलक्षये । [N
२२] जुगुप्सामि तयाऽऽत्मानमन्न स्मात् पतित यथा ॥ २२ ॥ [२०पू
इमां च तु स्वप्नगतिं विचिन्तयन्
समुत्सुकत्वाद् व्यथितोऽतिविह्वल ।
न शर्म विन्दामि यथा तथा ध्रुव
२३] किमप्यरि(नि?)ष्ट न चिरादुपैष्यति ॥ २३ ॥ [२१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतदुःस्वप्नदर्शनं नाम
[पञ्चसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७५ ॥



[बं-७२]=[षट्सप्ततितमः सर्गः]=[दा-७०]

भरते ब्रुवति स्वप्नं दूतास्ते श्रान्तवाहनाः ।
१] प्रविश्यासह्यपरिखं रम्यं राजनिवेशनम् ॥ १ ॥ [१
सभाजग्मुश्च राजानं भरतेनार्थिनस्तदा ।
२] राज्ञः पादौ गृहीत्वैव तमूचुर्भरतं वचः ॥ २ ॥ [२
पुरोहितस्त्वां कुशलं प्राह सर्वे च मन्त्रिणः ।
३] त्वरमाणश्च निर्याहि कार्यमात्ययिकं त्वया ॥ ३ ॥ [३
चैलानां चैव वाह्यर्थं देयं मातामहस्य ते ।
४] तिस्रः कोट्यस्तु संपूर्णास्तवेमा नृवरात्मज ॥ ४ ॥ [५
प्रतिगृह्य च तत्सर्वमनुरक्तसुहृज्जनः ।
५] दूतानुवाच भरतः कामैः संप्रतिपूज्य[1] तान्[1] ॥ ५ ॥ [६
कच्चित्पिता मे कुशली वृद्धो दशरथो नृपः ।O
६] कच्चिद् भ्राता मम ज्येष्ठो रामो धर्मभृतां वरः ॥ ६ ॥ [७
कुशली लक्ष्मणश्चापि भ्राता मे भ्रातृवत्सलः ।
७] कच्चित्स्मरति मामार्यो रामोऽसौ भ्रातृवत्सलः ॥ ७ ॥ [N
कच्चिदम्बा च सुखिनी कौशल्या[2] धर्मचारिणी ।
८] माता रामस्य धर्मज्ञा भर्तृव्रतपरायणा ॥ ८ ॥ [८
कच्चित्सुमित्रा धर्मज्ञा लक्ष्मणं याऽभ्यजायत ।
९] शत्रुघ्नं च महात्मानमरोगा चापि मध्यमा ॥ ९ ॥ [९
आत्मकार्यपरा चण्डी[3] क्रोधना नित्यगर्विता ।
१०] कैकेयी चापि मे माता कच्चित् कुशलिनी इदम् ॥ १० ॥ [१०
इति ते कुशलप्रश्नं[4] श्रुत्वा दूताः ससंभ्रमाः ।
११] मन्त्रसंच(व?)रणं कृत्वा प्रत्यूचुर्हृष्टमानसाः ॥ ११ ॥ [११

---

1 घ—०पूजितान् । के, ल—०पूज्यताम् । म—०तत् । Oके ।
2 के, घ, म, ल—कौसल्या । 3 ल—चागी । 4 म—पार्थितं० । के—सुशल० ।

सर्वे ह्येते कुशलिनो येषां कुशलमिच्छसि ।
१२] आह त्वां च पिता शीघ्रमेहीति रघुनन्दन ॥ १२ ॥ [१२
यदि पश्यसि गन्तव्यं गम्यतामविचारतः ।
१३] भृशं हि दर्शनाकांक्षी पिता ते सह मन्त्रिभिः ॥ १३ ॥ [N
इत्युक्तो भरतो दूतैः प्रत्युवाच वचस्तदा ।
१४] एवं भवतु गच्छामि मुहूर्तं प्रतिपाल्यताम् ॥ १४ ॥ [१३
१५] दूतानेतावदुक्त्वा च मातामहमभाषत ॥ १५ ॥ [१४
अयोध्यां गन्तुमिच्छामि नृपतेर्पितुराज्ञया ।
१६] दूता हि त्वरयन्तीमे मामनुज्ञातुमर्हसि ॥ १६ ॥ [N
इति मातामहस्तेन भरतेनाभियाचितः ।
१७] शिरस्याघ्राय सस्नेहादिदं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ [१६
गच्छ त्वमनुजाने त्वां कैकेयी सुप्रजा[5] त्वया ।
१८] मातरं कुशलं ब्रूयाः पितरं च समागमे ॥ १८ ॥ [१७
पुरोहितं तथा रामं लक्ष्मणं मन्त्रिणस्तथा ।
१९] कौशल्यां[6] च सुमित्रां च सर्वांश्चैव सुहृज्जनान् ॥ १९ ॥ [१८
तस्मै चित्रान्[7] कुथान्[7] शुभ्रान्[8] कम्बलान्यजिनानि च ।
०] महाऽर्हाणि च वासांसि ददौ राजाऽर्हणं ततः ॥ २० ॥ [१९
रुक्मनिष्कसहस्राणि दश द्वादश चैव हि ।
२१] मातामहः प्रीतिदायं भरताय ददौ धनम् ॥ २१ ॥ [२१
तस्यामात्यान् बहुविधान् शूरान् भक्तिमतस्तथा ।
२२] ददावश्वपतीन् राजा भरतस्यानुयायिनः ॥ २२ ॥ [२२
सहस्रमपि चाश्वानां देश्यानां वातरंहसाम् ।
२३] ददौ दशसहस्राणि गजानां हेममालिनाम् ॥ २३ ॥ [२३

5 कै—सुप्रजास् । 6 कै, ग, म, ल—कौसल्यां । 7 कै, ब, ल—चित्रां कुथां । म—चित्रा कुथा । 8 ब—शुभ्रां । म—शुभ्रा ।

अन्तर्गृहचरान् पुष्टान् व्याघ्रसंहननायुतान् ।
२४] तीक्ष्णदंष्ट्रायुधान् शूरान् शुनश्चोपानयद्बहून्O ॥ २४ ॥ [२०
रथानपि विचित्रांश्च योजयित्वा परः शतान् ।O
२५] गोऽश्वोष्ट्ररासैः युक्तान्O भरतं यान्तमन्वयुः ॥ २५ ॥ [२९
स यातामहमामन्त्र्य मातुलं च युधाजितम् ।
२६] रथमारुह्य भरतः शत्रुघ्नसहितो ययौ ॥ २६ ॥ [२८
बलेन युक्तो महता महात्मा
सहायकैरात्मसमैरमात्यैः[१] ।
आदाय शत्रुघ्नमपेतशत्रु
२७] ययौ पुरं स्वर्गमिवामरेन्द्रः ॥ २७ ॥ [३०

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतगमनं
नाम [षट्सप्ततितमः] सर्गः [॥७६ ॥]



Oके । १ के—०श्चात्मम० ।

[वं-७३]=[सप्तसप्ततितमः सर्गः]=[दा-७१]

स ततः प्राङ्मुखो राष्ट्रान्निर्याय भरतस्तदा ।
१] जगाम शीघ्रं द्युतिमान् पितुरादाय शासनम् ॥ १ ॥ [१
स नदीं दूरपारां च तिर्यक्स्रोतःसमागताम्O ।
२] शतद्रुमतरच्छ्रीमान् क्रमेणेक्ष्वाकुनन्दनः ॥O २ ॥ [२
बीजवाप्यां[1]OनदींOतीर्त्वाOप्राप्य चामरकण्टकम् ।
३] शिलामकच्छगां तीर्त्वा चाग्नेयीं[2] शल्यकर्तनाम्[3] ॥ ३ ॥ [३
सत्यसन्धः शुचितमो प्रेक्षमाणः शिलावहाम् ।
४] प्रत्ययात् स महासत्त्वो वनं चैत्ररथं प्रति ॥ ४ ॥ [४
शब्देनाकारयत्येषा ह्लादिनी पावनोदका ।
५] यमुनां प्राप्य सन्तीर्य बलमाश्वासयत्तदा ॥ ५ ॥ [६
६] यमुनायां च[4]स[4] स्नात्वा स्नापयित्वा च वाजिनः । [७पू
पू७] राजपुत्रो महाबाहुरगच्छद्दर्पवर्धनः ॥ ६ ॥ [८पू
हिरण्योदामपि नदीमुत्तीर्याहिस्थले पुरे । [N
८] तोरणान् दक्षिणेनैव वारणस्थलमभ्यगात्[5] ॥ ७ ॥ [११पू
ततोऽवतीर्य प्रययौ यामं दशरथात्मजः ।
९] तस्मिन्नुषित्वा तां रात्रिं प्राङ्मुखः प्रययौ ततः ॥ ८ ॥ [१२पू
उद्यानमुज्जिहाना ये प्रियका यत्र पादपाः । [१२उ
१०] भद्रं शल्यवनं दुर्गं समतीत्य त्वरान्वितः ॥ ९ ॥ [N
अथानुज्ञाप्य भरतो वाहिनीं[6] चतुरङ्गिणीम्[6] । [१३उ
११] ततः शीघ्रतरं प्रायादुत्तीर्योत्तारिकां नदीम् ॥ १० ॥ [१४पू
सरितोऽन्याश्च विविधाः सन्ततार त्वरान्वितः । [१४उ

Oव । 1 ल—०वाज्या । म—०वाज्यं । 2 ल—प्रीयीं । म—प्रीयं । [illegible] म—०कतनम् । 4 ब, म, ल—स च । 5 ब, म, ल—०मभ्ययात् ।
6 ब, म, ल—वाहिणा (ल—०ना) चतुरंगिणा ।

१२] सप्तस्पर्द्धां समासाद्य कुलिनागभ्यवर्त्तत ॥ ११ ॥ [१५पू
तस्मादभ्येत्य लौहित्य तताराथ च पावनीम् । [१५उ
१३] एकशल्यां स्थानवर्तीं विनतां गोमतीं नदीम् ॥ १२ ॥ [१६पू
कलिङ्गनगरे ऽतीत्य घन साल्वनं ततः । [१६उ
१४] भरतः क्षिप्रमभ्यायादपरिश्रान्तवाहनः ॥ १३ ॥ [१७पू
N] गंगां ततार द्युतिमान् हरितीर्थे महानदीम् । [N
पू१५] गोमतीमाभितः साय द्विजवर्यसमाकुलाम्[7] ॥ १४ ॥ [N
उ१५] स ततो गोमतीं तीर्त्वा प्रयातश्चोदिते रवौ । [N
पू१६] अयोध्यां मनुना राज्ञा स ददर्श निवेशिताम् ॥ १५ ॥ [१८पू
उ१६] सन्तीर्य गोमतीं तूर्णं भरतो दीनमानसः । [N
पू१७] तां पुरीं मनुजव्याघ्र सप्तरात्रोषित. पथि ॥ १६ ॥ [१८उ
उ१७] दृष्ट्वाऽयोध्यामुवाचेद सारथिं रथिनां वरः । [१९पू
नातिमहृष्टदेशैषा ह्ययोध्या दृश्यते पुरी । [१९उ
१८] आम्लानोपवनोद्याना हतात्विडिव सारथे ॥ १७ ॥ [२०पू
विद्वद्भिर्गुणसपन्नै र्वेदवेदाङ्गपारगै.[8] । [२०उ
१९] द्विजैर्बहुभिराकीर्णा राजर्पिवरपालिता ॥ १८ ॥ [२१पू
अयोध्याया पुरा घोषो दूरादेव जनोद्भवः ।
२०] श्रूयते सागरस्येव मथ्यमानस्य वायुना ॥ १९ ॥ [२१उ
सोऽद्य न श्रूयते कस्मादयोध्याया जनस्वन. ।
२१] गतश्रीरिव चाभाति केनायोध्या महापुरी ॥ २० ॥ [N
उद्यानानि च रम्याणि मुदा प्रक्रीडितैर्जनै. । [२२उ
२२] आकीर्णान्युपलक्ष्यन्ते तानि नाद्य यथा पुरा ॥ २१ ॥ [N
अरण्यभूत पश्यामि नगरोपवन पितु. । [२४पू
२३] शून्य यथा वनोद्देश नरनारीविवर्जितम् ॥ २२ ॥ [N

7 म, ल—०ल । 8 ध—०वेदात० । 9 चे—०स्वर ।

न यानैरद्य दृश्यन्ते न गजैर्न च वाजिभिः । [२४उ
२४] निर्यान्तः प्रविशन्तो वा जनाः पुरनिवासिनः ॥ २३ ॥ [२४½
अरि(नि?)ष्टान्येव पश्यामि निमित्तान्यद्य सर्वशः । [२६पू
२५] केनापि च शरीरं मे व्यथतीव हि सारथे ॥ २४ ॥ [N
इति ब्रुवन्नेव वचो भरतः श्रान्तवाहनः ।
२६] विवेश तां पुरीं रम्यां द्वाःस्थैश्च प्रतिपूजितः ॥ २५ ॥ [३३
त्वरन्नेकाग्रहृदयो द्वाःस्थं संपूज्य तं जनम् ।
२७] सूतमश्वपतेः श्रान्तमब्रवीत्तत्र राघवः ॥ २६ ॥ [३४
श्रुता नो यादृशाः पूर्वं निवेशे पृथिवीपतेः ।
२८] आकारास्तानहं सर्वानद्य पश्यामि सारथे ॥ २७ ॥ [३६
मलिनं चाश्रुपूर्णाक्षं दीनं ध्यानपरं कृशम् ।
२९] सस्त्रीपुमांसं पश्यामि जनमुत्कण्ठितं पुरे ॥ २८ ॥ [४३
इत्येवमुक्त्वा भरतः सूतं तं दीनमानसः ।
३०] अरि(नि?)ष्टांस्तानयोध्यायां प्रेक्ष्य धीमान् ययौ गृहम् ॥ २९ ॥ [४४
तां शून्यशृङ्गाटकवेश्मरथ्यां
रजोरुणद्वारकवाटयन्त्राम् ।
दृष्ट्वा पुरीं दीनजनानुकीर्णां
३१] शोकेन संपूर्णतरो बभूव ॥ ३० ॥ [४५
बहूनि पश्यन् मनसोऽप्रियाणि
यान्यस्य दीनस्य पुरे बभूवुः ।
अवाक्शिरा दीनतरो मनस्वी
३२] पितुर्महात्मा स विवेश वेश्म ॥ ३१ ॥ [४६

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतागमनं नाम
[सप्तसप्ततितमः] सर्गः [॥ ७७ ॥]

[बं–७४]=[अष्टसप्ततितमः सर्गः]=[दा–७२]

अवीक्षमाणः पितरं स तत्र पितुरालये ।
२] जगाम निःसृत्य ततो भरतो मातुरन्तिकम् ॥ १ ॥ [१
स तत्र गत्वा भरतो मातुरुत्सुकमानसः ।
४] जग्राहावनतः पादौ शिरसा पतितो भुवि ॥ २ ॥ [३
तं च सा मूर्ध्न्युपाघ्राय परिष्वज्य च कैकयी ।
५] उपविश्याथ भरतं संप्रष्टुमुपचक्रमे ॥ ३ ॥ [४
प्राप्तोऽसि कुचिरेणाद्य मातामहपुराद् सुत ।
६] सुखेनाभ्यागतः कच्चिद् पथि श्रान्तपरिच्छदः[1] ॥ ४ ॥ [५
कच्चित्कुशल्यार्यकस्ते युधाजिन्मातुलस्तथा[2] ।
७] सुखमप्युषितः कच्चिद् पुत्र मातामहे कुले ॥ ५ ॥ [६
इति पृष्टस्तु कैकेय्या भरतो दीनमानसः ।
८] शशंस मातुः स क्षिप्रं गमनागमनक्रमम् ॥ ६ ॥ [७
अद्य मे दिवसाः सप्त निःसृतस्य गिरिव्रजात् ।
९] अम्बायाः कुशली तातो युधाजिन्मातुलश्च मे ॥ ७ ॥ [८
यन्मे प्रीतिधनं भूरि दत्तं मातामहेन वै[3] ।
१०] पथि तत्सर्वमुत्सृज्य ततोऽहं शीघ्रमागतः ॥ ८ ॥ [९
राज्ञा तु प्रेषितै दूतैः प्रेर्यमाणस्त्वरान्वितः ।
११] तत्र त्वां प्रष्टुमिच्छामि तन्ममाख्यातुमर्हसि ॥ ९ ॥ [१०
न यथावद् पुरमिदं हृष्टपौरजनावृतम् ।
१२] कस्माद्दीनजनाकीर्णं लक्ष्यते विगतद्युति ॥ १० ॥ [११
निरुत्साहं निरानन्दं विरताध्ययनस्वनम् ।
१३] कस्माच्च मां राजमार्गे जनो नायाति चाग्रतः ॥ ११ ॥ [१२

---

1 ब—०परिश्रमः । म. ह—दांतपरिश्रमः । 2 ह—०स्तथ ।
3 ब. म. ह—मे ।

पितरं च न पश्यामि केनाद्य भवने निजे ।
१४] किं वा भवेद्गतोऽम्बायाः कौशल्याया निवेशनम् ॥१२॥ [१३
वर्जितं शयनीयं ते भर्त्रा केनाद्य हेतुना ।
१५] अप्रहृष्टो जनश्चायं केन वा ब्रूहि तन्मम ॥ १३ ॥ [१२
अथ[4]राजा ■ यत्रास्ते तत्राहं गन्तुमुत्सहे ।
१६] न हि शर्माधिगच्छामि तमदृष्ट्वा नराधिपम् ॥ १४ ॥ [N
इति ब्रुवाणं भरतं कैकेयी प्रत्यभाषत ।
१७] निर्लज्जा दारुणं वाक्यमप्रियं प्रियसंहितम् ॥ १५ ॥ [१४पू
स्वर्गं गतो महाराजः पिता ते सुकृतैः स्वकैः ।
१८] त्वयि राष्ट्रं विसृज्यैव पुत्रशोकपरिक्षतः ॥ १६ ॥ [N
इति श्रुत्वा वचो मातु र्भरतो दारुणाक्षरम् ।
१९] पपात सहसा भूमौ छिन्नमूल इव द्रुमः ॥ १७ ॥ [१६
स भूमौ विनिपत्येद[5] विललापाकुलेन्द्रियः ।
२०] हा कष्ट स्वर्गतो राजा कथं वा केन हेतुना ॥ १८ ॥ [१७,१८
यत्पुरा तेन मे पित्रा शयनं भात्यलङ्कृतम् । [१९पू
२१] तदेव रहितं तेन श्रिया हीन न राजते ॥ १९ ॥ [२०पू
मज्जिज्ञासाऽर्थमथ[6] वा यदि तेऽभिहितं मृषा ।
२२] प्रसीदाम्ब भृशार्तोऽहं शंस मे क्व गतो नृपः ॥ २० ॥ [N
इत्यार्तरूपं पतितं[7] पितुर्दर्शनलालसम् ।
२३] कैकेयी पतितं भूमावुत्थाप्येद वचोऽब्रवीत् ॥ २१ ॥ [२२,२३
उत्तिष्ठ भरत क्षिप्रं न त्वं शोचितुमर्हसि ।
२४] त्वद्विधा न हि शोचन्ति दृष्टधर्माः परन्तप ॥०२२ ॥ [२४

---

4 (अम्ब?) । 5 ब, म, ल—विललापेद । 6 ब, म, ल—०मपि । 7 म—भरत ।०व

पालयित्वा महीं सम्यगिष्ट्वा दत्त्वा च ते पिता ।
२५] दिष्टान्तं समनुप्राप्तो न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २३ ॥O [N
इत ऊर्ध्वंतरं स्थानं राजा दशरथो गतः ।
२६] न स शोच्यस्त्वया पुत्र सत्यधर्मपरायणः ॥ २४ ॥ [N
इत्येतद् भरतः श्रुत्वा कैकेय्या दारुणं वचः ।
२७] जननीं पुनरेवेदमुवाच भृशदुःखितः ॥ २५ ॥ [२६
अभिषेक्ष्यति रामं नु राजा यज्ञं नु यक्ष्यति[8] ।
२८] इत्याशाकृतसङ्कल्पस्त्वरमाणोऽहमागतः ॥ २६ ॥ [२७
तदद्याशसितं सर्वं मम मोघमचेतसः ।
२९] पितरं कृतपुण्यो हि को मृतं श्रोतुमर्हति ॥ २७ ॥ [२८
अम्ब केन मृतो राजा व्याधिना मय्यनागते ।
३०] धन्यो रामो लक्ष्मणश्च पिता याभ्यां स सत्कृतः ॥ २८ ॥ [२९
नूनं मां न पिता वृद्धः मातः जानाति वत्सल ।
३१] उपजिघ्रेत[9] मां स्नेहात्संपरिष्वज्य मूर्धनि ॥ २९ ॥ [३०
क स पाणिः सुखस्पर्शस्तातस्य शुभलक्षणः ।
३२] येन मां रजसा ध्वस्तमभीक्ष्णं परिमार्जयेत् ॥ ३० ॥ [३१
येन मे माता पिता बन्धुर्यस्य दासोऽस्मि धीमतः ।
३३] तं नाथ मे[10] त्वमाचक्ष्व[10] रामं भ्रातरमग्रजम् ॥ ३१ ॥ [३२
यं दृष्ट्वा पितृशोकार्त्तो लभेय निर्वृतिं पराम् ।
३४] यस्य पादावुपाश्रित्य जीवेयं तं मचक्ष्व मे ॥ ३२ ॥ [N
पू३५] क मे पितृसमो भ्राता ज्येष्ठो धर्मभृतां वरः ।

O थ । 8 थ, म—रक्ष्यति । 9 म, ल—उपाजिघ्रेत । थ—उपा-
जिहेत । 10 पै—त्वो ममाचक्ष्व ।

पू३७] सर्वमेतद्यथातत्त्वं त्वं ममाख्यातुमर्हसि ॥३३॥ [N

उ३७] इति पृष्टाऽथ भरतं कैकेयी वाक्यमब्रवीत् । [३५उ

पू३८] राजपुत्र महासत्त्व शृणु तत्त्वमशेषतः ॥ ३४ ॥ [N

उ३८] श्रुत्वा[11]च[11] न विषादं त्वं गन्तुमर्हसि मानद । [N

पू३९] यथा पिता ते धर्मात्मा प्राणांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ ३५ ॥ [N

उ३९] शृणु तत्तेऽभिधास्यामि[12] यच्चोवाच पिता स ते । [N

पू४०] हा पुत्र रामेत्युक्त्वा च हा पुत्र लक्ष्मणेति च ॥३६॥ [३६पू

उ४०] विलप्यैवं सुबहुशः प्राणांस्तत्याज ते पिता । [३६उ

पू४१] इदं चापश्चिमं वाक्यमुक्त्वा राजा दिवं गतः ॥ ३७ ॥ [·७पू

N] पुत्रशोकाग्निसन्तप्तः कालदण्डनिपीडितः । [३७उ

उ४१] सिद्धार्थास्ते हि रामं ये पश्यन्त्यभ्यागतं वनात् ॥३८॥ [३८पू

निस्तीर्णसमयं सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च । [३८उ

४२] श्रुत्वैतद्विपसादार्तो द्वितीयाप्रियशङ्कया ॥३९॥ [३९पू

विषण्णवदनश्चैव भूयः पप्रच्छ मातरम् । [३९उ

४३] केदानीं वर्त्तते रामः किमर्थं वा गतो वनम्[13] ॥४०॥ [४०पू

वैदेह्या सह कस्माच्च गतोऽसौ लक्ष्मणेन च । [४०उ

४४] इति पृष्टा ततस्तेन कैकेयी वाक्यमब्रवीत् ॥ ४१ ॥ [४१पू

पुनर्वै भरतं क्षुद्रं दीनमप्रियशङ्कया । [४१उ

४५] चीरवल्कलसंवीतो गतो राम इतो वनम् ॥ ४२ ॥ [४२पू

पितुर्नियोगात्सहितो वैदेह्या लक्ष्मणेन च । [४२उ

४६] मया च तत्कृतं येन रामः प्रव्रजितो वनम् ॥ ४३ ॥ [N

स्वर्गतः पुत्रशोकार्त्तस्तं च प्रव्राज्य ते पिता [N

४७] तच्छ्रुत्वा भरतस्तस्या मातुः पापविशङ्कितः[14] ॥४४॥ [४३पू

11ल—श्रुत्वाथ। म—श्रुता श। 12 क—ने त्वामि०। 13 म—नुगम।
14 म—शापवि०।

स्ववंशशुद्धिमन्विच्छन्[15] प्रष्टुमारब्धवानिदम् । [४३उ

४८] कच्चिन्न ब्राह्मणधनं हृतं रामेण धीमता ॥ ४५ ॥ [४४पू

कच्चिदाढ्यो दरिद्रो वा भ्रात्रा मे न विहिंसितः । [४४उ

४९] येन निर्वासितः श्रीमान् प्राणेभ्योऽपि प्रियः सुतः ॥४६॥ [N

कच्चिन्न परदारान्स मम भ्राता ऽभ्यपद्यत[16] ।

५०] येनासौ दण्डकारण्ये भ्रूणहेव विवासितः ॥ ४७ ॥ [४५

स्त्रीचापलात्तु[17] तच्छ्रुत्वा[17] कैकेयी पुनरब्रवीत् ।

५१] भरतं श्लाघमानेव[18] स्वकर्माख्यापयत्तदा ॥ ४८ ॥ [४६

अशुभा शुभभावाय भरताय महात्मने ।

५२] शशंस सा यथातत्त्वं मूढा पण्डितमानिनी ॥ ४९ ॥ [४७

न ब्रह्मस्वं हृतं तेन न च किंचिद्विहिंसितम् ।

५३] न चैव परदारान् स मनसाऽपि प्रधर्षति ॥ ५० ॥ [४८

शीलवान् धार्मिको विद्वान् विपाप्मा विजितेन्द्रियः ।

५४] न स किंचिन्महासत्त्वः कृतवान् पापमण्वपि ॥ ५१ ॥ [N

तेन धर्मात्मना लोकः कृत्स्नोऽयमनुरञ्जितः ।

५५] राजाऽभिषेक्तुकामो वै यौवराज्यपदे स्वके ॥ ५२ ॥ [N

ततः श्रुत्वा मया पुत्र तथाकृतमतिर्नृपः ।

५६] त्वदर्थं याचितो राजा यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ५३ ॥ [४९

रामस्य च वने वासं नववर्षाणि पञ्च च ।

५७] तेन निर्वासितो रामः पित्रा ते नगराद्बहिः ॥ ५४ ॥ [४९उ

स चापि वचनाद्रामः पितुर्धर्मपरायणः ।

५८] वनं गत इतः सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च ॥ ५५ ॥ [५०

---

15 ढ—स्वकांक्षसिद्धिम० । 16 ढ—प्रपद्यत । म—नपद्यत । ल—नु (न्व ?) पद्यत । 17 ढ, म—०चापगात्तत. श्रु० । ल—०चापलात्तेनः श्रु० । 18 ल—०मानेन ।

न च पश्यन् प्रियं पुत्र पिता ते धर्मवत्सलः ।
५९] पुत्रशोकपरो दीनः प्राणांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ ५६ ॥ [५१
त्वत्प्रियार्थं मया कर्म कृतमेतद्विगर्हितम् । [५२उ
६०] यत्सर्वगुणसंपन्नो रामः प्रव्राजितो वनम् ॥ ५७ ॥ [N
तद्वियोगाच्च राजाऽसौ पुत्रशोकाकुलेन्द्रियः ।
६१] प्रियान् प्राणान् परित्यज्य प्रेतराजवशं गतः ॥ ५८ ॥ [N
गृहाण तदिदं राज्यं सफलं कुरु मे श्रमम् । [५२पू
६२] मनो नन्दय मित्राणां मम चामित्रकर्षण ॥ ५९ ॥ [N
श्वः पुत्र शीघ्रं विधिवत्स्वराज्ये
विप्रैर्वसिष्ठप्रमुखैः समेत्य ।
सत्कृत्य राजानमनन्तरं च
६३] स्वात्मानमस्मिन्नभिषेचयस्व[19] ॥ ६० ॥ [५४

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतप्रश्ने कैकेयीवाक्यं नाम [अष्टसप्ततितमः] सर्गः [॥७८ ॥]



19 घ, म, ट—आत्मान० ।

[वं-७९]=[एकोनाशीतितमः सर्गः]=[दा-७३ तथा ७४]

श्रुत्वाऽथ पितरं प्रेतं भ्रातरौ च विवासितौ ।
१] भरतो दुःखसन्तप्तो मातरं पुनरब्रवीत् ॥ १ ॥ [७३ । १
रामं राष्ट्राद् भ्रंशयित्वा कैकेय्यनपकारिणि[1] ।
२] परित्यक्ताऽसि धर्मेण गर्हिते पापनिश्चये ॥ २ ॥ [७४ । २
राज्यलोभात् पतिं प्राणै र्वियोज्य च यशस्विनम् ।
३] गन्ताऽसि[2] निरयं घोरं सर्वथैव धिगस्तु ते ॥ ३ ॥ [N
यदि त्वं राज्यलोभेन गन्तुं निरयमिच्छसि ।
४] पतन्त्या निरये कस्मादहमप्यनुपातितः ॥ ४ ॥ [N
हा दग्धोऽस्मि हतश्चैव त्वया मात्रा[4] नृशंसया[4] ।
५] त्यक्ष्याम्यहमपि प्राणान् मातस्त्वं सुखिनी भव ॥ ५ ॥ [N
किं नु तेऽपकृतं भर्त्रा किं रामेण महात्मना ।
६] ययो र्मृत्युर्विवासश्च त्वया तुल्यमुपाहितौ ॥ ६ ॥ [७४ । ३
भ्रूणहत्या त्वया प्राप्ता ब्रह्महत्या च कुत्सिता । [७४ । ४पू
७] रामं राज्याद् भ्रंशयित्वा पतिं प्राणैर्वियोज्य च ॥ ७ ॥ [N
मा तेऽस्त्वयं शुभो लोको मा परो भर्तृघातिनि[5] । [N
८] कैकेयि नरकं गच्छ भर्तृशापपरिक्षता ॥ ८ ॥ [७४ । ४उ
हा दग्धो नाशितश्चास्मि त्वयाऽहं राज्यलुब्धया ।
९] किं मे राज्येन भोगैर्वा दग्धस्यायशसा त्वया ॥ ९ ॥ [७३ । १३
निर्मुक्तस्य मे पित्रा भ्रात्रा पितृसमेन च ।
१०] जीवितेनापि नार्थोऽस्ति कश्चिद्राज्येन वै कुतः ॥ १० ॥ [N
देवकल्पेन पित्रा यद्विहीनो राघवेण च ।

---

1 पै—०कारिणी (०कारिण ?) । 2 ल—गता० । म गत ० । 3 म, ल—पतस्या । 4 कै—मण्डनृश० । 5 श्लोकार्द्धमेतत् किञ्चित्पाठभेदेन अग्रे (८० । ३३) वर्तते ।

११] केनेच्छेयं हेतुनाऽहं राज्यं प्राप्तुमशक्तिमान् ॥ ११ ॥ [७३।१४
भवेद्यद्यपि मे शक्तिः शासितुं राज्यमूर्जितम् ।
१२] तथाऽपि न सकामां त्वां करिष्ये मातृगार्धिनि[6] ॥ १२ ॥ [७३।१७
मन्निमित्त पिता प्राणैस्त्वया मे विप्रयोजितः ।
१३] प्रव्राजितो वनं चैव रामो धर्मभृतां वरः ॥ १३ ॥ [७४।१०
अहो पाप महन्मूर्ध्नि त्वया मे विनिपातितम् ।
१४] अपापः पापसङ्कल्पे सर्वथाऽहं हतस्त्वया ॥ १४ ॥ [N
व्रणे क्षार विनिक्षिप्य दु:खे दुःखं निपातितम् ।
१५] त्वया[7] पतिं घातयित्वा[8] रामं कृत्वा च तापसम् ॥१५॥ [७३।३
कुलस्यास्य विनाशाय पित्रा मे त्वमिहाहृता ।
१६] त्वां कालरात्रिमतिमां पिता मे नावबुद्धवान् ॥ १६ ॥ [७३।४
आहृता घोरसङ्कल्पा राज्ञा त्वं मृत्युरात्मनः ।
१७] व्याली घोरविषेव त्वं भर्त्राऽसि परिपालिता ॥ १७ ॥ [N
अपापः पापसङ्कल्पे सत्यसन्धः पिता मम ।
१८] छलयित्वा[9] प्रियैः[10] प्राणैः सत्पुत्रेण वियोजितः ॥१८॥ [N
तथैव स महाभागो लक्ष्मणो भ्रातृवत्सलः ।
१९] प्रव्राजितो वनं राज्यात् पितृगौरवयन्त्रितः ॥ १९ ॥ [N
कौशल्या च सुमित्रा च पुत्रशोकपरिप्लुते ।
२०] दुष्करं यदि जीवेतां त्वया पापे निराकृते ॥ २० ॥ [७३।८
न त्वं केकयराज्ञोऽसि[11] जाता मतिमतां वरात् ।
२१] पापवृत्तां च जाने त्वां जातां घोरेण रक्षसा ॥ २१ ॥ [७४।२
रामे त्व किं न्वकल्याणमकल्याण्यनुपश्यसि ।

---

6 ब—०गधिनि । ल—०गन्धिनि । म—मातिग द्गिने । 7 ब—दु ख निपातित त्वया । 8 ब—पति च घातयित्वा त । 9 म, ल—कल्पयित्वा । 10 ब—प्रिय । 11 के—कैकेयि राज्ञासि । ब—केकयराजस्य ।

२२] येन त्वया साधुवृत्तो रामः प्रव्राजितो वने[12] ॥ २२ ॥ [N
मातरीव च यो वृत्तिं रामस्त्वय्यनुवर्त्तते ।
२३] तस्य प्रव्राजनं पापे किं पश्यन्त्या त्वया कृतम् ॥ २३ ॥ [७३ । ९
पितर्यसाधु किं मे त्वं रामे[13] वा दृष्टवत्यसि ।
२४] येनाकार्यं कृतवती मम त्वमयशस्करम् ॥ २४ ॥ [N
यदा माता च मे ज्येष्ठा कौशल्या धर्मदर्शिनी ।
२५] त्वयि वृत्तिं परां प्राप्ता भगिन्यामिव वर्त्तते ॥ २५ ॥ [७३ । १०
अथ कस्मात्त्वयाऽनार्ये तस्याः पुत्रः प्रवासितः ।
२६] त्वयाऽऽत्मानं दूषयन्त्या दूषितोऽहं,नृशंसया ॥ २६ ॥ [७३ । १०
N] अनृशंसं महात्मानमपापं पापनिश्चये ।
पू२८] निवर्त्तयिष्ये तं गत्वा वनवासादहं स्वयम् ॥ २७ ॥ [७३ । २६
उ२८] विज्ञाप्य रघुशार्दूलं रामं भ्रातरमग्रजम् ।
पू२९] वत्स्याम्यहं वने घोरे नववर्षाणि पञ्च च ॥ २८ ॥ [७४ । ३१
उ२९] पितुर्नियोगाद् भ्राता मे रामो राजा भविष्यति । [N
इत्येवमुक्त्वा भरतोऽतिरोषाद्
विगर्हयित्वा जननीं सुखार्हः ।
शोकातुरः सस्वनमुन्ननाद
३०] सिंहो यथा पर्वतकन्दरस्थः ॥ २९ ॥ [२८
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कैकेयीविगर्हणं नाम
[एकोनाशीतितमः] सर्गः [॥ ७९ ॥]



12 ब, म, ल—वनं । 13 ब—राम ।

[बं-७६]=[अशीतितमः सर्गः]=[दा-७४]

तथा स गर्हयित्वा तां मातरं भरतस्तदा[1] ।
१] दुःखेन महताऽऽविष्टः पुनरेवेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
योषित्स्वभावे कैकेयि नृशंसे निरपत्रपे । [२पू
२] किं तेऽपराद्धं रामेण भर्त्रा वा पापनिश्चये ॥ २ ॥ [३पू
एवं क्रूरस्वभावायाः सर्वथैव धिगस्तु ते ।
३] मा ते ऽस्त्वय शुभो लोको मा परः कुलपांसनि ॥ ३ ॥ [N
सर्वलोकाप्रियं कृत्वा कथं नाम न लज्जसे ।
४] कथं त्वां नयते भूमिं स्वामित्वं भर्तृघातिनि ॥ ४ ॥ [N
कथं तेनर्षिकल्पेन मम पित्रा महात्मना ।
५] तवापराधः क्षान्तोऽयं सर्वलोकविगर्हितः ॥ ५ ॥ [N
कथं शापाग्निना तेन न दग्धाऽसि महात्मना ।
६] त्वद्दोपदूषितश्चाहं न दग्धः केन हेतुना ॥ ६ ॥ [N
प्राणैर्वियोजितो भर्ता रामः प्रव्राजितो वनम् ।
७] मम चाप्ययशो मूर्ध्नि पातितं लुब्धया त्वया ॥ ७ ॥ [६
तस्मात् पापसमुद्धारं न ते पश्यामि गर्हिते[2] ।
८] लोकानां परिवर्तेऽपि निरयं न तरिष्यसि ॥ ८ ॥ [N
मातृरूपेण मेऽमित्रे नृशंसे राज्यकामिके ।
९] न तेऽहमभिभाषतव्यो निर्घृणे भर्तृघातिनि ॥ ९ ॥ [७
कौशल्या च सुमित्रा च तथाऽन्या मम मातरः ।
१०] त्वयैकया पापशीले पीडिता निरपत्रपे ॥ १० ॥ [८
न त्वं केकयराजस्य दुहिता विदितात्मनः ।
११] राक्षसी कापि राज्ञस्त्वं दुहितृत्वमुपागता ॥ ११ ॥ [९
सर्वलोकप्रियो रामो यस्त्वया पापनिश्चये ।

---

1 कै—ऽतथा । 2 क—गर्हित ।

१२] प्रव्राजितः पापरता का त्वदन्या भविष्यति ॥१२॥ [N
पितुर्वियोगजं दुःखं महदापादितं त्वया ।
१३] भर्तृत्यागकृतं चैव सर्वलोकविगर्हितम् ॥१३॥ [११
शुद्धस्वभावां सद्वृत्तां कौशल्यां पुत्रलालसाम् ।
१४] विवत्सां वत्सलां कृत्वा कांस्त्वं लोकान् गमिष्यसि ॥१४॥ [१२
नाभिजानासि किं दुःखमिष्टपुत्रवियोगजम् ।
१५] पुत्रेणेष्टेन कौशल्या तथा ते विप्रयोजिता ॥१५॥ [१३
अङ्गप्रत्यङ्गजो मातुः पुत्रो हृदयसंभवः ।
१६] तस्मादृते प्रियतरः पुत्रान्मातुर्न विद्यते ॥ १६ ॥ [१४
पुरा किल गवां माता सुरभिः सुरसंमता ।
१७] कृशौ प्रतोदनुन्नाङ्गौ वहमानौ महीतले ॥१७॥ [१५
दृष्ट्वा पुत्रौ रुरोदार्ता[3] सीदन्ती च मुहुर्मुहुः ।
१८] तामिन्द्रो रुदतीं दृष्ट्वा धर्मात्मा वै[4]कृपां[4]गतः ॥१८॥ [१६
आकाशे गच्छतस्तस्याः[5] सुरभ्या अश्रुबिन्दवः । [१८उ
१९] शोकोष्णाः पतिता गात्रे भृशं सुरभिगन्धयः ॥ १९ ॥ [१७उ
तैरश्रुबिन्दुभिः स्पृष्टः समुद्वीक्ष्याथ वासवः ।
२०] सुरभिं प्राञ्जलिर्वाक्यमभिगम्येदमब्रवीत् ॥२०॥ [१९
कच्चिन्न भयमस्माकं कुतश्चिदनुपश्यसि ।
२१] यन्निमित्तं सुदुःखार्ता रोदिषि ब्रूहि तन्मम ॥२१॥ [२०
इत्युक्ता सुरभिस्तेन शक्रेणामिततेजसा ।
२२] प्रत्युवाच सुदुःखार्ता पुरन्दरमिदं वचः ॥२२॥ [२१
नाहं भयं वः पश्यामि कुतश्चिदमराधिप ।
२३] अहं हि स्वौ[6]कृशौ[6] पुत्रौ शक्र शोचामि दुःखितौ ॥२३॥ [२२

3 ल—रुदती च । 4 के—को कृपा० । 5 य—गच्छतास्तस्या ।
6 य—स्वौरसौ ।

प्रतोदप्रविभिन्नाङ्गौ सीदन्तौ क्षुत्क्षुधितौ ।
२४] पीड्यमानौ लाङ्गलेन कार्षिकेन दुरात्मना ॥२४॥ [२३
अङ्गप्रत्यङ्गसंभूतौ तावेतौ हृदयोद्भवौ ।
२५] दृष्ट्वा विवर्धते दुःखं नास्ति पुत्रात्परः प्रियः ॥ २५ ॥ [२४
तामब्रवीत्ततः शक्रो देवानामीश्वरः प्रभुः ।
N] शृणु तेऽहं प्रवक्ष्यामि सुरभे लोकपूजिते ॥ २६ ॥ [N
पुरा कृतयुगे देवि गोभिर्ब्रह्माभियाचितः ।
] इच्छाम[8] लोकान् परमान् प्राप्तुं स्वैः कर्मभिर्जितान् ॥२७॥ [N
अब्रवीच्च ततो ब्रह्मा गाः प्रह्वावनताः स्थिताः ।
N] कुरुध्वं मानुषे लोके तपः पापभयापहम् ॥ २८ ॥ [N
यो वः क्लेशो बुभुक्षा च वधो बन्धश्च मानुषे ।
N] लोके भविष्यति तपःशुद्धं[10] पापभयापहम् ॥ २९ ॥O [N
यो दुर्बलं परिश्रान्तं व्याधितं चापि निर्दयः[11] ।
N] वाहयिष्यत्यनड्वाहं गोघ्नः पापमवाप्स्यति ॥ ३० ॥ [N
शक्तं समर्थं बलिनं पुष्टं यो वाहयिष्यति ।
N ग्रासोपदानसंयुक्तं न स पापमवाप्स्यति ॥ ३१ ॥O [N
न क्रोद्धव्यं तु युष्माभिः क्लिश्यमानैः कथञ्चन ।[12]
N] तेनाक्षयान् नरांल्लोकांस्तपसाऽऽप्स्यथ[13] दुर्लभान् ॥३२॥ [N
तस्मादेतत् पुरावृत्तं[14] धात्रा कर्म गवां भुवि ।
N] तस्मान्मन्युर्न कार्यस्ते श्रुत्वैतद्धातृशासनम्[15] ॥ ३३ ॥ [N

---

7 ल—०पूजित. । 8 घ, म—इच्छेम । 10 घ—तप शुद्धौ । कै—तप युद्ध । O ल । 11 म, ल—निंद्य । कै—निर्द्दय. । O म । 12 ल—एतत् श्लोकार्द्धानन्तर ३१ श्लोको विद्यते । 13 घ, ल—वरा० । 14 ल—परादत्तं । घ—पुगदत्त । म—परांदत्तं । 15 ल—०तद्ब्रह्मशा० । म—मातृशा० ।

इत्येवं शोचितवती गवां माता सुतप्रिया । [N
२६] यस्याः पुनसहस्राणि बहून्यासन्महौजसः ॥ ३४ ॥ [२८पू
एक एव मृतो यस्यास्त्वया रामो विवासितः । [२९पू
२७] प्राणेभ्योऽपि प्रियः साऽद्य कथं जीवेत् सदुःखिता ॥३५॥ [२८उ
यस्मादेवं तु कैकेयि कौशल्यायास्त्वया कृतम् । [N
२८] ह्यच्छरीरमनःशोपि[16] दुःख पुत्रवियोगजम् ॥ ३६ ॥ [N
तस्मात्वमपि कैकेयि दुःख मेत्येह चाव्ययम् । [२९उ
२९] महत प्राप्स्यासि दुर्मेधे निरयं पापमास्थिता ॥ ३७ ॥ [N
अह त्वपचितिं मातुः[17] करिष्ये पितुरेव च ।
३०] अस्य चायशसो लोके करिष्याम्यपमार्जनम् ॥ ३८ ॥ [३०
इति नाग इवारण्ये सहसा बन्धन गतः ।
३१] नि श्वस्योष्ण सुदुःखार्तो रुरोद भरतस्तदा ॥३९॥ [३५
सरुधनेत्रः शिथिलः क्रियासु
सन्त्यक्तशुभ्राभरणाम्बरस्रक् ।
बभूव भूमौ पतितो नृपात्मजः
३२] शचीपतेः केतुरिवोत्सवक्षये ॥ ४० ॥ [३६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतविलापो नाम
[अशीतितमः] सर्गः ॥ ८० ॥



---

16 ह—शोपि । के—शोपि । 17 (मातु)।

[वं–७७]=[एकाशीतितमः सर्गः]=[दा–७८]

अथ तत्र यथावार्त्तां तच्छ्रुत्वा लक्ष्मणानुजः[1] । [१पू

१] स तमुत्थापयामास शत्रुघ्नो भरतं तदा ॥ १ ॥ [N

श्रुत्वा प्रव्राजितं रामं कुब्जाभेदितया ततः । [N

२ कैकेय्या दुःखशोकार्त्तः शत्रुघ्नोऽथाब्रवीदिदम् ॥ २ ॥ [१उ

विद्वानार्योऽनृशसश्च सर्वभूतहिते रतः । [N

३] स्त्रिया नाम कथं रामो वनं प्रव्राजितोऽग्रजः ॥ ३ ॥ [२उ

बलवानस्त्रसपन्नो लक्ष्मणो लक्ष्मिवर्द्धनः ।

४] किं नाभिषिक्तवान् रामं कृत्वाऽपि पितृनिग्रहम् ॥ ४ ॥ [३

पूर्वमेव स निग्राह्यो राजा धर्मार्थदर्शिना ।

५] लक्ष्मणेन पिता मूढः कामरागवशं गतः ॥ ५ ॥ [४

इत्येवं भाषमाणे तु शत्रुघ्ने लक्ष्मणानुजे ।

६] प्राग्द्वारेऽभूत्तदा[2]कुब्जा सर्वाभरणभूषिता ॥ ६ ॥ [५

चन्दनागुरुदिग्धाङ्गी महार्हाम्बरभूषिता ।O

७ मेखलादामभिश्चित्रैः पिनद्धा कुररी[3] यथा ॥ ७ ॥ [६,७

समीक्ष्य तां ततो द्वाःस्थां भरतः पापकारिणीम् ।

८] अन्तःपुरचरीं कुब्जा शत्रुघ्नाय न्यवेदयत् ॥ ८ ॥ [८

यस्याः कृते गतो रामो न्यस्तदेहश्च मे गुरुः ।

९] सेयं पापा नृशसा च कुरु चास्या यथोचितम् ॥ ९ ॥ [९

तामभ्यागतां दृष्ट्वा शत्रुघ्नो मन्थरां तदा ।

१०] चकर्ष विनिगृह्यार्त्ता स हि रोषसमन्वितः ॥ १० ॥ [N

कौशल्यस्य कटक व्यस्य पूरयामास पांसुना । [N

११] अन्तःपुरचरीं तां च प्रत्युवाच रुषान्वितः ॥ ११ ॥ [१०उ

---

1 च, म, ल—ऽग्रज । 2 च—ऽभूनत । Oच, म, ल । 3 च, म ल—कुनरी ।

यया कृतं महद्दुःखं भ्रातॄणां मे पितुस्तथा । [११पू

११] तामिमां मन्थरामद्य नयामि यमसादनम् ॥ १२ ॥ [N

शत्रुघ्नेन तथा कुब्जां कृष्यमाणां महीतले । [१२उ

१३] सहसा विननादार्त्तो दृष्ट्वा कुब्जासुहृज्जनः ॥ १३ ॥ [१३पू

क्रुद्धमाज्ञाय शत्रुघ्नं भयसंविग्नमानसः । [१३उ

१४] अमन्त्रयत चैवार्त्तः कुब्जापरिजनस्तदा ॥ १४ ॥ [१४पू

पू१८] यथाऽयमभिसंक्रुद्धो निःशेषं नः करिष्यति । [१४उ

N] सानुक्रोशां शरण्यां च दीनानाथार्यबान्धवाम् ॥ १५॥ [१५पू

उ१५] कौशल्यां शरणं यामः सा हि नोऽद्य परायणम् । [१५उ

पू१६] स चापि रोषताम्राक्षः शत्रुघ्नः शत्रुतापनः ॥ १६॥ [१३पू

उ१६] निचकर्ष भृशं कुब्जां[4] क्रोशन्तीं पृथिवीतले । [१६उ

पू१७] तस्या विकृष्यमाणाया मन्थराया इतस्ततः ॥१७॥ [१७पू

उ१७] भूषणान्यवशीर्णानि चित्राणि रुचिराणि च । [N

पू१८] तस्यास्तै भूषणैश्चित्रै र्विनिकीर्णं महीतलम् ॥ १८ ॥ [१७उ

उ१८] रराजामलताराढ्यं शारदं गगनं यथा । [१८उ

तामाकृष्य च शत्रुघ्नः कैकेयीसन्निधौ तदा ।

१९] क्रोधसंरक्तनयनः प्रोवाच परुषं वचः ॥ १९ ॥ [१९

ययेदमशुभं कर्म कुलक्षयकरं कृतम् ।

२०] असत्स्त्री साऽद्य कैकेयी कथं त्वां मोचयिष्यति[5] ॥२०॥ [N

यथा[6] नाभिक्षितः पुत्रो न राजा नात्मनो यशः ।

२१] सा[7] प्राप्स्यत्यशुभस्यास्य प्रेत्य पापफलोदयम् ॥ २१ ॥ [N

मूलं नस्त्वमनर्थस्य कुलक्षयकरस्य हि ।

२२] तस्माद्कुब्जेऽद्य हत्वा त्वां नयामि यमसादनम् ॥२२॥ [N

---

4 ब, म, ञ—मूर्च्छां । 5 ब, म, ञ—मोहयिष्यति । 6 दे.—यथा । धारा या इति "वा" स्थाने उपरि लिखितम् । 7 म, ञ—स— ।

हृच्छोपणं महद्दुःखमद्य रामवियोगजम् ।
२३] अहं हत्वा विमोक्ष्यामि पापां पापानुसारिणीम् ॥२३॥ [N
इत्युक्त्वा भृशसंक्रुद्धः शत्रुघ्नो लक्ष्मणानुजः ।
२४] विचकर्ष बलात् कुब्जां निःश्वसन्तीं महीतले ॥ २४ ॥ [१९
तैर्वाक्यैः परुषैस्तेन कैकयी भृशमर्दिता ।
२५] शत्रुघ्नभयसंवीता पुत्रं शरणमभ्यगात् ॥ २५ ॥ [२०
तं प्रेक्ष्य भरतः क्रुद्धं शत्रुघ्नं वाक्यमब्रवीत् ।
२६] अवध्याः सर्वभूतानां प्रमदाः क्षम्यतां त्वया ॥ २६ ॥ [२१
हन्यामहमिमां पापां कैकेयीं स्वयमेव हि ।
२९] यदि रामो न धर्मात्मा त्यजेन्मां मातृघातिनम् ॥ २७ ॥ [२३
इत्येतद्वचनं श्रुत्वा शत्रुघ्नो भरतेरितम् ।
३०] व्यायच्छदात्मनो [8] रोषं परिचिक्षेप मन्थराम् ॥ २८ ॥ [२४
सा क्षिप्ता सहसोत्थाय मन्थरा भयविह्वला ।
३१] कैकेयीमभिगम्यार्त्ता ययाचे शरणं तदा ॥२९ ॥ [२५
शत्रुघ्नविक्षेपविमूढसंज्ञां
समीक्ष्य कुब्जां भरतस्य माता ।
शनैस्तदाऽऽश्वासयदार्त्तरूपां
३२] क्रौञ्ची यथाऽऽर्त्तामिव सारसस्त्री ॥ ३० ॥ [२६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कुब्जाकर्षणं नाम [एकाशीतितमः] सर्गः [॥ ८१ ॥]

---

8 ख—व्यव० । 9 ख—शत्रुघ्नसंमर्द० । म—शत्रुघ्नविमूढसंज्ञं ।

[वं—७८]=[द्व्यशीतितमः सर्गः]=[दा—७५].

गर्हयन्नेव जननीं दुःखशोकाकुलेन्द्रियः ।
१] भरतो वीक्ष्य शत्रुघ्नमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ [७४ । १

अनीश्वरोऽयं पुरुषः सुखदुःखाप्तये मतः ।
२] कर्षयत्यवशं ह्येनं कृतान्तः सुखदुःखयोः ॥ २ ॥ [N

अहो कृतान्तो बलवान् येन सर्वगुणान्वितः ।
३] सुखार्हस्त्ववशो रामो बलाद्दुःखेन योजितः ॥ ३ ॥ [N

पुत्रशोकपरिघ्नां[1] भर्तृव्यसनकर्षिताम् ।
४] कौसल्यामेहि सहितो मया पश्याद्य दुःखिताम् ॥ ४ ॥ [N

गर्हितं चायशस्यं च कष्टं मात्रा कृतं मम ।
५] यदिदं तद्विपश्यामि कृतान्तकृतमेव हि ॥ ५ ॥ [N

शत्रुघ्न स्त्री पुमान् वापि कृतान्तबलमोहितः ।
६] सुविपश्चिदपि प्राप्तं न वेत्त्यात्महिताहितम् ॥ ६ ॥ [N

कृतान्तमोहिता माता मम शत्रुघ्न कैकयी ।
७] इदं कृतवती पापं सर्वलोकविगर्हितम् ॥ ७ ॥ [N

इदं तु मे महद्दुःखं शत्रुघ्न हृदि वर्तते ।
८] किं नु वक्ष्यामि कौसल्यां पुत्रशोकेन दुःखिताम् ॥८॥ [N

इत्युक्त्वा भरतो वाक्यं शत्रुघ्नसहितस्तदा ।
९] रुरोदार्त्तस्वरेणोच्चैः पूरयन्निव तद् गृहम् ॥ ९ ॥ [N

तत्र श्रुत्वा तदा नादं भरतस्य महात्मनः ।
१०] रुदतस्तस्य कौसल्या सुमित्रामिदमब्रवीत् ॥ १० ॥ [५

आगतः क्रूरधर्मिण्याः कैकेय्या भरतः सुतः ।
[११ तमहं द्रष्टुमिच्छामि भरतं दीर्घदर्शिनम् ॥ ११ ॥ [६

इत्युक्त्वा दुःखसन्तप्ता कौसल्या करुणं वचः ।

---

1 घे, ख—०घ्नां ।

१२] भ्रतस्थे भरत दृष्ट्वा सुमित्रासहिता०तदा० ॥ १२ ॥ [७
स चापि भरतः श्रीमान् शत्रुघ्नसहितस्तदा ।०
१३] भ्रतस्थे०दुःखितां[2]० दृष्ट्वा० कौसल्यां स्वनिवेशने ॥१३॥ [८
ततो भरतशत्रुघ्नौ कौसल्यां प्रेक्ष्य दुःखिताम्[3] ।
१४] दूरादपि प्रणम्योभौ दुःखार्त्तावभिपेततुः ॥ १४ ॥ [९
तौ परिष्वज्य कौसल्या शत्रुघ्नभरतावुभौ ।
१५] परितापेन दुःखेन रुरोद भृशदुःखिता ॥ १५ ॥ [१०
उवाच चैनं प्रणतमुत्थाप्य भयविह्वलम् ।
१६] रुदती वाक्यमेतत् सा कौसल्या परुषाक्षरम् ॥ १६ ॥ [१०
दिष्ट्या ते राज्यकामेन प्राप्तं राज्यमकण्टकम् ।
१७] कैकेय्या ते स्वयं दत्तं भर्तारमवहन्य[4] हि ॥१७॥ [११
प्रव्राज्य चीरवसनं पुत्रं मेऽनपकारिणम् ।
१८] केन युक्तार्थयोगेन कैकेयी जननी तव ॥ १८ ॥ [१२
क्षिप्रं मामपि कैकेयी प्रव्राजयितुमर्हति ।
१९] यत्र मे दयितः पुत्रो गतो रामः सलक्ष्मणः ॥ १९ [१३
अथवा स्वयमेवाहं सुमित्राऽनुचरा वने ।
२०] यास्यामि यत्र रामोऽसौ गतः सीतासहायवान् ॥ २० ॥ [१४
कामं वा स्वयमेव त्वं तत्र मां नय पुत्रक ।
२१] तपस्तप्यति यत्रासौ पुत्रो मे पितुराज्ञया ॥२१॥ [१५
इदं त्वं धनरत्नाढ्यं चतुरङ्गबलान्वितम् ।
२२] पित्रा निसृष्टं कल्याणं राज्यं प्राप्नुहि वाञ्छितम् ॥ २२ ॥ [१६
इति लालप्यमाना तां कौसल्या भरतस्तदा ।
२३] प्राञ्जलिः प्रयतो वाक्यमिदं प्रश्रितमब्रवीत् ॥ २३ ॥ [१९

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतोपालम्भो
नाम [द्व्यशीतितमः] सर्गः [॥ ८२ ॥]

0म । 2 ल—मातर । 3 घ म, ल—दुःखितौ । 4 घ म—भर्तारं त्वयहन्य । 5 लि—पि ।

[वं-७९]=[त्र्यशीतितमः सर्गः]=[दा-७५]

तामेव[1] ब्रुवतीं दीनां कौसल्यां राममातरम् ।
१] कृताञ्जलिरुवाचेद भरतो बाष्पगद्गदम् ॥ १ ॥ [१९
आर्ये कस्मादजानन्ती गर्हसे मामकल्मषम् ।
२] विपुलां हि मम प्रीतिं स्थिरां जानासि राघवे ॥ २ ॥ [२०
वेदान् निन्दति साङ्गान् स ब्राह्मणांश्च विशेषतः ।
३] सत्यसन्धः सतां श्रेष्ठो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ३ ॥ [२१
*प्रेष्यां पापीयसीं यातु सूर्यं च प्रतिमेहतु ।
४] *पदेन[2] हन्याद् गां सुप्तां यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ४ ॥ [२२
उच्छिष्टः स स्पृशतु गामग्निं ब्राह्मणमेव च । [३१
५] स निन्दतु गुरुं चैव यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ५ ॥ [N
सखिभार्यां गुरोर्भार्यां मनसा सोऽभिपद्यताम्[3] ।
६] जन्तुस्त्वपमतिः पापो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ६ ॥ [N
बलिषड्भागमादाय राज्ञश्चारक्षतः प्रजाः ।
N] किल्बिषं समवाप्नोतु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ ७ ॥ [२५
परिपाल्यमानाय राज्ञे भूतानि पुत्रवत् ।
N] तस्मै स द्रुह्यतां पापो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ८ ॥ [२८
कारयित्वा महत् कर्म भर्ता भृत्यान् निरर्थकान् ।
N] किल्बिष समवाप्नोतु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ ९ ॥ [२३
संश्रुत्य च तपस्विभ्यो यज्ञे वै यज्ञदक्षिणाम् ।
N] स निग्रहतां पापो यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १० ॥ [N
हस्त्यश्वरथसंबाधे युद्धे शस्त्रसमाकुले ।

1. कै, म—तामेव । ष—तमेव । * ष—नास्ति । 2 पं—पादेय । (पादेन ?) । 3 ल—०पश्यताम । म—०पद्यतम् ।

७] मा स्म कार्षीत् सतां कर्म यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ ११ ॥ [२७
उपदिष्टं सुसूक्ष्मार्थं शास्त्रं तत्त्वेन धीमता ।
८] स नाशयतु तद् धर्मं यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १२ ॥ [२८
कृत्ये[4] विवदमानेषु[5] पक्षमाश्रित्य जल्पतः ।
९] स पापं समवाप्नोतु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १३ ॥ [N
देवता ऽतिथिभृत्यानां मातापित्रोस्तथैव च । [४६पू
१०] स्वयमश्नात्वदत्त्वैव यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १४ ॥ [३४उ
नैव शास्त्रानुगा वाचः प्रयुंजीत कदाचन ।
११] *सत्सु च प्रतितिष्ठेत यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १५ ॥ [२९
पायसं कृसरं मांसं वृथा प्राश्नातु निर्घृणः ।
१२] गुरु चाप्यवजानातु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १६ ॥ [३०
आषाढी कार्तिकी माघी वैशाखी चैत्र[6] पूर्णिमा[6] ।
१३] अप्रदानवतो यातु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १७ ॥[7] [N
पितरं मातरं वृद्धमाचार्यं ब्राह्मणं गुरुम् ।
१४] दुष्टात्मा सो ऽवमन्येत यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १८ ॥ [N
सतां लोकात् सतां कीर्तेः सद्भिर्जुष्टाच्च कर्मणः ।
१५] स भ्रश्यतु[8] दुराचारो यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ १९ ॥ [४७
यत् पापं ब्रह्महत्यायां यत् पापं कपिलावधे ।
१६] तत् पापं समवाप्नोतु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २० ॥ [N
विश्वासघातिनां पापं यत् पापं गुरुघातिनाम् ।
१७] गुरोश्चालीकानिर्बन्धे तत् पापं प्रतिपद्यताम् ॥ २१ ॥ [N

---

4 के—कृत्ते । 5 ल—विविध० । * व—नास्ति । 6 व—च विशेषत । 7 के—अयं श्लोकः पञ्चदशमश्लोकानन्तरं पठ्यते । 8 कै—कश्यतु । म—भ्रशतु । ल—भ्राश्यत्त ।

उभे सन्ध्ये शयानस्य यत् पापं परिकल्पितम् ।
२०] तत् पापं समवाप्नोतु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २२ ॥ [४४
प्रमापिनि नरे पापं यच्चैवानृतवादिनि ।
२१] तत् प्राप्नोत्वकृतप्रज्ञो यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २३ ॥ [N
ग्रामे वसतु षण्मासान् स्वसुतांश्चोपजीवतु[9] ।
२३] एकाकी भिक्षमश्नातु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २४ ॥ [३८
एवमाश्वासयामास भरतो दुःखकर्षिताम्[10] ।
२४] कौसल्यां शोकसंतप्तां पतिपुत्रविनाकृताम् ॥ २५ ॥ [५२
एवं च शपथान् कृच्छ्रान् शपमानमकल्मषम्[11] ।
२५] भरतं दुःखसन्तप्तं कौसल्या पुनरब्रवीत् ॥ २६ ॥ [६०
शुद्धस्वभाव धर्मात्मन्नैवमि त्वामकल्मषम् ।
२६] ईदृशान् शपथान् कुर्वन् प्राणानुपरुणत्सि मे ॥ २७ ॥ [६१
दिष्ट्या ऽसि रामसहितः पुत्र धर्मान्न चालितः ।
२७] सह रामेण धर्मात्मन् दीर्घमायुरवाप्नुहि ॥ २८ ॥ [६२
अपि त्वां सह रामेण पश्येयं लक्ष्मणेन च ।
२८] तीर्णप्रतिज्ञमानृण्यं गतं पितुरकल्मषम् ॥ २९ ॥ [N
पूर्वेषां पुण्यकीर्तीनां राजर्षीणां महात्मनाम् ।
२९] प्राप्नुह्यायुश्च कीर्तिं च धर्मं चैवोचितं कुले ॥ ३० ॥ [N
चतुर्दशसु वर्षेषु गतेष्वरिनिसूदन ।
३०] रामं सीतां लक्ष्मणं च द्रक्ष्यामि[12] पुनरागतान्[13] ॥ ३१ ॥ [N
तैलद्रोण्यां शरीरं ते पितुस्तिष्ठति पुत्रक ।
३१] त्वत्प्रतीक्षं महार्हस्य तत्संस्कर्तुमिहार्हसि ॥ ३२ ॥ [N

---

9 कै—सुसुता चोपजीवतु । म—स्वसुतंश्चोप० । ल—स सुतांश्चोप० । 10 थ, म, ल,—०कल्पितां । 11 कै—शंसमा० । ल—शोचमा० । 12 कै—द्रष्टामि (मि ?) । 13 ल—०रागतम् ।

धर्मेणेमाः प्रजाः पुत्र यथा रक्षसि तत् कुरु ।
३२] स्वर्गतोऽसौ यथा राजा तुष्यत्यथ तथा कुरु ॥ ३३ ॥ [N
पितुर्वियोगजं दुःखं रामत्यागकृतं तथा ।
३३] तत् परित्यज्य हे पुत्र गुर्वीं राजधुरं वह ॥ ३४ ॥ [N
एवमाश्वास्यमानस्य भरतस्य महात्मनः ।
३४] शोकभारसमाक्रान्तं बभूवाकुलितं मनः ॥ ३५ ॥ [९४
कौसल्याया विलपितं श्रुत्वा ऽति करुणाक्षरम् ।
३५] मोहमभ्यागमद्भूयो भरतः शोकविह्वलः ॥ ३६ ॥ [N
लालप्यमानः पतितो धरण्यां शोकलालसः ।
३६] स तदाऽऽर्त्तोऽतिकरुणं विललापाकुलेन्द्रियः ॥ ३७ ॥ [N
पितरं भ्रातरं चैव स्मृत्वा तद्गतचेतसः । [N
३७] तस्य लालप्यमानस्य जगामास्तं दिवाकरः ॥ ३८ ॥ [९५पू
श्वसतो दीर्घमुष्णं च दुःखार्त्तस्य मुहुर्मुहुः ।
३८] तस्य सा वर्षशतवद्व्यपावर्त्तत शर्वरी ॥ ३९ ॥ [९५उ

रात्रिक्षयं वीक्ष्य बलप्रधाना
द्विजातयो मन्त्रिगणाश्च सर्वे ।
नृपालयं ते विविशुः समेता
३९] हीनं महेन्द्रप्रतिमेन राज्ञा ॥ ४० ॥ [N

तमार्त्तमश्रुपरिपूर्णनेत्रं
शोके निमग्नं पतितं धरण्याम् ।
उपाविशत् सा परिषत् समेता
४०] विसंज्ञकल्पं भरतं समीक्ष्य ॥ ४१ ॥ [N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतसंतापो
नाम [त्र्यशीतितमः] सर्गः ॥ ८३ ॥

[चं—८०]=[चतुरशीतितमः सर्गः]=[दा—N]

संप्राप्तो व्यसनं कृच्छ्रं हीनवर्णस्वरेन्द्रियः[1] ।
१] भरतो न रराजार्तः शशीव समभिप्लुतः ॥ १ ॥
पितुश्च मरणाद्दीनो रामप्रव्राजनेन च ।
२] कैकेय्याश्चार्यलुब्धाया धर्मत्यागेन पीडितः ॥ २ ॥
अपश्यंस्तस्य दुःखस्य सागरस्येव संक्षयम् ।
३] अक्षीणदुःखवेगश्च शर्म नैवाध्यगच्छत[2] ॥ ३ ॥
पितृपैतामहं राज्यं शाश्वतं स[3] च[3] चिन्तयन् ।
४] आसीत् परमसंमूढः प्राज्य विप्रः सुरामिव ॥ ४ ॥
५] अगाधपारे महति पतितः शोकसागरे ।
मन्निमित्तं मृतो राजा रामश्चापि विवासितः ।
६] अपापः पापतां नीतो मात्राऽहं राज्यलुब्धया ॥ ५ ॥
विहीनश्चन्द्रसूर्याभ्यां यथा मेरुर्न राजते ।
७] तथा भ्रात्रा च पित्रा च शून्यं पुरमिदं मम ॥ ६ ॥
अत्यन्तसुखसंवृद्धः पित्रा मात्रा च लालितः ।
८] कथमेवंविधं दुःखं प्राप्य जीवामि दुःसहम् ॥ ७ ॥
पित्रा[4]ऽनेन[4] सहैवाग्निं सह रामेण वा वनम् ।
९] प्रविशामि विना ताभ्यां न हि जीवितुमुत्सहे ॥ ८ ॥
श्रान्तस्य यदि रामस्य पादौ तौ शुभलक्षणौ ।
१०] संवहेय वनस्थस्य तन्मे राज्यं महत्तरम् ॥ ९ ॥
शुश्रूषमाणश्चरणौ वने वन्येन जीवतः[5] ।
११] अहमार्यस्य वत्स्यामि तस्यार्थे मम जीवितम् ॥ १० ॥

---

1 फै, घ—०स्वरेंद्रिय । 2 घ—०ध्यगच्छत । ल—नैवाध्यगच्छत । म—नैव शमगच्छत । 3 म, ल—च स । 4 म, ल—पित्रा तेन । 5 फै, म—जीवित ।

रामेण हि विना नाऽहमिच्छाम्येव त्रिविष्टपे ।
१२] राज्यं किमु मनुष्येषु मातृदूषितमध्रुवम् ॥ ११ ॥
आर्ये रामस्य पूर्णेन्दुसदृशं चारुलोचनम् ।
१३] मम शोको मुखं वीक्ष्य न स्यात् पितृवियोगजः ॥ १२ ॥
इति श्रुत्वा वचो धर्म्यं[7] भरतस्य महात्मनः ।
१४] अमात्या बन्धुवर्गाश्च दुःखादश्रूण्यवर्षयन् ॥ १३ ॥
तमवाक्शिरसं दीनं धरण्यां प्रेक्ष्य राघवम् ।
१५] विलपन्तमुवाचार्त्तं वसिष्ठो भगवानृषिः[8] ॥ १४ ॥
आपत्स्वमूढो धृतिमान् यः सम्यक् प्रतिपद्यते ।
१६] कर्माण्यवश्यकार्याणि तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥ १५ ॥
स त्वं धैर्यं समाश्रित्य विहाय हृदयज्वरम् ।
१७] कर्त्तुमर्हस्यसंमूढः क्रियाः पितुरनन्तराः ॥ १६ ॥
पिता ते पुत्रशोकार्त्तो रामे प्रव्राजिते[9] वनम् ।
१८] त्वय्यनागच्छति प्राणानिष्टांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ १७ ॥
अनाथ इव धर्मात्मा लोकनाथः पिता तव ।
१९] निर्हार्यः स कथं नाम[10] मृतस्तात त्वया विना ॥ १८ ॥
इत्यस्माभिर्विचार्यैतत्तैलद्रोण्यां प्र शायितः ।
२०] तस्य निर्हरणं तात पितुस्त्वं कर्त्तुमर्हसि ॥ १९ ॥
परिसान्त्वय मातृस्त्वं मा च शोके मनः कृथाः ।
२१] अवश्यभाविनो भावा नैव शोच्या भवद्विधैः ॥ २० ॥
त्वं बुधैरागतज्ञानः सत्त्ववद्भिर्महात्मभिः ।
२२] तस्मात् संस्तभयात्मानं मा भूर्भरत बालिशः ॥ २१ ॥

---

6 ल—च । 7 कै—धर्मं । 8 कै—भगवान् ऋषि. । 9 कै—प्रव्राजिते । 10 ल—चान्यैर् ।

काकुत्स्थ बलवान् कालः शक्यते नातिवर्त्तितुम् ।
२३] सर्वैर्न भाव्यमस्माभिस्तन्न शोचितुमर्हसि ॥ २२ ॥
भृशं हि दुःखाभिहतां विचेतनां
भर्त्तुर्वियोगेण विवर्णतां गताम् ।
इमां पितुस्त्वं महिषीमुपेक्षितुं
२४] न राजपुत्रार्हसि नाथतां गतः ॥ २३ ॥
अपश्चिमस्ते पितुरन्वयो[11] विधिः
प्रदर्शितस्तत्र हि ते द्विजोत्तमैः ।
तमाशु संपादय धैर्यमास्थितो
२५] विषादमस्मिन्न नृपात्मजार्हसि ॥ २४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वसिष्ठवाक्यं नाम सर्गः ॥ [८४] ॥

---

11 ब—पितुरप्ययो ।

[वं—८१]=[पञ्चाशीतितमः सर्गः]=[दा—N]

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतो धीमतां वरः ।
१] वसिष्ठमभिवाद्येदमुवाचार्त्ततरो वचः ॥ १ ॥
त्वय्यप्येवं ब्रुवति मे दीर्यतीव मनो[1] मुने[1] ।
२] लोकनाथे स्थिते रामे नाथत्वं मयि कीदृशम् ॥ २ ॥
किं तु तत्र नयध्वं मां यत्र राजा पिता मम ।
३] करिष्ये तत्र सत्कारं भवद्भिः सहितो वशः ॥ ३ ॥
नेदानीं हृदयं चेन्मे स्फुटिष्यति सहस्रधा[2] ।
४] दर्शयन्तु भवन्तस्त पितरं क्षीणजीवितम् ॥ ४ ॥
ततो वसिष्ठप्रमुखाः सर्वे ते नृपमन्त्रिणः ।
५] आनयन् भरतं तत्र यत्र राज्ञः कलेवरम् ॥ ५ ॥
अर्द्धसप्तशतास्ताश्च स्त्रियो राजपरिग्रहः[3] ।
६] भरत पुरतः कृत्वा ययुर्द्रष्टुं मृतं नृपम् ॥ ६ ॥
तत प्रविश्य भरतः सह राजपरिग्रहैः ।
७] ददर्श पितरं प्रेतं राममातुर्निवेशने ॥ ७ ॥
स तं गतासुं पितर दृष्ट्वा[4] चोपहतत्विषम्[4] ।
८] हा राजन्निति सक्रुश्य पपात धरणीतले[5] ॥ ८ ॥
विसंज्ञकल्पः संज्ञां तु पुनर्लब्ध्वा सुदुर्मनाः ।
९] जीवन्तमिव सम्प्रेक्ष्य पितरं सोऽभ्यभाषत ॥ ९ ॥
राजन्नुत्तिष्ठ किं शेषे[6] भरतोऽहमुपागतः ।
१०] त्वदाज्ञया महासत्त्व शत्रुघ्नसहितस्त्वरन् ॥ १० ॥
मम मातामहस्तात कुशल त्वाऽनुपृच्छति ।

---

1 व—मनोरमे । 2 म—सहस्रश । 3 व—०ग्रहा. । म—०ग्रहैः । 4 कै—दृष्ट्वेवपहेताद्विषम । म—दृष्ट्वैवपहतोत्विषम । ल—दृष्ट्वैवपहतत्विषम् । 5 कै—पृथिवी० । 6 ल—शेष्ये ।

११] प्रणम्य शिरसा तद्वद् युधाजिन्मातुलो मम ॥ ११ ॥
यतः कुतश्चित् सम्प्राप्तं मङ्कमारोप्य मां नृप ।
१२] आनत[7] मूर्ध्न्युपाघ्राय प्रत्यानन्दसि[8] भूमिप ॥ १२ ॥
स इदानीमनुप्राप्त[9] किमर्थं नाभिभाषसे ।
१३] न ते ऽपकृतवान् किञ्चिदिह तात प्रसीद मे ॥ १३ ॥
धन्यः स रामो येनाज्ञा कृता ते वसुधाऽधिप ।
१४] लक्ष्मणश्चापि धन्योऽसौ यो राममनुनिर्गतः ॥ १४ ॥
अधन्योऽहमपुण्यश्च यन्मां प्रति स[10] पुण्यवान्[10] ।
१५] दुःखेन महताऽऽविष्टः प्राणान् सन्त्यक्तवानसि ॥ १५ ॥
नूनं तौ न विजानीतो मृत्यु[11] ते रामलक्ष्मणौ ।
१६] यथा हि वनमुत्सृज्य नागतानिह दुःखितौ ॥ १६ ॥
मातृदोषाद्दयितो यदि तावदहं नृप ।
१७] शत्रुघ्नमपि तावत्त्वमभिभाषितुमर्हसि ॥ १७ ॥
निर्वास्य चीरवसनं रामं लक्ष्मणमेव च ।
१८] स्त्रीहेतोः किमसि[12] प्राणांस्त्यक्त्वा राजन् दिवं गतः ॥ १८ ॥
एवं विलपतस्तस्य भरतस्य महात्मनः ।
१९] श्रुत्वा नृपतिपत्न्यस्ता रुरुदुः भृशदुःखिताः ॥ १९ ॥
विलपन्तं तथा तं तु भरतं शोककर्षितम् ।
२०] वसिष्ठो जपतां श्रेष्ठो जाबालिश्चेदमूचतुः ॥ २० ॥
मा शुचो भरत प्राज्ञ नैव शोच्यो महीपतिः ।
२१] आनन्तर्यमसमूढ[13] कर्तुमस्य त्वमर्हसि ॥ २१ ॥

---

7 पै—आनतौ । 8 ल—प्रत्यानन्दस्व । 9 व, म—तदानीम० ।
10 य, ल—सु० । 11 के—०तौ । 12 व, ल—०मपि । 13 प, ल—
ऽनत० ।

शोचन्तो ननु सस्नेहा बान्धवाः सुहृदस्तथा ।
२२] पातयन्ति गतं स्वर्गमश्रुपातेन[14]O राघव[14]O ॥ २२ ॥
श्रूयते हि नरव्याघ्र पुरा परमधार्मिकः ।O
२३] भूरिद्युम्नो गतःO स्वर्गं राजा पुण्येन कर्मणा ॥ २३ ॥
स पुनर्बन्धुवर्गस्य[15] शोकबाष्पेण राघव ।
२४] कृत्स्ने वै क्षपिते पुण्ये पुनः स्वर्गान्निपातितः ॥ २४ ॥
तस्माच्छोकरयं[16] पुत्र[16] पितृस्नेहसमुत्थितम् ।
२५] त्यज त्वं नार्हसि स्वर्गात् पुनश्च्यावयितुं नृपम् ॥ २५ ॥
अतिशोकाग्निना दग्धः पिता ते स्वर्गतश्च्युतः ।
२६] शेषेत्त्वां मन्युना ऽऽविष्टस्तस्मादुत्तिष्ठ मा शुचः ॥ २६ ॥*
नायं शोच्यस्तव पिता सत्कर्मार्जितलोकभाक् ।
२७] मृतो नायं सुता यस्य यूयं रामपुरोगमाः ॥ २७ ॥
धर्मात्मानो महात्मानो लोके प्रथितपौरुषाः ।
२८] देवौजसः सत्त्ववन्तो महेन्द्रवरुणोपमाः ॥ २८ ॥
एवमुक्तो[17] वसिष्ठेन भरतो धर्मकोविदः ।
२९] त्यक्त्वा शोकमिदं वाक्यमुवाच वदतां वरः ॥ २९ ॥
ब्रुवन्ति यद् भवन्तो[18] मां तथा तदिति मे मतिः ।
३०] बलवांस्तु पितृस्नेहो भृशं मोहयतीव माम्[19] ॥ ३० ॥
संस्तंभितो भवद्भिस्तु गुरुभिर्हितवादिभिः ।
३१] त्यक्त्वा शोकं करिष्यामि पितुरस्यौर्ध्वदेहिकम् ॥ ३१ ॥

---

14 ल—स्वर्गं राजानं पुण्यकर्मणा । Om । 15 व–बन्धुर्बन्ध० ।
16 व, म, ल—च्छोक राज पुत्र । 17 व—एवमुक्ते । 18 व—ब्रुवतो ।
19 कै मे । * २२, २३, २४, २६, श्लोका. पारस्करगृह्यसूत्र–हरिहर भाष्ये ३ । १० ॥ किञ्चित्पाठभेदेनोद्धृता. ।

आनयन्तु यथोद्दिष्टं भवद्भिर्नृपमन्त्रिणः ।
३२] सत्काराय[20] पितुर्मेऽद्य सर्वसंभारविस्तरम् ॥ ३२ ॥

इति नृपतिसुतस्य जल्पतः
सह नृपमन्त्रिपुरोहितैश्च तैः ।
अधिकमिव विरुद्धयामिनी
३३] व्रजयामेव बभूव शर्वरी ॥ ३३ ॥

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतविलापो नाम सर्गः ॥ [८५] ॥

---

२० दे—[illegible] ।

[वं—८२]=[षडशीतितमः सर्गः]=[दा—८१]

तस्यां रात्र्यां व्यतीतायां भरत सूतमागधाः ।
१] प्रसुप्त बोधयिष्यन्तस्तुष्टुवुर्मधुरस्वनाः ॥ १ ॥ [१
सहसा चाभ्यहन्यन्त[1] तथा दुन्दुभयः पृथक् ।
२] शवाद्यन्त सुघोपाश्च शङ्खवेणुगणास्तथा ॥ २ ॥ [२
स तूर्यघोषः सुमहान् पूरयन्निव तां पुरीम् ।
३] बोधयामास भरत शोकव्याकुलचेतसम् ॥ ३ ॥ [३
प्रतिपिध्याथ[2] भरतस्त प्रबोधकनिःस्वनम्[3] ।
४] नाहं राजेति तानुक्त्वा ततः शत्रुघ्नमब्रवीत् ॥ ४ ॥ [४
पश्य शत्रुघ्न कैकेय्या कुर्वन्त्या लोकगर्हितम् ।
५] अयशः पातित मूर्ध्नि ममासह्यमनागस[4] ॥ ५ ॥ [५
कुलधर्मागता राज्ञः पितुर्मे तद्विनाकृता ।
६] परिभ्रमति राजश्रीरकर्णा नौरिवाम्भसि ॥ ६ ॥ [६
इत्येव भरत त तु विलपन्त पुन पुन ।
७] दृष्ट्वा मरुरुदुः सर्वाः दु[4]खार्ता[4] नृपयोषित[4] ॥ ७ ॥ [८
भरतेन तत सार्धं वसिष्ठो वेदवित्तमः ।
८] प्रविवेश सभां राज्ञस्तदा मन्त्रयितु नृपम् ॥ ८ ॥ [९
शातकौम्भै स्तम्भशतै र्मणिचित्रैर्विभूषिताम् ।
९] बृहस्पतिरिवेन्द्रेण सुधर्मां सहित सभाम् ॥ ९ ॥ [१०
तत्रासने[5] स्वचित्ते स्प र्यास्तरणसस्तृते[6]।

---

1 कै—चाभिहन्यत । 2 कै—प्रतिपिध्या च । 3 म— ०निस्व यम् । 4 कै—दु खेन । ' खेन " इति पश्चात् पूरितम् । 5 कै— तत्रा-सर्चे । 6 ल—स्पर्ध्यास्तरणसभृते ।
म— " व्य " " ।
कै—स्पर्ध्यास्तरसस्तृते ।

१०] उपविश्य ततः सर्वानानयामास मन्त्रिणः ॥ १० ॥ [N
सुमन्त्रं जैमिनिं[7] चैव वामदेवं जयं तथा ।
११] मन्त्रिणो नैगमांश्चान्यान् प्रधानांश्च तथा जनान् ॥ ११. [N
जनौघः सुमहांस्तत्र समुपायात् समन्ततः ।
१२] सभायां भरतं द्रष्टुं शत्रुघ्नसहितं तदा ॥ १२ ॥ [N
ततो हलहलाशब्दः सुमहान् समजायत ।
१३] कौतूहलाज्जनौघस्य सभां प्रत्यभिधावतः ॥ १३ ॥ [१४
तत्राथ भरतं दृष्ट्वा सभायां सपुरोहितम् ।
१४] प्रत्यनन्दन्[8] प्रकृतयो यथा दशरथं तथा ॥ १४ ॥ [१५
नृपजनगुरुमन्त्रिभिस्तथा
मणिरुचिरासनरत्नभूषिता ।
दशरथसुतशोभिता सभा
१५] सदशरथेव रराज सा तदा ॥ १५ ॥ [१६

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतसभाप्रवेशो
नाम सर्गः ॥ [८६] ॥

---

7 कै, ल— जैमिनं । 8 ध—प्रत्यानंदन् ।

[वं—८३]=[सप्ताशीतितमः सर्गः]=[दा—N]

समाहृत्ते जने तस्मिन्नुदिते च[1] दिवाकरे ।
१] वसिष्ठस्तमुवाचेदं भरत तांश्च मन्त्रिणः ॥ १ ॥
एताः प्रकृतयः सर्वा नागराश्च प्रधानतः ।
२] राजसंस्कारिकं द्रव्यमादाय समुपस्थिताः ॥ २ ॥
उत्तिष्ठ भरत क्षिप्रं मा भूत् कालात्ययः प्रभो ।
३] पितुः कुरु यथान्यायं संस्कारं भूरिदक्षिणम् ॥ ३ ॥
होतारस्ते पितुरिमे वेदवेदाङ्गपारगाः ।
४] अग्निहोत्रमुपादाय[2] जाबालिप्रमुखाः स्थिताः ॥ ४ ॥
गन्धकाष्ठानि[3] चेमानि संस्कारार्थं पितुस्तव ।
५] उपादायागताः प्रेष्याः प्रतीक्षन्त[4] उपासते ॥ ५ ॥
सर्पिस्तैलं च गन्धाश्च सज्जिताश्चापि ते पितुः ।
६] अग्नेः समिन्धनार्थाय गन्धमाल्यं च पुष्कलम् ॥ ६ ॥
गन्धतैलानि गन्धाश्च धूपाश्चागुरुसम्भवाः ।
७] सज्जिता शिबिका चेयं पितुस्ते रत्नभूषिता ॥ ७ ॥
अद्यैव शिबिकायां त्वं सन्नेशय नराधिपम् ।
८] शिबिकागतमुत्क्षिप्य[5] नयैनं बहिराशु वै ॥ ८ ॥
एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतः प्रत्युवाच तम् ।
९] वसिष्ठं वदतां श्रेष्ठं पितुर्बहुमतं गुरुम् ॥ ९ ॥
यथाऽऽज्ञापयसि मां त्वं करवाणि तथाऽऽदृतः[6] ।
१०] दैवतं ह्यसि मान्यश्च गुरोश्चापि गुरुर्मम ॥ १० ॥ O

---

1 पै—य । 2 पै—०होत्रं समादाय । 3 पै, द, म—काष्ठानि । ल—काष्ठाणि । 4 पै—प्रतीक्षन्तु । 5 पै—०मुत्क्षिप्य । 6 ष—तथादृत । Oल ।

वाक्येनानेन तस्याथ भरतस्य महात्मनः ।
११] आजगाम परं हर्षं वसिष्ठो द्विजसत्तमः ॥ ११ ॥
शोकवेगमसह्यं तं धारयन् भरतस्ततः ।
१२] कलेवरं भूमिपतेः समस्तं तदुदैक्षत ॥ १२ ॥
नाशक्नोच्चैव शोकस्य वेगं धारयितुं तदा ।
१३] महार्णवस्यापततस्तोयवेगमिवोद्धतम् ॥ १३ ॥
तमार्तिमान् नीयमानं ततः स विलपन् बहु ।
१४] शत्रुघ्नसहितः श्रीमान्[8] शिबिकामानयन्नृपम्[9] ॥ १४ ॥
शिबिकास्थं महाराजमलङ्कृत्य विधानतः ।
१५] वाससा तु महार्हेण समाच्छाद्य[10] सुसंवृतम् ॥ १५ ॥
अवकीर्य च माल्येन दिव्यधूपेन धूपितम् ।
१६] मधुपुष्पैः सुरभिभिः परिकीर्य च सर्वशः ॥ १६ ॥
उवाहोत्क्षिप्य शिबिकां शत्रुघ्नसहितस्तदा ।
१७] हा राजन् क्वासि गन्तेति रुदन्नार्त्तः पुनः पुनः ॥ १७ ॥
तस्मिंस्तदा मरुद्दिते वसिष्ठकरदेशिताः ।
१८] ययुः शीघ्रतरं प्रेष्याः शिबिकां परिगृह्य ताम् ॥ १८ ॥
पुरतः पाण्डुरं[11] छत्र वालव्यजनमेव[12] च ।
१९] आनाय्य नृपतेः प्रेष्या रुरुदुः शोकविक्लवाः ॥ १९ ॥
दीप्यमानं हुतं पूर्वं जाबालिप्रमुखैर्द्विजैः ।
२०] अग्निहोत्रं नरपतेः प्रतस्थे तस्य चाग्रतः ॥ २० ॥
शकटानि च पूर्णानि रत्नानां कनकस्य च ।
२१] दधुर्धनं विसर्गार्थं दीनानाथातुरेषु च० ॥ २१ ॥
सद्यः प्रेष्यजनस्तत्र रत्नानि विविधानि च ।O

---

7 कै—तु । 8 कै, ब, म, ल—श्रीमां । 9 ब, म, ल—०का यां नय० । 10 कै—समासाद्य । 11 ल—पांडरं । 12 ल—वाल० । Oम ।

२२] और्ध्वदैहिकदानार्थ० नृपतेर्विसृजन्ति वै ॥ २२ ॥
अग्रतः प्रययुश्चैव सत्कर्मस्तुतिभिर्नृपम् ।
२३] अभिष्टुवन्तो मधुरं सूतमागधवन्दिनः ॥ २३ ॥
तस्मिन्निर्हरणे[13] राज्ञः प्रवृत्ते सुमहांस्तदा ।
२४] आर्तनादोऽभवत् स्त्रीणां यथाऽस्य मरणे तथा ॥ २४ ॥
ततः पौरजनः सर्वः सस्त्रीवृद्धकुमारकः ।
२५] अनुराजशरीरं तन्निर्ययौ नगराद्बहिः ॥ २५ ॥
तथा भरतशत्रुघ्नौ शिबिकां परिगृह्य ताम् ।
२६] दुःखशोकसमाविष्टौ रुदन्तावनुजग्मतुः ॥ २६ ॥
कौसल्या च सुमित्रा च कैकेयी च तथापराः ।
२७] अर्धसप्तशता नार्यः प्रकीर्णासितमूर्धजाः[14] ॥ २७ ॥
क्रोशन्त्यश्च रुदन्त्यश्च कुरर्य इव सर्वशः ।
२८] अनुजग्मुः शरीरं तद्राज्ञो[15] राजीवलोचनाः ॥ २८ ॥
अथास्य सरयूतीरे विविक्ते मृदुशाद्वले ।
२९] चन्दनागुरुकाष्ठैश्च मेध्याश्चकुश्चितां तदा ॥ २९ ॥
कालीयकमृणालैश्च श्वालकोशीरपद्मकैः ।
३०] तां चितां विविधाश्चक्रुर्विपुलामथ ते जनाः ॥ ३० ॥
तस्यां चितायां नृपतेः शरीरं तत्सुहृज्जनाः ।
३१] आनाययुः[16] समुत्क्षिप्य शोकव्याकुलचेतनाः ॥ ३१ ॥
तां चितां पृथिवीपालमारोप्य क्षौमवाससम् ।
३२] यज्ञपात्रचयं चक्रुस्ततस्तस्योपरि द्विजाः ॥ ३२ ॥
यथास्थानेषु विन्यस्य त्रीनग्नीन् विधिवद्धुतान्[17] ।

O म । 13 म कै—निहरणे । ल—निह्रणे । 14 य—कीर्णा-वरमूर्धजा । 15 म—ते । 16 कै—अनाययु. । म, ल—आनायवत् । य—आनायवन् । 17 म—ञ्जनाम् । कै—ञ्द्भूतान् ।

३३] मन्त्रानन्तर्मनोभिश्च[18] जपन्तो ऽभ्युदितस्रुचः ॥ ३३ ॥
होतारो यज्ञपात्राणि पवित्रैर्ममृजुस्तदा ।
३४] प्रमृज्यानन्तरं तस्यां चितायां परिचिक्षिपुः ॥ ३४ ॥
स्रुक्पात्राणि चपालानि मुसलोलूखलं तथा ।
३५] अरणीसहितं चैव पवित्राणि च सर्वशः ॥ ३५ ॥
विशस्य च पशुं मेध्यं मन्त्रसंस्कारसंस्कृतम् ।
३६] अन्यास्तारिणकं[19] राज्ञः समन्तात् परिचिक्षिपुः ॥ ३६ ॥
प्राग्लाङ्गलविकृष्टां तु चिताभूमिं समन्ततः ।
३७] कृत्वा विधानतो धेनुं सवत्सामभ्यवासृजन् ॥ ३७ ॥
सर्पिस्तैलवसाभिश्च समन्ताद् परिपिन्य ताम् ।
३८] चितां प्रज्वालयाञ्चक्रे भरतः सह बन्धुभिः ॥ ३८ ॥
प्रजज्वाल[20] ततो[21] वह्निः सहसैव समेधितः[22] ।
३९] महाऽर्चिष्मान् दहन् राज्ञश्चितारूढं कलेवरम् ॥ ३९ ॥
विधिवत् संस्कृतो राजा ब्राह्मणै र्वेदपारगैः ।
४०] जगाम परमं स्थानं यज्वनां पुण्यकर्मणाम् ॥ ४० ॥
ततः प्रजज्वाल महान् समिद्धो हिरण्यरेताः प्रदहन् सधूमः ।
४१] दृष्ट्वा च तं प्रज्वलितं चिताग्निमार्तस्वरं चक्रुरतीव नार्यः ॥४१॥
पौराश्च सर्वे सहसा विलेपुस्तथैव राज्ञः सुहृदः सुतौ च ।
४२] हा नाथ हा भूमिपते किमर्थं यासि त्वमस्मानवशान् विहाय॥४२॥

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे दशरथ-
सत्कारः[23] सर्गः ॥ [८७] ॥

---

18 कै—ञ्नार्मनोभिश्च । 19 घ, ल—ञ्नां । 20 कै—प्राज्ज्वल । ल—प्रजज्वल । म—प्रजुजाल । 21 कै—तुतौ । 22 कै—समचित: । 23 ल-संस्कारो नाम० । म-संस्कार सर्गः ।

[वं-८४]=[अष्टाशीतितमः सर्गः]=[दा-७७]

अवकीर्य च माल्येन तां चितामपसव्यतः ।
१] सगणो भरतश्चक्रे विपरीत इव स्खलन् ॥ १ ॥ [N
विह्वलन्निव दुःखेन विभ्रमन्निव चातुरः ।
२] ननाम स पितुः पादौ निपत्य धरणीतले ॥ २ ॥ [N
तमार्तरूपं पतितं विह्वलन्तमचेतसम्[1] ।
३] उत्थापयामास बलात् परिगृह्य सुहृज्जनः ॥ ३ ॥ [N
अवेक्ष्य स पितुर्दीप्तं सर्वगात्रेषु पावकम् ।
४] प्रगृह्य बाहू चुक्रोश दुःखेनावससाद च ॥ ४ ॥ [१२
मन्थरावाक्यतोयौघं वरदानमहाह्रदम् ।
N] कैकेयीनिश्चयग्राहमगाधं[2] शोकसागरम् ॥ ५ ॥ [१३
बाष्पोपहतकण्ठश्च सबाष्पमभिनिःश्वसन् ।
५] शोकदुःखपरीतात्मा मदक्षीब इव श्वसन् ॥ ६ ॥ [५
पू६] विललापातिकरुणं भरतः परिविह्वलः[3] । [N
पू७] यस्या गतिरनाथाया पुत्रः प्रव्राजितो वनम् ॥ ७ ॥ [७पू
उ७] तामिमां तात कौसल्यां किमर्थं नाभिभाषसे । [७उ
पू८] एवमाद्यतिदुःखार्तो विलपन्नथ राघवः ॥ ८ ॥ [N
उ८] भूमौ पपात नकस्य यन्त्रच्युत इव ध्वजः । [९उ
पू९] परिपेतुः पतन्तं तं पुण्याः परिचारकाः ॥ ९ ॥ [१०पू
उ९] पुण्यक्षयं च्युतं स्वर्गाद्ययातिमृषयो यथा । [१०उ
पू१०] शत्रुघ्नश्चापि भरतं पतितं समवेक्ष्य[4] तम् ॥ १० ॥ [११पू
उ१०] विसंज्ञकल्पो न्यपतच्छोचन् पितरमातुरः । [११उ

---

1 कै०—मचेतनम् । 2 ख—कैश्यो० । 3 ल—पत० । म—प्रम० । 4 कं,च समभीक्ष्य ।

पू१.१] उन्मत्त इव निमेक्ष्य विललाप निपत्य सः ॥ ११ ॥ [१.२पू

उ१.१] गुणसङ्कीर्तनं कुर्वन् पितुर्वै पितृवत्सलः । [१.२उ

N] इदमाह महातेजाः शत्रुघ्नः शत्रुसूदनः ॥ १२ ॥ [N

सुकुमारं च बालं च सततं लालितं त्वया ।

१.२] क्व तात भरतं हित्वा विलपन्तं गमिष्यसि ॥ १३ ॥ [१.४

यतः पुरा शिशूनस्मान्भोजनाच्छादनादिभिः ।

१.३] संवर्धयासि नः सर्वान् पुनः कोऽद्य करिष्यति ॥१४॥ [१.५

एवं दुःखाभितप्तानां पृथिवी नो विदीर्यते ।

१.४] पित्रा गुणविशिष्टेन लालितानां विधुन्वताम् ॥ १५ ॥ [१.६

त्वयि राजन् गते स्वर्गे रामे चारण्यमाश्रिते ।

१.५] न जीवितुं व्यवस्यामि प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ॥ १६ ॥ [१.७

पित्रा हीनां तथा भ्रात्रा शून्यामिव महीमिमाम् ।

१.६] अयोध्यां न प्रवेक्ष्यामि प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ॥ १७ ॥ [१.८

रावमाढि तयोः श्रुत्वा भ्रात्रोर्विलपितं तदा ।

१.७] सर्वः परिजनो भूयो भृशमार्तस्वरो रुदन् ॥ १८ ॥ [१.९

ततः शोकपरिश्रान्तौ शत्रुघ्नभरतावुभौ ।

१.८] विलपित्वाऽतिकरुणं ध्यानमेवान्वपद्यताम् ॥ १९ ॥ [२०

तौ तु दृष्ट्वा ध्यानगतौ पितुरिष्टः पुरोहितः ।

१.९] वसिष्ठो भरतं वाक्यमुत्थाप्यैतदुवाच ह ॥ २० ॥ [२१

द्वन्द्वदुःखैर्जगत्सर्वमभितप्तमिदं यथा ।

२०] अवश्यभाविनं[8] भावं तत्र शोचितुमर्हसि ॥ २१ ॥ [N

---

5 ल—०गुणविस्पष्टेन । 6 य—पित्रा दीनां । म—पितृहीनं कै—पित्रा । हीनं 7 य—०गत. । 8 म—अवश्यं० । ज—अपिश्यां० ।

*जातस्य नियतो मृत्यु ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
२१] *तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २२ ॥Q [N
सुमन्त्रश्चापि शत्रुघ्नं पतित[9] धरणीतलात् ।
२२] उत्थापयदविश्रान्तः सर्वभूतहितावरम् ॥ २३ ॥ [२४
पू२३] उत्थितौ तौ नरव्याघ्रावस्तुक्लिन्नौ न रेजतुः । [२५पू
अस्रूणि परिमार्जन्तौ वाष्पक्लिन्नेक्षणौ तु तौ ।
२४] अमात्यास्त्वरयामासुः पितुः[10]कर्तुं[10]जलक्रियाम्॥२५॥A[२६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतशत्रुघ्न-
विलापो नाम सर्गः ॥ [८८] ॥

---

* प, म, स—नास्ति । Q गीता II. 27. 9 प—पतितं । 10 प, म, स—परिकर्तुं A प—अपगाहतव पुत्राणां मन्यूं त सु[ह?] जन ।

[वं–८५]=[एकोननवतितमः सर्गः]=[दा—N]

एवं विधाय सत्कारं भरतः पृथिवीपतेः ।
१] जलक्रियां ततः सर्वां कर्तुं समुपचक्रमे ॥ १ ॥
पुण्यां पुण्यजलां प्राप्य महर्षिगणसेविताम् ।
२] उदकं स पितुर्दातुं सरयूं सरितं ययौ ॥ २ ॥
अवगाह्य ततः पुण्यां सरयूं समुहृज्जनः ।
३] ददौ पितरमुद्दिश्य भरतः सजलाञ्जलिम् ॥ ३ ॥
ददतः सलिलं तस्य भरतस्य महात्मनः ।
४] सान्निध्ये सरितः पुण्याः सरय्वां विदधुस्तदा ॥ ४ ॥
विपाशा च शतद्रुश्च गङ्गा च यमुना तथा ।
५) सरस्वती चन्द्रभागा तथाऽन्याः सरितां वराः ॥ ५ ॥
तासां नदीनां पुण्यानां सलिलेन दिवंगतम् ।
६] पितरं तर्पयामास भरतः समुहृज्जनः ॥ ६ ॥
स च पौरजनः सर्वः सामात्यः सपुरोहितः ।
७] तर्पयामास राजानं सलिलेन विधानतः ॥ ७ ॥
ततः कृत्योदकं ते तु विधानेन नृपस्य च ।
८] पृथगास्थापयामासु' भरतं शोकलालसम् ॥ ८ ॥
आश्वास्यमानस्तैश्चापि प्रययौ भरतस्ततः ।
९] तैरेव सहितः सर्वै रयोध्यां नगरीं तदा ॥ ९ ॥
दूरादेव च तां दृष्ट्वा दीनातुरजनाकुलाम् ।
१०] पुरीमयोध्यां भरतः पौरान् वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥
गते स्वर्गं नरपतौ रामे च वनमाश्रिते ।
११] भातीयं मे निरानन्दा श्मशानसदृशी पुरी ॥ ११ ॥
प्रमदा हतवीरेव विचन्द्रेव च शर्वरी ।

१२] विहीना नरदेवेन पुरीयं न विराजते ॥ १२ ॥
नेच्छाम्येतामहं द्रष्टुं प्रवेष्टुं वा हतात्विषम् ।
१३] इहैव प्रायमासिष्ये पितुर्दर्शनकाम्यया ॥ १३ ॥
किं मे पित्रा विहीनस्य जीवितेन सुखेन वा ।
१४] इच्छामि जीवितुं नाहमनुयास्यामि भूपतिम्[1] ॥ १४ ॥
अथ राज्ञो महामात्रो[2] धर्मपाल इति श्रुतः ।
१५] परिदेवयमानं तं भरतं वाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥
शोको विमुच्यतामेष यः प्राप्तो भरताद्य वै ।
१६] कुलस्यं त्वस्य ते नेदमनुरूपं नृपात्मज ॥ १६ ॥
शोकं भरत नात्यर्थं त्वमेवं[4] कर्त्तुमर्हसि ।
१७] सर्वस्वजननाशेऽपि नैव शोचन्ति पण्डिताः ॥ १७ ॥
शोचतो रुदतश्चापि यदि नाम मृतः पुनः ।
१८] सञ्जीवेत्स्वजनः कश्चित्तदा शोचेत स सर्वशः ॥ १८ ॥
यदा त्ववश्यं मर्तव्यं[5] सर्वैरस्माभिरागतैः ।
१९] मृत्युकाले तदा शोके नास्ति सामर्थ्यमण्वपि ॥ १९ ॥
एह्याशु त्वं सहास्माभिरयोध्यां प्रविश प्रभो ।
२०] स्वजनं शोकसन्तप्तं समाश्वासय मा शुचः ॥ २० ॥
ततोऽनन्तरमेव त्वं स्वर्गतस्य महीपतेः ।
२१] श्राद्धकर्म प्रयत्नेन विधिवत् कर्त्तुमर्हसि ॥२१ ॥
त्वं ह्यद्य नाथः सर्वेषामस्माकं स्वजनस्य च ।
२२] शोचितुं नार्हसि त्वं नः प्रजानां नाथतां गतः ॥ २२ ॥
एवमुक्तः स विप्रेण धर्मपालेन धार्मिकः ।

---

1 घ, म, ल—भूमिपम्। 2 ल—महासाधो। 3 ल—याः। कै—यः। 4 कै, ल—त्वमेव। 5 कै, घ, म, ल—मंतव्यं।

२३] प्रविवेश निरानन्दामयोध्यां सपदानुगः ॥ २३ ॥
विशून्यचत्वरपथां विध्वस्तविपणापणाम् ।
२४] शोकातुरजनाकीर्णां दीनस्वजननादिताम्[7] ॥ २४ ॥
ततो विवेश स्वजनेन संवृतः
पितुर्निवेशं भरतो ऽतिदुःखितः ।
विहीनमिन्द्रप्रतिमेन राज्ञा
२५] गतोत्सवाकारमिवातिनिष्प्रभम् ॥ २५ ॥
प्रविश्य तस्मिंश्च[8] पितुर्निवेशने
तृणानि सन्तीर्य दशाहमातुरः ।
ततः सुषुप्साप तमेव चिन्तयन्
२६] पितुर्विनाशं भरत प्रतापवान् ॥ २६ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे उदकप्रदानं नाम सर्गः ॥ [८९] ॥

---

7 प, ल—दितां० । 8 ग, म ल —तस्मिस्तु ।

[वं—८६]=[नवतितमः सर्गः]=[दा—७६]

समतीते दशाहे तु कृतशौचो[1] नृपात्मजः[1] ।
१] चक्रे द्वादशिकं श्राद्धं त्रयोदशिकमेव च ॥ १ ॥ [७७।१
ददौ चोद्दिश्य पितरं ब्राह्मणेभ्यो धनं तदा ।
२] महार्हाणि च वस्त्राणि[2] गाश्च वाहनमेव च ॥ २ ॥ [७७।२
यानानि दासीदासं च वेश्मानि वसुमन्ति च ।
३] भूषणानि च मुख्यानि राज्ञस्तस्यौर्ध्वदेहिकम् ॥३॥ [७७।३
त्रयोदशाहेऽतीते तु कृते चानन्तरे विधौ ।
४] समेता मन्त्रिणः सर्वे भरतं वाक्यमब्रुवन् ॥ ४ ॥ [१
गतः स नृपतिः स्वर्गं भर्ताऽऽसीद्यो गुरुश्च नः ।
५] प्रव्राज्य दयितं पुत्रं रामं लक्ष्मणमेव च ॥ ५ ॥ [२
त्वमद्य भव नो राजा धर्मतो नृवरात्मज ।
६] माप्नोति नापदं यावदिदं[3] राष्ट्रमराजकम्[4] ॥ ६ ॥ [३
आभिषेचनिकं द्रव्यमिदमादाय सर्वशः ।
७] राजानमभिषेक्तुं त्वामिच्छन्ति नृपमन्त्रिणः ॥ ७ ॥ [४
इदं राज्यं गृहाण त्वमन्ववायक्रमागतम् ।
८] अभिषेचय चात्मानं पाहि चास्मान्नराधिप ॥ ८ ॥ [५
इत्युक्तो भरतो द्रव्यमाभिषेचनिकं तदा ।
९] मङ्गलार्थं समालभ्य राज्ञस्तान्मन्त्रिणोऽब्रवीत् ॥ ९ ॥ [६
ज्येष्ठो भ्राता सदा राज्ये मामतोनुचित* कुले ।
१०] भवन्तो वक्तुमर्हन्ति नैर मां कुशला इव ॥ १० ॥ [७
भ्राता मे गुणवान् ज्येष्ठो राजा भवितुमर्हति । [८पू

---

1 के—कृत्तशौचन्नृपात्मज. । ग—कृतशौचे० । 2 च, म, ल—वासांसि । 3 कै—यावदिदं । 4 कै—०मकंटकम् । * कै—सामनंनुचित । म—मामुतो नुचितं । च—ममातानुचितं । 5 च, म—नैव ।

११] राजधर्मविदां श्रेष्ठो रामो राजीवलोचनः ॥ ११ ॥ [N
भृत्यो नियोज्यस्तस्याहं रामो राजा भविष्यति । [N
१२] वने त्वहं निवत्स्यामि[6] नववर्षाणि पञ्च च ॥ १२ ॥ [८उ
युज्यतामाशु महती सेनाऽद्य चतुरङ्गिणी[7] ।
१३] आनयिष्याम्यहं ज्येष्ठं भ्रातरं राघवं वनात् ॥ १३ ॥ [९
आभिषेचनिकं द्रव्यं सर्वमेतदशेषतः ।
१४] पुरस्कृत्य गमिष्यामि भवद्भिः सहितो वनम् ॥ १४ ॥ [१०
तत्रैव च नरव्याघ्रमभिषिच्य पुरस्कृतम् ।
१५] आनयिष्याम्यहं रामं हव्यवाहमिवाध्वरे ॥ १५ ॥ [११
न सकामां करिष्यामि जननीं राज्यगृद्धिणीम् ।
१६] वने वत्स्याम्यहं दुर्गे रामो राजा भविष्यति ॥ १६ ॥ [१२
क्रियतां शिल्पिभिः पन्थाः समे वा विषमेऽध्वनि ।
१७] दैशिकाश्च पथिज्ञाश्च कुशला यान्तु मेऽग्रत ॥ १७ ॥ [१३
इत्येवं भरतं धर्म्यं भाषमाणं वचस्तदा ।
१८] प्रत्यूचुर्हृष्टरोमाणः सर्वे ते नृपमन्त्रिणः ॥ १८ ॥ [१४
एवं ते भाषमाणस्य पद्माश्रीरुपतिष्ठतु ।
१९] यस्त्वं भ्रातरि श्रियं दातुं ज्येष्ठायेच्छसि राघव ॥ १९ ॥ [१५
अनुत्तमं ते वचनं नृपात्मज प्रजल्पतः सस्तवनं निशम्य ।
२०] महर्षजाः समति वाष्पबिन्दवः पतन्ति राजात्मजनेनसंभवाः[१६
युक्तार्थं वचनमथो निशम्य हृष्टास्तेऽमात्याः सपरिषदोऽब्रुवस्तदा ।
पन्थानं नरवरभक्तितस्त्वचित्तो[8] व्यादिष्टस्तव वचनाच्च शिल्पिवर्गः ॥
२१] [१७,

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरत-
भक्तिर्नाम सर्गः ॥ [९०] ॥

---

6 कै, म, ल,—नियोत्स्यामि । 7 म—०रंगिनी । 8 कै—०चित्तो ।

[वं—८७]=[एकनवतितमः सर्गः]=[दा—८०]

अथ भूमिप्रदेशज्ञाः सूत्रकर्मविशारदाः[1]।
१] स्वकर्मनिरताः पौराः खनका यन्त्रकास्तथा[2] ॥ १ ॥ [१
कर्मान्तिकाः स्थपतयः पुरुषा मन्त्रकोविदाः ।
२] तथा वार्धकिनश्चैव[3] दात्रिणो वृक्षरोपकाः ॥ २ ॥ [२
कूपकाराः सभाकारा वंशकर्मकरास्तथा ।
३] समर्था वेदविद्वांसः[4] पुरस्ते संप्रतस्थिरे ॥ ३ ॥ [३
विषमं च समं कर्तुं छिन्दंश्चैव पथि द्रुमान्।
४] सेनापतिं येयावग्रे भरतस्य प्रयास्यतः ॥ ४ ॥ [N
स तु हर्षाव समुत्क्रोशो जनौघो विपुलः[5] प्रयान्[5] ।
५] अशोभत महावेगः पर्वणीव जलाशयः ॥ ५ ॥ [४
पू६] ते तु स्वमधिष्ठाय कर्म कर्मसु कोविदाः । ; [५पू
उ७] कुर्वन्तःशोधयन्तश्च पन्थानं गहने वने ॥ ६ ॥ [N
चिच्छिदुः[6] शैलसङ्काशान् केचिद् वृक्षान् परश्वधैः। [N
८] अवृक्षेषु च देशेषु केचिद् वृक्षानरोपयन् ॥ ७ ॥ [७पू
लतावितानगुल्मांश्च शलाकाकोगपर्वतान् । [६पू
९] केचित्कुठारैष्टङ्कैश्च दात्रैश्चैव माचिच्छिदुः ॥ ८ ॥ [७उ
अपरे चिच्छिदुः सालान् वलिनो वलवत्तराः ।
१०] विधमन्ति स्म कुद्दालैः स्थलानि च समन्ततः ॥ ९ ॥ [८
तथा कण्टकदुर्गांश्च पथश्चक्रुरकण्टकान् । [N
११] पांसुभिः पूरयामासुरन्धकूपांस्तथाऽपरे ॥ १० ॥ [९पू
निम्नान् देशांस्तथा चान्ये समीचक्रुः समन्ततः । [९उ

---

1 कै, म, ल—सूतकर्म० । 2 कै, म, ल—यत्नकास्तथा ।
3 कै, म, ल—वार्धनिका० । 4 ध—च ये० । 5 कै—विपुलाश्रयान् ।
6 कै, ध—चिच्छेदु ।

१२] संक्रमांश्चैव कुर्वन्तस्तीर्थानि च सहस्रशः ॥ ११ ॥ [N
नदीतीरतटोच्छ्रयान् प्रकुर्वन्तः[7] समांस्तथा । [N
१३] अनुमार्गं ययुः पूर्वं खनका भरताज्ञया ॥O १२ ॥ [N
बिभिदु र्भेदनीयांश्च दुर्गदेशान् नगांस्तथा ।O [१०उ
१४] जलाशयांस्तथा चक्रुर्नचिरेण बहूदकान् ॥ १३ ॥ [११पू
सागरप्रतिमान् मार्गे सुतीर्थान् विमलोदकान् । [११उ
१५] चक्रुर्देशेषु देशेषु पञ्चशः[8] पञ्चतोरणान् ॥ १४ ॥ [N
उदपानान् बहुविधान् वेदिकापरिचारिकान् । [१२उ
१६] ससुधाकुट्टिमलतः[9] सुपुष्पितमहीरुहः[10] ॥ १५ ॥ [१३पू
मत्तहृष्टद्विजगणः पताकाभिरलङ्कृतः । [१३उ
१७] चन्दनोदकसंसिक्तो नानाकुसुमभूषितः ॥ १६ ॥ [१४पू
पू१८] बह्वशोभत[11] सेनायाः पन्थाः स्वर्गपथोपमः । [१४उ
पू२०] भूयस्तं शोधयामासुर्भूपाभिश्चाप्यभूषयन् ॥ १७ ॥ [१६
उ२०] नक्षत्रे सुप्रशस्ते[12] च मुहूर्ते चैव तद्विदः ।
पू२१] निवेशं स्थापयामासुर्भरतस्य महात्मनः ॥ १८ ॥ [१७
उ२१] बहुपांसुचयश्चासीत् परिखापरिवारितः ।
पू२२] [यत्रेन्द्रकीडपरिखा प्रतोलीपरिवेष्टितः ॥ १९ ॥ [१८
उ२२] प्रासादतलसंसिक्तः शोधकैश्च सुसंस्कृतः ।][13]
पू२३] पताकाशोभितः श्रीमान् सुनिर्मितमहापथः ॥ २० ॥ [१९
उ२३] गृहैस्तन्वाद्रिरिव खं सविटङ्कविमानकैः ।
पू२४] समुच्छितपताकैश्च शक्रसद्मोपमैर्वृतः ॥ २१ ॥ [२०

---

7 ल—प्राकुर्वतः । कै—कुर्वतः ।Oकै । 8 व—पदशः । 9 ल—०लताः । कै, म—कुंठिमलताः । 10 कै—महीवहः । म—महीरुहा । 11 कै, ग, म—बहु शोभत ।12 कै—सुप्रशस्तं । 13 कै, म, ल—नास्ति ।

उ२४] जाह्नवीं च समासाद्य विविधद्रुमकाननाम् ।
N] शीतलामलपानीयां महामीनसमाकुलाम् ॥ २३ ॥ [२१
सचन्द्रतारागणमण्डितो यथा
क्षपाऽऽगमे वीतमलो विराजते ।
नक्षत्रमार्गः स तथा[14] व्यराजत
२५] क्रमेण पन्थाः शुभशिल्पिनिर्मितः ॥ २४ ॥ [२२

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे मार्गसत्कारो[15] नाम सर्गः ॥ [९०] ॥

---

14 ल—यथा । 15 के—मार्गमर्षरो ।म, ल—मार्गसक्रो ।

[वं—८८]=[द्विनवतितमः सर्गः]=[दा—८२]

तामार्यजनसम्पूर्णां भरतप्रग्रहां[1] सभाम्[1] ।
१] ददर्श बुद्धिसम्पन्नो वसिष्ठो भगवानृषिः ॥ १ ॥ [१
आसनानि यथान्यायमार्याणां जुषतां ततः ।
२] विभान्ति स्म घनापाये द्योततां[2] ज्योतिषामिव ॥ २ ॥ [२,३
सर्वाश्च राजप्रकृतीः समन्तात् प्रेक्ष्य धर्मवित् ।
३] इदं पुरोहितो वाक्यं भरतं प्रत्यभाषत ॥ ३ ॥ [४
तात राजा दशरथः स्वर्गतो धर्ममाचरन् ।
४] धनधान्यवतीं स्फीतां प्रदाय पृथिवीं तव ॥ ४ ॥ [५
रामस्तथा सत्यधृतिः सतां धर्ममनुस्मरन् ।
५] नाजहात् पितुरादेशं लक्ष्मीं[3] शीतांशुमानिव[4] ॥ ५ ॥ [६
पित्रा भ्रात्रा च ते दत्तं राज्यं निहतकण्टकम् ।
६] तद्भुंक्ष्व त्वं सहामात्यः[5] क्षिप्रमेवाभिषिच्य च ॥ ६ ॥ [७
उदीच्याश्च प्रतीच्याश्च दाक्षिणात्याश्च केरलाः ।
७] कर्णधाराश्च सामुद्रा रत्नान्युपहरन्ति ते ॥ ७ ॥ [८
तच्छ्रुत्वा भरतो वाक्यं शोकेनाभिपरिप्लुतः ।
८] जगाम मनसा रामं धर्मज्ञो[6] धर्मकाम्यया ॥ ८ ॥ [९
सबाष्पया तदा वाचा कलहंसस्वनो युवा ।
९] निजगाद सभामध्ये जगर्हे च पुरोहितम् ॥ ९ ॥ [१०
चरितब्रह्मचर्यस्य विद्यास्नातस्य धीमतः ।
१०] धर्मे प्रयतमानस्य को राज्यं मद्विधो हरेत् ॥ १० ॥ [११
कथं दशरथाज्जातो भवेद्राज्यापहारकः ।

1 कै—भरतप्रग्रेहं सभम् । म—भरतप्रगृहसभम् । 2 कै—द्योतितां । 3 कै—लक्ष्मी । 4 ब, ल—सीतांशु० । 5 म—महामात्य. । ल—महामात्य. । कै—महामात्य. । 'सहामात्य.' । 6ब—धर्मज्ञ ।

११] राज्यमाहृत्य रामस्य नाधर्मं वक्तुमर्हसि ॥ ११ ॥ [१२
ज्येष्ठः श्रेष्ठश्च धर्मात्मा दिलीपनहुषोपमः ।
१२] लब्धुमर्हति काकुत्स्थो राज्यं दशरथो यथा ॥ १२ ॥ [१३
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यं कुर्यां पापमहं यदि ।
१३] इक्ष्वाकूणां कुले जातो भवेयं कुलपांसनः ॥ १३ ॥ [१४
यन्मे माता कृतं पापं नाहं तदभिरोचये ।
१४] इहस्थोऽहं वनस्थं तं नमस्यामि कृताञ्जलिः ॥ १४ ॥ [१५
राममेवानुगच्छामि स राजा द्विपदां वरः ।
१५] त्रयाणामपि लोकानां राघवो राज्यमर्हति ॥ १५ ॥ [१६
यदि त्वार्यं न शक्ष्यामि विनिवर्त्तयितुं वनात् ।
१६] अहं तत्रैव वत्स्यामि यथाऽसौ लक्ष्मणस्तथा ॥ १६ ॥ [१८
अयोध्यायामहं वस्तुं नोत्सहे भ्रातरं विना ।
१७] सर्वश्रेष्ठगुणं ज्येष्ठं रामं राजीवलोचनम् ॥ १७ ॥ [N
पित्रा भुक्ता नृपश्रीर्मे दायाद्यं तस्य धीमतः ।
१८] नाधिगन्तुं मया शक्या सावित्री वृषलैरिव ॥ १८ ॥ [N
पितर्युपरते[8] तस्मिल्लोकनाथे महात्मनि ।
१९] शरणं च गतिं ज्येष्ठो भ्राता चैव पिता च मे ॥ १९ ॥ [N
तं निवर्त्तयितुं बुद्धिं र्वनवासे कृता मया ।
२०] न केनचिदियं शक्या प्रत्यावर्त्तयितुं[9] प्रभो ॥ २० ॥ [N
तद्वाक्यं धर्मसंयुक्तं श्रुत्वा सर्वे सभासदः ।
२१] हर्षान्मुमुचुरस्रूणि रामे निर्दत्तचेतसः[10] ॥ २१ ॥ [१७
ततः सभायां सचिवाः सोपाध्याया विचुक्रुशुः ।

---

7 कै, म—वाप्पलैरिव । 8कै,ल—०र्यपरते । 9 म—प्रतिचतयत।
10 ष, म, ल—निभृत० ।

२२] साधु साध्विति भूतार्थं शंसन्तो भरतं गुणैः ॥ २२ ॥ [N
वसिष्ठस्त्वब्रवीद्धृष्टो भरतं बाष्पगद्गदम् ।
२३] इदं परिषदो मध्ये परया स्वरसंपदा ॥ २३ ॥ [N
शशाङ्कविमले चित्तमनाश्चर्यमिदं त्वयि ।
२४] पित्रा दशरथेन त्वं धर्मज्ञेन महात्मना ॥ २४ ॥ [N
अभिजातोऽसि[11] शूरेण राज्ञा दानरयोधिना ।
२५] यस्त्वं वनगतं राम निवर्तयितुमिच्छसि ॥ २५ ॥ [N
अभिजानासि रामस्य दृढ गुणवतो गुणान् ।
२६] धन्योऽस्ति स च धर्मात्मा धन्यो यस्यासि बान्धवः॥२६॥[N
ईदृशा हि महात्मानो[12] यत्र स्युः प्रियबान्धवाः ।
२७] देशे किमिव तत्र स्याद्दुर्लभं वीतकल्मषे ॥ २७ ॥ [N
त्वया ह्यपत्येन गुणैः कृतात्मना
गतो दिवं भूमिपतिः प्रतिष्ठितः ।
सभा समग्रा परितुष्यते त्वियं
२८] यद्युद्यतो रामनिवर्त्तने ह्यसि ॥ २८ ॥ [N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतप्रशंसा नाम सर्गः॥ [९२]॥

---

11 म—अभिजानामि । ल—अभिजानांवि । 12 कै—महाबाहो ।

[वं—८९]=[त्रिनवतितमः सर्गः]=[दा—८२]

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतो भ्रातृवत्सलः ।
७] गुरुं प्रणम्य शिरसा ततो वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ [N
सर्वोपायान् प्रयुञ्जेऽहं तं निवर्त्तयितुं गुरुम्[1] ।
१] समक्षमार्यमिश्राणां गुरूणां गुरुवर्त्तिनाम् ॥ २ ॥ [१९
एवमुक्त्वा स धर्मात्मा भरतो भ्रातृवत्सलः ।
२] समीपस्थं तदा सूतं भूय एवाब्रवीदिदम् ॥ ३ ॥ [२१
तूर्णमुत्थाय गच्छ त्वं सुमन्त्र मम शासनात् ।
३] यात्रामाज्ञापय क्षिप्रं बलं चैव समानय ॥ ४ ॥ [२२
एवमुक्तः सुमन्त्रस्तु भरतेन महात्मना ।
४] प्रहृष्टः सन्दिदेशाशु यथासन्दिष्टमेव तत् ॥ ५ ॥ [२३
ताः प्रहृष्टाः प्रकृतयो बलाध्यक्षप्रणोदिताः ।
५] श्रुत्वा यात्रां समाज्ञप्तां काकुत्स्थविनिवर्त्तने○ ॥ ६ ॥ [२४
ततोऽयोध्यागताः सर्वे हृष्टा स्वे स्वे गृहे तदा ।○
६] यात्रासमयमाज्ञाय○ रामस्य गमनं प्रति ॥ ७ ॥ [२५
ते हयै र्गोरथैः शीघ्रैः[2] स्यन्दनैश्च मनोहरैः ।
७] सह योधैर्बलाध्यक्षा[3] बलं सज्जमवेदयन् ॥ ८ ॥ [२६
सज्जं तु तद्बलं ज्ञात्वा भरतो गुरुसन्निधौ ।
८] रथं मे त्वरयस्वेति सुमन्त्रं पार्श्वतोऽब्रवीत् ॥९॥ [२७
ततः सुमन्त्रस्तामाज्ञां श्रुत्वा शीघ्रपराक्रमः ।
९] रथं गृहीत्वा प्रययौ युक्तं परमवाजिभिः ॥१०॥ [२८
स राघवः सत्यधृति[4] प्रतापवान्
वचः सुयुक्तं दृढसत्यविक्रमः ।

---

1 म—गृह । ○ य । 2 म—शीघ्र० । 3 कै—योधिर्ब० । म —दुर्बला ० । 4 ब—सत्यधृत. ।

गुरुं महाऽरण्यगतं यशस्विनं
१०] प्रसादयिष्यन् भरतोऽब्रवीदिदम् ॥ ११ ॥ [२९
तूर्णं समुत्थाय सुमन्त्र[5] गच्छ[5]
योगं समाज्ञापय मे बलानाम् ।
आनेतुमिच्छामि गुरु वनस्थं
११] प्रसाद्य राम जगतो हिताय ॥ १२ ॥ [३०
स सूतपुत्रो भरतेन सम्यग्
आज्ञापितः संपरिपूर्णकाम ।
शशास सर्वान् प्रकृतिप्रधानान्
१२] बलस्य मुख्यान् स्वसुहृज्जनं[6] च ॥ १३ ॥ [३१
कल्ये समुत्थाय[7] ततः कुलीना[8]
राजन्यवैश्या नगरप्रधानाः ।
अयोजयन्तुष्ट्रखरान्[9] समन्तान्-
१३] मत्तांश्च नागान् बहुलान् हयांश्च[10] ॥ १४ ॥]३२

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सेनाप्रस्थानिको[11]
नाम सर्गः ॥ [८२] ॥

---

5 म—गच्छतो समुत्र । 6 च—सुसुहृज्जनं । 7 ल—काल्ये । च, म—काले । 8 कै—कुलोरा । 9 ल—अयोजयन्तुष्ट्रखरान् । 10 कै—ह्वांश्च । 11 च—सेनाप्रास्थानिको ।

[व—९०]=[चतुर्नवतितमः सर्गः]=[दा—८१]

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्तमास्थाय स्यन्दनोत्तमम् ।
१] प्रययौ भरतः श्रीमान् रामदर्शनकाम्यया ॥ १ ॥ [१
अग्रतः प्रययुस्तस्य सर्वे मन्त्रिपुरोहिताः ।
२] अधिरुह्य हयैर्युक्तान् रथान् सूर्यरथोपमान् ॥ २ ॥ [२
दशनागसहस्राणि कल्पितानि यथाविधि ।
३] अन्वयुर्भरतं यान्तमिक्ष्वाकुकुलनन्दनम् ॥ ३ ॥ [३
षष्टीरथसहस्राणि धन्विना सायुधानि वै ।
४] अन्वयुर्[1] भरतं यान्तं राजपुत्रं महारत्नम् ॥ ४ ॥ [४
शतं चाश्वसहस्राणि समारूढानि राघवम् ।
५] अन्वयुर्[2] भरतं यान्तं राजपुत्रं यशस्विनम् ॥ ५ ॥ [५
कैकेयी च सुमित्रा च कौसल्या च यशस्विनी ।
६] रामानयनसहृष्टा ययुर्यानेः प्रभास्वरैः ॥ ६ ॥ [६
प्रययौ चार्यसङ्घातः रामं द्रष्टुं सलक्ष्मणम् ।
७] तस्य चेष्टा कथाश्चक्रुः सर्वे संहृष्टमानसाः ॥ ७ ॥ [७
मेघश्यामं महाबाहुं स्थिरसत्त्वं दृढव्रतम् ।
८] द्रक्ष्यामस्तं कदा रामं जगतः शोकनाशनम् ॥ ८ ॥ [८
दृष्ट एव न शोकमपनेष्यति राघवः ।
९] तमः कृत्स्नस्य लोकस्य समुद्यन्निव भास्करः ॥ ९ ॥ [९
इत्येवं कथयन्तस्ते संप्रहृष्टाः कथाः शुभाः ।
१०] परिष्वजन्तश्चान्यान्यं ययुर्नरगणास्तदा ॥ १० ॥ [१०
पुराच्च निर्ययुः सर्वे समवायेन नैगमाः ।
११] रामदर्शनसहृष्टाः सर्वाः प्रकृतयस्तथा ॥ ११ ॥ [११

1 कै, म—अन्वयन् (य—रू) । 2 वै—०न्वयन् । म—०न्वय ।
3 म, ब—०सघात ।

मणिकाराश्च ये केचिच्छत्रकाराश्च शोभनाः ।
१२] यन्त्रकर्मकृतश्चैव[4] तथा चास्त्रोपजीविनः ॥ १२ ॥ [१२
मायूरिका स्तौचिरिकाश् उेदका भेटकास्तथा ।
१३] दन्तकाराः सुधाकारास्तथा दन्तोपजीविनः ॥ १३ ॥ [१३
स्वर्णकाराश्च विख्यातास्तथा कनकशोधकाः ।
१४] स्नापकाः स्नावका वैद्याः शौण्डिका.पौष्पिकास्तथा॥१४॥ [४१
१५] रजकास्तन्तुवायाश्च[5] सूतमागधनन्दिनः[6] । [१५पू
पू१६] वारटा वेत्रकाराश्च गान्धिकाः पाणिकास्तथा ॥ १५ ॥ [N
उ१६] प्रावारिका[7] सूपकारास्तथा शिल्पोपजीविनः ।
पू१७] हैरण्यकाश्च मरयातास्तथा वृद्धउपजीविनः ॥ १६ ॥ [N
उ१७] प्राकारिकास्तथा चैव तथा शास्त्रोपजीनिनः ।
उ१८] स्थूलनायाः[1] कांस्यकाराश्[8] चित्रकाराश्च[8] योधिनः ॥१७॥
उ१८] धान्यविक्रयिणश्चैव गन्धविक्रयिणस्तथा ।
पू१९] फलोपजीविनः सर्वे पुष्पमूलोपजीविनः ॥ १८ ॥ [N
उ१९] सूपकारा.स्थपतयस्तक्षाण कारपत्रिकाः[9] ।
पू२०] श्रीरामेक्षास्तथा सर्वे इष्टकाकारकास्तथा ॥ १९ ॥ [N
उ२०] दिव्यमोदककाराश्च मालाकाराश्च शोभनाः ।
पू२१] श्रीरामेक्षास्तथा सर्वे तथा मांसोपजीविन ॥ २० ॥ [N
उ२१] पांक्तिकाः[10] पायकाश्चैव[10] तथा चूर्णोपजीविनः । [N
पू२२] कार्पासिका धनुष्कारा. सूत्रविक्रयिणस्तथा ॥ २१ ॥ [N
उ१२] वस्त्रकर्मकृतश्चैव काण्डकारास्तथैव च ।

---

4 फे, म—यन्त्रकर्मकृताश्चैव । ल—यन्त्रकर्मकृताश्चै० । 5 क, ब-०स्तत्र । म—०स्तत्रवायश्च। 6 फे,म, ल—०वन्दिना । 7 यारजा। म—यारजा । [8]ये—स्तुलवाया । ल—मूलवाया । 9 य-०लोहका० । फे-०कराय् । 9 फे—०मत्रिका 10 मं—पात्तिका० । य—०मायिका०

पू२४] शलाकाशल्यहर्त्तारो विषवैद्याश्च शोभनाः ॥O२२॥ [
उ२४] भूतग्रहविधिज्ञाश्च[11] बालानां च चिकित्सकाः ।
पू२५] आरकूटकृतश्चैव ताम्रकारास्तथैव च ॥ २३ ॥O [
उ२५] स्वास्तिकाराः कोशकारास्तथा भक्तोपजीविनः ।
पू२६] भर्जकाराः[12] सक्तुकारास्तथा वाटाविकाश्च ये ॥२४॥ [N
उ२६] खण्डकारास्तथा[13] मुख्यास्तथा वाणिजकाश्च ये ।
पू२७] काचकाराश्छत्रकारास्तथा[14] बोधकशोधकाः ॥ २८ ॥ [N
उ२७] खण्डसंस्थापकाश्चैव तथा ताम्रोपजीविनः ।
पू२८] श्रेणीमहत्तराश्चैव ग्रामघोषमहत्तराः ॥ O२६ ॥ [N
उ२८] शैलूषाश्च सह स्त्रीभिर्धूर्तवैतांसिकाश्च ये ।O [१५
पू२९] सश्रेणीनिगमं सर्वं नगरं संकुलीकृतम् ॥ २७ ॥ [N
उ२९] आतुरं वृद्धबालं च वर्जयित्वा पुरे जनम् । [N
पू३०] समाहिता वेदविदो ब्राह्मणाः श्रुतसंगताः ॥ २९ ॥ [१६
उ३०] गोरथैर्भरतं यान्तमनुजग्मुः सहस्रशः । [१६
पू३१] सुवेशाः शुद्धवसनाः सन्तो मृष्टानुलेपनाः ॥ २९ ॥ [१७
उ३१] सर्वे ते विविधैर्यान्तं यानै भरतमन्वयुः । [१७
पू३२] हृष्टा प्रमुदिता सेना साऽन्वयात् कैकयीसुतम्[15] ॥ ३० ॥ [१८
उ३२] शास्त्रदृष्टेन मार्गेण तथाऽन्यैर्द्विजसत्तमैः ।
उ३४] अतिप्लुत् सा तदा सेना गङ्गामासाद्य वै नदीम् ॥ ३१ ॥ [२१
निरीक्ष्य च स्थितां सेनां गङ्गां चैव बहूदकाम् ।
३५] भरतः सचिवान् सर्वानब्रवीद्वाक्यकोविदः ॥ ३२ ॥ [२२
निवेशयत मे सेनामाभिमायेण सर्वशः ।
३६] विश्रान्ताः सन्तरिष्यामो गङ्गामेतां महानदीम् ॥ ३३ ॥ [२३

O ब । 11 कै, म—भूतग्राहा० । 12ब—भल्लकारा. । 13 ल-खड्ग० । 14 ब—चाश्चित्रकृतस्तथा । Oम । 15 ब—कैकयी० ।

अस्यां तु तावदिच्छामि स्वर्गतस्य महीपतेः ।
१७] ऊर्ध्वदेहनिमित्तार्थमहं दातु जलाञ्जलिम् ॥ ३४ ॥ [२४
तस्यैवं ब्रुवतोऽमात्यास्तथेत्युक्त्वा समाहिताः ।
१८] न्यवेशयन्तश्छन्देन स्वेन स्वेन पृथक् पृथक् ॥ ३५ ॥ [२५
निवेश्य गङ्गामनु तां महाचमूम्
यथाभिधानं परिबर्हशोभिताम् ।
उवास वासं भरतो महामना
१९] विचिन्तयन् रामनिवर्त्तनं च ॥ ३६ ॥ [२६

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतानुयानं
नाम सर्गः ॥ [९४] ॥



[वं—९१]=[पञ्चनवतितमः सर्गः]=[दा—८४]

ततो निविष्टां ध्वजिनीं गङ्गामासाद्य तां नदीम् ।
१] निषादराजो दृष्ट्वैव ज्ञातीन् स्वानिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
इयं सेना सुमहती समन्तात् परिदृश्यते ।
२] अन्तमस्या न पश्यामि विस्तृतायाः समन्ततः ॥ २ ॥ [२
इक्ष्वाकूणामियं सेना संशयो नात्र कश्चन ।
३] एष सन्दृश्यते दूरात्कोविदारध्वजो रथः ॥ ३ ॥ [३
ग्रहीष्यते हस्तिनः किं मृगयां नु चरिष्यति । [पू४
४] हनिष्यति न खल्वस्मान् सैन्यमेतदमानुषम् ॥ ४ ॥ [N
अथो दाशरथिं रामं पित्रा प्रव्राजितं वनम् । [४उ
५] सामात्यो राज्यलोभेन भरतो हन्तुमुद्यतः ॥ ५ ॥ [५उ
समर्था राज्यलक्ष्मीर्हि सुश्लिष्टं भ्रातृसौहृदम् ।
६] क्षणेन विच्यावयितुं[1] सर्वथाऽस्मि विशङ्कितः ॥ ६ ॥ [N
मम दाशरथी रामो भर्त्ता बन्धुः सखा गुरुः ।
७] अहं तस्य हितार्थाय गङ्गामन्वाश्रितो नदीम् ॥ ७ ॥ [६
संमन्त्रयामि[2] यद्युक्तं मन्त्रज्ञै[3] र्मन्त्रिभिः सह ।
८] मन्त्रयित्वाऽब्रवीत् सर्वान् वचो वनचरांस्तथा[4] ॥ ८ ॥ [६
सुसन्नद्धाः सुधनुषः[5] सर्व एव समाहिताः ।
९] व्यूह्य सेनां नदीं व्याप्य मम तिष्ठत शासनात् ॥ ९ ॥ [N
नौकाशतानां पञ्चानामेकैकस्य शतं शतम् ।
१०] सन्नद्धानां तथा यूनां तिष्ठन्त्वृद्यतधन्विनाम् ॥ १० ॥ [८
यदि यास्यति सन्दुष्टो रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।

---

1 कै—विद्यावयितुं । 2 कै—ममंत्रयामि [य] पु० । ब, म—स मंत्रयामि० । 3 ब—मंत्रज्ञो । 4 य, म—०स्तदा । 5 ब—सधनुषः ।

नेयं स्वस्तिमती सेना गङ्गामद्य[6] तरिष्यति[6] ॥११॥ [९
रामावमाननकृतं क्रोधमद्य हृदिस्थितम् ।
१२] सेनाग्राते विमोक्ष्यामि निर्मोकं पन्नगो यथा ॥ १२ ॥ [N
रामं वने वासयता कैकेयीवशगेन यत् ।
१३] कृतं पापं नरेन्द्रेण तत् प्रमोक्ष्यामि संयुगे ॥ १३ ॥ [N
अद्य मे शरसङ्घाता मत्कार्मुकपरिच्युताः ।
१४] निपतिष्यन्ति गात्रेषु नराश्वरथदन्तिनाम् ॥ १४ ॥ [N
वाजिनां च सिताङ्गानां क्रुद्धस्य मम सायकाः ।
१५] अद्य भित्त्वा प्रवेक्ष्यन्ति शरीराणि मयेरिताः ॥ १५ ॥ [N
हतयोधां हतरथां विध्वस्तगजसादिनीम् ।
१६] सेनामद्य करिष्यामि क्रव्यादा(द?)खगभोजनं[नाम्]१६॥ [N
निविष्टा यत्र सैनेषा सवाजिरथकुञ्जरा ।O
१७] तत्रO भूमिंO करिष्यामिO शरैः शोणितकर्दमाम् ॥१७॥ [N
अथाहं तोषयिष्यामि गृध्रगोमायुवायसान् ।
१८] सैनिकानां समस्तानां रुधिरैः क्षतजाशिनः ॥ १८ ॥ [N
अद्य कर्म करिष्यामि रामस्यार्थे सुदुष्करम् ।
१९] स्वप्स्ये वाऽहं विनिहितः कथाशेषः किल क्षितौ ॥ १९ ॥ [N
निवारयिष्यामि हि वाहिनीमिमां
वनं व्रजन्तीं बहुवाजिकुञ्जराम् ।
गुणैर्गृहीतो बहुभिर्महात्मनः
२०] प्रियस्य रामस्य हितं चिकीर्षुः ॥ २० ॥ [N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहकोपो नाम सर्गः ॥ [९५] ॥

---

६ प—गंगामुपत तिष्ठति । ७ प, म—चासितांगानां ।O कै, म, ल ।

[वं—९२]=[षण्णवतितमः सर्गः]=[दा—८४, ८५]

अथोपायनमादाय मत्स्यान्[1] मांस[1] मधूनि च ।
१] अभिचक्राम भरतं निषादाधिपतिर्[2] गुहः ॥ १ ॥ [१०
तमायान्तमभिप्रेक्ष्य सूतपुत्रः प्रतापवान् ।
२] भरतायाचचक्षे च विनयज्ञो विनीतवत् ॥ २ ॥ [११
वृतो ज्ञातिसहस्रेण गुहस्त्वां प्रत्युपस्थितः ।
३] कुशलो दण्डकारण्ये वृद्धो भ्रातुश्च ते सखा ॥ ३ ॥ [१२
तस्मादसौ पश्यतु त्वां त्वरतीत्यर्थमुपागतः ।
४] असंशयमयं वेत्ति यत्र तौ रामलक्ष्मणौ ॥ ४ ॥ [१३
एतत्तु वचनं श्रुत्वा सुमन्त्राद् भरतस्तदा ।
५] उवाच सारथिं श्रीमान् गुहः पश्यतु मामिति ॥ ५ ॥ [१४
लब्धाभ्यनुज्ञः संहृष्टो ज्ञातिभिः परिवारितः ।
६] आगम्य भरतं प्रह्वो गुहो वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥ [१५
निष्कण्टकश्च देशोऽयमसङ्कीर्णश्च राघव ।
७] इदं च ते दासगृहं स्वके दासगृहे वस ॥ ७ ॥ [१६
अस्ति मूलफलं चेह निषादैः[3] समुपार्जितम्[3] ।
८] आर्द्रं मांसं च शुष्कं च भक्ष्यं चोच्चावचं बहु ॥ ८ ॥ [१७
आशंसे त्वां[4] जितामित्र सौहार्दादहमीदृशम्[5] ।
९] अर्चितो विविधैः कामैः श्वः प्रभाते गमिष्यसि ॥ ९ ॥ [१८
एवमुक्तस्तु भरतो निषादाधिपतिं गुहम् ।
१०] प्रत्युवाच महाप्राज्ञो वाक्यं हेत्वर्थसंहितम् ॥ १० ॥ [८५ । १
सर्वे खलु कृता कामास्त्वया मम गुरोः सखे ।

---

1 ल—मत्स्यानास । ष—मत्स्यां मास—। 2 फै म—निषदाधिपतिर् । 3 ष—निषादसमुपार्जितं । 4 फै—हा । 'त्वा इति पार्श्वे लिखितम् । ष—त्वां । म—ता । 5 फै—मोदात्मादह० ।

११] यो मे त्वमीदृशीं सेनामभ्यर्चयितुमिच्छसि ॥ ११ ॥ [८९ । २
इत्युक्त्वा[6] स महातेजा गुहं[7] वचनमीदृशम् ।
१२] अब्रवीद् भरतः श्रीमान् निषादाधिपतिं पुनः ॥१२॥ [८९।३
कतरेण गमिष्यामो भारद्वाजाश्रमं गुह ।
१३] गहनोऽयं भृशं देशो गजानीको दुरत्ययः ॥ १३ ॥ [८९ । ४
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।
१४] अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं गुहो गहनगोचरः ॥ १४ ॥ [८९।५
दासास्त्वाऽनुगमिष्यन्ति धन्विनः सुसमाहिताः ।
१५] अहं[8] चानुगमिष्यामि राजपुत्र महाबल ॥ १५ ॥ [८९ । ६
कच्चिन्न दुष्टो व्रजसि रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।
१६] अतिभीमा हि सेनेयं शङ्कां जनयतीव मे ॥ १६ ॥ [८९ । ७
तमेवमभिजल्पन्तमाकाशसमनिर्मलः ।
१७] भरतः श्लक्ष्णया वाचा गुहं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ [८९।८
मा भूत् स कालो धिक्कष्टं न मां शङ्कितुमर्हसि ।
१८] राघवार्थं स हि भ्राता[9] ज्येष्ठः पितृसमो मम ॥१८॥ [८९।९
उपावर्त्तयितुं यामि काकुत्स्थं वनवासिनम् ।
१९] बुद्धिरन्या न ते कार्या सत्यमेतद्ब्रवीम्यहम् ॥ १९ ॥[८९।१०
स तु प्रहृष्टवदनः श्रुत्वा भरतभाषितम् ।
२०] पुनरेवाब्रवीद्वाक्यं भरतं प्रतिहर्षणम् ॥ २० ॥ [८९ । ११
धन्यस्त्वं न त्वया तुल्यं पश्यामि जगतीतले ।
२१] अयत्नादागतं राज्यं यस्त्वं त्यक्तुमिहेच्छसि ॥२१॥ [८९।१२
शाश्वती खलु ते कीर्त्तिर्लोकाननु भविष्यति ।
२२] यस्त्वं कृच्छ्रगतं रामं प्रत्यानयितुमिच्छसि ॥२२॥ [८९।१३

---

6 म—इत्युक्त्वा । ध—इत्युक्त । 7 ध, म—गुहो । 8 कै—अयं ।
9 कै—भाग्य । म—भ्राता ।

एवं संभाषमाणस्य गुहस्य भरतेन तु ।
२३] वभौ नष्टप्रभः सूर्यो रजनी चाप्यवर्तत[10] ॥२३॥ [८५।१४
सन्निवेश्य ततः सेनां गुहेन परिसान्त्वितः ।
२४] शत्रुघ्नेन सह श्रीमान् शयनं विवशोऽगमत् ॥२४॥ [८५।१५
तत्र चिन्तापरीतः सन् न निद्रामभ्यपद्यत ।
२५] रामप्रसादमाकांक्षंस्ततस्तद्धद्दु चिन्तयन् ॥२५॥ [८५।N
अन्तर्दाहेन घोरेण दह्यमानोऽनिशं तदा ।
२६] दावाग्निपरिसन्तप्तो[11] महानाग इव श्वसन् ॥२६॥ [८५।१७
सुस्राव सर्वगात्रेभ्यः स्वेदं शोकाग्निसम्भवम् ।
२७] हिमवानिव शैलेन्द्रो बहुधातुपरिस्रवः ॥२७॥ [८५।१८
चिन्ताविस्तारमूलेन विनिःश्वसितसानुना ।
N] दैन्यपादपसङ्घेन दुःखशृङ्गोच्छ्रूपेन[12] च ॥२८॥ [८५।१९
निःश्वासायासधूमेन शोकासुस्रवनेन[13] च ।
N] अन्तः सन्तापवशेन हीनसत्त्वोचितेन च ॥२९॥ [८५।N
मोहसन्तापदुर्गेण[14] कैकेयीवाग्दवाग्निना ।
N] आक्रान्तो दुःखशैलेन भरतः कैकयीसुतः[15] ॥३०॥ [८५।२०
गुहेन साधं स समागतस्तदा
महानुभावो भरतः प्रतापवान् ।
सुदुःखितं तं पुनरब्रवीत् तदा
२८] गुहः समभ्यागतधर्मवत्सलः ॥३१॥ [८५।२१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहसमागमो नाम सर्गः ॥ [९६] ॥

---

१० कै, म—चास्य वर्तत । ल—चाव्यवर्तत । ११ कै—दया० । १२ ब—०येण । १३ ब—०स्रूवणेन । १४ कै—वर्णेन । १५ कै, च, म—केकयी० ।

[बं—९७]=[सप्तनवतितमः सर्गः]=[दा—N]

स तु वाष्पसमाविष्टो गुहो ज्ञातिगणैर्वृतः ।
१] भरत वाक्यकुशलो बद्धाञ्जलिरभाषत ॥ १ ॥
इक्ष्वाकुवंशसदृश व्याहृत भरत त्वया[1] ।
२] अनुरूप गुणानां च श्रुतस्य यशसस्तथा ॥ २ ॥
यस्य त्व वृत्तसपन्नो गुणज्ञो बन्धुरीदृशः ।
३] धन्यश्चासौ मम सखा राघवः प्रियबान्धव. ॥ ३ ॥
यस्त्व लब्धां श्रिय त्यक्त्वा निर्गुणामिव योषितम् ।
४] वनादुपावर्त्तयितु यासि भ्रातरमग्रजम् ॥ ४ ॥
इद सुदुर्लभ लोके यादृश ते च सौहृदम् ।
५] राघव प्रति धर्मज्ञ यत्र सत्य प्रतिष्ठितम् ॥ ५ ॥
यः पितुर्वचन कुर्वन् जनन्याश्च[2] तव प्रभो ।
६] सहभार्यः[3] सह भ्रात्रा प्रविष्टो निर्जनं वनम् ॥ ६ ॥
एवमुक्तस्तु भरतो राजपुत्रो गुहेन स. ।
७] प्रत्युवाच गुह धीमान् सान्त्वपूर्वमिद वच' ॥ ७ ॥
अनेनैव विधानेन स्निग्धेन च हितेन च ।
८] पूजितश्चार्चितश्चास्मि परितुष्टश्च ते गुह ॥ ८ ॥
किंचित्तु श्रोतुमिच्छामि वक्तव्य खलु नानृतम् ।
१०] कस्मिन्देशे वन गच्छन्नुषितो मम बान्धवः ॥
सुखानामुचितो नित्यमसुखानामकोविद ।
११] रामो राजीवपत्राक्षो मैथिल्या सह सीतया ॥ १० ॥
भ्रातृस्नेहादनुगत पृष्ठतो य स[4] राघवम्[4] ।
१२] सौमित्रि र्लक्ष्मणो नाम कच्चित् स परिरक्षवान् ॥ ११ ॥

---

1 कै—भरतर्षभ । 2 कै—जनन्यां च । 3 कै म—सहभार्या-। स—सहपत्न्या । 4 कै—सराघवम् (?) ।

क्व रामः शयितो रात्रौ क्व स्थितः क्व विलंबितः ।
१३] सीतया सह धर्मात्मा कुत्र चाऽऽसीन्नरर्षभः ॥ १२ ॥
किं चान्नं कृतवान् वीरः किं चासीत्तस्य भोजनम् ।
१४] मत्पूर्वः स्वापितः कस्मिन्देशे क्षितिधरोपमः ॥ १३ ॥
अस्मिन् किलेङ्गुदीवृक्षे भ्राता मे सह सीतया ।
१५] सुप्तवान् रजनीमेकां शरीरेण न चक्षुषा ॥ १४ ॥
तथा कमलपत्राक्षो धनुष्पाणिः[5] सलक्ष्मणः[5] ।
१६] तां निशां जागरितवान् समूतः सहसारथिः ॥ १५ ॥
एतदाचक्ष्व मे सर्वं यथावत् परिपृच्छतः ।
१७] तस्य देव प्रभावस्य राघवस्य विचेष्टितम् ॥ १६ ॥
एतत्तु वचनं श्रुत्वा भरतस्य महात्मनः ।
१८] अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं गुहो गहनगोचरः ॥ १७ ॥ [८६।१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतवाक्यं[6] नाम[6] सर्गः ॥ [९७] ॥

---

5 कै—०ष्पाणि॰ च लक्ष्मणः । 6 कै, ल—नास्ति ।

[वं—९४]=[अष्टनवतितमः सर्गः]=[दा—८६]

शक्रचापनिभं चापं प्रगृह्य स महाभुजः ।
२] जजागार स्वयं रात्रिं लक्ष्मणो भ्रातृवत्सलः ॥१॥ [N
त जाग्रतमदंभेन वरचापेषुधारिणम् ।
३] भ्रातृगुप्त्यर्थमत्यर्थमहं लक्ष्मणमब्रुवम्[1] ॥२॥ [२
इयं तात सुखा शय्या त्वदर्थमुपकल्पिता ।
४] पर्याश्वसिहि सो [सौ]म्यास्यां सुखं राघवनन्दन ॥३॥ [३
उचितोऽयं जनः सर्वः क्लेशानां त्वं सुखोचितः ।
५] गुप्त्यर्थं जागरिष्यामि रामस्य सह सीतया ॥४॥ [४
न च रामात् प्रियतरो ममास्ति भुवि कश्चन ।
६] सो [मो] ? त्सुको भूद् [द् ?] ब्रवीम्येतदहं सत्यं तवाग्रतः॥५॥[५
अस्य प्रसादादाशंसे लोकेऽस्मिन् सुमहद्यशः ।
७] धर्मावाप्तिं च बहुलामर्थकामौ न केवलौ ॥६॥ [६
सोऽहं प्रियसखं रामं शयानं सह सीतया ।
८] रक्षिष्यामि धनुष्पाणिः सर्वैः स्वज्ञातिभिर्वृतः ॥७॥ [७
न हि मेऽविदितं किञ्चिद्वनेऽस्मिंश्चरतः सदा ।
९] चतुरङ्गं ह्यपि बलं सुमहत्प्रसहाम्यहम् ॥८॥ [८
एवमस्माभिरुक्तेन लक्ष्मणेन महात्मना ।
१०] अनुनीता वयं सर्वे धर्ममेवानुपश्यता ॥९॥ [९
कथं दाशरथौ भूमौ शयाने सह सीतया ।
११] शक्या निद्रा मया लब्धुं जीवितं च सुखानि च ॥१०॥ [१०
यो न देवासुरैः शक्यः सोढुं युधि समागतैः ।
१२] तं पश्य गुह संविष्टं तृणेषु सह सीतया ॥११॥ [११

---

1 ल-लक्ष्मणमब्रवीत् । कै-लक्ष्मणमब्रुवन् । म-लक्ष्मणमब्रवीम् ।

महता तपसा लब्धो विविधैश्च क्रियाफलैः ।
१३] एको दशरथस्यैष पुत्रः सदृशलक्ष्मणः[2] ॥१२॥ [१२
अस्मिन् प्रव्राजिते राजा न चिरं वर्तयिष्यति ।
१४] विधवा मेदिनी नूनं क्षिप्रमेषा भविष्यति ॥१३॥ [१३
विनद्य सुमहानादं श्रमेण च युताः स्त्रियः । [१४पू
N] मृतकल्पा भविष्यन्ति निद्रया परिमोहिताः ॥१४॥ [N
निर्घोषनिनदो[3] नूनमद्य राजनिवेशने । [१४उ
N] भविष्यति महाघोरो[4] रामे प्रव्राजिते[5] वनम् ॥१५॥ [N
N] निर्घोषनिनदं श्रुत्वा चाद्य राजनिवेशने । [N
पू१६] कौसल्या चैव राजा च तथैव जननी मम ॥ १६ ॥ [१५पू
उ१६] नाशंसे यदि ते सर्वे जीवेयुः शर्वरीमिमाम् । [१५उ
पू१७] जीवेदपि हि मे माता शत्रुघ्नस्यान्ववेक्षया ॥ १७ ॥ [१६पू
उ१७] एतद्दुःखात्तु कौसल्या वीरसूर्विनशिष्यति । [१६उ
N] अनुरक्तजनाकीर्णा सुखदुःखासहा सदा ॥ १८ ॥ [N
N] राजधानी कुलस्यास्य साऽद्य नूनं विनंक्ष्यति[6] । [N
N] अतिक्रामादति[7] क्रान्तमनवाप्य[7] मनोरथम् ॥ १९॥ [१७पू
N] रामे राज्यमनिक्षिप्य पिता मे विनशिष्यति । [१७उ
पू१८] सिद्धार्थः पितरं वृद्धं तस्मिन् काले विशेषतः ॥ २०॥ [१८पू
उ१८] प्रेतकार्येषु सर्वेषु संस्मारिष्यति राघवः । [१८उ
पू१९] रम्यचत्वरसंस्थानां[8] सुविभक्तमहापथाम्[9] ॥ २१ ॥ [१९पू
उ१९] हर्म्यप्रासादसंपन्नां तूर्यनादविनादिताम्[10] । [१९उ

---

२ ग, घ—०लक्षण. । 3 ग—०ननदे । 4 कै, म—०घोरे । 5 घ, म—प्रव्रा० । 6 कै, ल—विनश्यति । म—विनदयति । 7 कै, ल—अतिक्रामादतिक्रांत० । 8 घ, म—०संस्थानं । 9 घ, म— ०पथं । 10 कै—तुर्यनाद० ।

पु२०] रथाश्वगजसम्बाधां सर्वरत्नोपशोभिताम् ॥ २२ ॥ [२०पू
उ२०] सर्वकल्याणसम्पन्ना तुष्टपुष्टजनायुताम् । [२०उ
पु२१] आरामोद्यानसङ्कीर्णां समाजोत्सवशालिनीम् ॥ २३॥ [२१पू
उ२१] सुखिनो विचरिष्यन्ति राजधानीं पितुर्मम । [२१उ
पु२२] अपि सत्यप्रतिज्ञेन सार्धं कुशलिनो वयम् ॥ २४ ॥ [२२पू
उ२२] निवृत्ते समये तस्मिन्नयोध्यां प्रविशेम हि । [२२उ
पु२३] परिदेवयमानस्य तस्यैवं सुमहात्मनः ॥ २५ ॥ [२३ पू
उ२३] तिष्ठतो राजपुत्रस्य सा व्यतीयाय शर्वरी । [२३उ
पु२४] प्रभातेऽभ्युदिते सूर्ये कारयित्वा जटास्ततः ॥२६॥ [२४पू
उ२४] अस्मिन् भागीरथीतीरे सुखं सन्तारितौ[11] मया॥२७॥ [२४उ

जटाधरौ तौ कुशचीरवाससौ
महाबलौ कुञ्जरयूथपोपमौ ।
वरेषु चापासिधरौ परन्तपौ
२५] प्रजग्मतुस्तौ सह सीतया ततः ॥ २८ ॥ [२५

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे गुहवाक्यं नाम सर्गः ॥ [९८] ॥

---

11 कै—सन्तारिता ।

[वं—९९]=[नवनवतितमः सर्गः]=[दा—८७]

गुहस्य वचनं श्रुत्वा भरतो भृशमप्रियम् ।
१] जगाम मोहं तत्रैव यत्र तच्छ्रुतवान् वचः ॥१॥ [१
स विह्वलितसर्वाङ्गो विवृत्तविपुलेक्षणः ।
२] पपात[1] सहसा भूमौ कूलभ्रष्ट[1] इव द्रुमः ॥२॥ [३
सुकुमारो महासत्त्वः सिंहस्कन्धो महाभुजः ।
३] पुण्डरीकविशालाक्षस्तरुणः प्रियदर्शन ॥३॥ [२
भरत मोहितं दृष्ट्वा विवर्णवदनो गुहः ।
४] बभूव व्यथितस्तत्र भूमिकंपादिव द्रुमः ॥४॥ [४
ततः सर्वा समापेतुर्मातरो भरतस्य ताः ।
६] उपवासात्[2] कृशा[2] दीना भर्तृव्यसनकर्षिताः ॥५॥ [६
तास्तां निपतितं दृष्ट्वा भूमौ सुप्त प्रिय सुतम् ।
७] सम्भ्रान्तहृदयास्तत्र रुदन्त्यः पर्यवारयन्[3] ॥६॥ [७
कौसल्या त्वभिसृत्यैन व्यथित स्नेहविक्लवा । [८पू
८] संस्पृश्याश्वासयामास सुखस्पर्शेन पाणिना ॥७॥ [N
उ९] पप्रच्छ चैव रुदती भरतं शोककर्षिता [८उ
कच्चिद्व्याधिर्न[4] ते पुत्र शरीरं संप्रबाधते ।
१०] अस्य राजकुलस्याद्य त्वदधीनं हि जीवितम् ॥८॥ [९
त्वां दृष्ट्वा पुत्र जीवामि रामे सभ्रातृके गते ।
११] त्वमिदानीं कुले नाथो मृते दशरथे नृपे ॥९॥ [१०
कच्चिन्न लक्ष्मणात् पुत्राच्छ्रुत[5] ते किञ्चिदप्रियम् ।

---

१ कै ख—कुल० । म—पुलद्रष्ट० । २ ख—उपवासदृशा । ३ कै, ल—परिवारयन् । 4 कै—चाचिद्व्याधिर्न्न । म—काश्चिद्व्याध्या न । ५ म—पुत्र ' च्छ्रुतं ।

१२] पुत्राद्भाप्येकपुत्रायाः सहभार्याद्वनाश्रयात् ॥१०॥ [११
एवमुक्त्वा जलक्लिन्नैर्वस्त्रैराश्वासयत्तदा ।
१३] कौसल्या भरतं दीनमिष्टं पुत्रमिवात्मजम् ॥११॥ [N
स मुहूर्तात् समुत्तस्थौO रुदन्नेवO महायशाःO ।
१४] कौसल्यां प्रतिपूज्याथ गुहं वचनमब्रवीत् ॥O१२॥ [१२
गुहO पृच्छामि भूयस्त्वां वक्तव्यं खलु नानृतम् ।
१५] राघवः सह वैदेह्या तदा किमुपभुक्तवान्[6] ॥१३॥ [१३
लक्ष्मणो वा महातेजाः कुललक्ष्मीविवर्धनः ।
१६] अनियुक्तोऽनुयातो वा वनवासाय राघवम् ॥१४॥ [N
सोऽब्रवीद् भरतं पृष्टो निषादाधिपतिर्गुहः ।
१७] श्रूयतामिति वाक्यज्ञो गृहीत्वा बाष्पमाहृतम्[7] ॥१५॥ [१४
अन्नमुच्चावचं भक्ष्यं लेह्यं चोष्यं[8] तथैव च ।
१८] रामायाभ्यवहारार्थं बहुशो दर्शितं मया ॥१६॥ [१५
तद्गीत्वा च मयाऽऽनीतं प्रणयेन च राघवः ।
१९] सर्वं न प्रतिजग्राह[9] क्षात्रं धर्ममनुस्मरन् ॥१७॥ [१६
आह च स्म स धर्मात्मा चलितं माममधोमुखम् ।
२०] अस्माभिर्न प्रतिग्राह्यं देयमेव तु सर्वशः ॥१८॥ [१७
चापं चोद्यम्य[10] योद्धव्यमेतद् क्षत्रभृता[11] व्रतम् । [N
२१] लक्ष्मणेनाहृतं वारि स्वयमेव महात्मना ॥१९॥ [१८पू
तेनोपवासं काकुत्स्थश्चचार सह सीतया । [१८उ
२२] ततस्तु जलशेषेण लक्ष्मणोऽप्यकरोत्तदा ॥२०॥ [१९पू

Oम । ६ म—०मुपयु० । ७ कै, ल—०माहृतम् । ८ ल—चोष्य । कै—चोव । ९ कै—ग्राह्यं तम । १० कै—चाभ्यद्य । ल—चोद्यस्य । ११ थ-क्षात्र० । म-क्षेत्र० ।

उपवास स्थितस्यैव तस्य सन्ध्याऽभ्यवर्तत ।
२३] ततस्त्वसौ यथान्याय रामो धर्मभृतां वरः ॥२१॥ [N
पु२४] उपास्य सन्ध्यां तत्रैव वाग्यतः सुसमाहितः[12] । [१९ उ
उ२५] अस्मिन्नुपाविशद्रामः संस्तरे सह सीतया ॥२२॥ [२१ पू
प्रक्षाल्य च ततः पादावपचक्राम[13] लक्ष्मणः । [२१ उ
एतत्तदिङ्गुदीमूलमेतदेव[14] च तत्तृणम् ॥२३॥ [२२ पू
यस्मिन् रामश्च सीता च तां रात्रिं शायितावुभौ । [२२ उ
नियम्य पृष्ठे तु तलाङ्गुलित्रवान्
महेषुपूर्णाविषुधी परन्तपः ।
धनुश्च सज्यं परिगृह्य लक्ष्मणो
२७] निशामतिष्ठत् परिपालयंस्तदा ॥२४॥ [२३

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे गुहवाक्यं
नाम सर्गः॥ [९९][15] ॥

---

१२ कै-ससमाहित । १३ म ध, ल—०मुपचक्राम । १४ कै, ल ०गुलीमूल० । १५ कै, ल, म—नास्ति । ध—८७ ।

[चं—९९]=[शततमः सर्गः]=[दा—८८]

श्रुत्वा तु निपुणं सर्वं भरतः सह मन्त्रिभिः ।
१] इङ्गुदीमूलमागम्य भ्रातुः शय्यामवैक्षत ॥ १ ॥ [१
वीक्षमाणश्च तां शय्यां क्रमेण तृणसभृताम्[1] ।
२] बभूव भरतो दुःखी बाष्पव्याकुललोचनः ॥ २ ॥ [N वि
जननीश्चाब्रवीत सर्वास्तेनेह सुमहात्मना ।
३] शर्वरी गमिता भूमाविद विपरिवर्चितम् ॥ ३ ॥ [२
महात्मना कुलीनेन राजराजेन धीमता ।
४] कथं दशरथेनाद्य जातो[2] भूमौ महासत्वान् ॥ ४ ॥ [३
अजिनोत्तरसंस्तीर्णे वरास्तरणसभृते[3] ।
५] शयित्वा पुरुषव्याघ्रः कथं शेते स्म भूतले ॥ ५ ॥ [४
पुष्पसञ्चयाचित्रेषु चन्दनागुरुगन्धिषु ।
६] पाण्डुराभ्रप्रकाशेषु कोकिलाभिरुतेषु च ॥ ६ ॥ [६
प्रासादाग्रविमानेषु उषित्वा तेषु सर्वशः ।
७] हैमराजतभौमेषु सुप्त्वा[4] भूमौ महासत्वान् ॥ ७ ॥ [७
गीतवादित्रनिर्घोषैर्वराभरणनिःस्वनैः[5] ।
८] मृदङ्गशङ्खशब्दैश्च सतत प्रतिबोधितः ॥ ८ ॥ [८
वन्दिभिर्बोधिभिः[6] काले बहुभिः सूतमागधैः ।
९] कथाभिरनुकूलाभिः स्तुतिभिश्च समन्ततः ॥ ९ ॥ [९
सर्वश्रेष्ठे कुले जातः सर्वलोकनमस्कृत ।
१०] सर्वलोकप्रियां त्यक्त्वा राजाश्रियमनुत्तमाम् ॥ १० ॥ [१८

---

1 ब—०मस्तृतं । म—०सम्भूतम् । ल—०संभृतम् । 2 के, म—जातो । ब—जाता । 3 ब—०स्तरष्टुते । म—०स्तरहृते । 4 ब—सुप्तो । म—सुप्ता । 5 के—षरा० । 6 ब—बोधित. ।

कथमिन्दीवरश्यामो रक्ताक्षः प्रियदर्शनः ।
११] व्यूढोरस्को महाबाहुः सुप्तवान् भुवि तादृशः ॥ ११ ॥ [१९
अश्रद्धेयमिदं लोके न सम्यक् प्रतिभाति मे ।
१२] मुह्यते खलु मे भावः स्वप्नोऽयामिति मे मतिः ॥ १२ ॥ [१०
नूनं न पौरुषं किञ्चिद्दैवं हि बलवत्तरम् ।
१३] यत्र दाशरथी रामो भूमावेवमशेत ह ॥ १३ ॥ [११
तृणशय्या मम भ्रातुरिदं विपरिवर्तितम् ।
१४] स्थण्डिले कथयत्येतद् रात्रौ विमृदितं तृणम् ॥ १४ ॥ [१३
विदेहराजस्य सुता वैदेही प्रियदर्शना ।
१५] दयिता शयिता भूमौ स्नुषा दशरथस्य च ॥ १५ ॥ [N
मन्ये साभरणा सुप्ता यथा स्वभवने पुरा ।
१६] तत्र तत्र हि दृश्यन्ते शीर्णाः कनकबिन्दवः ॥ O१६ ॥ [१४
मन्ये भर्तुः सुखछाया यत्र सीता तपस्विनी ।
१७] सुकुमारा सती दुःखं नैव जानाति मैथिली ॥ १७ ॥ [१६
उत्तरीयमिहासक्तं मन्ये तन्तुतरं तया ।
१८] यथा ह्येते प्रकाशन्ते सुक्ताः कनकतंतवः ॥ १८ ॥ [१५
सिद्धार्था खलु वैदेही पतिं यानुगता वनम् ।
१९] वयं संशयिताः सर्वे विना तेन महात्मना ॥ १९ ॥ [२१
अकर्णधारेव हि नौः पृथिवी प्रतिभाति मे ।
२०] गते दशरथे स्वर्गं रामे चारण्यमाश्रिते ॥ २० ॥ [२२
न च प्रार्थयते कश्चिन्मनसाऽपि वसुन्धराम् ।
२१] वनेऽपि वसतस्तस्य बाहुवीर्याभिपालिताम् ॥ २१ ॥ [२३
शून्यामशरणामेतामाचिन्तितहयाद्विपाम् ।
२२] अपावृतपुरद्वारां राजधानीं पितुर्मम ॥ २२ ॥ [२४

O म ।

अप्रतिष्ठां परिधूनां विषमस्थामनावृताम् ।
२३] शात्रवा[7] नाभिद्रक्ष्यन्ते[8] भक्ष्यान्विषयुतानिव[9] ॥२३॥ [२४
अद्यप्रभृति भूमौ हि स्वप्स्यामि कुशसंस्तरे ।
२४] फलमूलाशनो नित्य जटाचीराजिनाम्बरः ॥२४॥ [२६
इम कालान्तरं तस्य कृते वत्स्याम्यहं वने ।
२५] तत्प्रतिश्रुतमार्यस्य नैव मिथ्या भविष्यति ॥२५॥ [२७
वसन्तं भ्रातुरर्थे मां शत्रुघ्नोऽप्यनुवत्स्यति ।
N] लक्ष्मणेन सहायोध्यामार्यो मे पालयिष्यति ॥ २६ ॥ [२८
पर्णच्छायां सुख भोक्ष्ये वनेषु निवसन्मुनिः ।
N] राज्यच्छायामयोध्यायामार्यः समुपभोक्ष्यते ॥ २७ ॥ [N
अभिषेक्ष्यामि काकुत्स्थमयोध्यायां यशस्विनम् ।
२६] अपि देवाश्च[10] मे[10] कुर्युरिमं सत्यं मनोरथम् ॥ २८ ॥[२९
प्रसाद्यमानः शिरसा मया स्वयं
बहुप्रकार यदि न प्रपत्स्यते ।
ततो तु[11] वत्स्यामि[12] चिराय राघवम्
२७] वनेचरं नार्हति मामुपेक्षितुम् ॥ २९ ॥ [३०
तत प्रवृत्ता रजनी दिनक्षये
श्रयन्ति नीडानि खगाः कृतालयाः ।
विसर्जितश्चापि गुहः स्वमालय
२८] जगाम दुःखेन सहानुजीविभिः ॥ ३० ॥[N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे इंगुदीमूलवृत्तं[13]-
नाम सर्गः ॥ [१००] ॥

---

7 ध—शत्रुवा । 8 ब, म —०भिपद्यंते । 9 ध—त्रुटितोऽय पाठ । भक्ष्या····· मिव । म—त्रुटित पाठ । भक्ष्यान्वि ·· मिव । 10 ध—मे देवता । म—देवता । 11 कै—न । 12 कै, ल—वत्स्यामि । 13 ध—०मूलवर्तन नाम । ल—वृत्तो नाम ।

[वं—९७]=[एकाधिकशततमः सर्गः]=[दा—८९]

उषित्वा रजनीमेकां गङ्गातीरे महामनाः[1] ।
१] भरतः कल्य[2]उत्थाय शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ किं शेषे शत्रुघ्न रजनी गता । [२पू
२] पद्मबोधं समुद्यन्तं पश्य सूर्यं[3] तमोनुदम् ॥ २ ॥ [N
शीघ्रमानायय गुहं शृङ्गवेरपुरेश्वरम्[4] ।
३] स हि गङ्गामिमां वीर तारयिष्यति वाहिनीम् ॥ ३ ॥ [२उ
शत्रुघ्नस्त्वब्रवीच्छ्रुत्वा भ्रातरं प्रियबान्धवम् ।
४] भरतं सोपचाराणामभिज्ञो[5] वचसां प्रभुः ॥ ४ ॥ [N
शोकशून्येन[6] मनसा त्वयि स्वपति[7] राघव । [N
५] जागर्मि न च सुप्तोऽस्मि तवैवार्थं[8] विचिंतयन् ॥ ५ ॥ [३पू
अपि रामः प्रसादं वः[9] कुर्यात् स पुरुषर्षभः ।
६] प्रसाद्यमानो भवता मया च सह मन्त्रिभिः ॥ ६ ॥ [N
एवमुक्त्वा तु शत्रुघ्नो भरतस्याज्ञया ततः ।
७] अब्रवीत्पुरुषांस्तत्र गुहमानयतेति सः ॥ ७ ॥ [N
इति संभाषमाणस्य शत्रुघ्नस्य महात्मनः ।
८] अभिगम्याञ्जलिं बद्ध्वा गुहो वचनमब्रवीत् ॥ ८ ॥ [४
कच्चित्सुखं नदीतीरे याता काकुत्स्थ शर्वरी ।
९] कच्चित् सर्वस्य सैन्यस्य सर्वतोऽनामयं प्रभो ॥ ९ ॥ [५
अथवा समुदाचारः प्रयुक्तोऽस्य मया तव ।

---

1 ल—महात्मन । 2 घ ल—काल्य । म—कालम् । 3 कै—मूहं । 4 कै—शृगवीरसुरेश्वरम् । घ म—शृगवीर० । ल—शृंगाबर० । 5 कै—मेपचारा० । 6 कै ल—शोकाशून्येन । 7 कै सुपिति । 8 घ म तमेवार्थं । 9 च ल—न ।

१०] कुतो हि सुखशय्या ते स्नेहेन परितप्यतः ॥ १० ॥ [N
भ्रातरं चिन्तयानस्य मृत च जगतीपतिम् ।
११] शारीरमानसैर्दुःखैःस्नेहो ऽपि न निवर्तते ॥ ११ ॥ [N
तथोक्तो भरतो दीनः प्रत्युवाच गुह वचः ।
१२] मानयन् समुदाचार[10] हृदयेन च दुःखितः ॥ १२॥ [N
सुखं नः शर्वरी राजन् पूजिताश्च वय त्वया ।
१३] गङ्गां तु नौभिर्बह्वीभिर्दाशाः[11] सन्तारयन्तु नः ॥१३॥ [७
ततो गुहः सत्वरितः श्रुत्वैवेश्वरशासनम् ।
१४] प्रति प्रविश्य नगरीं स्वज्ञातीनिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥ [८
उत्तिष्ठत प्रबुध्यध्वं ज्ञातयो भद्रमस्तु वः ।
१५] नावः समुपकर्षध्वं तारयिष्याम[मि] वाहिनीम् ॥१५॥ [९
ते तथोक्ता समुत्थाय त्वरिता राजशासनात् ।
१६] नावां शतानि पञ्चैव समन्तात् समुपानयन् ॥ १६ ॥ [१०
काश्चित् स्वस्तिकचिह्नाङ्का O महाघण्टधराः[12] O पराः[1]-O ।
१७] शोभमानाः पताकिन्यो युक्ता नावः सुसम्मताः ॥O१७॥ [११
ततः O स्वस्तिकचिह्नाङ्गां पाण्डुकम्बलसंवृताम् ।
१८] आनन्दघोषां कल्याणीं गुहो नावमुपानयत् ॥ १८ ॥ [१२
तत्रारुरोह भरतः शत्रुघ्नश्च महायशाः ।
१९] कौसल्या च सुमित्रा च याश्चान्या राजयोषितः ॥१९॥ [१३
पुरोहितो ऽभवत्पूर्वं ये चान्ये ब्राह्मणाः पृथक् ।O
२०] अन्तःपुरं राजभृत्यास्तथैव शकटायनाः ॥ २० ॥ [१४
आवासमादीपयतां तीर्थानि च निरासताम् ।

---

10 ब—स सदाचार । 11 ब—दांसा । म, ल—मांषा ।
Oब । 12 बै—महाघंटीधरा पुराः । Oबै, स ।

२१] भाण्डानि च[13] दधानां च[13] घोषस्त्रिदिवमस्पृशत्[14]॥२१॥ [१५
तास्तु संप्रस्थिता नावः शीघ्रैर्दाशैरधिष्ठिताः[15] ।
२२] वहन्त्यस्तं जनं सर्वं पारं[16] जग्मुः समाहिताः ॥२२॥ [१६
नारीणां तारिताः काश्चित् काश्चित्परमवाजिनाम् ।
२३] काश्चिन्नावो वहन्ति स्म यानयुग्य[17] महाबलाः[18] ॥२३॥ [१७
तास्तु गत्वा परं पारमवतार्य च तं जनम् ।
२४] निवृत्ताः कर्णधारैश्च धावन्त्यो विपुलांबुभिः ॥ २४ ॥ [१८
सवैजयन्त्यश्च[19] गजा गजारोहैः प्रचोदिताः ।
२५] आरूढाः स्म प्रकाशन्ते सध्वजा इव पर्वताः ॥ २५ ॥ [१९
नावमारुरुहु: केचित् केचिदारुरुहुः प्लवान् ।
२६] केचिद् गङ्गा[20] घटैस्तेरुः केचित्तेरुः स्वबाहुभिः ॥२६॥ [२०
सा सर्वा ध्वजिनी गङ्गां दाशैः[21] सन्तारिता तदा ।
२७] मैत्रे मुहूर्ते प्रययौ प्रयागवनमुत्तमम् ॥ २७ ॥ [२१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे[22] गङ्गासन्तरणं नाम सर्गः ॥ [१०१] ॥

---

13 ल—च ददानां च । म—चाददानां च । य—चाददानानां ।
4 य—घोरस्त्रि० । 15 य, म ल—०र्दासैर०। 16 कै-परा । 17 य-
ानधुर्यं । ल—यानयुग्य । म—यानयोग्य । 18 कै, म—०बल ।
[illegible] कै—सवैजयतश्च । 20 य, म, ल—कुम्भ-। 21 य, म, ल-दासै. ।
2 कै, य, म ल—अयोध्या० ।

[चं—९८]=[द्व्यधिकशततमः सर्गः]=[दा—N]

सन्तीर्य भरतो गङ्गां ससैन्यः सहमन्त्रिभिः ।
१] पुरोहितस्यानुमते गुहं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
कतमेन तु देशेन गन्तव्यं यत्र राघवः ।
२] गुह मार्गं समाचक्ष्व त्वं सदा वनगोचरः ॥ २ ॥
सो ऽब्रवीद् भरतस्यैवं वचः श्रुत्वा गुहस्तदा ।
३] अभिज्ञस्तस्य देशस्य यस्मिन् वसति राघवः ॥ ३ ॥
इतः प्रयागं काकुत्स्थ गम्यतां वनमुत्तमम् ।
४] नानापक्षिगणाकीर्णमुपेतं सलिलाशयैः ॥ ४ ॥
कमलप्रतिमालाभिः सुतीर्थैरल्पकर्दमैः ।
५] खगपादक्षतैः[1] पूर्णैर्निरुद्धं नीलशैवलैः[2] ॥ ५ ॥
वनं प्रकोशमात्रं च प्रयागस्य नरर्षभ ।
६] तत्रोषित्वा च गन्तव्यं भरद्वाजाश्रमं प्रति ॥ ६ ॥
तत्र गत्वा राजपुत्र मुनिं तमभिवाद्य[3] ।
७] धर्मज्ञं तपसा सिद्धं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥ ७ ॥
तस्य त्वमाशीर्वचनं गिरश्च हृदयङ्गमाः ।
८] श्रुत्वा यास्यसि संहृष्टो द्रष्टुं भ्रातरमग्रजम् ॥ ८ ॥
उषित्वा रजनीं[4] तत्र[4] विप्रैस्तेन पूजितः ।
९] दृष्ट्वा हि मोक्ष्यते न त्वामेकामनुगतो निशाम् ॥ ९ ॥
ब्रुवाणमेव तु गुहं सत्कृत्य भरतस्ततः[5] ।
१०] एवमस्त्विति तं वाक्यं परिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ १० ॥
गच्छ सौम्य निवर्तस्व समस्तै र्ज्ञातिभिः सह ।

---

1 म—०क्षतै । 2 कै—०शैवलै । ल—०शैवलैः । 3 कै—०वाद्ये म—०वाद्ये । 4 कै, म—तत्र रजनीं । 5 व—०स्तदा ।

११] सत्कृतश्चानुयातश्च भृशं प्रीतोऽस्मि ते[6] गुणैः ॥ ११ ॥
भ्रातुर्मे पूजितं सख्य[7] त्वया रामस्य धीमतः ।
१२] अनुरागश्च भक्तिश्च सौहृदं च प्रदर्शितम् ॥ १२ ॥
भरतेनाभ्यनुज्ञातो गुहस्तु ज्ञातिभिः सह ।
१३] ययौ संपूज्य भरतं सोपाध्यायपुरोगमम् ॥ १३ ॥
ततः प्रतिगतो नावं गुहो ज्ञातिसमन्वितः ।
१४] जगाम सेनया सार्द्धं प्रयागं भरतो वनम् ॥ १४ ॥
सुमन्त्रं दैशिकं कृत्वा मन्त्रिणं राघवप्रियम् ।
१५] मन्त्रकर्मणि च प्राज्ञं देशे काले च कोविदम् ॥ १५ ॥
सफलान् पादपान् पश्यन् पुष्पाणि च समन्ततः ।
१६] वन्यद्विजानां च रुतं शृण्वन्[8] श्रोत्रमनोहरम्[8] ॥ १६ ॥
गुणान् रामस्य कथयन् मैथिल्या लक्ष्मणस्य च ।
१७] अगुणांश्चात्मनो मातुः कैकेय्याः समुदाहरन् ॥ १७ ॥
अध्यर्ध योजनं गत्वा ददर्श सुमहद्वनम् ।
१८] प्रयागमिति विख्यातं यथा चैत्ररथं तथा ॥ १८ ॥
तत्प्रविश्याश्रमपदं सर्वकामफलप्रदम्[9] ।
१९] शोभितं पङ्कजवनैः सुतीर्थं बहुपुष्करैः ॥ १९ ॥
अभिगम्य प्रयागं तद्[10] देवस्थानमनुत्तमम् ।
२०] प्रदक्षिणं प्रणामं च चकार भरतस्तदा ॥ २० ॥
ताः सर्वा मातरस्तस्य[11] शत्रुघ्नश्च महामतिः ।
२१] प्रयाताश्चाप्रमत्ताश्च चक्रुस्ते प्रदक्षिणम् ॥ २१ ॥
तेऽभिवाद्य विनिष्क्रम्य वनात्तस्मादनन्तरम् ।

---

6 ध—तैर् । 7 म —साध्यं । 8 कै.—०ण्वंश्चित्तमनो० । 9 ध, म, ल—०फलद्रुमं । 10 म—तं । 11 ध—०तस्याः ।

२२] आश्रमं क्रोशमात्रे तु ददृशुः पिण्डितद्रुमम्[12] ॥ २२ ॥
भरद्वाजसगोत्रस्य[13] महर्षेर्भावितात्मनः ।
२३] आश्रमं भरतो दृष्ट्वा महर्षमतुलं ययौ ॥ २३ ॥

आश्वास्य तां चापि चमूं महात्मा
निवेशयित्वा च यथोपजोषम् ।
द्रष्टुं भरद्वाजमृषिप्रवर्यं[14]
२४] गन्तुं मतिं राजसुतश्चकार ॥ २४ ॥ [८९।२२

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे[15] प्रयागवनगमनं नाम सर्गः ॥ [१०२] ॥



12 म—पीडित०। 13 म—भारद्वाज०। 14 कै—०मृषिवर्यं। पार्श्वे भिन्नमस्यां "सु" इति लिखित्वा ०मृषिसुवर्यं इत्येवं पाठ प्रदर्शितः। 15 कै, य, म, ल—अयो०।

[वं-९९]=[त्र्युत्तरशततमः सर्गः]=[दा—९०]

भरद्वाजाश्रमं गत्वा दूरादेव नरर्षभः ।
१] बलं सर्वमवस्थाप्य जगाम सह मन्त्रिभिः ॥ १ ॥ [१
पद्भ्यामेव स धर्मज्ञो न्यस्तशस्त्रपरिच्छदः ।
२] वसानो वाससी क्षौमे पुरस्कृत्य पुरोहितम् ॥ २ ॥ [२
मूपद्वारं सुसंमृष्टं कदलीवनशोभितम् ।
३] शान्तव्यालमृगाकीर्णं वेदीमण्डलमण्डितम् ॥ ३ ॥ [N
स्वर्गस्य विवृतं[2] द्वारं भ्राजमानं वनश्रिया ।
४] नातिदूरं ततो गत्वा स ददर्श तमाश्रमम् ॥ ४ ॥ [N
तत्प्रविश्याश्रमपदं भरतः सपुरोहितः ।
५] ददर्श परमोदारमृषिं ज्वलनतेजसम् ॥ ५ ॥ [N
ततः सन्दर्शने तस्य भरद्वाजस्य राघवः ।
६] मन्त्रिणस्तत्र विन्यस्य जगाम सपुरोहितः ॥ ६ ॥ [३
ततो वसिष्ठं दृष्ट्वैव भरद्वाजो महातपाः ।
७] सञ्चचालासनात्तस्माच्छिष्यान् पाद्यमिति ब्रुवन् ॥७॥ [४
समागम्य वसिष्ठेन भरतेनाभिवादितः ।
८] अबुध्यत महातेजाः पुत्रौ दशरथस्य तौ ॥ ८ ॥ [५
दत्त्वा च स ऋषिस्ताभ्यामपि मूलफलादिकम् ।
प्पा ९] आनुपूर्व्यात्[3] स धर्मात्मा सर्वांश्चैवानुपायिनः[4] ॥९॥ [६
पप्रच्छ कुशलं चास्य राज्ये कोशे पुरे तथा ।
१०] ज्ञात्वा मृतं दशरथं स राजानं न पृष्टवान् ॥ १० ॥ [७

---

1 य, म, ल—दृष्ट्वा । 2 म—विवृत- । 3 म, य, ल—अनुपू० । ल पुस्तके केनचित् पश्चात् "आनु" इत्येव दृत्तम् । 4 कै—०यात्र यायिन. । म, ल—०यात्रयायिन. ।

वसिष्ठभरतौ चैनं पप्रच्छतुरनामयम् ।
११] शरीरे चाग्निहोत्रे च शिष्येषु मृगपक्षिषु ॥ ११ ॥ [८
तथेति च प्रतिज्ञाय भरद्वाजो महातपाः ।
१२] भरतं प्रत्युवाचेदं राघवापेक्षया मुनिः ॥ १२ ॥ [९
किमागमनकृत्यं ते परित्यज्य नृपश्रियम् ।
१३] एतदाचक्ष्व मे सर्वं न हि तुष्यति[5] मे मनः ॥ १३ ॥ [१०
सुषुवे यममित्रघ्नं कौसल्याऽऽनन्दवर्द्धनम् ।
१४] यो[6]वनं[6] चीरवसनः प्रयातः सह सीतया ॥ १४ ॥ [११
नियुक्तः स्त्रीनियुक्तेन[7] पित्रा यः सत्यवादिना ।
१५] भव त्वं वनवासीति समाः किल चतुर्दश ॥ १५ ॥ [१२
कच्चित्त्वं तस्य[8] रामस्य धार्मिकस्य क्षमावतः ।
१६] निःस्नेहो[9] राज्यलोभेन विकर्त्तुमिहागतः ॥ १६ ॥ [N
तस्यापापस्य पापं त्वं[10] न कञ्चित्कर्तुमर्हसि ।
१७] अकण्टकं भोक्तुमना राज्यं तस्याग्रजस्य च ॥ १७ ॥ [१३
न खल्वपापे पापं ते कार्यं तस्मिन्महात्मनि ।
१८] यदसौ त्वत्कृते[11] पित्रा वनमेव विवासितः ॥ १८ ॥ [N
एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन[12] धीमता ।
१९] विवर्णवदनो भूत्वा प्रत्युवाच कृताञ्जलिः ॥ १९ ॥ [१४
हतोऽस्मि भगवन्नेव यदि मामवगच्छसि ।
२०] मयि ते या विशङ्केयं नाहं तां कर्तुमुत्सहे ॥ २० ॥ [१५
न मे तदिष्टं[13] माता मे यदवोचन्मदन्तरे ।

---

5 ख—शुष्यति । म—श्रुति । 6 ल—युवाम । 7 ल—स्त्रीणि युक्तेन । म—स्त्रीणियुक्तेन । 8 ख—किल । 9 कौ, म, ल—निस्नेहो । 10 कै—नास्ति । 11 ल—त्वद्गते । 12 म—भारद्वाजेन । 13 कौ, ल—समिष्टं ।

२१] नाहमेतां समीक्षेयं नैतद्वचनमाददे ॥ २१ ॥ [१६
पातितं[14] ह्ययशो मूर्ध्नि मात्रा मे राज्यलुब्धया ।
२२] तन्नाहमनुमन्येयं न चैतद्विदितं मम[15] ॥ २२ ॥ [N
को जातो भूमिपालानां शशाङ्कविमले कुले ।
२३] ज्येष्ठस्य भ्रातुरिष्टस्य द्रुह्येत व[त्र]त निर्घृणः ॥ २३ ॥ [N
न मे राज्यश्रिया कार्यं न सुखेन न चात्मना ।
२४] तमेव राघवं ज्येष्ठं भ्रातरं वनवासिनम् ॥ २४ ॥ [N
अहं तु तं नरव्याघ्रं प्रसादयितुमागतः ।
२५] अभिनेतुमयोध्यायां[16] पादौ वाप्युपसेवितुम् ॥ २५ ॥ [१७
तन्मामेवंगुणं मत्वा प्रसादं कर्तुमर्हसि ।
२६] शंस मे भगवान्[17] रामः क संप्रते महामतिः ॥ २६ ॥ [१८
एतत्तु वदतस्तस्य भरतस्य महात्मनः ।
२७] रामस्नेहाभिभूतस्य सहसा बाष्पमागतम्[18] ॥ २७ ॥ [N
बाष्पक्लिन्नमुखं चैनं भरद्वाजोऽब्रवीदिदम् ।
२८] उपपन्नमिदं पुत्र तवाद्य वचनं शुभम् ॥ २८ ॥ [N
परितुष्टं च विज्ञाय तमाकारैर्महामुनिम् ।
२९] प्रगृह्यास्रूणि भरतः पुनर्वाक्यमुवाच ह ॥ २९ ॥ [N
यथास्ति मयि विश्वासो यथपेक्ष्योऽहमास्मि ते ।
३०] शंस मे भ्रातरं रामं कससम्प्रति वर्तते ॥ ३० ॥ [N
तस्यैवं भाषमाणस्य राघवं परिपृच्छतः ।
३१] मनश्चक्रे भरद्वाजो वक्तुमेनं महामुनिः ॥ ३१ ॥ [N
पूजयित्वा यथान्यायं[19] भरद्वाजस्तपोधनः ।

14 कै, ल—पतितं । 15 ख—तव । 16 ख, ग, ल—०योध्यां तु । 17 ख, म—भगवन् । 18 ख, म—बाष्प आगमत् । 19 कै, ख—यथान्याय्यं ।

३२] उवाचेदं महातेजाः प्रहसन् भरत वचः ॥३२ ॥ [१९
एव त्वयि नरव्याघ्र युक्तमिक्ष्वाकुवंशजे[20] । [२०पू
३३] उपावर्तयितुं यस्त्वं वनादिच्छसि राघवम् ॥३३॥ [N
गुरुवृत्तिर्दमश्चैव सानुक्रोशगुणक्षमा[21] । [२०उ
३४] एतान्येव सुवर्णानि शरीरे भूषणानि[22] ते ॥३४॥ [N
विदित्वा तत्त्वं श्चैव सद्यः[23] शौचगुणं तव ।
३५] भवतः[24] श्रोतुकामेन प्रियमेतदुदाहृतम् ॥३५॥ [N
श्रूयतां नु महाबाहो धर्मज्ञ गुरुवत्सल ।
३६] यत्र राजीवताम्राक्षो बन्धुस्तव स राघवः ॥३६॥ [N
पू३७] जाने चाप्यन्तरस्थ ते भाव चन्द्रांशुनिर्मलम् । [पू२१
पू३८] देशे च चित्रकूटस्य राघव' सह भार्यया ।
उ३८] निवसत्याश्रमे रामो लक्ष्मणेनानुपालितः ॥३७॥ [२२
श्वो गन्ताऽसि सहामात्यो वस त्वं ससुहृज्जनः ।
३९] त्वामद्यार्चितुमिच्छामि काममेतत्[25] कुरुष्व मे ॥३८॥ [२३
ततस्तथेत्येवमुदारदर्शनः
प्रतीतरूपो भरतोऽब्रवीद्वचः ।
चकार बुद्धिं च महाश्रमे मुनेस्
४०] तदा निवासाय नराधिपात्मज' ॥३९॥ [२४

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भारद्वाजाश्रमनिवासो[26]
नाम सर्गः ॥ [१०३] ॥



---

20 य-यस्तु मि० । 21 य म-०गुणाक्षमा । ल-०नुक्रोश गुण।
क्षमा । 22 य, म-भावणानि । 23 य म सत्य० । 24 य-भवता ।
25 य, म-काममेव । 26 भरद्वा० ।

[वं-१००]=[चतुरुत्तरशततमः सर्गः]=[दा—९१]

कृतबुद्धिं निवासाय तत्रैव स मुनिस्तदा ।
१] भरत केकयीपुत्रमातिथ्येन न्यमन्त्रयत ॥१॥ [१
अब्रवीद् भरतस्त्वेन योऽदद भवता कृतम् ।
२] पाद्यमर्घ्यमथातिथ्यं वने यदुपपद्यते ॥२॥ [२
अथोवाच महातेजा भरत मीतिमान्वचः ।
३] जाने त्वां मत्प्रिये युक्तं तुष्टस्त्व येन केनचित ॥३॥ [३
सेनायास्तु तवैतस्याः कर्तुमिच्छामि भोजनम् ।
४] प्रीतिः कृता ममाप्येव[1] भविष्यति नरर्षभ ॥४॥ [४
किमर्थं चास्य[2] निक्षिप्य दूरे बलमिहागतः ।
५] कस्मान्नेहोपयातोऽसि सबल' सहवाहनः ॥५॥ [५
भरतः प्राञ्जलिस्त्वेवं प्रत्युवाच तपोधनम् ।
६] न बलेनोपयातोऽस्मि भगवन् भयतोभयात ॥६॥ [६
मनुष्या वाजियुक्ताश्च मत्ताश्च वरवारणाः ।
७] प्रच्छाद्य महतीं भूमिं भगवन्ननुयान्ति माम्[3] ॥७॥ [८
ते वृक्षानुदकं भूमिमाश्रमेपूटजांस्तथा[4] ।
८] मा हिंस्युरिति तेनाहमायातो गुरुभि सह ॥८॥ [९
आनीयतामितः सैन्यमित्यादिष्टो महर्षिणा ।
९] तथा चक्रे स भरतस्तेन प्रीतो ऽभवन्मुनिः ॥ ९ ॥ [१०
पू१०] अग्निशालां प्रविश्याथ वारि स्पृष्ट्वा[5] च[6] सम्युतः [११पू
N] समाधिमवलम्ब्याथ भरतस्य च पूजने ॥१०॥ [N

---

1 ब, म, ल ममाप्येव । [illegible] ब चासि । 3 ल-साम् । 4 ल-
०माश्रमेपुटटांस्तथा । म ०माश्रमेशटटांस्तथा । 5 कै—स्पृष्ट्वाथ ।

दिव्येन योगेन तदा चिन्तयामास वै मुनिः ।
N] विशिष्टतरमेवास्य करोम्यातिथ्यमद्य वै ॥११॥ [N
वसिष्ठप्रमुखा विप्रास्समाप्ता मेऽद्य चाश्रमम् ।
N] परम यत्नमासाद्य दिव्यज्ञानान्वितो मुनिः ॥१२॥ [N
उ१०] आतिथ्यार्थं भरद्वाजो विश्वकर्माणमाह्वयत् । [११उ
उवाच विश्वकर्माणमयं[6] त्वष्टारमेव च ।
११] आतिथ्य कर्तुमिच्छामि तत्तु मे संविधीयताम् ॥१३॥ [१२
प्राक्स्रोतसश्च या नद्यः प्रत्यक्स्रोतस एव च ।
१२] पृथिव्यामन्तरिक्षे च ता इहायान्तु सर्वशः ॥१४॥ [१४
अन्याः स्रवन्तु मैरेय सुरामन्याः सुनिष्टि [ष्ठि] ताः ।
१३] अपराश्चोदकं शीतमिक्षुदण्डरसोपमम् ॥१५॥O [१५
आह्वये[7] देवगन्धर्वान्[7] विश्वावसुहहाहुह[हू] ।
१४] तथैवाप्सरसो दिव्याः किन्नराश्चैव सर्वशः ॥१६॥O [१६
पू१५] घृताचीं मेनकां रम्भां मिश्रकेशीमलम्बुसाम् ।
N] तिलोत्तमां च हेमां च मुञ्जकेशीं[8] वरूथिनीम् ॥१७॥ [१७
उ१५] इन्द्रादींस्त्रिदशांश्चैव ब्रह्माणं[9] च महाद्युतिम् ।
पू१६] सर्वांस्तुम्बुरुणा[10]सार्द्धमाह्वये[11]सपरिच्छदान्[11] ॥१८॥[१८
उ१६] वन्य[12] कुरुष्व मे दिव्य वासः पुष्पाविलेपनम् ।
N] दिव्यनागफल चैव कारयेस्त्वमिहाद्य तु ॥१९॥ [१९
इह मे भगवान् सोमो विदधात्वन्नमुत्तमम् ।
१७] भक्ष्यं भोज्यं च चोष्य[13] च लेह्यं च विविधं बहु ॥२०॥ [२०

---

6 कै, म, ल—०माण मय । O म । 7 कै, म, ल—आह्वये देव० ।
8 म—मुचके० । 9 म—ब्राह्मणं । ल—ब्रह्मणं । 10 म—सर्वास्तु० ।
11 कै म—माह्वयेस्सपरि० । 12 म—वाक्य । 13 कै, म—चूष्य ।
कै पुस्तके पश्चात् "चोष्य" इति कृतम् । म—ह्रूप ।,

विचित्राणि च माल्यानि पादपांश्च मधुश्च्युतः ।
१८] सुरादीनि च पेयानि मांसानि विविधानि च ॥२१॥ [२१
एतत् समाधिना युक्तस्तेजसा नियमेन च ।
१९] शिक्षास्वरसमायुक्तं[14] तपसा चाब्रवीन्मुनिः ॥२२॥ [२२
मनसा ध्यायतस्तस्य प्राङ्मुखस्य कृताञ्जलेः ।
२०] आजग्मुस्तानि सर्वाणि दैवतानि पृथक् पृथक् ॥२३॥ [२३
मलयान्[15] मन्दराच्चैव सेव्यः स्वेदनुदोऽनिलः ।
२१] सुगन्धिः प्रववौ तत्र हर्षयन् सर्वशो जनान् ॥२४॥ [२४
ततोऽभ्यवर्षन्त घना दिव्याः कुसुमवृष्टयः ।
२२] देवगन्धर्वनिर्घोषो दिक्षु सर्वासु शुश्रुवे ॥२५॥ [२५
प्रववुश्चोत्तमा गन्धा ननृतुश्चाप्सरो गणाः ।
२३] प्रजगुर्देवगन्धर्वा[16] वीणाश्चैवाप्यवादयन्[17] ॥२६॥ [२६
स शब्दो द्यां च भूमिं च प्राणिनां श्रवणानि च ।
२४] विवेशोच्चारितः सम्यग् देवधिष्ण्येषु युक्तिमान् ॥२७॥ [२७
तस्मिन्नुपरते शब्दे दिव्यश्रोत्रपथानुगे[18] ।
२५] ददर्श भरतः सर्वं विहितं विश्वकर्मणा ॥२८॥ [२८
बभूव सुसमा[19] भूमिः[20] समन्तात् पञ्चयोजनम् ।
२६] शाद्वलैर्बहुभिश्छन्ना नीलवैदूर्य सन्निभैः ॥२९॥ [२९
तत्र बिल्वाः कपित्थाश्च पनसा बीजपूरकाः ।
२७] आमलक्यश्च जम्ब्वश्च चूताश्च[21] फलभूषणाः ॥३०॥ [३०
उत्तरेभ्यः कुरुभ्यश्च वनं दिव्योपभोगवत् ।

---

14 ब—शिक्षास्वर । ल—शिक्षांकुर । 15 य—मलयन् । म—मलयं ।
16 ल—प्रजग्मुर्दे० । 17 म—०श्चैवापि वादयन् । 18 ब—दिव्ये
श्रोत्र० । 19 [illegible]

२८] आजगाम नदी दिव्या तत्र चापि सरस्वती ॥३१॥ [३१
अन्याश्च नद्यो बह्व्योऽथ नानारसवहास्तथा ।
२९] आजग्मु र्वचनात्तस्य महर्षे र्भावितात्मनः ॥३२॥ [४
चतुः[22] शालानि शुभ्राणि शालाश्च गजवाजिनाम् ।
३०] हर्म्यप्रासादसङ्घाश्च तोरणानि महान्ति च ॥३३॥ [३२
सितमेघप्रभं चापि राजवेश्म सतोरणम् ।
३१] शुक्लमाल्यास्तरास्तीर्णं गन्धतोयसमुक्षितम् ॥३४॥ [३३
चतुरश्रमसंबाधं शयनासनयानवत् ।
३२] दिव्यैः[23] सर्वरसैर्युक्तं दिव्यभोजनवस्त्रवत् ॥ ३५ ॥ [३४
उपकल्पितसर्वान्नं धौतनिर्मलभाजनम् ।
३३] क्लृप्तदिव्यासनं श्रीमदास्तीर्णशयनोत्तमम् ॥ ३६ ॥ [३५
प्रविवेश महाबाहुरनुज्ञातो महर्षिणा ।
३४] वेश्म तद्रत्नसम्पन्नं भरतः कैकयीसुतः ॥ ३७ ॥ [३६
अनुजग्मुश्च ते[24] सर्वे मन्त्रिणः सपुरोहिताः ।
३५] बभूवुश्च मुदा युक्ता दृष्ट्वा वेश्मविधिं ततः ॥ ३८ ॥ [३७
तत्र राजासनं दिव्यं व्यजनं छत्रमेव च ।
३६] भरतस्याभवद्युक्तमनुरूपं[25] च[25] मन्त्रिणाम् ॥३९॥ [३८
आसनं पूरयामास रामायापि प्रणम्य सः ।
३७] वालव्यजनमादाय वीजयन् भरतस्तदा ॥ ४० ॥ [३९पू
N] वीजयित्वा ऽर्चयित्वा च न्यषीदत्परमासने । [३९उ
पू३८] आनुपूर्व्यान्निषेदुश्च सर्वे मन्त्रिपुरोहिताः ॥ ४१ ॥ [४०पू
उ३८] ततः सेनापतिः पश्चात् प्रशास्ता[26] च[26] निषेदतुः । [४०उ

---

22 ब– चतुश् । 23 कै—दिव्यैस् । ब—दिव्य– । 24 ब, म, ल–तं । 25 ब—॰मनुरूपश्च । 26 ब—प्रशास्ताश्च । ल—प्रशादस्तुश्च ।

पू३९] ततः परमप्रातिथ्यं[27] गन्धरूपरसान्वितम् ॥ ४२ ॥ [N
उ३९] वसिष्ठपूर्वं काकुत्स्थः प्रतिजग्राह धर्मवित् । [N
पू४०] ताश्च सर्वा मुहूर्तेन नद्यः पायसकर्दमाः ॥४३॥ [पू४१
उ४०] उपातिष्ठन्त भरत भरद्वाजस्य शासनात् । [उ४१
पू४१] तासामुभयतः कूलं पाण्डुमृत्तिकलेपनाः ॥४४॥ [पू४२
उ४१] रम्याश्चावसथा दिव्या ब्राह्मणस्य प्रसादतः । [उ४२
पू४२] ततश्चैव मुहूर्तेन दिव्याभरणभूषिताः ॥४५॥ [४३पू
उ४२] आजग्मुर्बहुसाहस्राः कुबेरप्रहिताः स्त्रियः । [४४उ
पू४३] सुवर्णताराप्रतिमाः पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः ॥४६॥[28] [४४पू
याभिर्गृहीतः पुरुषो भवत्युत्तमचेतनः ।
४४] आसन् त्रिंशतिसाहस्राः स्त्रियो वै नन्दनाद्वनात् ॥४७॥ [४५
नारदस्तुम्बुरुर्गोपः पर्वतः सूर्यमण्डलः ।
४५] एते गन्धर्वराजानो भरतस्याग्रतो जगुः ॥४८॥ [४६
अलंबुसा मिश्रकेशी पुण्डरीकाऽथ वामना ।
४६] उपानृत्यन्त भरत भरद्वाजस्य[29] शासनात् ॥४९॥ [४७
यानि माल्यानि देवानां यानि चैत्ररथे वने ।
४७] प्रयागे तान्यदृश्यन्त भरद्वाजस्य शासनात् ॥५०॥O [४८
दिव्यगन्धरसास्तत्र शम्यग्राहा[30] विभीतकाः ।
N] अश्वत्था रक्तमालाश्च भरद्वाजनियोजिताः ॥५१॥ [४९
रसालाश्चैव तालाश्च तिलकाश्चैव वञ्जुलाः ।
N] प्रपृष्ठास्तत्र संपेतु ककुभाश्चैव[31] वामनाः ॥५२॥ [५०

---

27 कै, म—०प्रातिष्ट । 28 घ, म, ल—आजग्मुर्बहुसाहस्रा· पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः । सुवर्णताराप्रतिमा. कुबेरप्रहिता. [ल-प्रतिमा] स्त्रिय. ॥ 29 म—भारद्वाजस्य । Oम, ल । 30 घ म, ल शस्य० । 31 ब, म—ककुभश्चैव ।

शिंशपाऽऽमलका जम्ब्वस्तथान्याः कानने लताः ।
४८] प्रमदाविग्रहं कृत्वा भरद्वाजाश्रमे[32]वसन् ॥५३॥ [५१
सुरां सुरापास्त्वपिबन् पायसं च बुभुक्षिताः ।
४९] मांसानि च महार्हाणि भक्ष्यं वै[33] यावदीप्सितम्॥५४॥ [५२
आच्छादयन्तः स्नान्तश्च नदीतीरेषु वल्गुषु । .
५०] अप्येकमेकं पुरुषं[34] प्रमदाः[34] पञ्च पञ्च वै ॥५५॥ [५३
संवाहयन्त्युपासीनाः शुभा रुचिरलोचनाः ।
५१] परिष्वज्य तथाऽन्योन्यं पाययन्ति वराङ्गनाः ॥५६॥ [५४
हयानश्वानजानुष्ट्रांस्तथैव सुरभीसुतान् ।
५२] इक्षूंश्च मधुरास्वादान् भोजयामासुरेव च ॥ ५७ ॥ [५६पू
इक्ष्वाकुवरयोधास्ते[35] चोदयन्तो महाबलाः । [५६उ
५३] नाश्वबन्धोऽश्वमज्ञासीन् न गजं कुञ्जरग्रहः ॥ ५८ ॥ [५७पू
मत्तोन्मत्तसमाकीर्णा सैवमासीन्महा चमूः । [५७उ
५४] तर्पिताः सर्वकामैस्ते दिव्यचन्दनभूषिताः ॥ ५९ ॥ [५८पू
अप्सरोगणसंघुष्टाः[36] सैन्यो[37] वाच[37] उदैरयन् । [५८उ
५५] नैवायोध्यां गमिष्यामो गमिष्यामो न दण्डकम् ॥६०॥ [५९पू
कुशलं भरतस्यास्तु रामस्यास्तु तथा सुखम् । [५९उ
५६] इत्यवोचन्त योधास्ते हस्त्यश्वारोहबन्धकाः[38] ॥६१॥ [६०पू
N] अनाथास्त निधिं लब्ध्वा पुण्या[39] वाच उदैरयन् । [६०उ
संप्रहृष्टाः मतिजग्मु नरास्तत्र सहस्रशः ।
५७] भरतस्यानुयातारः स्वर्गोऽयमिति चाब्रुवन् ॥ ६२ ॥ [६१

---

32 म—भारद्वा० । 33 य, म ल—था । 34 य, म, ल—प्रमदा पुरुषं । 35 ल—इक्ष्वाकुवर० । 36 य-०संजुष्टाः । 37 म,ल—सैन्य-प-सैन्यवाद । 38 ल—०गन्धकाः । 39 म,ल—पुण्य ।

तते भुक्तवतां तेषां तदन्नममृतोपमम् ।
५८] दिव्यानामथ[40] भोगानामभवद् भक्षणे मतिः ॥६३॥ [६३
ब्रह्मचारिगृहस्थाश्च वानप्रस्थाश्च सर्वशः ।
५९] बभूवुः सुभृशं तृप्ताः सर्वे चाहतवाससः ॥०६४॥ [६४
कुञ्जराश्च खरोष्ट्राश्च गोवाजिमृगपक्षिणः ।०
६०] बभूवुः सुभृशं तत्र नानाविधगतिस्वराः ॥ ६५ ॥ [६५
नाशुक्लवासास्तत्रासीत्[41] क्षुधितो मलिनोऽपि वा ।
६१] रजसा ध्वस्तकेशो वा नरः कश्चिदथाभवत् ॥ ६६ ॥ [६६
बभूवुर्वनपार्श्वेषु ह्रदाः पायसकर्दमाः ।
६२] ताश्च कामदुघा नद्यो द्रुमाश्चैव मधुश्च्युतः ॥ ६७ ॥ [६९
वाप्यो मैरेयपूर्णाश्च मिष्टमांसचयैर्वृताः ।
६३] प्रतप्तपिठरैश्चैव मार्गमायूरतैत्तिरैः ॥ ६८ ॥ [७०
आजैरथ च वाराहैः मिष्टान्नवरसञ्चयैः ।
६४] फलैर्निर्व्यूढसम्पन्नैः[42] सूपैः पूपैश्च संस्कृतैः ॥ ६९ ॥ [६७
दृश्यन्ते चान्नपूर्णानि सुशुभानि च तत्र वै । [N
६५] पात्रीणां[43] च सहस्राणि शातकौम्भान्यनेकशः ॥७० ॥ [७१
स्थाल्यःकुंभाः कलश्यश्च[44] दध्नः पूर्णाः[45] सुसंस्कृताः[45] ।
६६] गोरसस्य च तक्रस्य कपित्थसमगन्धिनः ॥ ७१ ॥ [७२
ह्रदाः पूर्णान्नशालाश्च[46] दध्नः श्वेतस्य चापरे ।
६७] बभूवुः पयसश्चापि शर्करायाश्च०सञ्चयाः० ॥ ७२ ॥ [७३
स्वल्कचूर्णकषायांश्च वासांसि विविधानि च ।०
६८] ददुर्भोज्य रसांश्चापि०तीर्थेषु सरितां वराः ॥ ७३ ॥ [७४

। 40 ब, म ङ—०मपि० । Om । 41 कै—स शुक्ल० ।
42 कै, ङ—०र्निर्व्यूढ । 43 ब—पात्राणा । 44 ब—कलशीश्च ।
45 ब, म, ङ—पूर्णाश्च संस्कृता 46 ब—पूर्णाश्च शालाश्च ।

श्लक्ष्णानंशुमतश्चैव दन्तधावनसञ्चयान् ।
६९] श्लक्ष्णचन्दनकल्कांश्च[४७] समुद्गेषु च तिष्ठतः ॥ ७४॥ [७५
दर्पणा परिमृष्टांश्च[४८] माल्यानि विविधानि च ।
७०] पादुकोपानहश्चैव युग्मानि च सहस्रशः । ।७५॥ [७६
अञ्जन्यः ककताः कूर्चा [:] शस्त्राणि विविधानि च ।
७१] तनुत्राणि विचित्राणि शयनान्यासनानि च ॥७६॥ [७७
प्रतिपानह्रदाः पूर्णाः खरोष्ट्रगजवाजिनाम्[४९] ।
७२] अवगाह्याः सुतीर्थाश्च ह्रदाः सोत्पलपुष्कराः[५०] ॥७७॥ [७८
नीलवैडूर्यवर्णांश्च मृष्टानावाससंश्रयान्[५१] ।
७३] निवासार्थं पशूनां च ददृशुस्तत्र तत्र ह ॥७८॥ [७९
व्यस्मयन्त मनुष्यास्ते स्वप्नकल्पं तदद्भुतम्[५२] ।
७४] दृष्ट्वाऽऽतिथ्यं कृतं तादृग् भरतस्य महर्षिणा ॥ ७९॥ [८०
इत्येवं रममाणानां देवानामिव नन्दने ॥
७५] भरद्वाजाश्रमे रम्ये सा रात्रिर्व्यत्यवर्तत[५३] ॥८०॥ [८१
प्रतिजग्मुश्च ता नार्यो गन्धर्वाश्च यथागतम् ।
७६] भरद्वाजमनुज्ञाप्य ताश्च सर्वा वराङ्गनाः ॥८१॥ [८२
तथैव मत्ता मदिरोत्कटा नराः
तथैव दिव्यागुरुचन्दनोक्षिताः ।
तथैव दिव्या विविधोत्तमस्रजः
७७] पृथक् प्रकीर्णा मनुजैः प्रमर्दिताः ॥ ८२ ॥[८३

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरद्वाजातिथ्यं नाम सर्गः ॥ [१०४] ॥

४७ म—कल्पाश्च ।
घ—पल्काश्च ।
४८ म—परिदृष्टाश्च ।
म, ल O ।
म, ल O ।
४९ म—खरोष्ट्रगत० ।
५० म—सोत्पाल० ।
५१ ल—मृष्टा० ।
घ—०ावस० ।
५२ म—०कल्पातमद्भु० ।
५३ ल म—व्यतिपर्तत ।

[वं-१०१]=[पञ्चोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-६२]

रजनीं तामुषित्वाऽथ भरतः सपरिच्छदः ।
१] कृतातिथ्यं भरद्वाजं कल्ये[1]ऽभ्येत्याभ्यवादयत् ॥१॥ [१
तमृषिः पुरुषव्याघ्रं संप्रेक्ष्य प्राञ्जलिं स्थितम् ।
२] हुताग्निहोत्रो[2] भरतं भरद्वाजोऽभ्यभाषत ॥२॥ [२
कच्चित्[3] पुत्र सुखेनेयं तवाद्य रजनी गता ।
३] समग्रभोजनं कच्चिदातिथ्यं शंस मेऽनघ ॥३॥ [३
तमुवाचाञ्जलिं कृत्वा भरतोऽभिप्रणम्य च ।
४] आश्रमादनतिक्रान्तमृषिमुत्तमतेजसम् ॥४॥ [४
सुखोषितोऽस्मि भगवन् समग्रबलवाहनः ।
५] तर्पितः[4] सर्वकामैश्च भगवन् सर्वशस्त्वया ॥५॥ [५
अपेतक्लेशसन्तापाः सुभिक्षाः सुप्रतिष्ठिताः ।
६] अपि प्रेष्यानुपादाय सुखिनः स्म सुखोषिताः[5] ॥६॥ [६
आमन्त्रये त्वां भगवन् मामनुज्ञातुमर्हसि[6] ।
७] भ्रातुस्समीपं यास्यामि शुभेनेक्षस्व चक्षुषा ॥७॥ [७
आश्रमं तस्य धर्मज्ञ राघवस्य महात्मनः ।
८] आचक्ष्व केन मार्गेण गच्छेयं भगवन्नहम् ॥८॥ [८
योजनैः कतिभिश्चैव कस्मिन् देशे स आश्रमः ।
९] ससीतालक्ष्मणस्सखो धर्मात्मा यत्र वर्त्तते[7] ॥९॥ [N

---

१ ब—काल्पेऽभ्येत्या० ।
म—कालेऽभ्योभ्या० ।
२ ब, ल—हुत्वाग्निहोत्र ।
३ ब, ल, म—कश्चित् ।
४ ब—तर्पिताः ।
५ ल—सन्सुखोषिताः ।
६ ल—०मर्हति ।
७ ब, ल; म—तिष्ठति ।

इति पृष्टस्तदा तेन भरतेन महात्मना ।

१०] ततः स भरतं धीमान् महर्षिरिदमब्रवीत् ॥१०॥ [६

भरतार्द्धतृतीयेषु योजनेष्वजने वने ।

११] चित्रकूटो गिरिस्तात रम्यो निर्जनकाननः[८] ॥११॥ [१०

उत्तरं पार्श्वमाश्रित्य तस्य मन्दाकिनी नदी ।

१२] पुष्पितद्रुमसंछन्ना नानापक्षिनिषेविता ॥१२॥ [११

तामन्तरा च सरितं[९] चित्रकूटं च पर्वतम् ।

१३] ततः पर्णकुटीं तत्र द्रष्टाऽसि त्वं सुसंवृताम्[१०] ॥१३॥ [१२

N] वाल्मीकेराश्रमे दिव्ये महर्षेस्तत्र राघवः ।

१४पू] कृत्वाऽऽश्रमपदं रम्यमेकान्ते सहलक्ष्मणः ॥१४॥ [N

१४उ] सीतया भार्यया सार्द्धं वसतीति मया श्रुतम् । [N

१५पू] दक्षिणेनैव मार्गेण दक्षिणाशामदक्षिणा । १५॥ [१३पू

१५उ] गजवाजिगणाकीर्णा वाहिनी[११] यातु राघव । [१३उ

१६पू] प्रयाणमिति च श्रुत्वा भरद्वाजस्य वै तदा ॥१६॥ [१४उ

१७उ] कौसल्या प्रतिजग्राह कराभ्यां चरणावुभौ ।

१८पू] असमृद्धेन कायेन सर्वलोकेषु गर्हिता ॥१७॥O [१६

१८उ] कैकेयी चापि जग्राह महर्षेश्चरणौ तदा ।O

१९पू] प्रदक्षिणं समागम्य[१२] भगवन्तं महामुनिम् ॥१८॥ [१७

---

८ ब—निर्झर० ।

९ ब, ल-सरितं ।

१० क-सुसंवृताम् ।

११ ल-वाहिणीयात्तु ।

म—O ।

१२ ब, म क—समासाद्य ।

१९उ] सुमित्रा भरताभ्यासे तस्थौ हृदि समाकुला । [N
२०पू] ततः पप्रच्छ भरतं भरद्वाजो दृढव्रत ॥१९॥ [१८उ
२०उ] विशेषं ज्ञातुमिच्छामि मातॄणां तिसॄणां तव ।
२१पू] एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धार्मिकः ॥२०॥ [१९
२१उ] उवाच प्राञ्जलिर्वाक्यमिदं वचनकोविदः ।
२२पू] यामिमां भगवन्दीनां शोकोपहतचेतसाम्[13] । २१॥[२०
२२उ] स्थितां साश्रुमुखी[14] साध्वीं देवतामिव पश्यसि।
२३पू] एषा तं पुरुषव्याघ्रं सिंहविक्रान्तगामिनम् ॥२२॥ [२१
२३उ] कौसल्या सुषुवे रामं धातारमदितिर्यथा ।
२४पू] अस्या वामभुजं श्लिष्टा यैषा तिष्ठति दुर्मनाः ॥२३॥[२३
२४उ] कर्णिकारस्य शाखेव शीर्णपर्णा वनान्तरे । [२३उ
२५पू] एतस्यास्तौ सुतौ ब्रह्मन् कुमारौ देवरूपिणौ ॥२४॥[२४पू
२५उ] उभौ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ वीरौ सत्यपराक्रमौ । [२४उ
२६पू] यस्याम्युद्विग्नहृदयामप्रहृष्टमुखीं स्थिताम् ॥ २५ ॥ [N
२६उ] सुमित्रां जननीमेतां लक्ष्मणस्योपधारय । [५
२७पू] यस्याः कृते नरव्याघ्रौ वनवासमितो गतौ ॥२६॥[२५पू
२७उ] राजपुत्रौ नरेन्द्रश्च स्वर्गं दशरथो गतः । [२५उ
२८पू] ऐश्वर्यकामां[15] कैकेयीमनार्यां पतिघातिनीम् । २७॥ [२६उ
२८उ] ममैतां मातरं विद्धि नृशंसां कुलपांसनीम् । O [२७पू
२९पू] सैषा तिष्ठति कैकेयी नृशंसा पापनिश्चया ॥२८॥ [N,

३ कै--चेतस ।
४ ब म, ल--चाश्रुमुखी ।

१५ म-ऐश्वर्यकामा कैकेयी नृशंस पापनिश्चया इतिपाठः ।
म O

२९उ] अतोमूलं हि पश्यामि व्यसनं महदात्मनः । [२७उ
३०पू] इत्युक्त्वा स नरव्याघ्रो बाष्पगद्गदया गिरा २९॥[२८पू
३०उ] निशश्वास सुताम्राक्षः क्रुद्धो वनगजो यथा । [२८उ
३१पू] भरद्वाजो महर्षिस्तु ब्रुवाणं भरतं तथा ॥३०॥ [२९पू
३१उ] प्रत्युवाच महाबुद्धिरिदं वचनमर्थवत् । [२९उ
३२पू] न दोषेणावमन्तव्या कैकेयी भरत त्वया ॥३१॥ [३०पू
३२उ] राममव्राजनं ह्येतत् सुखोदर्कं[16] भविष्यति । [३०उ
३३पू] अभिवाद्य तु संसिद्धं कृत्वा चाभिमदक्षिणम् ॥३२॥ [३२पू
३३उ] आमन्त्र्य[17] भरतः सैन्यं युज्यतामित्यचोदयत् । [३२उ
३४पू] ततोवाजिरथान्युक्तान्[18] दिव्यान्हेमपरिष्कृतान् ॥३३॥[३३पू
३४उ] अध्यारोहत् प्रयाणार्थं बहून् बहुविधो जनः । [३३उ
३५पू] गजयोषा गजाश्चैव हेमकक्ष्याः पताकिनः ॥३४॥ [३४पू
३५उ] जीमूता इव घर्मान्ते संहृष्टा समतस्थिरे । [३४उ
३६पू] विविधान्यथ यानानि बृहन्ति च लघूनि च ॥३५॥ [३५पू
३६उ] मययुः स्म[19] महार्हाणि पदस्थाश्च पदातयः । [३५उ
३७पू] अथ यानप्रवेकैस्ताः कौसल्याप्रमुखाः स्त्रियः ॥३६॥ [३६पू
३७उ] रामदर्शनकाङ्क्षिण्यः[20] प्रययुर्मुदितास्तदा । [३६उ
३८पू] स चापि तरुणार्काभां सुयुक्तां[21] शिबिकां शुभाम् ॥३७॥ ३७पू

---

१६ म-सुखोदय ।
१७ म-आमन्त्र ।
म-आमन्त्र्य ।
१८ ब-० ह्याग्रु० ।
१९ ब, म, ल-०यु सुमहा० ।
२० ल—काङ्क्षिण्य ।
म—काङ्क्षन्त्या ।
२१ ब—सुभक्ता ।

३८उ] आस्थाय प्रययौ धीमान् भरतः सपरिच्छदः । [३७उ
४०पू] सा[२२] प्रयाता बभौ सेना गजवाजिसमाकुला ॥३८॥ [३८पू
४०उ] दक्षिणां दिशमास्थाय महामेघ इवोत्थित[२३] । [३८उ
३९पू सुमन्त्रश्चानुयात्रेण[२४] सहित[२५]सपताकिना[२६] ॥३९॥ [N
३९उ] सज्जवारणयन्त्रेण[२७] वीरो भरतमन्वगात् [N
४१पू] वनानि च व्यतिक्रम्य जुष्टानि मृगपक्षिभिः ॥४०॥
४१] अगाधामीनकलिलां[२८] यमुनामतरन्नदीम् ॥ ४१ ॥ [N

सा संप्रहृष्टद्विपवाजियोधा
वित्रासयन्ती मृगपक्षिसङ्घान्[२९] ।
महावनं तत् परिगाहमाना
४२] नरेन्द्रपुत्रस्य रराज सेना ॥ ४२ ॥ [४०

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतानुयान[३०]
नाम सर्गः ॥ [१०५] ॥

---

२२ ल, म—स ।
२३ ब—इवोत्थितम् ।
२४ म—समग्र ।
२५ म—सहिता सा ।
२६ ब, म-पताकिनी ।
२७ म—०वायन० ।
२८ म ०मेन० ।
२९ म - संगान् ।
३० ब—भरतान्वयान ।
म—भरतान्वायानं ।

[वं-१०२]=[षड्त्तरशततमः सर्गः]=[दा-९३]

तया महत्या वाहिन्या[1] ध्वजिन्या वनवासिनः।
१] अर्दिता यूथपास्तत्र सयूथा विमद्रुवुः ॥ १ ॥ [१
ऋक्षाः[2] पृषतसंघाश्च रुरवश्च समन्ततः।
२] दृश्यन्ते वनराजीषु[3] पर्वतेषु नदीषु च ॥ २ ॥ [२
स संप्रतस्थे धर्मात्मा धीमान् दशरथात्मजः।
३] वृतो योधैर्महावीरैः शब्दवालाप्रवेधिभिः ॥ ३ ॥ [३
भरतस्तु महामाज्ञो भ्रातृदर्शनकांक्षया।
४] मृगव्यालानुचरितं प्रविवेश महद्वनम्[4] ॥४॥ [N
सागरौघनिभा सेना भरतस्यानुगामिनी।
५] महीं संच्छादयामास प्रावृषि द्यामिवाम्बुदः ॥५॥ [४
[5]तुरगौघैरवतता[6] वारणैश्चाचलोपमैः।
६] अनालक्ष्या चिरं कालं तस्मिन् देशे बभूव सा ॥६॥ [५
स गत्वा[7] दूरमध्वानमपरिश्रान्तवाहनः।
७] उवाच भरतो धीमान् शत्रुघ्नं शिष्टसंमतम् ॥ ७ ॥ [६
यादृशं लक्ष्यते रूपं यादृशं च श्रुतं मया।
८] व्यक्तं प्राप्तोऽस्मि तं देशं भरद्वाजो यथाऽब्रवीत् ॥८॥ [७
अयं गिरिश्चित्रकूट इयं मन्दाकिनी नदी।

---

१ ब, म, ल-वाजिन्या।
२ ब-ऋक्षः।
म-वृक्षाः।
३ म-वनराज्येषु।
४ म महाद्युनम्।
५ ब, ल, म-तुरगौघै०।
६ ब-०रवततीं।
७ म-गता।

९] एतत् प्रकाशते दूरान्नीलमेघनिभं वनम् ॥ ९ ॥ [८
गिरेस्सानूनि रम्याणि चित्रकूटस्य संप्रति ।
१०] वारणैरवमृद्यन्ते मामकैः पर्वतोपमैः ॥ १० ॥ [९
मुञ्चन्ति कुसुमं चित्रं नगाः पर्वतसानुषु ।
११] नीला इवातपापाये तोयं जलदराशय ॥११॥ [१०
एते मृगगणा भान्ति शीघ्रवेगाः प्रधाविताः ।
१२] वायुप्रणुन्ना शरदि मेघराज्य इवांबरे ॥ १२ [१२
किन्नराचरितं चेमं पश्य शत्रुघ्न पर्वतम् ।
१३] हयैर्मदीयैराकीर्णं सागरं मकरैरिव ॥ १३ ॥ [११
कुर्वन्ति कुसुमापीत्वा शिरांसि सुरभीण्यपि ।
१४] मेघप्रकाशैः फलकैर्दाक्षिणात्यास्सुयोधिनः ॥१४॥ [१३
निष्कूजमिव भातीदं वनं घोरप्रदर्शनम् ।
१५] अयोध्येव जनाकीर्णा संप्रति प्रतिभाति मे । १५ ॥ [१४
खुरोद्धूता रेणुराजी दिवमावृत्य तिष्ठति ।
१६] तं वहत्यनिलः शीघ्रः कुर्वन्निव मम प्रियम् ॥ १६ ॥ [१५
स्पन्दनांस्तुरगोपेतान् सूतमुख्यैरधिष्ठितान् ।

---

८ ल-० रेव दृश्यते ।
ब- रेव० ।
म यद्यमृद्यते ।
९ म-मामुष. ।
१० ल-इवतपोपाये ।
११ ब प्रणुन्ना ।
१२ ल मेघराजा ।
१३ ल सुपपी क्रोडा ।
ब कुसुमापीडा ।
म-कुसुमै पीडा ।
१४ ब -दाक्षिण्याद्या ।
म -दाक्षिणाभ्यास योधिन ।

१७] एतान् संपततः पश्य शीघ्र[15] शत्रुघ्न[15] कानने[15] ॥१७॥ [१६
एतान् वित्रासितान् पश्य बर्हिणः प्रियदर्शनान् । [१७पू
१८] मनोज्ञरूपा ये भान्ति कुसुमैश्चित्रिता इव ॥१८॥ [१६उ
मृगा मृगीभिस्सहिता बहवः पृषतो वने । [१६पू
१९] एते चाध्यासते शैलमधिवास पतत्रिणाम् ॥१९॥ [१७उ
अतिमात्रमयं देशो मनोज्ञः प्रतिभाति मे ।
२०] तापसानां निवासोऽयं व्यक्तं स्वर्गपथो यथा ॥२०॥ [१८
साधु सैन्याः प्रतिष्ठन्तां विचिन्वन्तु च काननम् ।
२१] यथा तौ पुरुषव्याघ्रौ पश्येयं तद्विधीयताम् ॥२१॥ [२०
भरतस्य वचः श्रुत्वा पुरुषाश्शस्त्रपाणयः ।
२२] विविशुस्तद्वनं शीरा धूमं च ददृशुस्तदा ॥२२॥ [२१
ते तदालोक्य धूमाग्रमूचुर्भरतमीश्वरम् ।
२३] नामाग्नेव[16] भवत्यग्निर्नूनमत्रैव राघव ॥२३॥ [२२
अथ वा तौ नरव्याघ्रौ राजपुत्रौ महाबलौ ।
२४] अन्येऽप्यनुभविष्यन्ति तापसा वनगोचराः[17] ॥२४॥ [२३
तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां भरतः साधुसंमतः ।O
२५] सैन्यानुवाच सर्वांस्तानमित्रबलमर्दनः ॥२५॥ [२४
यत्ता भवन्तस्तिष्ठन्तु नेतो गन्तव्यमन्यतः ।
२६] अहमेको गमिष्यामि सुमन्त्रो धृष्णिरेव च ॥२६॥ [२५

---

१५ ल-बर्हिण प्रियदर्शिन ।
ल—O

ल—मनुष्यौ ।
१७ घ, ल म—वनवासिन ।
घ, ल, म—O ।

एवमुक्त्वा ततः सेनां स प्रतस्थे महाबलः ।
२७] भरतो यत्र धूमाग्रं दृष्टं[18] तत्र समादधत् ॥२७॥ [२६
व्यवस्थिता सा महती तदा चमू-
निरीक्ष्य दूरादनुधूममग्रतः ।
बभूव हृष्टा पुनरेव भारती
२८] निशम्य रामस्य समागमं तदा ॥२८॥ [२७

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे[19]
रामाश्रमदर्शनं नाम सर्गः ॥[१०६]॥

---

१८ ल-दृष्टिं । । १९ ल-सुन्दरकाण्डे ।

[चं-१०३]=सप्तोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-९४]

दीर्घकालोषितस्तस्मिन् गिरौ गिरिवनप्रियः ।
१] वैदेह्याश्च प्रियं कुर्वन् स्वं च चित्तं विनोदयन्[1] ॥१॥ [१
दर्शयंश्चित्रकूटं च रमणीयं शिवं प्रियम् ।
२] उवाच रामो वैदेहीं शचीमिव पुरन्दरः ॥२॥ [२
न राज्याद्[2] भ्रंशनं[2] सीते न सुहृद्भिर्विवासनम् ।
३] मनो मे बाधते दृष्ट्वा रमणीयमिदं वनम् ॥३॥ [३
पश्येममचलं सीते नानाद्विजगणावृतम् ।
४] शिखरैः खमिवाविद्धैर्धातुमद्भिर्विभूषितम् ॥४॥ [४
केचिद्द् रजतसङ्काशाः केचित्[3] क्षतजसन्निभाः[3] ।
५] केचिदर्ककराभाश्च[4] केचित् कनकसप्रभाः ।
६उ] विराजन्तेऽचलेन्द्रस्य शतशश्च विभूषिताः ॥५॥ [६
शाखामृगमृगद्वीपितरक्षुगणसेवितैः ।
७] सानुभिर्भात्ययं शैलो नानावृक्षोपशोभितः ॥ ६ ॥ [७
आम्रजंम्बसनैरोध्रैः पियालैः ककुभैर्धवैः ।
८] अक्षोटभव्यपनसैर्बिल्वतिन्दुकवेणुभिः ॥७॥ [८
काश्मर्यरिष्टवरणैर्मधूकैस्तिलकैस्तथा[5] ।
९] बदर्यामलकैर्नीपैर्वेत्रचन्दनबीजकैः ॥८॥ [९
पुष्पवद्भिः फलोपेतैश्छायावद्भिर्मनोरमैः ।
१०] एवमादिभिराध्यास्तः श्रियं पुष्यत्ययं[6] गिरिः ॥९॥ [१०
शैलप्रस्थेषु रम्येषु पश्यैतान् देवरूपिणः ।

---

१ ल-विनोदयत् ।
२ म-राज्यभ्रशन ।
३ ल-०द्रुतसन्निभाः ।
४ म-०द्दरक० ।
५ ब, ल-कश्मीर्य० ।
म-कश्मीय० ।
६ ब, ल, म-पुष्पा० ।

११] किन्नरान्[७] द्वन्द्वशो[८] भद्रे रममाणान् मनस्विनः ॥१०॥ [११
शाखावशक्तखड्गांश्च प्रवराण्यंवराणि च[९] ।
१२] पश्य विद्याधरस्त्रीणां क्रीडोद्देशान् मनोरमान् ॥११॥ [१२
जलप्रपातैर्बहुभिरुद्देशैश्च क्वचित् क्वचित् ।
१३] स्रवद्भिर्भात्ययं शैलः स्रवन्मद इव द्विपः ॥१२॥ [१३
गुहाभ्य सुरभिर्गधो नाना पुष्पगुणान्वितः ।
१४] घ्राणतर्पण उद्धूतः कं नरं न प्रहर्षयेत् ॥१३॥ [१४
यद्यहं शरदोऽनेकास्त्वयासार्धमनिंदिते ।
१५] लक्ष्मणेन च वत्स्यामि न मां शोकः प्रधक्ष्यति ॥१४॥ [१५
नाना पुष्पफले रम्ये नाना द्विजगणायुते ।
१६] विचित्रशिखिरे ह्यस्मिन्कृतवासोस्मि भामिनि ॥१५॥ [१६
अनेन वनवासेन मया प्राप्तं महत्फलम् ।
१७] अनृणत्वं पितुर्धर्माद्भरतस्य प्रियं तथा ॥१६॥ [१७
वैदेहि रमसे कच्चिच्चित्रकूटे मया सह ॥
१८] पश्यंती विविधान्भावान्[१०] मनोवाकायसंयतान् ॥१७॥ [१८
इदमेवामृतं प्राहुः सीते राजर्षयः परे[११] ।
१९] वनमेव तपोर्थाय प्राप्ता मे प्रपितामहाः ॥१८॥ [१९
शिलाः शैलस्य राजंते विशालाः शतशास्त्विमाः ।
२०] बहुधा बहुभिर्वर्णैर्नीलपीतसितारुणैः ॥१९॥ [२०
शृङ्गैर्भात्यचलेन्द्रोयं हुताशनशिखाप्रभैः[१२] ।

---

७ म-किंनरान्स्वन्स्य० ।
८ म-रममाणाः ।
९ ब, ल, म-प्रणान्वि० ।
१० म-विविधा माया ।
११ म-पुरे ।
१२ म-०शाखिप्रभैः ।

२१] श्रोषध्यश्च[15] प्रभालक्ष्या भ्राजमानाः सहस्रशः ॥२०॥ [२१
केचित्क्षेरमप्रभा देशाः केचिदुद्यानसंस्थिताः ।
२२] केचिदेकशिला भान्ति पर्वतस्यास्य भामिनि ॥ २१॥ [२२
भित्त्वेव धरणीं भाति चित्रकूटस्समुच्छ्रितः ।
२३] चित्रकूटस्य कूटोयं गुह्यकैः[16] सेवितश्शिवैः ॥२२॥ [२३
कुन्दपुन्नागबहुलभूर्जपत्रपरिच्छदान् ।
२४] कामिनां संस्तरान्पश्य कौशेयानिव भामिनि ॥२३॥ [२४
मुदिताश्चापविद्धाश्च भान्त्येताः कूलसंगताः[17] ।
N] तथा भान्ति लतास्चेमा वृक्षेभ्यश्च पृथक् पृथक् ॥२४॥ [N
२५] कानने[18] वनिते पश्य फलानि विविधानि च ॥२५॥ [२५
वस्वोकसारां नलिनीं पश्यैताश्चोत्तरान्कुरून् ।
२६] पर्वते चित्रकूटेस्मिन्न[त्रि]भ्यभूतगणाश्रये ॥२६॥ [२६
इमं हि कालं विहरन्वरानने
त्वया स हयेन च लक्ष्मणेन ह ।
रतिं प्रपत्स्ये कुलधर्मवर्धिनीं
२७] गिरिस्थितोहं नियमे पितुः स्थितः ॥ २७ ॥ [२७
इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकांडे चित्रकूटवर्णनं
नाम सर्गः ॥ [१०७]

---

१५ म-श्रोषधश्च ।
१६ य-गुह्यकः ।
१७ य, म, ल-कुल० ।
१८ म-कपने ।

[बं-१०४]=[अष्टोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-६५]

अथ शैलाद्विनिष्क्रम्य मैथिलीं कोसलेश्वरः।
१] अदर्शयच्छुचिजलां रामो मन्दाकिनीं नदीम् ॥ १ ॥ [१
अब्रवीच्च वरारोहां चारुवक्त्रनिभाननाम्[1]।
२] विदेहराजतनयां रामो राजीवलोचनः ॥ २ ॥ [२
विचित्रपुलिनां रम्यां हंससारससेविताम्।
३] कुसुदोत्करसंच्छन्नां[2] पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥३॥ [३
नाना द्रुमैस्तीररुहैः संवृता फलपुष्पदैः।
४] राजन्तीं[3] राजराजस्य नलिनीमिव सर्वशः ॥ ४ ॥ [४
मृगयूथानुपीतानि[4] कलुषाम्भांसि सम्प्रति।
५] तीर्थानि रमणीयानि प्रीतिं सञ्जनयन्ति मे ॥ ५ ॥ [५
जटाजिनधरा[5] सिद्धा वल्कलाजिनवाससः[6]।
६] ऋषयोऽप्यवगाहन्ते कल्ये मन्दाकिनीं नदीम् ॥६॥ [६
आदित्यमुपतिष्ठन्ति नियता ह्यूर्ध्वबाहवः।
७] इमे परे विशालाक्षि मुनयः संशितव्रताः ॥ ७ ॥ [७
मारुतोद्धूतशिखराः पतन्त इव पर्वते[8]।
८] पादपाः पुष्पवर्षेण किरन्त्येते च मेदिनीम् ॥ ८ ॥ [८
आधूतान् वायुना पश्य समन्तात् पुष्पसञ्चयान्।
९] दोधूयमानानपरान् प्रवृत्तानिव पर्वते ॥ ९ ॥ [१०

१ ब, म, ल—चारुचन्द्र०।
२ ब, ल, म—कुसुमोत्कर०।
३ ब—राजन्ते।
४ ल—यूथान्यपी०।
५ म—जटाजिन०।
६ म—वल्कल०।
७ ल—काले।
८ ब ल—पर्वता।
म—पर्वतः।
९ ब, म पर्वतान्।

क्वचिन्मणिनिभाभोनां क्वचित् पुलिनशालिनीम्[10] ।
१०] क्वचिज्जनपदाकीर्णां पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥१०॥ [९
एते हि वल्गुवचसः स्वकानाह्वयते द्विजाः ।
११] अवरोहन्ति कल्याणि विकूजन्तः[11] शुभा गिरः॥११॥ [११
दर्शनाच्चित्रकूटस्य मन्दाकिन्याश्च[12] सर्वशः ।
१२] अधिकं पुरवासेन मन्ये च तव दर्शनात् ॥ १२ ॥ [१२
विधूतकल्मषैः[13] सिद्धैस्तपोधनसमन्वितैः ।
१३] नित्यविक्षोभितजलां विगाहस्व मया सह ॥ १३ ॥ [१३
यथावच्च विगाहस्व सीते मन्दाकिनीं नदीम् ।
१४] प्रसन्नां सुवर्णां नित्यतरङ्गां ह्रदभूषणाम् ॥ १४ ॥ [१४
जनैरिव नगैः पूर्णामयोध्यामिव सर्वतः ।
१५] पश्यस्युत्फेनितां[14] नित्यं सरयूमतिमां नदीम् ॥१५॥ [१५
लक्ष्मणश्चापि धर्मात्मा मन्निदेशे[15] व्यवस्थितः ।
१६] त्वां चानुकूला वैदेहि प्रीतिं वर्द्धयसीव मे ॥ १६ ॥ [१६
फलमूलानि भुञ्जाना[16] सलिलानि च भामिनि ।
१७] पाणिभ्यां पद्मपत्राभ्यां[17] विगाहस्व सरिद्वराम्[18]॥१७॥[४

म—पर्वता।
१० ल-०मालिनीम् ।
११ ल—विकूजन्त ।
१२ म—मन्दाकिन्या च ।
१३ ल—०मयैः ।
१४ म म—०स्युत्फेनितां ।
ल-०स्युत्फेनिलां ।
१५ ल, म—सन्निदेशे ।
१६ म—भुञ्जान ।
१७ म—०पत्राद्य ।
१८ म ०द्वरम् ।

उपस्पृशंस्त्रिषवणं[19] मांसमूलफलाशनः[20] ।
१८] नायोध्यायै न राज्याय स्पृहयामि त्वया सह ॥१८॥ [१७

इमां हि पश्यन् मृगयूथलोलिताम्[21]
निपीततोयां गजसिंहवानरैः ।
सुपुष्पितैस्तीररुहैरलङ्कृतां[22]
१९] न सोऽस्ति योऽस्यां न गतक्लमो भवेत् ॥१९॥ [१८

इत्येव रामो बहुसङ्गतं वचः
प्रियाद्वितीय.[23] सरितं प्रति[24] ब्रुवन् ।
चचार रम्यं नयनाञ्जनप्रभं
२०] स चित्रकूटं रघुवंशवर्धन. ॥ २० ॥ [१९

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे मन्दाकिनी-
वर्णनं नाम सर्गः ॥ [१०८] ॥

---

१९ म—०स्त्रिसवन ।
२० ल-०फलाशना ।
२१ ब, ल, म—०लोहिता ।
२१ ल—०पुष्पितै० ।
२३ ब—पियद्वितीया ।
२४ ब—सरितमिति ।

[वं-१०५]=[नवोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-प्रक्षिप्त]

रामस्तु नलिनीं रम्यां चित्रकूटं च पर्वतम् ।
१] पुत्र्या[1] जनकराजस्य दर्शयित्वा न्यवर्तत ॥ १ ॥
स तथा तु गिरेः पादे चित्रकूटस्य राघव ।
२] ददर्श कन्दरं रम्यं शिलाधातुसमाचितम् ॥ २ ॥
सुखप्रदेशच[2] तरुभिः[3] पुष्पभारावलम्बिभिः[2] ।
३] संवृतं सरहस्यं च मत्तद्विजगणायुतम् । ३ ॥
तद्दृष्ट्वा सर्वभूतानां मनो दृष्टिहरं वनम् ।
४] उवाच राघवः सीतां वनदर्शनविस्मिताम् ॥ ४ ॥
वैदेहि रमते चक्षुस्तवास्मिन् गिरिकन्दरे ।
५] परिश्रमविघातार्थं साधु तावदिहास्यताम् ॥ ५ ॥
त्वदर्थमिश[3] विन्यस्तः शिलायां सुखसंस्तरः ।
६] यस्याः पार्श्वे तरुः पुष्पैर्विनष्ट[4] इव केसरैः ॥ ६ ॥
राघवेणैवमुक्ता सा सीता प्रकृतिसुन्दरी ।
७] उवाच प्रणयात् स्निग्धमिदं श्लक्ष्णतरं वचः ॥ ७ ॥
अवश्यकार्यं वचनं तव[5] मे[5] रघुनन्दन ।
८] भूतलं चैवं पश्यामि एवं पुष्पितकाननम् ॥ ८ ॥
एवमुक्ते तया तस्मिन्नुपविष्टः शिलातले ।
९] सह पत्न्या विशालाक्ष्या वचनं चेदमब्रवीत् ॥ ९ ॥
गजदन्ताचितान्[6] वृक्षान् पश्य निर्यासवर्षिणः ।
१०] झल्लिकाविरुतैर्दीर्घै[6] रुदन्तीव समन्ततः ॥१०॥

१ ल-प्रत्या ।
२ ग, पुस्तके चेत्थ-सुखैश्च तरुभिः पुष्पफलभारै ।
३ ...
४ ग, ल, म-विभ्रष्ट ।
५ ल-तथैव ।
६ म-ऽर्दितान् ।

पुत्रप्रियोऽसौ शकुनिः पुत्र पुत्रेति भाषते ।
११] मधुरां करुणां वाचं पुरेव जननी मम ॥ ११ ॥
विहङ्गो भृङ्गराजोऽयं सालस्कन्धमुपाश्रितः[१०] ।
१२] सङ्गीतमिव कुर्वाणः कोकिलां चानुकूजति ॥ १२ ॥
अयं च बालकः शंके कोकिलानां विहङ्गमः ।
१३] असम्बद्धमसम्बद्धं तथा ह्येष प्रभाषते ॥ १३ ॥
एषा कुसुमितं चूतं पुष्पभारानता लता ।
१४] दृश्यते[११] मामिवात्यर्थं यथा देवि त्वमाश्रिता ॥ १४ ॥
एवमुक्त्वा प्रियस्याङ्कं मैथिली प्रियभाषिणी ।
१५] भूयस्तथाऽनवद्याङ्गी समारोहत भामिनी ॥ १५ ॥
विवर्त्तमाना चोत्सङ्गे सीता सुरसुतोपमा ।
१६] हर्षयामास रामस्य हृदयं प्रियदर्शना ॥ १६ ॥
स निघृष्याङ्गुलिं रामो गिरौ धौतमनःशिले ।
१७] चकार तिलकं पत्न्या ललाटे रुचिरं तदा ॥ १७ ॥
बालार्कसमवर्णेन तेन सा गिरिधातुना ।
१८] ललाटे विनिविष्टेन सूचयन्ती निशाऽऽगमम् ॥ १८ ॥
N] मुखचन्द्रस्तु वैदेह्या रक्तेन गिरिधातुना ।
अङ्कितस्सन्ध्यया पूर्णो निशाकर इवाबभौ ॥ १९ ॥
N] समनःशिलातिलकं वक्त्रं पङ्कजसन्निभम् ।
N] रक्तोत्पलविशालाक्षं पुण्डरीकमिवाबभौ ॥ २० ॥

---

८ ब, ल-पुरीष ।
९ ल-विहगे ।
१० कौ-ऽमपाश्रितः ।
११ ग—[illegible] ।

केसरस्य तु पुष्पाणि करेणामृष्य राघवः ।
१६] अलकान्[12] पूरयामास मैथिल्याः मीतिमावहन् ॥२१॥
अभिगम्य तया तस्यां शिलायां रघुनन्दनः ।
२०] अन्वीयमानो वैदेह्या[13] देशमन्यं जगाम सः ॥२२॥
विचरन्ती तदा सीता ददर्श हरियूथपम् ।
२१] वने बहुमृगाकीर्णे सा भयाद्द राममाश्रिता ॥ २३ ॥
रामस्तामपि बाहुभ्यां परिरभ्य[14] महाभुजः ।
२२] सान्त्वयामास वामोरुमभिलक्ष्य स वानरम् ॥ २४ ॥
मनःशिलायास्तिलकः सीतायाः सोऽथ वक्षसि ।
२३] समदृश्यत सङ्क्रान्तो रामस्य विपुलौजसः[15] ॥ २५ ॥
प्रजहास तदा सीता गते वानरयूथपे ।
२४] दृष्ट्वा भर्त्तरि सङ्क्रान्तं[16] तिलकं समनःशिलम्[17]॥ २६ ।
अपश्यदथ वैदेही वने तस्मिन् मनोहरम् ।
२५] अविदूरादशोकानां प्रदीप्तमिव काननम् ॥ २७ ।
दृष्ट्वा च साब्रवीद्द राममशोककुसुमार्थिनी ।
२६] सार्धं तदभिगच्छावो वनमिक्ष्वाकुनन्दन ॥ २८ ॥
तस्याः प्रियार्थं रामस्तु देव्या दिव्यानुरूपया[18] ।
२७] सहितस्तदशोकानां विशोकः प्रययौ वनम् ॥२६ ॥
तदशोकवनं रामः सभार्यो व्यचरत्तदा ।
२८] गिरिपुत्र्या पिनाकीव सह हैमवतं वनम् ॥ ३० ॥

---

१२ ल-अलकां ।
१३ म-वैदेही ।
१४ म-परिरस्य ।
१५ ल-विपुलो०।
१६ म-सङ्क्रान्तो ।
१७ व-शिलाम् ।
१८ व-दिव्यान्तरूपया ।

तावन्योन्यमशोकस्य पुष्पैः पल्लवधारिभिः[१९] ।
२६] समलञ्चक्रतुरुभौ कामिनौ नीललोहितौ ॥ ३१ ॥
आबद्धवनमालौ द्वौ कृतापीडावतंसकौ ।
३०] भार्यापती तावचलं शोभयाञ्चक्रतुस्तदा ॥ ३२ ॥
एवं स विविधान् देशान् दर्शयित्वा मिथो मिथः ।
३१] आजगामाश्रमपदं सुसंमृष्टमलङ्कृतम् ॥ ३३ ॥
प्रत्युज्जगाम संक्रान्तो[२०] लक्ष्मणो गुरुवत्सलः ।
३२] दर्शयन् विविधं कर्म सौमित्रि॰ स्वकृतं[२१] तदा ॥ ३४ ॥
शुद्धबाणहतांस्तत्र मेध्यान् कृष्णमृगान् दश ।
३३] राशीकृतान् पुष्टमांसानन्यांस्त्यक्त्वा च कांश्चन ॥ ३५॥
त [द्] दृष्ट्वा कर्म सौमित्रेर्भ्रातामीतोऽभवत्तदा ।
३४] क्रियन्तां वलयश्चेति रामः सीतामथान्वशात् ॥ ३६ ॥
अग्रं प्रदाय भूतेभ्यः सीताऽथ वरवर्णिनी ।
३५] तयोरप्यददद् भ्रात्रोर्मध्यं मांसं च सम्भृतम् ॥ ३७ ॥
तयोस्तुष्टिमथोत्पाद्य वीरयोः कृतशौचयोः ।
३६] विधिवज्जानकी साऽथ चक्रे स्वां[२२] प्राणधारणाम्[२२] ॥ ३८ ॥
शिष्टं मांसं निकृत्तं यच्छोषणायोपकल्पितम्[२३] ।
३७] तद् रामवचनात् सीता काकेभ्य पर्यरक्षत ॥ ३९ ॥
तां ददर्श ततो भर्त्ता काकेनायासितां भृशम् ।
३८] यः स सारान्तरचरः[२४] कामचारी विहङ्गम॰ ॥ ४० ॥
काकेनालोड्यमाना तां रामो व्यहसदाचराम् ।
३९] साधुकोपानवद्याङ्गीं भर्त्तुः प्रणयदर्पिताम् ॥ ४१ ॥

१९ ल-धारिभि ।
२० प, ल, म-सम्भ्रान्तो ।
२१ प, ल, म-सुकृत ।
२२ प-स्य प्राणधारणम् ।
२३ म-०द्धूलेपणा(?)ं
२४ प-सारातुरचरः ।

इतश्चेतश्च तां काको वारयन्तीं पुनः पुनः ।
४०] पक्षतुण्डनखाग्रैश्च कोपयामास कोपनाम् ॥ ४२ ॥
तस्याः प्रस्फुरमाणोष्ठं भ्रुकुटीपुटशोभितम् ।
४१] मुखमालोक्य काकुत्स्थस्तं काकं प्रत्यषेधयत् ॥ ४३ ॥
स धृष्टमानी विहगो राममप्यविचिन्तयन् ।
४२] सीतामभिपपातैव ततश्चुक्रोध राघवः ॥४४ ।
सोऽभिमन्त्र्य शरैषीकामिषीकास्त्रेण वीर्यवान् ।
४३] काकं तमभिसन्धाय ससर्ज पुरुषर्षभः ॥४५॥
स तयाऽभिद्रुतः काकस्त्रींल्लोकान् पर्यधावत ।
४४] देवैर्दत्तवरः पक्षी धारान्तरचरो लघुः ॥४६॥
यत्र यत्रागमत् काकस्तत्र तत्र ददर्श ह ।
४५] इषीकाभूतमाकाशं स[25] रामं[25] पुनरागमत् ॥४७॥
स मूर्धन्यपतत् काको राघवस्य महात्मनः ।
४६] सीतायास्तत्र पश्यन्त्या मानुषीमीरयन् गिरम् ॥४८
प्रसादं कुरु मे राम मार्गः सामग्र्यमस्तु मे[26] ।
४७] अस्त्रस्यास्य प्रभावेन शरणं न लभे क्वचित्[27] ॥४९॥
तं काकमब्रवीद्रामः पादयोः शिरसा नतम् ।
४८] सानुक्रोशतया धीमानिदं वचनमर्थवत् ॥५०॥
मया रोषपरीतेन सीताप्रियचिकीर्षया ।
४९] अस्त्रमेतत् समाधाय त्वद्वधायाभिमन्त्रितम् ॥५१॥
यतो मे चरणौ मूर्ध्ना नतस्त्वं जीवितेच्छया ।
५०] अय[28] त्ववेचा[28] त्वयि मे रक्ष्यो हि शरणागतः ॥५२॥

---

२५ घ, ङ, म—राम सपुन० । २६ म—०मस्तते ।
२७ म—कुचित् । २८ ल—यद्यत्व० ।

अमोघं क्रियतामस्त्रमङ्गमेकं[२९] परित्यज ।
५१] किमङ्गं शातयत्वेषा[३०] शरैषीकेति कथ्यताम् ॥५३॥
एतावद्धि मया शक्यं तव कर्तुं प्रियं खग ।
५२] एकाङ्गहीनो जीव त्वं जीवितं मरणाद्वरम् ॥५४॥
एवमुक्तस्तु रामेण सम्प्रधार्याथ वायसः ।
५३] अध्यवस्य द्वयोरक्ष्णोस्त्यागमेकस्य पण्डितः ॥५५॥
सोऽब्रवीद्राघवं काको नेत्रमेकं त्यजाम्यहम् ।
५४] एकनेत्रोऽपि जीवेयं त्वत्प्रसादान्नराधिप ॥५६॥
रामाज्ञातमस्त्रं तत् काकनेत्रमशातयत् ।
५५] वैदेही विस्मिता तत्र काकस्य नयने हृते ॥५७॥
निपत्य शिरसा काको जगामाशु यथेप्सितम् ।
५६] लक्ष्मणानुचरो रामश्चकारानन्तराः क्रियाः ॥५८॥
अथ सैन्यस्य महतो गजवाजिरथोद्धतः ।
५७] शुश्रुवे तुमुलः शब्दः सागरस्येव मथ्यतः ॥५९॥
अथ स विबुधराजविक्रमः
कमलदलायतदृष्टिरब्रवीत् ।
किमिदमिति समीक्ष्य लक्ष्मणं
५८] स गुरुवचः प्रतिपूज्य चोत्थितः ॥६०॥
इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे इषीकास्त्रविसर्जनं
नाम सर्गः ॥ [१०९] ॥

२९ ब—०मंत । | ३० ब, स, म—०यत्वेषा ।

[वं-१०६]=[दशाधिकशततमः सर्गः]=[०६]

अथ रामे तदासीने लक्ष्मणे चापि गच्छति ।
१] तस्य सैन्यस्य महतः प्रादुरासीन् महास्वनः ॥१॥ [N
तेन स्वनेन महता वर्धमानेन बोधिताः ।
२] गुहासंस्थास्तत्यजुर्व्याघ्रा निलिल्युर्वनवासिनः ॥२॥ [N
समुत्पेतुः खगास्तत्र मृगयूथाश्च दुद्रुवुः ।
३] ऋक्षाश्चोत्सृज्य वृक्षाग्रान् अपेतुर्हरयो गुहाः ॥३॥ [N
दवाग्नेरिव वित्रस्ता दुद्रुवुर्गजयूथपाः ।
४] व्यजृम्भन्त महासिंहा महिष्याश्च व्यलोकयन् ॥४॥ [N
बिलानि विविशुर्व्यालाः स्वस्ति जेपुर्द्विजातयः[२] ।
५] विद्याधराः समुत्पेतुः किन्नरा भेजिरे दरीः ॥५॥ [N
तमभ्यासमनुप्राप्तं तस्य देशस्य लक्ष्मणः ।
६] सैन्यस्यागच्छतः शब्दमेत्य रामे न्यवेदयत् ॥६॥ [N
तमुवाच ततो रामः सुमित्रा सुप्रजास्त्वया ।
७] महास्वनोऽतिगम्भीर स त्वया ज्ञायतामिति ॥७॥ [७
स लक्ष्मणश्च त्वरितः सालमारुह्य पुष्पितम् ।
८] दिशः क्रमेण सम्प्रेक्ष्य प्राचीं दिशमवैक्षत ॥८॥ [११
उदङ्मुखः स सम्प्रेक्ष्य ददर्श महतीं चमूम् ।
९] रथाश्वगजसम्पूर्णां यत्तैर्गुप्तां पदातिभिः ॥९॥ [१२
शंसमानो नरव्याघ्रो लक्ष्मणः परवीरहा ।
१०] शशंस सेनामायान्तीं वचनं चेदमब्रवीत् ॥१०॥ [१३
अग्निं संशमयत्वार्यः सीता चाविशतां गुहाम् ।
११] कुरु सज्ज्ये च धनुषी कवचं धारयस्व च ॥११॥ [१४

१ग. च. ते । [illegible] २ ग.—[illegible]जातिय

नागाश्वरथसम्पूर्णां तां चमूं सन्निशम्य सः ।
१२] रामः प्रपच्छ सौमित्रिं कस्येमां मन्यसे चमूम् ॥१२॥ [१५
राजा वा राजपुत्रो वा वनेऽस्मिन् मृगयागतः ।
१३] मन्यसे वा यथा तत्त्वं तथा लक्ष्मण शंस मे ॥१३॥ [१
एवमुक्तोऽथ रामेण लक्ष्मणो वाक्यमब्रवीत् ।
१४] दिधक्षुरिव कोपेन ज्वलितो हव्यवाहनः ॥१४॥ [१६
सपत्नो राज्यकामोऽयं व्यक्तं राज्ञाऽभिषेचितः ।
१५] आवां हन्तुमिहाभ्येति भरतः कैकयीसुतः ॥१५॥ [१७
असौ हि सुमहास्कन्धो विटपीव महाद्रुमः ।
१६] विराजते गजस्कन्धे कोविदारध्वजो यथा ॥१६॥ [१८
भजन्ति च यथाऽऽकाशमश्वा वायुजवा द्रुताः । [१९
१७] गृहीतधनुषश्चापि योधाः सज्जो भवानघ ॥१७॥ [२०
अथ वा त्वं गिरिगुहां सभार्यः प्रविश स्वयम् । [N
१८] अपि मेऽद्य समागच्छेत् कोविदारध्वजो रणे ॥१८॥ [२१
N] बाह्वोर्यदुचितं सर्वं तत्करिष्यामि राघव ।
N] अहमेकः करिष्यामि त्वत्सेव्यस्योचितं यथा ॥ १९ ॥ [N
अद्य मत्कार्मुकोत्सृष्टाः शराः कनकभूषणाः ।
N] पास्यन्ति रुधिरं नृणां हृदयादचिरादिव ॥ २० ॥ [N
एते भ्राजन्ति संहृष्टा हयानारुह्य सादिनः । [१९उ
१९] समन्तात् परियातास्ते रामशैलमुपाश्रिताः ॥ २१ ॥ [N
अपि पश्येयमद्याहं भरतं यत्कृते महत् । [N
२०] राघव त्वमिह प्राप्तो दुःखं वै सहितो मया ॥२२॥ [२२उ

---

३ ख, ग, म—॰मिवाभ्येति ।
४ ख—स्कन्दो ।
६ ग—मद्यहं ।
७ ग—यत्कृते ।

यत्कृते त्वमितो राज्यात् प्रच्युतो रघुनन्दन । [२२पू
२१] स सम्प्राप्तोऽप्ययं पापो भवतो बाणगोचरम् ॥२३॥ [२३पू
२२पू] भरतस्य वधे दोषं नाहं पश्यामि राघव । [२३उ
N] पूर्वापकारिणं हन्याद्‌ धर्मोऽयं तु विधीयते ॥ २४ ॥ [२४पू
N] पूर्वापकारी भरतस्त्यक्तधर्मश्च राघव । [२४उ
२२उ] तस्मिन् विनिहतेऽद्य त्वमनुशाधि वसुन्धराम् ॥२५॥ [२५पू
अथ पुत्रे हते साऽद्य कैकेयी राज्यकामिनी । [२५उ
२३] पुत्रं पश्यतु दुःखार्ता हस्तिभग्नमिव द्रुमम् ॥ २६ ॥ [२६पू
कैकेयीं च हरिष्यामि सानुबन्धां सबान्धवाम् । [२६उ
२४] कलुषेणाद्य[8] महता मेदिनी सम्प्रमुच्यताम् ॥२७॥ [२७पू
अद्येमं सञ्चितं क्रोधमसत्कारं च राघव । [२७उ
२५] प्रतिमोक्ष्यामि योधेषु कक्षेष्विव हुताशनम् ॥ २८ ॥ [२८पू
अद्येदं[10] चित्रकूटस्य काननं निशितैः [11]शरैः । [२८उ
२६] छित्त्वा शत्रुशरीराणि करिष्ये शोणितोक्षितम् ॥२९॥ [२९पू
शरैर्निर्भिन्नहृदयान् कुञ्जरांस्तुरगांस्तथा । [२९उ
२७] श्वापदाः परिकर्षन्तु नरांश्च निहतान् भुवि ॥३०॥ [३०पू
शराणां धनुषश्चाहमनृणोऽस्मिन् महावने । [३०उ
२८] ससैन्यं भरतं हत्वा भवेयं नात्र संशयः ॥३१॥ [३१उ

मथिततहयनागां स्यन्दनोत्क्षिप्तचक्रां
विमथितनरगात्रां शोणिताद्रां नरेश ।
भरतनृपतिसेनां पश्य चेमां शयानां
३०] मृगखगवृककृत्तामद्य मद्बाणभिन्नाम् ॥३२॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे लक्ष्मणकोपो
नाम सर्गः ॥[११०]॥

---

८ ख, ल, म-हनिष्यामि । | १० ख-अद्येम ।
९ ... | ११ ल-अद्यैव ।

[वं-१०७]=[एकादशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-९७]

अप्युक्रोधं च सौमित्रिं लक्ष्मणं क्रोधमूर्छितम् ।
१] रामः संशमयामास वचनं चेदमब्रवीत् ॥१॥ [१
विप्रियं कृतपूर्वं नौ कदा नु भरतेन किम् ।
२] अनिष्टं[1] भरतात् किं नौ येन त्वं[2] हन्तुमिच्छसि ॥२॥ [१४
किमत्र धनुषा कार्यमसिना चर्मवर्मणा ।
३] महेष्वासे महाप्राज्ञे[3] भ्रातरि स्वयमागते ॥३॥ [२
प्राप्तकालो यदेषोऽस्मान् भरतो द्रष्टुमिच्छति ।
४] अस्मासु मनसाऽप्येष नाहितं कर्तुमर्हति[4] ॥४॥ [१३
न च ते निष्ठुरं वाच्यो भरतो नाहितं वचः ।
५] अहं त्वप्रियमुक्तः[5] स्यां भरतस्याप्रिये कृते ॥५॥ [१५
कथं नु पुत्रः पितरं हन्यात् कस्याञ्चिदापदि ।
६] भ्राता वा भ्रातरं हन्यात् सौमित्रे प्रियमात्मनः ॥६॥ [१६
यदि वा राज्यहेतोस्त्वमिमां वाचं प्रभाषसे ।
७] वक्ष्यामि भरतं दृष्ट्वा राज्यमस्मै प्रदीयताम् ॥ ७ ॥ [१७
उच्यमानो हि भरतो मया लक्ष्मण तत्त्वतः ।
८] राज्यमस्मै प्रयच्छेति बाढमित्येव वक्ष्यति ॥८॥ [१८
तथोक्तो धर्मशीलेन भ्रात्रा[6] तस्य हिते रतः ।
९] लक्ष्मणः प्रविवेशेव स्वानि गात्राणि लज्जया ॥९॥ [१९
तद्वाक्यं लक्ष्मणः श्रुत्वा व्रीडितः प्रत्युवाच ह ।
१०] त्वां मन्ये[7] द्रष्टुमायातो भ्राता[8] ते भरतः स्वयम् ॥१०॥ [२०
व्रीडितं लक्ष्मणं दृष्ट्वा राघवः प्रत्युवाच ह ।
११] एष मन्ये महाबाहुरस्मान् द्रष्टुमिहागतः ॥ ११ ॥ [२१

१ ब, ल, म—मानिष्टं ।
२ ल—त्वां ।
३ ल—० प्रज्ञे ।
४ ल—०मिच्छति ।
५ ब, म—तु प्रिय० ।
६ ल, म—भ्रात्रा ।
७ ब, ल, म—मन्ये त्वां ।
८ ब, ल—भ्रातास्ते ।

N] वनवासकृतं दुःखं चिन्तयन् भ्रातृवत्सलः । [N
इमां च प्रेक्ष्य वैदेहीमत्यन्तसुखसेविताम्[९] ।
१२] वनवासमनुध्याय गृहं[१०] नेतुमिहागतः[१०] ॥१२॥ [२३
एतौ तौ सम्प्रकाशेते शोभयन्तौ महाभुजौ ।
१३] वायुवेगोपमैर्नीतावग्रतो जवनैर्हयैः ॥ १३ ॥ [२४
एष वै स महाकायो राजते वाहिनीमुखे ।
१४] नागः शत्रुञ्जयो नाम वृद्धस्तातस्य सम्मतः ॥१४॥ [२५
इति सम्भाषमाणस्तु रामः सौमित्रिणा सह ।
१५] तां चमूं हर्षसंपन्नां ददर्श सह सीतया ॥ १५ ॥ [N
अवतीर्य च शैलाग्राल्लक्ष्मणो लज्जया नतः ।
१६] रामस्य पार्श्वमागत्य वीरस्तस्थावधोमुखः ॥१६॥ [२८
भरतेनाथ सन्दिष्टा सम्मर्दो मा भवेदिति ।
१७] समन्तात् तस्य देशस्य सेनावासमकल्पयत् ॥१८॥ [२९
अध्यर्धमिक्ष्वाकुचमूर्योजनं पर्वतस्य च ।
१८] आवृत्यावासिताऽरण्ये गजवाजिसमाकुला ॥१९॥ [३०
निवेश्य सेनां स विभुः पद्भ्यां पादवतां वरः ।
१९] अभिगन्तुं स काकुत्स्थमियेष गुरुवत्सलः ॥ २० ॥
सा चित्रकूटे भरतेन सेना[११]
धर्मं पुरस्कृत्य विहाय दर्पम् ।
प्रसादनार्थाय तदाऽग्रजस्य
२०]. विराजते नीतिविदा प्रणीता[११] ॥ २१ ॥ [३१

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे लक्ष्मणवाक्यं नाम सर्गः ॥ [१११]॥

---

९ ब, ल, म—O ।
१० ब, ल—गृहान्ने० ।
११ ब, ल—प्रतीता ।

[चं–N]=[द्वादशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-९८]

निविष्टायां तु सेनायां यथाऽऽदिष्टं विनीतवत् ।
भरतो भ्रातरं वाक्यं शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [२
क्षिप्रमिदं वनं सौम्य नरसिंहः[1] समन्ततः ।
लुब्धकैः सहित सर्वैः समन्वेषितुमर्हति ॥ २ ॥ [३
गुहो[2] ज्ञातिसहस्रेण शरचापासिधारिणा ।
वने वसन्तं काकुत्स्थमस्मिन् परिवृतस्त्वया ॥ ३ ॥ [४
रामं यावन्न पश्यामि लक्ष्मणं च महाबलम् ।
वैदेहीं च महाभागां न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ४ ॥ [६
[यावन्न चन्द्रसंकाशं पश्यामि शुभमाननम् ।
भ्रातुः पद्मपलाशाक्षं न मे शान्तिर्भविष्यति] [A
यावन्न चरणौ भ्रातुः पार्थिवव्यञ्जनान्वितौ ।
शिरसा प्रगृहीष्यामि न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ५ ॥ [७
परिष्वज्य भुजाभ्यां तु यावन्न वदतां वरः ।
स करिष्यति धर्मात्मा न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ६ ॥ [N
यावन्न चंद्रसङ्काशं पश्यामि शुभमाननम् ।
भ्रातुः पद्मपलाशाक्षं न मे शांतिर्भविष्यति ॥ A [N
यावन्न राज्ये राज्यार्हः पितृपैतामहे स्वके ।
न निवेक्ष्यति काकुत्स्थो राजीवाक्षो महाद्युतिः ॥७॥ [१०
कृतकार्या महाभागा वैदेही जनकात्मजा ।
भर्तारं च समागत्य पृथिवीं नाधिगच्छति ॥८॥O [११

१ ब—नरसिंह ।
२ ल—गुहो० ।

A ब, ल—इत्यधिकम् ।
म—O ।

स्वस्ति[3] नश्चित्रकूटोऽयं[3] गिरिराजो महाद्युतिः ।O
यस्मिन् वसति काकुत्स्थः कुवेर इव मन्दिरे ॥ १० ॥ [१२
कृतकार्यमिदं दुर्गं वनं व्यालनिषेवितम् ।
अध्यास्ते यन्महातेजाः रामः शस्त्रभृतांवरः ॥११॥ [१३
एवमुक्त्वा महाबाहुर्भरतः पुरुषर्षभः ।
पद्भ्यामेव महातेजाः प्रविवेश महद्वनम् ॥ १२ ॥ [१४
स तानि द्रुमजालानि जातानि गिरिसानुषु ।
पुष्पिताग्राणि मध्येन जगाम वदतां वरः ॥१३॥O [१५
स गिरेश्चित्रकूटस्य सानून्यन्विष्य वेगितः ।O
रामाश्रमकृतस्याग्नेर्ददृष्टवान् धूममुत्थितम्[4] ॥१४॥ [१६
तं दृष्ट्वा भरतः श्रीमान् मुमोद सह बान्धवः ।
अस्ति राम इति ज्ञात्वा गतः[5] पारमिवाम्भसः ॥१५॥ [१७
स चित्रकूटेऽथ[6] गिरौ निशम्य
रामाश्रमं पुण्यजनोपसेवितम् ।
गुहेन सार्धं त्वरितो जगाम
पुनर्व्यवस्थाप्य चमूं महात्मा ॥१६॥ [१८

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतगमनं
नाम सर्गः ॥ [११२]॥

---

३ ल- स्वस्थिरः । O म । O ल—।

४ ल—०मुत्थितः ।
५ ल—गत्वा ।
६ ल म—०षु ।

[चं-१०८]=[त्रयोदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-९९]

निविष्टायां तु सेनायामुत्सुको भरतस्तदा ।
१] जगाम भ्रातरं द्रष्टुं शत्रुघ्नसहितो विभुः ॥१॥ [१
ऋषिं वसिष्ठं सन्दिश्य मातॄर्मे शीघ्रमानय ।
२] इति त्वरितमग्रे स जगाम गुरुवत्सलः ॥२॥ [२
सुमन्त्रस्त्वथ शत्रुघ्नं त्वरावानन्वपद्यत ।
३] रामदर्शनजो हर्षो भरतस्येव तस्य हि ॥३॥ [३
पृच्छन्नेवाथ भरतस्तापसांस्तांस्तपस्वितान्[1] ॥४॥
४] ददर्श च वने तस्मिन् महतः सञ्चयान् कृतान् ।
मृगाणां महिषाणां च करीषानग्निकारणात् ॥५॥ [७
५] गच्छन्नेव महाबाहुर्द्युतिमान् पुरुषर्षभः ।
अमात्यानब्रवीत् सर्वान् भरतः सत्कृताश्रितः ॥६॥ [८
६] मन्ये प्राप्ताः स्म तं देशं भरद्वाजोऽयमब्रवीत् ।
नातिदूरामहं[2] मन्ये नदीं मन्दाकिनीमितः ॥७॥ [९
७] इदं फलानां संश्लिष्टं पुष्पाण्यवचितानि च । [N
काष्ठानि परिभग्नानि मूलान्यावेष्टितानि च ॥८॥ [५ज
८] उच्चैर्बद्धानि चीराणि लक्ष्मणेन तथैव च ।
अभिज्ञानादितः[3] पन्था विमलोऽनस्समीपुषाम् ॥९॥ [१०
९] अयं पाण्डुरदन्तानां कुञ्जराणां तरस्विनाम् ।
शैलपार्श्वे समाक्रान्तुमन्योन्यमभिगर्जताम्[4] ॥१०॥ [११
१०] यमप्याधातुमिच्छन्ति[5] तापसाः सततं वने ।
तस्यासौ दृश्यते धूमः सङ्कुलः कृष्णवर्त्मनः ॥११॥ [१२

---

१ ल—०सांस्तानुप० ।
२ ल—०रावहं ।
३ ल—अभिज्ञा० ।
४ च, ल—०क्रान्तम० ।
५ च, ल—यमप्यादातु० ।

११] अहं तं पुरुषव्याघ्रं पितुरादेशकारिणम् । :
अथ[१] द्रक्ष्यामि काकुत्स्थं महर्षिसमदर्शनम् ॥१२॥ [१३

१२] अथ गत्वा मुहूर्तं स चित्रकूटं समीपतः ।
मन्दाकिनीमनुप्राप्य तं जनं वाक्यमब्रवीत् ।१३॥ [१४

१३] अयं स पुरुषव्याघ्र आस्ते वीरासने रतः ।
नरेन्द्रो निर्जनं प्राप्तो लोकनाथो महाद्युतिः ॥१४॥ [१५

१४] मत्कृते व्यसनं प्राप्तो लोकपालोपमोऽवशः ।
सर्वान् कामान् परित्यज्य वने वसति राघवः ॥१५॥ [१६

१५] *तस्याहं लोकनाथस्य पादयोः सम्प्रसादयन् ।*
रामस्य निपतिष्यामि सीतायाश्च पुनः पुनः ॥१६॥ [१७

१६] एवं लालप्यमानः स वने दशरथात्मजः ।
ददर्श महतीं पुण्यां पर्णशालां मनोरमाम् ॥१७॥ [१८

१७] सालतालाश्वकर्णानां पर्णैर्बहुभिराचिताम् ।
विशालां मृदुविस्तीर्णां दर्भैर्वेदीमिवाध्वरे ॥ १८ । [१९

१८] शक्रायुधनिकाशाभ्यां कार्मुकाभ्यां विभूषिताम् ।
महद्भयां रुक्मपृष्ठाभ्यां नागाभ्यामिव चाचिताम् ॥१९॥[१७

१९] अर्करश्मिप्रतीकाशैर्घोरैस्तूणगतैः शरैः ।
शोभितां दीप्तवदनैर्नागैर्भोगवतीमिव ॥ २० ॥ [२१

२०] महारजतकान्ताभ्यामसिभ्यां च विराजिताम् ।
रुक्मबिन्दुविचित्राभ्यां धनुर्भ्यामुपशोभिताम् ॥२०॥[२२

२१] गोधाङ्गुलित्रैरासक्तैश्चित्रैः कनकभूषणैः ।
अरिसंघैरनाधृष्यां[१] नरैः सिंहगुहामिव ॥ २२ ॥ [२३

---

१ ख, ल, म—अथ ।
७ ल[illegible]

८ ल-चार्ताभ्यां ।
६ [illegible]

२२] प्रागुदिष्टे[१०] वनोद्देशे वेदीं सन्दीप्तपावकाम् ।
दर्दश भरतस्तत्र पुण्यां रामनिवेशने ॥ २३ ॥ [२४
२२] स विलोक्य मुहूर्त्तं तु ददर्श भरतो गुरुम् ।
२४पू] उटजे राममासीनं जटावल्कलधारिणम् ॥२४॥ [२५
N] तं तु कृष्णाजिनधरं जटिलं चीरवाससम् ।
N] ददर्श राममासीनमभितः पावकोपमम् ॥२५॥ [२६
२४उ] सिंहस्कन्धं महाबाहुं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ।
पृथिव्याः सागरान्ताया भर्त्तारं धर्मचारिणम् ॥२६॥ [२७
२५] महात्मानं महाभागं ब्रह्माणमिव शाश्वतम् ।
सहोपविष्टमासीनं सीतया लक्ष्मणेन च ॥२७॥O [२८
२६] तं दृष्ट्वा भरतः श्रीमान् दुःखशोकपरिप्लुतः ।
अभ्यधावत धर्मात्मा भ्रातरं कैकयीसुतः ॥२८॥ [२९
२७] दृष्ट्वा च विललापार्त्तो बाष्पसन्दिग्धया गिरा ।
अशक्नुवन् वारयितुं शोकं वचनमब्रवीत् ॥२९॥ [३०
N] यः संसदि प्रकृतिभिः सततं परिवार्यते ।
२९उ] वन्यैर्मृगैः परिवृतः सोऽयमास्ते ममाग्रजः ॥३०॥ [३१
वासोभिर्बहुसाहस्रैर्यो महात्मा परिष्कृतः ।
३०] मृगाजिनधरः सोऽद्य प्रसुप्तो जगतीतले ॥ ३१ ॥ [३२
अधारयद्ध यो विविधाश्चित्राः सुमनसां स्रजः ।
३३] सोऽयं जटाभारमिमं वहते राघवः कथम् ॥३२॥ [३३
मन्निमित्तमिदं प्राप्तो दुःखं रामः सुखोचितः ।
३४] धिग् जीवितं नृशंसस्य मम लोकविगर्हितम् ॥३३॥ [३६

O के नय श्लोकः । [त्यक्त भाति लेखकप्रमादात् ।]

O–म

१०–प्रागुदिष्ट ।

इत्येवं विलपन् दीनः प्रस्विन्नमुखपङ्कजः ।
३५] पादावुपेत्य रामस्य प्रापतद्द भरतो भुवि ॥ ३४ ॥ [३७
दुःखाभिभूतो भरतो राजपुत्रो महाबलः ।
३६] उक्त्वाऽऽर्येति सकृद्द दीनं पुनर्नोवाच किञ्चन ॥३५॥ [३८
बाष्पापिहितकण्ठो[१२] हि रामं दृष्ट्वा यशस्विनम् ।
३७] हा ऽऽर्येत्येवं समाभाष्य व्याहर्तुं न शशाक ह ३६॥[३९
शत्रुघ्नश्चापि रामस्य ववन्दे चरणौ रुदन् ।
३८] तावुभौ तु समालिंग्य रामोऽप्यश्रूण्यवर्त्तयत् ॥३७॥ [४०
ततः सुमन्त्रेण च तेन चैव
समीयिवान् राजसुतावरण्ये ।
दिवाकरश्चैव निशाकरश्च
३९] यथाम्बरे शुक्रबृहस्पतिभ्याम् ॥ ३८ ॥ [४१
तान् पार्थिवान् वारणमुख्यकल्पान्[१३]।
समागतांस्तत्र महत्यरण्ये ।
वनौकसः प्रेक्ष्य समेत्य सर्वे
४०] कृपागृहीता रुरुदुस्तदानीम् ॥ ३९ ॥ [४२
इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतदर्शनं
नाम सर्गः ॥ [११३] ॥

१३ब—वारणकल्पमुख्यान्।

[वं०–१०६]=[चतुर्दशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१००

आघ्राय च स तं मूर्ध्नि परिष्वज्य च राघवः ।
१] अङ्के भरतमारोप्य पर्यपृच्छत् समाहितः ॥१॥ [३
क नु तात पिता ते ऽभूद् यदरण्यं त्वमागत. ।
२] न हि त्वं जीवतस्तस्य गुरोरागन्तुमर्हसि ॥ २ ॥ [४
चिरस्य बत पश्यामि दूराद्भरतमागतम् ।
३] दुष्प्रणीतमरण्ये ऽस्मिन् किं तात वनमागतः ॥ ३ ॥ [५
कच्चिद् दशरथो राजा कुशली सत्यसङ्गर. ।
४] राजसूयाश्वमेधानामाहर्ता[1] धर्मतत्त्ववित् ॥ ४ ॥ [८
स कच्चिद्[2] ब्राह्मणो विद्वान् धर्मनित्यस्तपोधनः ।
५] इक्ष्वाकूणामुपाध्यायो यथावत् तात पूज्यते ॥ ५ ॥ [९
तात कच्चिच्च कौसल्या सुमित्रा च तपस्विनी ।
६] सुखिता कच्चिदार्या च देवी नन्दति कैकयी ॥६॥ [१०
कच्चिद्द विनयसम्पन्नः कुलपुत्रो बहुश्रुत ।
७] अनसूयुरनुद्रष्टा सत्कृतस्ते पुरोहितः ॥ ७ ॥ [११
कच्चिदग्निषु ते युक्तो ब्राह्मणो मतिमानृजुः ।
८] हुतं च होष्यमाणं च काले वेदयते सदा ॥ ८ ॥ [१२
इष्वस्त्रे परमाचार्यमर्थशास्त्रविशारदम्[3] ।
९] सुधन्वानमुपाध्यायं कच्चित्त्वं नावमन्यसे ॥९॥ [१४
कच्चिदात्मसमाः शूराः श्रुतवन्तो जितेन्द्रियाः ।
१०] कृतज्ञाश्चेङ्गितज्ञाना भक्तास्ते तात मन्त्रिण. ॥१०॥ [१५

---

१ ब—०माहर्ता ।
ल—०माहर्ता ।

२ म—कच्चिद्द ।
३ ब, ल, म—०मस्त्रशास्त्र० ।

मन्त्रमूलो हि विजयो राज्ञां भवति राघव ।
११] सुसंवृतो मन्त्रिवरैरमात्यैर्मन्त्रकोविदैः ॥ ११ ॥ [१६
कच्चिन्निद्रावशं नैषि कच्चित् काले विबुध्यसे ।
१२] कच्चिच्चापररात्रेषु चिन्तयस्यर्थमर्थवित् ॥ १२ ॥ [१७
कच्चिन्मन्त्रयसे नैकः कच्चिन्न बहुभिः सह ।O
१३] कच्चिन्नामन्त्रितो मन्त्रो न राज्यमनुधावति ॥१३॥ [१८
कच्चिदर्थं विनिश्चित्य लघुमूलं महोदयम् ।
१४] क्षिप्रमारभसे कर्तुं न विलम्बसि राघव ॥ १४ ॥ [१९
कच्चिन्न क्रियमाणानि कच्चित्तत्प्रवणानि वा ।
१५] विदुस्ते सर्वकार्याणि कर्तव्यानि नरेश्वराः ॥१५॥O [२०
कच्चिन्न राज्यहेतोर्वा चयापचयशङ्किना ।
१६] त्वया चाप्यथवाऽमात्यैर्बध्यन्ते तात मानवाः ॥१६॥O[२१उ
कच्चिन् मूर्खसहस्रेणाप्येकं क्रीणासि पण्डितम् ।
१७] पण्डितो ह्यर्थकृच्छ्रेषु नृपाश्रि श्रेयसं वचः ॥१७। [२२
सहस्रैरपि मूर्खाणां यो नृप पर्युपास्यते ।
१८] तथैवाप्ययुतैस्तस्य नास्ति तेषु सहायता ॥ १८ ॥ [२३
एको ह्यमात्यो मेधावी शूरो दान्तो विचक्षणः ।
१९] राजानं राजपुत्रं वा प्रापयेन महतां श्रियम् ॥१९॥ [२४
कच्चिन् मुख्या महत्स्वेव मध्यमेषु च मध्यमाः ।
२०] जघन्याश्च जघन्येषु भृत्यास्ते तात योजिताः ॥२०॥ [२५
कच्चित् कृषिकरास्तात सुनिविष्टा जनाकुलाः ।
२१] देवस्थानैः प्रपाभिश्च तडागैश्चापसेविताः[४] ॥ २१ ॥ [४३
महृष्टनरनारीक समाजोत्सवभूषित[५] ।

O ख—नास्ति ।
O ल, म—नास्ति ।
O ल, म —नास्ति ।

४ ग—०श्चापशामिताः ।
५ ल—०श्लोका ।
६ ल —भूषिता ।

२२] सुकृष्टसोमः पशुमान् विहिंसापरिवर्जितः ॥२२॥[४४
अदेवद्रोहक कच्चिदापद्भिश्चैव वर्जितः । [N
२३] कच्चिज्जनपदः स्फीतः सुखं वसति राघव ॥२३॥ [४६ उ
N] प्रहृष्टनरनारीकाः सुनिरुद्धिगोकुलाः ।[७] [N
२४पू] कच्चित्ते निरता वैश्याः कृषिगोरक्ष्यकर्मसु ॥ २४ ॥[४७पू
२५] त्वया हि राज्ञा धर्मेण सर्वे विषयवासिनः ॥२५॥[८] [४८उ
कच्चित् स्त्रियः सान्त्वयसि कच्चित्ताश्च सुरक्षिताः ।
२६] कच्चिन्न श्रद्दधास्यासां कच्चिद् गुह्यं न भाषसे ॥२६॥[०] [४६
कच्चिन्नागवनं गुह्यं कैकेयी सुप्रजास्त्वया ।
२७] कच्चिदुन्नतदन्तानां कुञ्जराणां न तृप्यसे ॥ २७ ॥ [५०
कच्चित् सभार्यो रमसे कच्चित् काले विबुध्यसे ।
N] कच्चिच्च पररात्रेषु धर्मार्थे विप्रबुध्यसे ॥ २८ ॥ [N
कच्चित् सङ्ग्रामनीतिज्ञः शूरस्ते वाहिनीपतिः ।
२८] असंहार्योऽनुरक्तो[६] हि लोको नित्यं च तिष्ठति ॥२६॥ [N
कच्चिच्च लोकायतिकान् ब्राह्मणानुपसेवसे ।
२६] अनर्थकुशला ह्येते मूढाः[१०] पण्डितमानिनः ॥३०॥ [३८
शास्त्रेष्वन्येषु मुख्येषु विद्यमानेषु दुर्बुधाः ।
३०] बुद्धिमान्वीक्षिकीं प्राप्य न निन्दां वर्धयन्ति[११] ते ॥३१॥ [३६
कच्चिद्दर्शयसे नित्यं मनुष्यान् समलङ्कृतान् ।
N] उत्थायोत्थाय पूर्वाह्णे मुक्त्वा च विदितं जनम् ॥३२॥ [५१
कच्चित् का [क] न्ये[१२] च सायं च तवासीनस्य चाग्रतः ।

---

७ ख, म - नास्ति ।
८—कै—अस्यश्लोकस्य पूर्वार्द्धं लुप्तिं प्रतीयते ।
०—ल, म—नास्ति ।
८—के ल, म—परिषिपा० ।
६—ख ल, म—असहार्यो० ।
१० ख, ल, म -भूय. ।
११- ख, म—कारयन्ति ।
१२-ख—काले ।

] पिबन्ति मदिरां नागा भुञ्जते भोजनानि च ॥ ३३ ॥ [N
कच्चित् पितरि सद्वृत्तिं वर्तसे पुरुषर्षभ ।
३१] पितामहानामपि वा वर्तसे तुल्यगौरवः ॥ ३४ ॥ [N
अमात्यानुपधातीतान् पितृपैतामहान् शुचीन् ।
३२] ज्येष्ठान् ज्येष्ठेषु कच्चिच्च नियोजयसि कर्मसु ॥३५॥ [२६
कच्चिद्भक्ष्यं तथा भोज्यमेको नादसि राघव ।
३३] कच्चिदाशंसमानेभ्यो भ्रातृभ्यः[१३] सम्प्रयच्छसि ॥३६॥ [७५
कच्चिदश्वांश्च नागांश्च भोजयन्ति तथागतः ।
३४] शस्त्रकर्मकृतो[१४] वैद्या दक्षा कुशलमानिनः ॥ ३७ ॥ [N
कच्चित्ते वाहनं गुप्तं वञ्चका न हरन्ति ते । ट
३५] कच्चिन्न राष्ट्रे वर्तन्ते परस्वापहारिणः ॥३८॥ [N
कच्चित् त्वां नावजानन्ति याजका पतितं यथा ।
३६] उग्रं प्रतिगृहीतारं कामयानमिव स्त्रियः ॥ ३९ ॥ [२८
ये बालिशा[१५] ये च दक्षा ये मूढा ये[१६] च पण्डिताः ।
३७] दृष्ट्वा[१७] तं जीवितं तेषां कच्चित्ते तेऽनुरक्षिताः ॥४०॥ [N
उपायकुशलं वैद्यं भृत्यं सम्भाषणे रतम् ।
३८] शूरमैश्वर्यकामं च यो न युङ्क्ते[१८] स वर्धते ॥४१॥ [२९
कच्चित् ते बलिनो मुख्याः सर्वयुद्धविशारदाः ।
३९] दृष्टापदानविक्रान्तास्त्वया सत्कृत्य मानिताः ॥४२॥ [३०
कच्चिद् धृष्टश्च शूरश्च धृतिमान् मतिमान् शुचिः ।
४०] कुलीनश्चानुरक्तश्च दक्षः सेनापतिस्तव ॥ ४३ ॥ [३१

१३-घ, ङ, म—भृत्येभ्य ।
१४-ङ—एते ।
१५-ङ—बालिशाश्च ये दक्षाः ।
१६ घ ङ, म—मूर्खा० ।
१७-घ, ङ, प—तिष्ठन्तं ।
१८-प—नियुङ्क्ते ।

कच्चिद् बलस्य भक्तं च वेतनं च यथोचितम् ।
४१] सम्प्राप्तकालं दातव्यं ददासि न विशङ्कसे ॥४४॥ [३२
कालातिक्रमणादेव भक्तदातव्यवर्जिताः ।
४२] भर्तुरप्यकुर्वन्ति सोऽनर्थः सुमहान् भवेत् ॥ ४५ ॥ [३३
कच्चित् पूर्वानुरक्तास्ते कुलपुत्राः प्रधानतः ।
४३] आहवेषु प्रियान् प्राणान् सन्त्यजन्ति समाहिताः॥४६॥ [३४
कच्चिद् दानवशो विद्वान् दक्षिणः प्रतिभानवान् ।
४४] यथोक्तवादी[19] दूतस्ते कृतो भरत पण्डितः ॥४७॥ [३५
कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दश पञ्च च ।
४५] त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातैर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः ॥४८॥ [३६
कच्चित्त्वं युध्यतामग्रे प्रतिपन्नश्च सर्वशः ।
४६] सुदुर्बलान् वारयंश्च वर्तसे रिपुसूदन ॥ ४९ ॥ [N
वीरैरध्युषितां[20] नित्यमस्माकं तात पूर्वजैः ।
४७] सत्यनाम्नीं दृढद्वारां हस्त्यश्वरथसङ्कुलाम् ॥ ५० ॥ [४०
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः रतैस्तात स्वकर्मसु ।
४८] जितेन्द्रियैर्महोत्साहैर्दृढवीर्यैः सहस्रदैः ॥ ५१ ॥ [४१
प्रासादैर्विविधाकारैर्भृतां दिव्यैरलङ्कृताम् ।
४९] कच्चिच्च मुदितां स्फीतामयोध्यां परिरक्षसि○ ॥५२॥ [४२
कच्चित् मनुष्यशार्दूल मनुष्यान् समलङ्कृतान् । ○
५०] उत्थायोत्थाय पूर्वाह्णे राजपुत्राभिवीक्षसे ॥ ५३ ॥ [५१
कच्चित् सदा ते दुर्गाणि धनधान्यायुधादिकैः[21] ।
५२] यन्त्रैश्च परिपूर्णानि तथा शिल्पैर्धनुर्धरैः ॥ ५४ ॥ [५३

१९-ख युक्तोर्थवादी ।
२०-ख,म—वीरैश्चाप्यु० ।
○—म—नास्ति ।
२१-म—न्यायुधाधिकैः ।

आयस्ते विपुलः कच्चित् कच्चित्स्वल्पतरं व्ययः ।
५३] अपात्रेषु नते कच्चित् कोषो गच्छति राघव ॥५५॥ [५४
देवतार्थेषु पितृषु ब्राह्मणाभ्यागतेषु च ।
५४] योधेषु मित्रवर्गेषु कच्चिद्ग गच्छति ते व्ययः ॥५६॥ [५५
कच्चिदार्यो विशुद्धात्मा क्षपितश्चोरकर्मणो ।
५५] अदृष्टशास्त्रकुशलैर्नायं ध्यायति मानवः ॥ ५७ ॥ [५६
गृहीतलोक आरब्धः[22] कुशलो दृष्टकारणः ।
५६] कच्चिन्न मुच्यते चौरो धनलोभान्नरर्षभ ॥५८॥ [५७
कच्चिच्चाविदितार्थेषु बलिनो दुर्बलस्य च ।
५७] अपक्षपातात् पश्यन्ति कार्येष्वधिकृता नराः ॥ ५९ ॥ [N
यानि मिथ्याऽभिशस्तानां पतन्त्यश्रूणि रोदताम्[21] ।
५८] तानि पुत्रपशून् घ्नन्ति तेषां मिथ्या ऽभिशंसिनाम् ॥६०॥ [५९
कच्चिद्ग वृद्धांश्च बालांश्च मुख्यान् वैद्यांश्च सम्मतान् ।
५९] दानेन वचसा चैव यथावद्यार्चसे ऽनघ ॥ ६१ ॥ [६०
कच्चिद्ग गुरूंश्च वृद्धांश्च तापसान् देवताऽतिथीन् ।
६०] पूज्यांश्च सर्वान् सिद्धार्थान् ब्राह्मणांश्च नमस्यसि ॥६२॥ [६१
कच्चिदर्थेन वा धर्ममर्थं धर्मेण वा पुनः ।
६१] उभौ वा प्रीतिसारेण न कामेन प्रबाधसे ॥६३॥ [६२
कच्चिदर्थं च धर्मं च कामं च वदतां वर ।
६२] विभज्य काले कालज्ञ सर्वान् भरत सेवसे ॥ ६४ ॥ [६३
कच्चित्ते ब्राह्मणाः सर्वे धर्मकामार्थकोविदाः ।
६३] न शोचन्ति महाप्राज्ञाः पौरजानपदैः सह ॥ ६५ ॥ [६४

२२-प, ल म—सरल. । । २१ प—शोचताम् ।

नास्तिक्यमनृतं क्रोधः प्रमादो दीर्घसूत्रता ।
६४] अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पापद्धचिता ॥ ६६ ॥ [६७
एकं चिन्तमर्थानामनर्थश्चोपमन्त्रणम्[२४] ।
६५] निश्चितानांच नारम्भो मन्त्रस्यापरिरक्षणम् ॥६७॥ [६६
N] मङ्गलानामयोगश्च[२५] प्रीत्युत्सर्गश्च सर्वशः ।
कच्चित् त्वं वर्जयस्येतान् राजदोषान् चतुर्दश ।
६६] यैराविष्ट. श्रियं क्षिप्रं नाशयेत्पृथिवीपति ॥६८॥ [६७
तथा तं चानुपृच्छन्तं रामं व्यथितचेतनः ।
११०-१] अज्ञापयत शोकार्तो भरतो मरणं पितु. ॥ ६९ ॥ [N
त्वामेव शोचंस्तव दर्शनेप्सु-
स्त्वय्येव तां तामविचार्य बुद्धिम् ।
त्वया विहीनस्तव शोकरुद्ध[२६]-
३] स्त्वदर्थमेवास्तमितः पिता नः ॥ ७० ॥ [N
पूर्वं च राजास्तमिहानुयुज्य
श्रुत्वा च वाक्यं भरतस्य तस्य ।
चिकीर्षमाणो रघुनन्दनस्तदा
४] पितुः प्रतिज्ञां स बभूव तूष्णीम् ॥ ७२ ॥ [N
इत्यार्षे ०रामायणे अयोध्याकाण्डे
कच्चित्को नाम सर्गः ॥ ११४ ॥

---

२४ ब—० मनर्थस्याप०
२५ ब—मंगलमासयोगश्च
२६ ख— षृदः ।

[घ-११०]=[पञ्चदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१०१]

तं तु रामः समाश्वास्य भरतं गुरुवत्सलम् । [१पू०
N] उत्थाप्य मूर्ध्नि चाघ्राय पादयोः पतितं तदा ॥१॥ [N
किमेतदिच्छेयमहं श्रोतुं यद्¹ व्याहृतं त्वया ।
N] कस्मात् त्वमागतो देशमिमं चीरजटाधरः ॥२॥ [२
यन्निमित्तमिमं देशं कृष्णाजिनजटाधरः ।
N] हित्वा राज्यं प्रविष्टस्त्वं तत् सर्वं वक्तुमर्हसि ॥३॥ [३
इत्युक्तः केकयीपुत्रः काकुत्स्थेन महात्मना ।
N] प्रमृज्य बाष्पं बाहुभ्यां प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥४॥ [४
आर्यो राज्यं परित्यज्य कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ।
२] गतः स्वर्गं महाबाहुः पुत्रशोकाभिपीडितः ॥५॥ [५
दुष्टां स्त्रीबुद्धिमास्थाय कैकेयी राज्यकामिनी । [N
५] चकार सुमहत्पापमिदं मम यशोहरम् ॥६॥ [६
सा राज्यफलमप्राप्य विधवा शोककर्शिता ।
६] पतिष्यति महाघोरे निरये जननी मम ॥७॥ [७
तस्य मे दासभूतस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ।
७] अभिषिच्यस्व चानेन राज्येन मघवानिव ॥८॥ [८
इमाः प्रकृतयः सर्वा विधवा मातरश्च मे ।
८] त्वत् सकाशमनुप्राप्ताः प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥९॥ [९
त्वमानुपूर्व्यतो² युक्तं युक्तं कामेन मानद ।
९] राज्यं प्राप्नुहि धर्मेण सकाशात् सुहृदः कुरु ॥१०॥ [१०
भवत्वविधवा भूमिस्त्वया पत्या समन्विता ।
१०] शशिना विमलेनेव शारदी रजनी यथा ॥११॥ [११

---

१ ब—यद् ।
२ ब, म—त्वमानुपूर्वतो ।
म—त्वामनुपूर्वतो ।

मातृभिः सचिवैः सर्वैः शिरसा याचितो मया ।
११] भ्रातुः प्रियस्य दासस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥१२॥ [१२
तदिदं शाश्वतं सर्वं पित्र्यं सचिवमण्डलम् ।
१२] पूजितं मनुजव्याघ्र नावमानितुमर्हसि ॥१३॥ [१३
एवमुक्त्वा महाबाहुः सत्वाढ्यः केकयीसुतः ।
१३] रामस्य पादौ शिरसा जग्राह भरतस्तदा ॥१४॥ [१४
१४पू] तमार्त्तमिव मातङ्गं निःश्वसन्तं मुहुर्मुहुः । [१५पू
१५पू] कुलीनः सत्त्वसम्पन्नस्तेजस्वी चरितव्रतः ॥१५॥ [१६पू
१४उ] रामोऽप्यथाब्रवीद्वाक्यं भरतं केकयीसुतम् । [१५उ
१५उ] राज्यहेतोः कथं पापमाचरेन्मद्विधो जनः ॥१६॥ [१६उ
न दोषं त्वयि पश्यामि सूक्ष्ममप्यरिसूदन ।
१६] न चापि जननीं बाल्यात् त्वं विगर्हितुमर्हसि ॥१७। [१७
यावत् पितरि धर्मज्ञे गौरवं मम मानद ।
१७] तावदेव जनन्यां मे कैकेय्यामपि गौरवम् ॥१८॥० [२१
स ताभ्यां¹ धर्मशीलाभ्यां वनं गच्छेति राघव ।
१८] मातापितृभ्यामुक्तः सन् कथं कुर्यामतोऽन्यथा ॥१९॥०[२२
त्वया राज्यमयोध्यायां प्राप्तव्यं लोकसत्कृतम् ।
१९] वस्तव्यं दण्डकारण्ये मया वल्कलवाससा ॥२०॥ [२३
एवं कृत्वा महाभागो विभागं लोकसन्निधौ ।
२०] व्यादिश्य चैव धर्मात्मा दिवं दशरथो गतः ॥२१॥ [२४
स चेत् प्रमाणं राजेन्द्रो राजा लोकगुरुस्तव ।
२१] पित्रा दत्तं यथाभागमुपभोक्तुं त्वमर्हसि ॥२२। [२५

कै० (त्यक्तं भाति प्रमादेन) | कै० (त्यक्तं भाति प्रमादेन ।)
१ ख, ल, म—भ्राभ्यां ।

चतुर्दशसमाः सौम्य दण्डकारण्यमाश्रितः ।
२२] उपभोक्ष्ये यथादत्तं भागं पित्रा महात्मना ॥२३॥ [N*

यदब्रवीन्मां सुरलोकसत्कृतः
पिता महात्मा विबुधोपमो नृपः ।
तदेव मन्ये परमात्मसंहितं
२३] न सर्वलोकेश्वरताऽपि सत्कृता ॥२४॥ [२६

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे रामप्रश्नो नाम सर्गः ॥११५॥



---

* इदं श्लोकः ... कोष्टे पृष्ठः ।

रामस्य तु वचः श्रुत्वा भरतः प्रत्युवाच ह ।
१] किं मे धर्माद्द विहीनस्य राजधर्मः करिष्यति ॥ १ ॥ [१
शाश्वतो ऽयं सदा धर्म स्थितो ऽस्माकं नरर्षभ ।
२] ज्येष्ठे त्वयि स्थिते राजन् न कनीयान् भवेन् नृपः । २॥ [२
समृद्धजनां रम्यामयोध्यां गच्छ राघव ।
४] अभिषेचय चात्मानं कुलस्यास्य भवाय न. ॥ ३ । [३
राजानं मानुष माहुर्देवस्त्वं संमतो मम ।
४] यस्य धर्मार्थचरितं वृत्तमाहुरमानुषम् ॥ ४ ॥ [४
केकयस्थे मयि श्रीमस्त्वयि चारण्यमाश्रिते ।
५] दिवं यातो महाराजः पिता न संमत. सताम् ॥५॥ [५
उत्तिष्ठ पुरुषव्याघ्र क्रियतामुदकं पितुः ।
६] अहं चायं च शत्रुघ्न पूर्वमेव कृतोदकौ ॥ ६ ॥ [७
प्रियेण किल दत्तं हि पितृलोकेषु राघव ।
७] अक्षय्यं भवतीत्याहुर्भवांस्तस्य प्रिय. सुतः ॥ ७ ॥ [८
तां श्रुत्वा करुणां वाचं पितुर्मरणसंहिताम् ।
८] राघवो भरतेनोक्तो बभूव गतचेतनः* ॥ ८ ॥ [१
९उ] वाग्वज्रं भरतेनोक्तममनोज्ञं परन्तपः । [२उ
१०पू] प्रगृह्य रामो बाहुभ्यां पुष्पिताग्रो द्रुमो यथा ॥ ९ ॥ [३पू
१०उ] वने परशुना कृत्तस्तथा भूमौ पपात सः । [३उ
११पू] तथा निपतितं रामं जगत्यां जगतीपतिम् ॥ १० ॥ [४पू
११उ] कूलपातपरिश्रान्तं प्रसुप्तमिव कुञ्जरम् । [४उ
१२पू] भ्रातरस्तं महेष्वासं द्विगुणं शोककर्षितम् ॥ ११ ॥ [५पू

---

१ म-राजा।

[*अतश्लोकादारभ्य दाक्षिणात्यपाठे त्र्युत्तरशततम सर्गं आरभ्यते]

१२उ] रुदन्तः सह वैदेह्या सिषिचुर्नेत्रवारिणा । [५उ
१३पू] स तु संज्ञां पुनर्लब्ध्वा नेत्राभ्यां बाष्पमुत्सृजन् ॥१२॥ [६पू
१३उ] उपचक्राम काकुत्स्थः कृपणं बहुभाषितुम् । [६उ
N] कस्तां नृपतिना हीनामयोध्यां पालयिष्यति ॥ १३ ॥ [८उ
किं नु तस्य मया कार्यं दुर्जनेन महात्मनः ।
१४] यो मृतो मम शोकेन त्वया चापि न संगतः ॥१४॥ [६
अहो त्वं वत सिद्धार्थो येन राजा त्वयाऽनघ ।
१५] शत्रुघ्नेन च सर्वेषु प्रेतकार्येषु सत्कृत ॥ १५ ॥ [१०
निष्प्रधानामनेकाग्रां हीनां नरवरेण ताम् ।
१६] निवृत्तवनवासो ऽपि नायोध्यां गन्तुमुत्सहे ॥ १६ ॥ [११
सम्पूर्णवनवासं मामयोध्यायां पुनर्गतम् ।
१७] कोऽनुशासिष्यति पुनस्ताते लोकान्तरं गते ॥१७॥ [१२
पुरा प्रोष्य निवृत्तं मां यान्याह[२] परिसान्त्वयन् ।
१८] कुतःश्रोष्यामि वाक्यानि तानि कर्णसुखान्यहम् ॥१८॥[१३
एवमुक्त्वा ऽथ भरतं भार्यामभ्येत्य राघव[३] ।
१९] उवाच शोकसन्तप्तः पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥ १९ ॥ [१४
सीते मृतस्ते श्वशुरः पित्रा हीनश्च लक्ष्मणः ।
२०] भरतो दुःखमाचष्टे स्वर्गतं पृथिवीपतिम् ॥ २० ॥ [१५
जानकी श्वशुरं श्रुत्वा सर्वलोकगुरुं मृतम् ।
२१] नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यां न शशाक निरीक्षितुम् ॥२१॥ [१८
ततो बहुगुणं तेषामस्तु (श्रु ?) नेत्रैरजायत ।
२२] तथा ब्रुवति काकुत्स्थे कुमाराणां यशस्विनाम् ॥२२॥ [१६
ततस्ते भ्रातरः सर्वे आर्त्तमाश्वास्य राघवम् ।

---

२ [illegible] । ३ म-भार्यामत्येत्य ।

२३] अब्रुवन् जगतीपाल बाष्पसन्दिग्धया गिरा ॥ [N
उत्तिष्ठ पुरुषव्याघ्र क्रियतामुदकं पितुः ॥२३॥ [१७
२४] अहं चायं च शत्रुघ्नः पूर्वमेव कृतोदकौ ॥ २४ ॥ [N
स राम सम्परिष्वज्य रुदन्तीं जनकात्मजाम्।
२५] प्रोवाच लक्ष्मणं प्रेक्ष्य दुःखितं दुःखितो वचः ॥५२॥ [१९
आनयेङ्गुदपिण्याकं चीरमानय चोत्तमम्।
२६] जलक्रियार्थं तातस्य गमिष्यामि परन्तप ॥२६॥ [२०
सीता पुरस्ताद् व्रजतु त्वं चैनामभितो व्रज।
२७] अहं पश्चाद् गमिष्यामि गतिरेषा सनातनी ॥ २७ ॥ [२१
ततो नित्यानुगस्तेषां विजितात्मा महाद्युतिः।
२८] मृदुः क्षान्तश्च दान्तश्च रामे च दृढभक्तिमान् ॥ २८ ॥[२२
सुमन्त्रस्तैन् ⁴सुतैः सार्धमाश्वास्य राघवम्।
२९] अवातारयदालम्ब्य नदीं मन्दाकिनीमनु ॥२९॥O [२३
ते च तीर्थां नदीं कृच्छ्रादुपगम्य यशस्विनः।O
३०] पुण्यां मन्दाकिनीं रम्यां नित्यपुष्पितपादपाम् ॥३०॥ [२४
शीघ्रस्रोतां समागम्य शिवतीर्थमकर्दमाम्।O
३१] असिञ्चन्नुदकं सर्वे पितुरेतद् भवत्विति ॥ ३१ ॥ [२५
परिगृह्य रघुश्रेष्ठो जलपूरितमञ्जलिम्।
३२] दिशं याम्यामभिमुखो रुदन् वचनमब्रवीत् ॥३२॥ [२६
एतत् ते नृपशार्दूल विमलं दिव्यमक्षयम्।
३३] पितृलोकेषु पानीयं मद्दत्तमुपतिष्ठतु⁵ ॥ ३३ ॥ [२७

---

४ ल दुःखित। ल O। कै O।

५—न॰ल, म ॰मुपतिष्ठताम्।

ततो मन्दाकिनीतीरे शुचौ देशे[6] नराधिपः ।
३४] पितुर्निर्वर्तयन्[7] श्रीमान् निवापं भ्रातृभिः सह ॥३४॥ [२८
ऐङ्गुदं बदरोन्मिश्रं पिण्याकं दर्भसंस्तरे ।
३५] न्युप्य रामः सुदुःखार्त इदं वचनमब्रवीत् ॥३५॥ [२६
इदं भुंक्ष्व महाराज पिब तोयं च निर्मलम् ।
३६] यदन्नः पुरुषो राजंस्तदन्नास्तस्य देवताः ॥३६॥ [३०
ततस्तेनैव मार्गेण प्रत्युत्तीर्य नराधिपः ।
३७] आरुरोह नरव्याघ्रो रम्यसानुं महीधरम् ॥३७॥ [३१
ततः पर्णकुटीद्वारमागत्य जगतीपतिः ।
३८] प्रतिजग्राह पाणिभ्यामुभौ भरतलक्ष्मणौ ॥३८॥ [३२
गृहीत्वा तौ रुरोदार्तो[8] राघवः सह सीतया ।
३९पू] तेषां तु रुदतां शब्दं श्रुत्वा भरतसैनिकाः ॥३९॥ [३३पू
भ्रातृंश्चैव रामेण सङ्गतो भरतोऽधुना ।
४१] तेषामेष महान् शब्दः शोचतां पितरं मृतम् ॥४०॥ [३५
अथ वासं परित्यज्य सर्वे तेऽभिमुखाः स्वयम् ।
४२] अप्येकतः समाजग्मुर्यथावत्संप्रधाविताः ॥४१॥ [३६
अचिरप्रोषितं रामं चिरविप्रोषितं यथा ।
४३] द्रष्टुकामो जनः सर्वो जगाम सहसाऽऽश्रमम् ॥४२॥ [३८
भ्रातॄणां त्वरितास्ते तु द्रष्टुकामाः समागमम् ।
४४] ययुर्बहुविधैर्यानैस्त्वराऽऽविष्टाः समाकुलाः ॥४३॥ [३६
अश्वैरन्ये गजैरन्ये रथैरन्ये स्वलङ्कृतैः ।
४५] सुकुमारास्तथैवान्ये[9] पद्भ्यामेव प्रदुद्रुवुः ॥४४॥ [३७

---

६ ख-स च
७ ल-निर्वर्तयत् ।
८ के-रुरोदन्तौ ।
९ ल-सुकुमारास्तथैवान्ये ।

सा भूमिर्बहुभिर्यानैः खुरनेमिसमाहता ।
४६] मुमोच तुमुलं शब्दं द्यौरिवाभ्रसमागमे ॥४५॥ [४०
तेन वित्रासिता नागाः करेणुपरिवारिताः[१०] ।
४७] नासहंस्तुमुलं शब्दं जग्मुरन्यद्वनं च ते ॥४६॥ [४१
वराहमृगसिंहाश्च महिषाश्च वनेचराः ।
४८] व्याघ्रगोमायुसर्पाश्च विनेशुर्यूथपैः सह ॥४७॥ [४२
रथाङ्गशार्ङ्गदात्यूहहंसकारण्डवप्लवा ।
४६, तथा कोकिलसङ्घाश्च विसंज्ञा भेजिरे दिशः ॥४८॥ [४३
तेन शब्देन वित्रस्तैराकाशं पक्षिभिर्वृतम् ।
५०] मनुष्यैरावृता भूमिरुभयं प्रबभौ तदा ॥४९॥ [४४
तान् नरान् बाष्पसम्पूर्णान् समीक्ष्य च सुदुःखितान् ।
५१] पर्यपृच्छत धर्मज्ञ पितृवन् मातृवच्च स. ॥५०॥ [४७
स तत्र कांश्चित् परिषस्वजे नरान्
नराश्च तं के चिदथाभ्यवादयन् । ०
चकार सर्वैरपि[११] संविदं तदा
५२] यथाऽर्हमासाद्य तदा नृपात्मजः ॥ ५३ ॥ [४८
तथा तु तेषां रुदतां महात्मनां
दिवं च खं चानुननाद निस्वनः ।
गिरेर्गुहाश्चैव दिशश्च नादयन्
५३] मृदङ्गघोषप्रतिम स शुश्रुवे ॥ ॥ ५४ ॥ [४९
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे उदकप्रदानं
नाम सर्गः ॥[११६] ॥

---

१० ल—करेणु परिवारित । । ११ ब—सर्वैरप ।

[पं–११२]=[सप्तदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा–१०४]

वसिष्ठः पुरतः कृत्वा दारा दशरथस्य सः ।
१] अभिचक्राम तं देशं रामदर्शनकांक्षया ॥१॥ [१
रामपत्न्यस्तु गच्छन्त्यो[1] नदीं मन्दाकिनीं प्रति ।
२] ददृशुस्तास्तदा सर्वा रामं लक्ष्मणसेवितम् ॥२॥ [२
कौसल्या बाष्पपूर्णेन मुखेन परिशुष्यता ।
३] सुमित्रामब्रवीद् दीनां याश्चान्या राजयोषितः ॥३॥ [३
इदं तेषामनाथानां शुभमक्लिष्टकर्मणाम् ।
४] वने प्राक् केवलं तीर्थं ये ते निर्विषयीकृताः ॥४॥ [४
इतः सुमित्रे रामार्थं जलमादाय वीर्यवान् ।
५] सदा गच्छति सौमित्रिर्मम पुत्रस्य कारणात् ॥५॥ [५
दुष्करं कुरुते[2] पुत्रः सुमित्रे तव धार्मिकः ।
६] शुश्रूषते तु धर्मेण ज्येष्ठं[3] यो भ्रातरं वने ॥६॥ [६
ग्रामशानेन यः पित्रा त्यक्तो निरपराधवान् ।
७] भ्रष्टश्च सानुजो राज्यात् सीतया भार्यया सह[4] ॥७॥
एवं विलपमाना सा कौसल्या शोकविह्वला[5] ।
८] ददर्शेङ्गुदिपिण्याकैर्निवापं पुलिने कृतम् ॥८॥ [८
दक्षिणाग्रेषु दर्भेषु सपुष्पेषु[6] निधापितम् ।
९] उपहारं पितुर्दत्तं भर्तुरायतलोचना ॥९॥ [९

---

१ ब—गच्छन्त. ।
२ पुरतः ।
३ ब, स–ज्येष्टं ।
४ ब, स म–सह भार्यया ।
५ ब स, म—शोकदर्शिता ।
६ स—सुपुष्पेषु ।

सा तमिङ्गुदपिण्याकं दृष्ट्वा द्विगुणदुःखिता । [\
१०] उवाच देवी कौसल्या सर्वा दशरथस्त्रियः ॥१०॥ [६
इदमिक्ष्वाकुनाथस्य राघवेण महात्मना ।
११] पितुरिङ्गुदपिण्याकं न्युप्तं पश्यत यादृशम् ॥११॥ [१०
तस्य देवसमस्येदं पार्थिवस्य महात्मनः ।
१२] नैतदौपायिकं मन्ये भुक्तभोगस्य भोजनम् ॥१२॥ [११
चतुरन्तां महीं भुक्त्वा महेन्द्रसदृशो विभुः ।
१३] कथमिङ्गुदपिण्याकं स भुङ्क्ते वसुधाधिपः ॥१३॥ [१२
अतो दुःखतरं लोके न किञ्चित् प्रतिभाति मे ।
१४] यत्र रामः पितुर्दद्यात् तापसान्नमीदृशम् ॥१४॥ [१३
रामेणेङ्गुदपिण्याकं पितुर्दत्तं समीक्ष्य वै ।
१५] कथं ममेदं हृदयं विशीर्येत्र[७] सहस्रधा ॥१५॥ [१४
श्रुतिश्च खल्वियं सत्या सुमित्रे प्रतिभाति मे ।
N] यदन्नः पुरुषो हि स्यात् तदन्नास्तस्य देवताः ॥१६॥ [१५
N] एवमार्ता सपत्नीभिस्ताभिराश्वासिता तदा । [१६
१६पू] सा जगामाश्रमपदं कौसल्या यत्र राघवः ॥१७॥ [\
१६उ] ततस्तास्त्वरितं गत्वा सर्वा नृपतियोषितः । [N
१७पू] अपश्यन्नाश्रमे रामं स्वर्गाच्च्युतमिवामरम् ॥१८॥ [१६उ
१७उ] सम्भोगैः सम्परित्यक्तं रामं दृष्ट्वैव मातरः ।
१८पू] आर्ता मुमुचुरश्रूणि सस्वराः शोककर्षिताः ॥१८॥ [१७

७ ल, म—विदीर्येत्र। | ब—विदीर्येत ।

१८उ] तासां रामः समुत्थाय जग्राह चरणाञ्छुभान् ।
१९पू] मातॄणां पुरुषव्याघ्रः सर्वासामनुपूर्वशः ॥२०॥ [१८
१९उ] पाणिभिः सुखसंस्पर्शैर्मृद्वङ्गुलितलैः शुभैः । [१९पू
२०पू] मूर्धन्याघ्राय ता रामं रुरुदुः पार्थिवस्त्रियः ॥२१॥ [N
२०उ] सौमित्रिरपि ताः सर्वाः समातॄः शोककर्षिताः ।
२१पू] अभ्यवादयत मह्यो दीनो रामादनन्तरम् ।२२॥ [२०
२१उ] आशीर्वादैश्च रामस्य लक्ष्मणस्य तथैव च ।
२२पू] देशकालानुरूपैश्च मातृभिः सम्प्रयोजितैः ॥२३॥ [N
२२उ] यथा रामे तथा तस्मिन् सर्वा वर्तिरे स्त्रियः ।
२३पू] वृत्तिं दशरथाज्जाते लक्ष्मणे शुभलक्षणे ॥२४॥ [२१
२३उ] सीताऽपि रुदती तासां पादान् स्पृष्ट्वा सुदुःखिता ।
२४पू] श्वश्रूणामश्रुपूर्णाक्षी सा बभूवाग्रतः स्थिता ॥२५॥ [२२
२४उ] तां परिष्वज्य कौसल्या माता दुहितरं यथा ।
२५पू] वनवासकृशां दीनामिदं वचनमब्रवीत् ॥२६॥ [२३
२५उ] विदेहराजस्य सुता स्नुषा दशरथस्य च ।
२६पू] रामपत्नी कथं दुर्गं वनं प्राप्ताऽसि जानकि ॥२७॥ [२६
२७उ] पद्ममातपसन्तप्तं परिक्लिष्टमिवोत्पलम् । [२५पू
काञ्चनं रजसा ध्वस्तं दिवा चन्द्रमिवाप्रभम् [२५उ
२७] मुखं ते प्रेक्ष्य मां शोको दहत्यग्निरिवाश्रयम् ॥२८॥ [२६पू
भृशं तवेह वैदेहि व्यसनारणिसंभवः । [२६उ

८ च, ल, म तथा ।
९ चै:— स ।

O च, ल, म—नास्ति ।

२८] दहत्यग्निर्मुखं कान्तं निस्तोयमिव पङ्कजम् ॥२६॥ [N
ब्रुवन्त्यामेवमार्तायां जनन्यां भरताग्रजः।
२६] पादावासाद्य जग्राह वसिष्ठस्य महात्मनः। ३०॥ [२७
पुरोहितस्याग्निसमस्य तस्य
बृहस्पतेन्द्रि इवामराधिपः।
निपीड्य पादौ स समिद्धतेजसः
३०] सहैव तेनोपविवेश राघवः ॥३१॥ [२८
तत्रोपविष्टेन च तेन मन्त्रिभिः
पुरप्रधानैश्च सहैव सैनिकैः।
गुहेन धर्मज्ञतमेन धर्मवित्
३१] सहोपविष्टः समुपेत्य राघवः ॥३२॥ [२६
ततोपविष्टस्तु तथैव वीरं
ततः स धर्मेण सहैव राघवम्।
श्रिया ज्वलन्तं भरत कृताञ्जलिः
N] यथा महेन्द्रः प्रयतः प्रजापतिम् ॥३३॥ [३०
किमेष वाक्यं भरतोऽथ राघवं
प्रणम्य सत्कृत्य च साधु वक्ष्यति।
इतीव तस्याथ जनस्य तत्त्वतो
बभूव कौतूहलमुत्तमं तदा ॥३४॥ [३१

---

१० ब, ल, म—उपोपवि०

स राघवः सत्यधृतिश्च लक्ष्मणो
महानुभावो[11] भरतश्च धर्मवित् ।
वृताः सुहृद्भिः प्रविरेजुरोजसा
३३] यथा सदस्यैर्ज्वलितास्त्रयोऽग्नयः ॥३५॥ [३२

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे मातृसमागमो
नाम सर्गः ॥११७॥



११ कै–(पूर्वे मुद्रिते [illegible] '[illegible]' इति पाठेन विनिमयश्च कृतिम)।

[चं-११३]=[अष्टादशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१०६]

अथोपविष्टं ध्यायन्तं रामं प्रकृतिसंसदि । [N
१] उवाच भरतश्चित्रं धार्मिको धार्मिकं वचः ॥१॥ [२पू
प्रोषिते मयि यन्मात्रा पापं मत्कारणं कृतम् ।
२] क्षुद्रया न तदिष्टं मे प्रसीदतु भवान् मम ॥२॥ [८
धर्मबन्धानुबद्धोऽस्मि येन त्वां नेह मातरम् ।
३] हन्मि तीक्ष्णेण दण्डेन दण्डार्हामपकारिणीम् ॥३॥ [९
कथं दशरथाज्जातः शुद्धाभिजनकर्मवान् ।
४] अहं भ्रातृव्यवद् भ्रातुः कुर्यां कर्म विगर्हितम् ॥४॥ [१०
गुरुः क्रियावान् वृद्धश्च राजा प्रेतः पितेति च ।
५] तातं तेन न गर्हामि दैवतं च परं मम ॥५॥ [११
धर्मार्थाभ्यां हि को हीनमीदृशं कर्म गर्हितम् ।
६] स्त्रियः प्रियचिकीर्षार्थं कुर्याद् धर्मज्ञ धर्मवित् ॥६॥ [१२
अन्तकाले हि भूतानि मुह्यन्तीति परिश्रुतम् ।
७] राज्ञा योवाहिता[1] लोके प्रत्यक्षा सा श्रुति कृता ॥७॥ [१३
तस्यैतं मतिसम्मोहमन्तकालसमुद्भवम् । [N
८] तातस्य समतिक्रान्तं प्रत्याहर्तुं[2] त्वमर्हसि ॥८॥ [१४३
पितुर्हि समतिक्रान्तं यः साधु कुरुते सुतः ।
९] तदपत्यमिति प्रोक्तमनपत्यमतोऽन्यथा ॥९॥ [१५
तदपत्यं भवानस्तु मास्म वृ[द्द] दुष्कृतं पितुः । [१६पू
१०] अनुवर्त्तस्व काकुत्स्थ मार्गं साधुनिषेवितम् ॥१०॥ [N

---

१ ब—राज्ञावोपाहिता । | २ ल—प्रत्याहंतुं ।

कैकेयीं मातरं मां च सुहृदो बान्धवांश्च नः ।
११] पौरजानपदान् भृत्यांस्त्रायस्व सकलानिमान् ॥११॥ [१७
क चारण्यं क च क्षत्रं[3] क जटा परिपालनम्[4] ।
१२] इदं शाठ्यात्मकं[5] कर्म[6] न भवान् कर्तुमर्हति ॥१२॥ [१८
अथ[7] क्लेशजमेव त्वं धर्मं चरितुमिच्छसि ।
१३] संगृह्य चतुरो वर्णास्तेन क्लेशमवाप्नुहि ॥१३॥ [२१
चतुर्णामाश्रमाणां हि गार्हस्थ्यं श्रेष्ठमाश्रमम्[8] ।
१४] आहुर्वेन्ये[9] हि धर्मज्ञास्तं कथं त्यक्तुमिच्छसि ॥१४॥ [२२
त्वत्तश्च बुद्ध्या ज्ञानेन जन्मनाऽप्यवरो ह्यहम् ।
१५] स कथं पालयिष्यामि मेदिनीं त्वयि तिष्ठति[10] ॥१५॥ [२३
हीनबुद्धिबलो बालो हीनज्ञानस्तथैव च ।
१६] भवन्तं च बिना भूप न वर्त्तयितुमुत्सहे ॥१६॥ [२४
इदं निखिलमव्यग्रं पित्र्यं राज्यमकण्टकम्[11] ।
१७] अनुशाधि स्वधर्मेण धर्मज्ञ सह बन्धुभिः ॥१७॥ [२५
इहैव त्वाभिषिञ्चन्तु सर्वाः प्रकृतयस्त्विमाः ।
१८] ऋत्विजः सवसिष्ठाश्च ऋषयो मन्त्रकोविदाः ॥१८॥ [२६
अभिषिक्तस्त्वमस्माभिरयोध्यागमनं कुरु ।

---

३ य—क्षात्र ।
४ य, ल, म कजटा क च पालनम् ।
५ य, म शाठ्यात्मक ।
६ कर्तुं ।
७ य-यदि ।
८ य, ल, म ०मुत्तम ।
९ य ल म-धन्यं ।
१० य, ल म तिष्ठति ।?
११ ल, म-०मकण्टकम् ।

१९] निक्षिप्य तरसा लोकान् मरुद्भिरिव वासवः ॥१९॥ [N
ऋणानि श्रीण्यपाकुर्वन् दुर्हृदः साधु कर्षयन्[१२] ।
२०] सुहृदः पूरयन् कामैर्वसंस्तत्र प्रशाधि नः ॥२०॥ [२८
अद्य वै[१३] मुदिताः सन्तु सुहृदस्तेऽभिषेचने ।
२१] अद्य भीताः पलायन्तां दुर्हृदस्ते दिशो[१४] दश ॥२१॥[२९
किल्बिषं मम मातुश्च ममार्ज पुरुषर्षभ ।
२२] अद्य तत्र भवांस्तं च पितरं रक्ष किल्बिषात् ॥२२॥ [३०
२३] धर्मो ह्येष परः प्रोक्तः क्षत्रियस्याभिषेचनम् ।
N] यो धर्मेण महाप्राज्ञ प्रजाश्च परिपालयेत् ॥२३॥ [N
शिरसा त्वाऽभियाचेऽहं[१५] कुरुष्व करुणां मयि ।
२४] बान्धवेषु च सर्वेषु भूतेष्विव महेश्वरः ॥२४॥ [३१
अथ मां पृष्ठतः कृत्वा वनमेव[१६] भवानितः ।
२५] गमिष्यति गमिष्यामि भवता सार्द्धमप्यहम् ॥२५॥ [३२
तमृत्विजो[१७] मागधसूतवन्दिनः
सुतप्रिया बाष्पकलाश्च मातरः ।
तथा ब्रुवन्तं भरतं प्रतुष्टुवुः
२६] प्रणम्य रामं च ययाचिरे सह ॥२६॥ [३५

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतवाक्य नाम सर्गः ॥११८॥

---

१२ ब-धर्षयन् ।
१३ ल-अद्यैव ।
१४ ब ल, म-०ऽभिषेचने ।
१५ ब त्वभियाचेऽह ।
१६ ब वनवासे ।
१७ ल तस्यर्त्विजो ।

[चं-११४]=[एकोनविंशत्यधिक-
शततमः सर्गः]=[दा-१०५, १०६]

स तथा भरतेनोक्तो रामो धर्मपथे स्थित ।
१] इदं वचनमक्लीबं मध्ये परिषदोऽब्रवीत् ॥१॥ [१४
नात्मनः कामकारोऽस्ति पुरुषोऽयमनीश्वरः ।
२] इतश्चेतश्चरन्तं तं कृतान्तः परिकर्षति ॥२॥ [१५
सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ।
३] संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् ॥३॥ [१६
यथा फलानां पक्वानां नान्यत्र पतनाद् भयम् ।
४] तथा नराणां जातानां नान्यत्र मरणाद् भयम् ॥४॥ [१७
यथाऽऽगारं दृढं स्थूलं शीर्णं भूत्वाऽवसीदति ।
५] तथैव सीदन्ति नरा मृत्युपाशवशङ्गताः ॥५॥ [१८
सहैव मृत्युर्व्रजति सह मृत्युश्च तिष्ठति ।
६] गत्वा सुदूरमध्वानं सह मृत्युर्निवर्त्तते ॥६॥ [२२
अहोरात्राणि वर्तन्ते सर्वेषां प्राणिनामिह ।
७] आयूंषि कर्षयन्त्याशु ग्रीष्मे जलमिवांशवः[1] ॥७॥ [२०
आत्मानमनुशोच त्वं किमन्यमनुशोचसि[2] ।
८] आयुस्ते क्षीयते पश्य स्थितस्य चरतस्तथा[3] ॥८॥ [२१
गात्रेषु वलयः प्राप्ताः श्वेताश्चैव शिरोरुहाः ।
९] जरया पुरुषः कीर्णः किं हित्वेह सुखी भवेत् ॥९॥ [२३
इमे चोदित आदित्ये तथा चास्तमिते त्विह ।
१०] आत्मनो नावबुध्यन्ते पुरुषा जीवितक्षयम् ॥१०॥ [२४

---

१ घ—०मिव शय० ।
२ घ, ल, म—०वनुशोचसि ।
३ घ, ल, म—भवतस्तथा ।

हृष्यत्युरुफलं दृष्ट्वा नवं नवमिवागतम् ।
११] ऋतूनां[4] परिवर्त्तेन[5] प्राणिनां प्राणसंक्षयः[6] ॥११॥ [२५
यथा काष्टं च काष्टं च समेयातां महोदधौ ।
१२] समेत्य च व्यपेयातां स्थित्वा किञ्चित् क्षणान्तरम्॥१२॥[२६
एवं भार्याश्च पुत्राश्च सुहृदश्च वसूनि च ।
१३] समेत्य[7] व्यवधीयन्ते ध्रुवं तेषां परामवः ॥१३॥ [२७
न कश्चिदन्यथाभावं प्राणी समतिवर्त्तते ।
१४] तेन नास्तीह सामर्थ्यं मेतस्य ह्यनुशोचतः ॥१४॥ [२८
यथा हि सार्थं गच्छन्तं ब्रूयात् कश्चित् पथि स्थितः ।
१५] अहमप्यनुयास्यामि पृष्ठतो भवतामिति ॥१५॥ [२९
यः[8] पूर्वैः प्राकृतो मार्गः पितृपैतामहो ध्रुवः ।
१६] तमापन्नः कथं शोचेद्व यस्य नास्ति व्यतिक्रमः॥१६॥ [३०
पयसः[9] स्रवमानस्य स्रोतसो वाऽतिवर्त्तिनः ।
१७] आत्मा धर्मेऽभियोक्तव्यो धर्मज्ञेन विपश्चिता ॥१७ [३१
धर्मात्मानः शुभैर्ह्येचैः क्रतुभिश्चाप्तदक्षिणैः । [३२पू
१८] धर्मात्मानो गताः स्वर्गं पितृमातृनिषेवितम् ॥१८॥ [N
भृत्यानां भरणं कृत्वा प्रजानां परिपालनम् ।
१९] अर्थदानं[10] च साधुभ्यः पिता नस्त्रिदिवं गतः ॥१९॥ [N
इष्ट्वा यज्ञैर्बहुविधै र्भोगांश्चावाप्य केवलम् ।
२०] उत्तमं वपुरासाद्य स्वर्गतो जगतीपतिः ॥२०॥ [N
सञ्जीर्णं मानुषं देहं परित्यज्य पिता मम ।

---

४ ल—ऋतवः ।
५ ब, ल म—परिवर्त्तन्ते ।

८ घ, ल, म—यैः ।
९ घ, ल, म—पयसः ।

२१] दैवीं गतिमनुप्राप्तो दिव्यलोकविहारिणाम् ॥२१॥ [३३
तत्र नैवंविधः कश्चित् प्राज्ञः शोचितुमर्हति ।
२२] त्वद्विधो मद्विधो वाऽपि श्रुतिमान् मतिमान् नरः ॥२२॥ [३४
एते बहुविधाः शोका विलापो रुदितं तथा ।
२३] विसर्जनीया धीरेण सर्वावस्थासु धीमता ॥२३॥ [३५
असंशयं तत शोकं मा शुचो वसतां पुरीम् ।
२४] यथा पित्रा नियुक्तोऽसि तथा कुरु नरर्षभ ॥२४॥ [३६
यत्राहमपि तेनैव नियुक्तः पुत्रकर्मणि ।
२५] तदेवाहं करिष्यामि पितुरार्यस्य शासनम् ॥२५॥ [३७
न मया शासनं तस्य शक्यं त्यक्तुमरिन्दम ।
२६] नन्वयं सहितो ऽमात्यैर्दैवतं परमं पिताO ।२६॥ [३८
स एवमुक्तो भरतो रामं वचनमब्रवीत् ।
२७] कियन्तस्तादृशा लोके यादृशोयमरिन्दम । २७॥ [N
न त्वां मव्यथयेद् दु खं सुखं वाऽपि महर्षयेत् ।
२८] संमतश्चासि वृद्धानां शक्रो नाकौकसामिव ॥२८॥ [N
यथा मृते तथा जीवे यथाऽसति तथा सति । [१०६सर्गः]
२९] कस्यैष बुद्धिलाभः स्याद्व यथा ते मनुजाधिप ॥२९॥ [४
३०पू] एवं च व्यसनं प्राप्य न विषत्तुं त्वमर्हसि । [४उ
३२पू] आसाद्य हि निवर्तन्ते सन्तापास्त्वामरिन्दम ॥३०॥ [N
३२उ] अस्माकमिह काकुत्स्थ परशुर्वीर पातित ।
३३पू] अहं तु रहितो धीमांस्त्वया दशरथेन च ॥३१॥ [N
३३उ] न जीविष्यामि दुःखार्तो केतुर्दिग्धहतो यथा ॥३२॥ [N

---

२१ कै—पया । ("त" इत्युपरि लिखिता पकारस्थाने विभिन्नमत्र । कै पुस्तके दृश्यते) ।
O ब,छ,म ।

वसन्तमार्यं सह लक्ष्मणेन
सभार्यमायस्तमनाः समीक्ष्य ।
प्राणान् न जह्यां विजने यथाऽहं
३४] तथा कुरु त्वं पृथिवीं प्रशाधि ॥३३॥ [N
तथा तु रामो भरतेन तेन
प्रसाद्यमानः शिरसा महीपतिः ।
मतिं न चक्रे गमनाय सत्ववान् ।
३५] स्थितः पितुस्तद्वचनं समीक्ष्य ॥३४॥ [३३

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामभरतसंवादो नाम सर्गः ॥ [११९] ॥



[वं–११६]=[विंशत्यधिक-शततमः सर्ग]=[दा–१०७]

पुनरेवं ब्रुवाणं तु भ्रातरं भरताग्रज ।
१] उवाच रामो धर्मात्मा भरतं धर्मवत्सलम् ॥१॥ [१
उपपन्नमिदं वीर त्वयि सर्वं नरर्षभ ।
२] यस्त्वं जातो दशरथात् कैकेय्यानन्दवर्धन. ।२॥ [२
२पू] पुरा तात महाराजो मातरं ते समुद्वहन् । [३पू
देवासुरे च संग्रामे जनन्यास्तव पार्थिव. ॥३॥
४] महृष्ट प्रददौ राजा वरौ द्वौ याचित प्रभुः ॥४॥ [४
ततः सा तौ प्रतिस्मृत्य तव माता यशस्विनी ।
५] अयाचत नृप गत्वा द्वौ वरौ वरवर्णिनी ॥५॥ [५
तव राज्य नरव्याघ्र मम प्रव्राजन तथा ।
६] तच्चै राजा तदा तस्या नियुक्त. प्रददौ स्वयम् ॥६॥ [६
तेन पित्रा ममाप्यत्र नियोगः पुरुषर्षभ ।
७] चतुर्दश वने वासस्तव वर्षाणि भूतले ॥७॥ [७
सोऽहं वनमिदं दुर्गं निर्जनं लक्ष्मणान्वितः ।
८] ससीतश्चागतो वीर सत्यवाक्ये स्थितः पितु ॥८। [८
भवानपि तथा क्षिप्र पितर सत्यवादिनम् ।
९] कर्तुमर्हति राजेन्द्र शाधि राज्यमकण्टकम् ॥९॥ [९
ऋणान्मोचय राजानं कैकेय्यानंदवर्धन' ।
१०] पितरं त्राहि धर्मज्ञ मातरं चापि पालय ॥१०॥ [१०
श्रूयते च पुरा तात श्रुतिर्गीता तपस्विभिः ।
११] गयस्य यजमानस्य यजतः स्वपितॄनपि ॥११॥ [११
पुंनाम्नो नरकाद्द यस्मात् पितरं त्रायते सुतः ।
१२] तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा ॥१२॥ [१२

इष्टव्या वहवः पुत्रा गुणवन्तो बहुश्रुताः ।
१३] तेषां हि समवेतानां यद्येको गुणवान् भवेत् ॥१३॥ [१
इत्यूचुर्ऋषयः सर्वे प्रतीता रघुनन्दन ।
१४] तस्मात् त्राहि नरश्रेष्ठ पितरं नरकात् प्रभो ॥१४॥ [१
अयोध्यां गच्छ भरत प्रकृतीरनुपालय ।
१५] शत्रुघ्नसहितो वीर सह सर्वैर्द्विजातिभिः ॥१५॥ [१
प्रवेक्ष्यामि महाऽरण्यमहं च मुनिभिः सह ।
१६] आभ्यां च सहितो राजन् वैदेह्या लक्ष्मणेन च ॥१६॥ [१

त्वं राजा भरत-भवाद्य नागराणां
वन्यानामहमपि वने[१] मृगाणाम् ।
गच्छ त्वं पुरुषवराद्य संप्रहृष्टः
१७] शान्तात्मा त्वमहमपि दण्डकान् प्रवेक्ष्ये ॥१७॥ [१

छायां ते दिनकरभाः प्रबोधमानं
सच्छत्रं भरत करोतु मूर्द्धि शुभ्रम् ।
एतेषामहमपि काननद्रुमाणां
१८] छायां तामतिशिशिरां[६] समाश्रयिष्ये ॥१८॥ [१

शत्रुघ्नः कुशलतरोऽस्ति[७] ते सहायः
सौमित्रिर्मम विहितः स्वयं विधात्रा ।
चत्वारस्तनयवरा वयं नरेन्द्र
१९] सत्यं तं वद करवाम मा विषीद ॥१९॥ [१६

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामवाक्यं
नाम सर्गः ॥ [१२०] ॥

---

२ ब, म ०वर्धनः ।
३ ल—श्रुतिगीता ।
४ ल—स्वतः ।
५ ब ल, म—०महमपि धै धने
६ ब, ल, म—शिररां ।
७ ब, म—०स्त ।

[व-११६]=[एकविंशत्यधिक-शततम. सर्गः]=[दा-१०८]

आश्वासयन्तं भरतं जावालिर्ब्राह्मणोत्तमः ।
२] उवाच रामं धर्मज्ञं धर्मोपेतमिदं वचः ॥१॥ [१
साधु राघव मा ते भूद्द बुद्धिरेवं निरर्थका ।
३] नरस्य प्राकृतस्येव धीरबुद्धेस्तपस्विनः ॥२॥ [२
कः कस्य पुरुषो बन्धुः किं कार्यं केन कस्य चित् ।
१२] यद्येको जायते जन्तुरेक एव विनश्यति ॥३॥ [३
तस्मान्माता पिता चैव मतिश्रयसमावुभौ ।
१३] उत्तमस्तु स विज्ञेयो योऽत्र जानाति नै नरः ॥४॥ [४
यथा ग्रामान्तरं गच्छन् नर कस्मादपि कचित् ।
१४] उत्सृज्य च तमावासं प्रतिष्ठेतापरेऽहनि ॥५॥ [५
एवमेव मनुष्याणां पिता माता गृहं वसु ।
१५] अवासमात्रं काकुत्स्थ तत्र सज्जति वै नरः ॥६॥ [६
निरर्थं जनमुत्सृज्य स नार्हसि नरोत्तम ।
१६] आसितु विषमं दुर्गं विपिन बहुकण्टकम् ॥७॥ [७
समृद्धायामयोध्यायामात्मानमभिषेचय ।
१७] एकवेणीधरा हि त्वां नगरी संप्रतीक्षते ॥८॥ [८
राजभोगाननुभवन्[1] महात्मन् पार्थिवो भव ।
१८] विहर त्वमयोध्यायां यथा शक्रस्त्रिविष्टपे ॥९॥ [९
न ते कश्चिद्द दशरथस्त्वं च तस्य न कश्चन ।
१९] अन्यो राजा त्वमप्यन्यस्तस्मात् कुरु यदुच्यसे ॥१०॥[१०
गतः स नृपतिस्तत्र गन्तव्यं तेन यत्र वै ।
२१] प्रवृत्तिरेषा भूतानां त्वं तु मिथ्याऽनुतप्यसे ॥११॥ [१२
N] परलोकगता ये ये तांस्तान् शोचति को नरः ।

---

१ ब-राजयोगाननुभ० ।

२२उ] ते हि दुःखं परिप्राप्य विनाशं मेत्य मेजिरे ॥१२॥ [१३
अष्टका अपि ततः[२] कार्या इत्येवं माकृतो जनः।
२३] अन्नस्योपद्रवं पश्य मृतो हि किमशिष्यते ॥१३॥ [१४
यदि भुक्तमिहान्येन देहमन्यस्य गच्छति।
२४] दद्यात् प्रवसतः श्राद्धं नास्य पाथेयमाहरेत् ॥१४॥ [१५
दानसत्त्वपरा ह्येते ग्रन्था मेधाविभिः कृताः।
२५] यजस्व देहि दीक्षस्व तपस्तप्यस्व सन्त्यज ॥१५॥ [१६
अनास्तिकपरामेवं कुरु बुद्धिं महामते।
२६] प्रत्यक्षं यत्तदातिष्ठ परोक्षं पृष्ठतः कुरु ॥१६॥ [१७
अमृष्यमाणः पुनरुग्रतेजा
निशम्य[६] तं नास्तिकवाक्यमुक्तम्।
अथाब्रवीत्तं नृपतेस्तनूजो
N] विगर्हमाणो वचनानि तस्य ॥१७॥ [N*
त्वत्तो जना पूर्वतरा परे च
बहूनि कर्माणि शुभानि कृत्वा।
जित्वा ह्यदोषं परमं च लोकं
N] कस्मात् परत्रास्ति ध्रुवं कृतं च ॥१८॥ [N†
निन्दाम्यहं कर्म पितुः कथं नु
यस्त्वामगृह्णाद् भृशमर्थबुद्धिम्।
बुद्ध्या तयैवंविधया[७] चरन्त-
N] मनास्तिकं धर्मपथाव्यपेतम् ॥१९॥ [N†

---

२ ल तथा।
ब-पितुः।
३ ब सेवावधि॰।
४ ब ०प्यस्व।
५ ल-दानसत्वपरामेवं।

* दाक्षिणात्ये पाठे नवोत्तरशततमे सर्गे द्रष्टव्यम्।
७ ब-तयैवविधया।
† दाक्षिणात्ये पाठे ११० सर्गे द्रष्टव्यम्।

[त्रं-११६]=[त्रयोविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११०]

क्रुद्धमाज्ञाय रामं तु वसिष्ठः प्रत्यभाषत ।
१] जाबालिरपि[1] जानाति लोकस्यास्य गतां[2] गतिम्[2] ॥१॥ [१
निवर्त्तयितुकामस्त्वामेतद्वाक्यमथाब्रवीत् ।
२] इमां लोकसमुत्पत्तिं लोकनाथ निबोध मे ॥२॥ [२
पूर्वं सलिलमेवासीत् पृथिवी यत्र निर्मिता ।
३] ततः समभवद् ब्रह्मा स्वयंभू र्वैरदः प्रभुः ॥३॥ [३
विष्णुर्वराहरूपेण उज्जहार[3] वसुन्धराम्[4] ।
४] असृजच्च[5] जगत् सर्वं पुत्रैः सह महर्षिभिः ॥४॥ [४
आकाशप्रभवो ब्रह्मा शाश्वतोऽथात्तयो[6] ऽव्ययः ।
५] तस्मान्मरीचिः संजज्ञे मरीचेः कश्यपः सुतः ॥५॥ [५
ससर्जांगिरसं ब्रह्मा प्रचेतसमथाङ्गिराः । [N
N] मनुः प्रचेतसः पुत्रः इक्ष्वाकुस्तु मनो [ः] सुतः ॥६॥ [६पू
यस्येयं प्रथमं[7] दृत्ता समृद्धा[8] मनुना मही ।
७] स इक्ष्वाकुरयोध्यायां राजा ऽभूद् विधिपूर्वकम् ॥७॥ [७
इक्ष्वाकोस्तु सुतः श्रीमान् कुक्षिरित्यतिविश्रुतः[9] ।
८] कुक्षेरप्यात्मजो वीरो विकुक्षिः समपद्यत ॥८॥ [८
विकुक्षेस्तु महातेजा बाणः पुत्रः[10] प्रतापवान् ।
९] अनरण्यन्तु पुत्रोऽभूद् बाणस्यामिततेजसः ॥९॥ [९

१–ल, म—जाबालिरभि ।
२–ल, म—गतागतिम् ।
३–ल, म—तज्जहार ।
४ ल, म—वसुन्धरम् ।
५ ब—असृजच्चं ।
६ ब—शाश्वतंवात्तयो० ।
७ ल, म—प्रथमा ।
८ ल—समृद्धा ।
९ ब, ल, म—कुक्षिरिस्त्रविश्रु० ।
१० के—बाणपुत्रः ।

नाऽनावृष्टिरभूत्तस्मिन् दुर्भिक्षं कथञ्चन ।
१०] अनरण्ये महाभागे तस्करो वै न कश्चन ॥१०॥ [१०
अनरण्यान्महातेजाः पुत्र पृथुरजायत ।
११] तस्मात् पृथोर्महाभागात् त्रिशङ्कुरुप(द)पद्यत ॥११॥ [११
स सत्यवचनाद् वीरः सशरीरो दिवं गतः ।
१२] त्रिशङ्कोरभवत् सूनुर्धुन्धुमारो महायशाः ॥१२॥ [१२
धुन्धुमारान्महाबाहुर्युवनाश्वो ऽभवत् सुत. ।
१३] युवनाश्वसुतश्चापि मान्धाता सत्यसङ्गरः ॥१३॥ [१३
मान्धातुस्तु महातेजा' सुसन्धिरुदपद्यत ।
१४] सुसन्धेरपि-पुत्रौ द्वौ ध्रुवसन्धिः प्रसेनजित् ॥१४॥ [१४
यशस्वी ध्रुवसन्धेस्तु भरतो नाम धर्मवित् ।
१५] भरतात्तु महाबाहुरसितः समजायत ॥१५॥ [१५
तस्यान्ते प्रतिराजान उदपद्यन्त शत्रवः ।
१६] हैहयास्तालजंघाश्च सर्वे[11] च शशबिन्दव.[12] ॥१६॥ [१६
तांस्तु स प्रतियुध्यन् वै युद्धे राजा क्षयं गतः । [१७पू
१७] द्वे चास्य नार्यौ गर्भिण्यौ बभूवतुरिति श्रुतिः ॥१७॥ [१८पू
ततः शैलवरं रम्यं तपस्यभिरतो मुनिः । [१७उ
१८] भार्गवश्च्यवनो नाम हिमवन्तमुपाश्रित. ॥१८॥ [२०पू
तमृषिं चाप्युपागम्य गर्भं देवी न्यवेदयत् । [२०उ
२०] स तामप्यवदद् विप्रो वरेप्सुं[13] पुत्रजन्मनि ॥१९॥ [२१पू
ततः सा गृहमागत्य देवी पुत्रं व्यजायत । [२३उ

---

११ ब-- शूरा ।
स--सुता ।

१२ ब—बिन्दवः ।
१३ ब, ल, म—वरदो ।

२१] सह तेन गरेणैव ततः[१४]स[१४]सगरोऽभवत्[१४] ॥२०॥ [२४उ
पू२२] ऐक्ष्वाकः सगरो नाम यः समुद्रमखानयत् ।
〃] तद्रणा पर्वणि वेगेन भासय(यं)तमिमाः प्रजाः ॥२१॥ [२५
असमञ्जास्तु पुत्रोऽभूत् सगरस्येति नः श्रुतम् ।
२३] जीवन्नेव निरस्तस्तु स पित्रा पापकर्मकृत्[१५] ॥२२॥ [२६
अंशुमान्नाम पुत्रोऽभूद्द वीर्यवानसमंजसः ।
२४] दिलीपोंऽशुमतः पुत्रो दिलीपस्य भगीरथः ॥२३॥ [२७
〃] येन भागीरथी गङ्गा त्रिदिवादवतारिता । [〃
पू२५] भगीरथात्तु काकुत्स्थः काकुत्स्थेत्युच्यसे यतः ॥२४॥ [२८पू
उ२५] काकुत्स्थस्य च पुत्रोऽभूद्द रघुर्येनासि राघवः । [२८उ
पू२६] रघोस्तु पुत्रस्तेजस्वी सौदासः पुरुपादकः ॥२५॥ २[६पू
योऽरिभिः सह सङ्ग्रामे बलवद्भिर्महाबलः ।
〃] युध्यमानो निहत्यारीन् सहसैन्यो[१६] न्यवर्त्तत ॥२६॥ [〃
खड्गी[१७] तु तस्य पुत्रोऽभूत् तस्य श्रीमान् सुदर्शनः ।
२८] सुदर्शनस्याग्निवर्णो ह्यग्निवर्णस्य शीघ्रगः ॥२७॥ [३१
शीघ्रगस्य मनुः पुत्रो मनोः पुत्रः प्रसुस्तकः ।
२९] प्रसुस्तकस्य पुत्रोऽभूदम्बरीषो महाद्युतिः ॥२८॥ [३२
अम्बरीषस्य पुत्रस्तु नहुषः सत्यसङ्गरः ।
३०] नहुषस्य तु पुत्रोऽभूद्द ययातिरिति नः श्रुतम् ॥२९॥ [३३
ययातेरपि धर्मात्मा पुत्रोऽजः समजायत ।
३१] अजस्यापि हि धर्मात्मा राजा दशरथः सुतः ॥३०॥ [३४
पू३२] तस्य पुत्रोऽसि वै ज्येष्ठो राम इत्यभिसंज्ञितः ।

---

१४ ब ल—सगरः स ततोऽभवद् । | १६ ल—ससैन्योऽपि ।
१५ ल—पापकर्मचित् । | १७ ब—अग्रणीः ।

N] प्रतिगृह्णीष्व राज्यं स्वमवेक्षस्व जगन्नृप ॥३१॥ [३५

पू३३] इक्ष्वाकूणां तु सर्वेषां राजा भवति पूर्वजः ।

N] पूर्वजेनावरः पुत्रो राज्ये समभिषिच्यते ॥३२॥ [३६

स राघवेमं व्रत वंशमात्मनः

सनातनं नाद्य विहातुमर्हसि ।

प्रभूतरत्नामनुशाधि मेदिनीं

३४] समृद्धराज्यां पितृवन्महायशाः ॥३३॥ [३७

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे वसिष्ठवाक्यं

नाम सर्गः ॥ १२३ ॥



वं-१२०-१२१]=[चतुर्विंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-१११

वसिष्ठस्तु तदा राममुक्त्वा राजपुरोहितः ।
१] अब्रवीद्धर्मसंयुक्तं पुनरेवापरं[1] वचः ॥१॥ [१
पुरुषस्येह जातस्य भवन्ति गुरवस्त्रयः ।
२] आचार्यश्चैव काकुत्स्थ पिता माता च ते त्रयः ॥२॥ [२
पिता जनं जनयति माता संवर्धयत्यपि ।
३] मज्ञां ददाति चाचार्यस्तस्मात्स गुरुरुच्यते ॥३॥ [३
स तेऽहं पितुराचार्यस्तव चैव महाद्युते ।
४] मम त्वं वचनं राम नातिक्रमितुमर्हसि ॥४॥ [४
वृद्धाया धर्मशीलाया मातुरर्हसि पूजितुम् ।
६] अस्यास्तु वचनं कुर्वन् सतां पन्थानमाव्रज ॥५॥ [६
भरतस्य वचः कुर्वन् याचतो[2] रघुनन्दन[3] ।
७] नात्मानमभिवर्त्तेथाः सत्यधर्मपरायणः ॥६॥ [७
एवं मधुरमुक्तस्तु गुरुणा राघवः स्वयम् ।
८] प्रत्युवाच समासीनं वसिष्ठं पुरुषर्षभः ॥७॥ [८
माता पितृभ्यां यां वृत्तिं सम्यक् कुर्वन्ति मानवाः ।
९] न सुप्रतिकरं ताभ्यां पित्रा मात्रा च यत्कृतम् ॥८॥ [९
तथाऽशनप्रदानेन शयनाच्छादनादिना ।
१०] नित्यं च प्रियवादेन तथा संवर्धनेन च ॥९॥ [१०
राजा गुरुर्दशरथस्तथा जनयिता मम ।
११] संश्रुतं यन्मया तस्य न तन्मिथ्या भविष्यति ॥१०॥ [११
एवमुक्ते[4] तु[4] रामेण भरतस्तदनन्तरम् ।

---

१ ल—पुनरेव०।
२ ख—याचमस्या।
३ कै—राघव।
४ ल—एवमुक्तेन।

१२] उवाच चलितोरस्कः सूतं परमदुर्मनाः ॥११॥ [१२
इह[5] मे[6] स्थण्डिले शीघ्रं कुशानास्तर सारथे ।
१३] अहं प्रत्युपवेक्ष्यामि यावदार्यः प्रसीदति ॥१२॥○ [१३
निराहारो निरालंबो धनहीनो यथा द्विजः ।
१४] पुनः शयिष्ये शय्यायां वनं यावन्न यास्यति ॥१३॥○ [१४
स तु राममवेक्षन्तं सुमन्त्रः प्रेक्ष्य दुर्मनाः) ।
१५] कुशांस्तीरेभ्युपस्थाप्य भूमावेवास्तरत् स्वयम् ॥१४॥○ [१५
तमुवाच महातेजा रामो राजीवलोचनः ।
१६] किं मां भरत कुर्वाणमिह प्रत्युपवेक्ष्यसि[6]○ ॥१५॥ [१६
ब्राह्मणो ह्येकपार्श्वेन स्वयमास्तीर्य संविशेत् ।
१७] न तु मूर्द्धाभिषिक्तानां विधिः प्रत्युपवेशने○ ॥१६॥ [१७
उत्तिष्ठ राजशार्दूल हित्वैतद्दारुणं व्रतम् ।
१८] पुरिवर्यामितः[8] क्षिप्रमयोध्यां गच्छ राघव ॥१७॥ [१८
आसीनस्त्वेव भरतः पौरजानपदं जनम् ।
२०] उवाच सर्वान् संप्रेक्ष्य किमार्यं नानुशासथ ॥१८॥ [१९
पू२१] ते तमूचुर्महात्मानं पौरजानपदा जना. ।
पू२२] अभिजानीम[9] काकुत्स्थं सम्यक् स्तिष्ठति राघव ॥१९॥ [२०
पू२३] पितुर्यथा महाभागो वचने तिष्ठति ध्रुवम् ।
पू२४] अतो न शक्नुमो ह्येनं विवर्तयितुमोजसा ॥२०॥ [२१
तेषां वचनमाज्ञाय रामो वचनमब्रवीत् ।
N] एतन्निबोध वचनं सर्वेषां धर्मचक्षुषाम् ॥२१॥ [२२

---

५ ब—इहस्थे ।
६ ब—प्रत्युपवेशने ।
७ ब—मूर्धावसिक्तानाम् ।
८ ल—परिवारान्वितः ।

उ२] एतच्चैवोभयं श्रुत्वा सम्यक् संपश्य राघव ।
N] उत्तिष्ठ त्वं महाबाहो संस्पृशस्व तथोदकम् ॥२२॥ [२३
[स्गं: १२१]
उ११] अथोत्थाय जलं स्पृष्ट्वा भरतो वाक्यमब्रवीत् ।
पू१२] शृण्वन्तु मे परिषदो मन्त्रिणः श्रेणयस्तथा ॥२३॥ [२४
न याचे पैतृकं राज्यं नानुशोचामि मातरम् ।
१४] आर्यं परमधर्मज्ञं नानुजानामि राघवम् ॥२४॥ [२५
यदि त्ववश्यं गन्तव्यं कर्तव्यं वचनं पितुः ।
१५] अहमेव निवत्स्यामि चतुर्दश समा वने ॥२५॥ [२६
धर्मात्मनः स तेनाथ भ्रातु र्वाक्येन विस्मितः ।
१६] उवाच रामः संप्रेक्ष्य पौरजानपदं जनम् ॥२६॥ [२७
वित्रा[न]ाहृतं[१०] क्रीतं यत् पित्रा जीवता[११] मम ।
१७] न तत् कोपयितुं शक्यं मया वा भरतेन वा ॥२७॥ [२८
उपधिना मया कार्यो वनवासो जगुप्सितः ।
१८] असूयोपेतं हि कैकेय्या पित्रा मे सुकृतं कृतम् ॥२८॥ [२९
जानामि भरतं क्षान्तं गुरुसत्कारकारकम्[१२] ।
१९] सर्वमेवात्र कल्याणं सत्यसन्धे महात्मनि ॥२८॥ [३०
अनेन धर्मशीलेन वनात् प्रत्यागतः पुनः ।
२०] भ्रात्रा सह भविष्यामि पृथिव्यामहमीश्वरः ॥३०॥ [३१
कृतं हि मातुः कैकेय्या वचनं तन्मया प्रियम् ।
२१] अनृतान्मोचयानेन पितरं तं महायशम् ॥३१॥ [३२
N] आसीत् पित्रानियुक्तं यत् तस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥३२॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामयाचनं
नाम सर्गः ॥ १२४ ॥

---

१० ल—पित्रात्माहृतम् । | १२ ल—गुरुसत्कार० ।

[वं १ : २]=[पञ्चविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११२]

N] अथ[1] तं देशमागम्य गन्धर्वसहिता द्विजाः । [N
७१] भ्रातरौ तौ महावीरौ काकुत्स्थौ प्रशशंसिरे ॥१॥ [२७
धन्यः स यस्य पुत्रौ वां धर्मज्ञौ सत्यविक्रमौ ।
३] श्रुत्वा वां तात संभाषमुभाभ्यां स्पृहयामहे ॥२॥ [३
ततो देवगणा सर्वे दशग्रीववधैषिणः ।
४] भरतं राजशार्दूलमित्यूचुः सङ्गता मिथः ॥३॥ [४
भो भो भरत सिद्धार्थ निवर्त्तस्व स्वतो लघु ।
N] देवकार्यमशेषेण कर्तव्यं राघवेण वै ॥४॥ [N
रामोऽथ लक्ष्मणः सीता सुखेन वनचारिणः ।
N] ऋषिभिश्च स्वनुध्याता वने वत्स्यन्ति वै त्रयः ॥५॥ [N
७] राजर्षयश्च धर्मज्ञाः स्वं स्वं स्थानं ततो गताः ॥६॥ [७७
ह्लादितास्तेन वाक्येन शुभेन शुभदर्शनाः ।
८] रामः संहृष्टवदनस्तानृषीनभ्यवादयत् ॥७॥ [८
स्रस्तगात्रस्तु भरतो वाचा संसज्जमानया ।
९] कृताञ्जलिरिदं वाक्यं राघवं पुनरब्रवीत् ॥८॥ [९
राजधर्ममिमं प्रेक्ष्य कुलधर्मानुसन्ततिम् ।
१०] कर्तुमर्हसि काकुत्स्थ मम मातुश्च याचतीः[2] ॥९॥ [१०
रक्षितुं सुमहद्राज्यमहमेकस्तु नोत्सहे ।
११] पौरजानपदांश्चापि यत्नाद्रञ्जयितुं नृप ॥१०॥ [११
ज्ञातयश्चैव योधाश्च मित्राणि सुहृदश्च नः ।
१२] त्वामेव प्रतिकांक्षन्ते पर्जन्यमिव कार्षकाः[3] ॥११॥ [१२

---

१ ब—अयं । | ३ ब—वार्षिकाः ।

इदं राज्यं महाराज प्रतिपद्यस्व सर्वतः ।
१३] शक्तिमानसि काकुत्स्थ लोकस्य परिपालने ॥१२॥ [१३
पादयोरपतद्भ्रातु र्भरतो ऽथ प्रसादयन् ।
१४] भृशमाराधयामास राममेवं प्रियंवदः ॥१३॥ [१४
तमङ्के भ्रातरं कृत्वा रामो वचनमब्रवीत् ।
१५] श्यामं नलिनपत्राक्षं हंसवल्गुस्वरः स्वयम् ॥१४॥ [१५
इयं ते यादृशी बुद्धिः स्थिरा विनयसंभृता ।
१६] भृशमुत्सहसे कृत्स्नां रक्षितुं पृथिवीमिमाम् ॥१५॥ [१६
अमात्यैश्च सुहृद्भिश्च बुद्धिमद्भिश्च मन्त्रिभिः ।
२५] सर्वकार्याणि संमन्त्र्य कारयेस्त्वं सदा ऽनघ ॥१६॥ [१७
लक्ष्मीश्चन्द्रादपक्रामेद्धिमवान्वा परित्यजेत् ।
२६] सागरो वा त्यजेद्वेलां न प्रतिज्ञामहं त्यजे ॥१७॥ [१८
कामाद्वा यदि वा लोभान्मात्रा ते यदिदं कृतम् ।
२७] न तन्मनसि कर्तव्यं वर्तितव्यं च मातृवत् ॥१८॥ [१९
एवं ब्रुवाणं रामं तु वसिष्ठो वाक्यमब्रवीत् ।
२८] तेजसाऽऽदित्यसङ्काशं प्रतिमानं धनुष्मताम् ॥१९॥ [२०
प्रयच्छ पादुके पुत्र भरताय महात्मने[४] ।
N] एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं करिष्यतः ॥२०॥ [२१
इत्युक्तः स वसिष्ठेन रामोऽप्यानाय्य पादुके ।
N] प्रयच्छत् प्रीतिमान् भ्रात्रे भरताय महात्मने ॥२१॥ [२२
स पादुके ते भरतः प्रतापवां-
स्तदा ऽनुरूपे प्रतिगृह्य धर्मवित् ।

---

४ ल—महात्मनः ।

प्रदक्षिणं चैव चकार राघवं
A N] चकार चैवोत्तमनागमूर्धनि ॥२२॥ [२९

अथानुपूर्व्या प्रतिपूज्य तं जनं,
गुरून् वसिष्ठप्रमुखांस्तथा ऽनुजान् ।
व्यसर्जयद्राघववंशवर्धनः,
स्थितः स्वधर्मे हिमवानिवाचलः ॥२३॥ [३०

तं मातरो बाष्पपरीतकण्ठ्यो
दुःखेन चामन्त्रयितुं न शेकुः[५] ।
स एव मातृरभिवाद्य सर्वा
A N] उदक्कुटीं संप्रविवेश रामः ॥२४॥O [३१

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रतियान
नाम सर्गः ॥[१२५]॥



A अस्मिन् पाठेऽयं श्लोकः १२३ सर्गे द्रष्टव्यः ।

५ कै—शकः ।

O ल—

[चं-१:४]=[षड्विंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११३]

ततः शिरसि कृत्वा तु पादुके भरतस्तदा ।
१] आरुरोह रथं हृष्टः शत्रुघ्नेन समन्वितः ॥ १ ॥ [१
वसिष्ठो वामदेवश्च जाबालिश्च दृढव्रतः ।
२] [अ] यतः[ः][1] प्रययुस्तस्य मन्त्रिणः सर्व एव ते ॥२॥ [२
नदीं[2] मन्दाकिनीं[2] प्राप्य प्राङ्मुखाः प्रययुस्ततः ।
३] प्रदक्षिणं च कुर्वाणश्चित्रकूटं महागिरिम् ॥३॥ [३
तस्य धातुसहस्राणि रम्याणि गिरिसानुषु ।
४] व्यतियान्तो ऽन्वपश्यन्त भरतस्यानुयायिनः ॥४॥ [४
अन्तरा चित्रकूटस्य ददर्श भरतस्ततः[3] ।
५] आश्रमं यत्र स मुनि र्भरद्वाजः कृतालयः ॥५॥ [५
स तमाश्रममासाद्य भरद्वाजस्य बुद्धिमान् ।
६] अवतीर्य रथात् पादौ ववन्दे कुलनन्दनः[4] ॥६॥ [६
प्रहृष्टस्तु भरद्वाजो भरतं प्रत्युवाच ह ।
७] अपि कृत्यं कृतं तात रामेण च समागतः ॥७॥ [७
एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धीमता ।
८] प्रत्युवाच भरद्वाजं धर्मिष्ठो धर्मवत्सलम् ॥८॥ [८
याच्यमानोऽपि गुरुभि र्मया च दृढनिश्चयः ।
९] राघवः परमप्रीतस्तत्रेदं वाक्यमब्रवीत् ॥९॥ [९
पितुः प्रतिज्ञां धर्मेण पालयिष्याम्यतन्द्रितः ।
१०] चतुर्दश हि वर्षाणि प्रतिज्ञा या कृता पुरा[5] ॥१०॥ [१०

---

१ ब, ल, म — अग्रतः ।
२ ब — मन्दाकिनीं नदीं ।
३ ब, ल — भरतस्तदा ।
४ ल — कुलवर्धनः ।
५ ब, ल, म — पुस्तकेषु चेत्यमस्ति — पितुः प्रतिज्ञा धर्मेण प्रतिज्ञा या कृता पुरा । सा पालनीया धर्मज्ञ पाकर्तव्या प्रमाद वै ॥

एवमुक्ते महातेजा वसिष्ठः प्रत्युवाच तम् ।
११] वाक्यज्ञं वाक्यकुशलो राघवं वचनं महत् ॥११॥ [११
एते प्रयच्छ संहृष्टः पादुके स्वर्णभूषिते ।
१२] अयोध्याया नरव्याघ्र योगक्षेमाय राघव ॥१२॥ [१२
एवमुक्तो वसिष्ठेन राघवः प्राङ्मुखः स्थितः ।
१३] पादुके स्वर्णविकृते मम राज्याय वै ददौ ॥१३॥ [१३
निवृत्तोऽहमनुज्ञातो रामेण विधृतात्मना ।
१४] अयोध्यामेव गच्छामि गृहीत्वा पादुके शुभे○ ॥१४॥ [१४
एतच्छ्रुत्वा शुभं वाक्यं भरतस्य महात्मनः○ ।
१५] भरद्वाजस्तु भरतं मुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥१५॥ [१५
नाश्चर्यमेतद्व राजेन्द्र शीलवृत्तवतां वर ।
१६] यच्छुभं त्वयि तिष्ठेत राजपुत्र महाबल ॥१६॥ [१६
न मृतः स महाभागः पिता दशरथस्तव ।
१७] यस्य त्वमीदृशः पुत्रो धर्मात्मा गुरुवर्त्तकः ॥१७॥ [१७
तमृषिं भरतः श्रीमानुक्तवाक्यं कृताञ्जलिः ।
१८] आमन्त्रयितुमारेभे चरणावुपगृह्य ह ॥१८॥
ततः प्रदक्षिणीकृत्य भरद्वाजं महामुनिम् ।
१९] भरतः प्रययौ श्रीमानयोध्यां सह मन्त्रिभिः ॥१९॥ [१९
नागैश्च शकटैश्चैव हयैर्यानैश्च सा चमूः ।
२०] पुनर्निवृत्ता विस्तीर्णा भरतस्यानुयायिनी ॥२०॥ [२०
ततस्त्रिपथगां दिव्यां पुण्यां फेनोर्मिमालिनीम्[६] ।

○ ल, म— | ६ ध, ल—हेमोर्मिमालिनीम् ।

२१] ददृशुस्ते पुनः सर्वे गङ्गां पुण्यजनाहृताम् ॥२१॥ [२१
तां नक्रमकराकीर्णामुत्तीर्य सह बन्धुभिः ।
२२] शृङ्गवेरपुरं रम्यं प्रविवेश ससैनिकः ॥२२॥ [२२
शृङ्गवेरपुरं गच्छन्नयोध्यां स ददर्श ह । [२३ पू
२३] भरतो दुःखसन्तप्तस्तत्र सूतमथाब्रवीत् ॥२३॥ [२४ पू
सारथे पश्य नगरीमयोध्यां शून्यकाननाम् । [२४ उ
२४] निराकारां निरानन्दां दीनां प्रतिहतस्वनाम् ॥२४॥ [२५ पू
वियुक्तां पुरुषेन्द्रेण सम्रुतेन महात्मना ।
२५] राज्ञा दशरथेनेह नोत्सहे प्रतिवीक्षितुम् ॥२५॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतनिवर्त्तनं
नाम सर्गः ॥ [१२६] ॥



[वं-१२५]=[सप्तविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा०११४]

स्निग्धगंभीरघोषेण स्यन्दनेनोपयान् प्रभुः ।
१] अयोध्यां भरतः क्षिप्रं प्रविवेश महायशा ॥१॥ [१
मार्जारोलूकचरितां मलिनाम्बरधारिणीम् ।
२] तिमिराभ्याहतां कालीमप्रकाशां निशामिव ॥२॥ [२
राहुग्रस्तां चन्द्रपत्नीं श्रियां प्रज्वलितामिव ।
३] ग्रहेणाभ्युदितामेकां रोहिणीं पीडितामिव ॥३॥ [३
४पू] अत्युष्णस्वल्पसलिलां रूक्षस्वरविहङ्गमाम् । [४पू
N] विध्वस्तकनकस्तंभा गजवाजिविवर्जिताम् ॥४॥ [६पू
हतप्रवीरा विध्वस्तां चमूमिव महाहवे । [६उ
N] सफेनामम्बरोज्झिर्नां[1] सागरस्य समुत्थिताम् ।
प्रशान्तमारुतोद्धूतां जलोर्मीमिव विस्वनाम्[2] ॥५॥ [७
N] त्यक्तयज्ञोत्सवैः सर्वैः सोमपैश्च सयाजकैः ।
N] पर्वकाले तु संवृत्ते वेदीं गतशिखामिव ॥६॥ [८
गोष्ठमध्ये स्थितामार्तामाचरन्तीं नवं तृणम् ।
६] गोवृषेण परित्यक्तां गोकन्यामिव सोत्सुकाम् ॥७॥ [९
प्रभाकराभैः सुस्निग्धैः प्रज्वलद्भि र्महाशिखैः ।
७] विमुक्तां मणिभिर्जात्यै र्नागमुक्तावलीमिव ॥८॥ [१०
सहसा चलितां स्थानान्महीं पुण्यक्षयादिव ।
८] संहतद्युतिविस्तारां तारामिव नभश्च्युताम् ॥९॥ [११
पुष्पनद्धां वसन्तान्ते मत्तभ्रमरनादिवाम्[3] ।
९] घोरदावाग्निविप्लुष्टां कान्तां वनलतामिव ॥१०॥ [१२

---

१ ल-सर्हैनामस्वरो० ।
२ ल-विस्वराम् ।
३ ल-स तु भ्रमर० ।

संमूढब्राह्मणजनां विक्षिप्तविपणापणाम् ।
१०] प्रच्छन्नशशिनक्षत्रां द्यामिवांबुधरैर्वृताम् ॥११॥ [१३
क्षीणपानोत्तमैर्भिन्नैः शरावैरभिसंवृताम् ।
११] गतशौण्डामिव ध्वस्तां पानभूमिमसंस्कृताम् ॥१२॥ [१४
रूक्षभूमिलतां निम्नां वृक्षगुल्मसमावृताम् ।
१२] उपयुक्तोदकां भिन्नां प्रपां निपतितामिव ॥१३॥ [१५
शुष्कतोयां महामत्स्यां कूर्मैश्च बहुभिर्वृताम् ।
प्रभिन्नामतिविस्तीर्णां वापीमिव हतोत्पलाम् ॥१४॥ [१A
पुरुषस्याप्रहृष्टस्य प्रतिसिद्धानुलेपनाम् । [N चि
१६] सन्तप्तामिव शोकेन गात्रयष्टिमभूषणाम् ॥१५॥ [N
प्रावृषीव महाभ्रौघप्रविष्टस्याविसश्वराम् । [N
प्रच्छन्नां नीलजीमूतैर्भास्करस्य प्रभामिव ॥१६॥ [१७
भरतस्तु रथस्थोऽथ श्रीमान् दशरथात्मजः ।
१८] वाहयन्तं रथश्रेष्ठं सारथिं वाक्यमब्रवीत् ॥१७॥ [१८
किं नु खल्वद्य गंभीरो मूर्छितो न निशम्यते ।
१९] यथा पूर्वमयोध्यायां गीतवादित्रनिःस्वनः ॥१८॥ [१९
वारुणीपानमत्तैश्च नरैरुत्तानशायिभिः[४] ।
२०] संपतद्भिरयोध्यायां नाभिभान्ति दिशो दश ॥१९॥ [N
वारुणीमण्डगन्धाश्च माल्यगन्धाश्च मूर्छिताः ।
२१] धूपेनागुरुगन्धाश्च नाद्य वान्ति समन्ततः ॥२०॥ [२०
यानप्रवरघोषश्च स्निग्धश्च हयनिस्वनः ।
२२] महानागनिनादश्च श्रूयते न यथा पुरा ॥२१॥ [२१
अयोध्यां तु प्रविश्यैव जगाम भवनं पितुः ।
२३] तेन हीनं नरेन्द्रेण सिंहहीनां गुहामिव ॥२२॥ [२८

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रवेशो नाम सर्गः ॥ [१२७] ॥

A अयं श्लोकः दाक्षिणात्ये पाठे क्षेपकरूपेणोद्धृतः ॥

४ म–शनैः०।

[वं-१२६,१२७]अष्टाविंशत्याधिक-शततमःसर्गः]=[दा११५]

अयोध्यायां तु निक्षिप्य मातॄः सर्वाः परन्तपः ।
१] भरतः शोकसन्तप्तो गुरून् सर्वानुवाच ह ॥१॥
नन्दिग्रामं गमिष्यामि सर्वानामन्त्रयामि वः ।
२] तत्र दुःखमिदं सर्वं सहिष्ये राघवं विना ॥२॥ [२
पिता प्रेतश्च मे राजा वनस्थश्चैव राघवः ।
३] रामागमप्रतीक्षो ऽहं पालयिष्ये वसुन्धराम् ॥३॥ [३
एतच्छ्रुत्वा महद्वाक्यं भरतस्य महात्मनः ।
४] अब्रुवन् मन्त्रिणः सर्वे ते वसिष्ठपुरोगमाः ॥४॥ [४
सदृशं श्लाघनीयं च यदुक्तं भरत त्वया ।
५] वचनं भ्रातृवात्सल्यादनुरूपमिदं तव ॥५॥ [५
एतत्ते भ्रातृलुब्धस्य तिष्ठतो भ्रातृसौहृदे ।
६] आर्यमार्गप्रवृत्तस्य कः पुमान् न प्रशंसति ॥६॥ [६
स[१] मन्त्रिवचनं[१] श्रुत्वा यथाऽभिलषितं तदा ।
७] अब्रवीत् सारथिं वाक्यं रथो मे युज्यतामिति ॥७॥ [७
१२७सर्ग॰]संप्रहृष्टमना मातॄर्गुरूंश्चाप्यभिवाद्य सः ।
१] भरतो रथमारोहच्छत्रुघ्नश्च परन्तप ॥८॥ [८
आरुह्य तु रथं दीप्तं भ्रातरौ सहितावुभौ ।
२] ययतुः परमप्रीतौ वृतौ मन्त्रिपुरोहितैः ॥९॥ [९
अग्रतस्तु ययुस्तस्य वसिष्ठप्रमुखा द्विजाः ।
३] सर्वे च मन्त्रिप्रमुखा नन्दिग्रामो यतोऽभवत् ॥१०॥ [१०
४उ] बलं च सर्वमाहूय रथनागाश्वसङ्कुलम् ।
४पू] प्रययु भरतस्याग्रे श्रेष्ठाश्च पुर वासिनः ॥११॥ [११

१ ङ म-समन्त्रि॰।

रथस्थः स तु धर्मात्मा भरतो गुरुवत्सलः ।
५] पादुके शिरसि न्यस्य नन्दिग्राममुपागमत्[2] ॥१२॥ [१२
ततस्तु भरतः क्षिप्रं नन्दिग्रामं प्रविश्य ह ।
६] अवतीर्य रथात्तूर्णं गुरूनिदमुवाच ह ॥१३॥ [१३
एतद्राज्यं मम भ्रात्रा दत्तं मे न्यासवत् स्वयम् ।
७] योगक्षेमकरे चेमे पादुके स्वर्णभूषिते ॥१४॥ [१४
१०] इदानीं पालयिष्यामि राघवागमनं प्रति ॥१५॥
N] क्षिप्रमद्यैव संयोज्य राघवस्य च पादुके ।
चरणौ पद्मसदृशौ गुरोर्द्रक्ष्याम्यहं यदा ॥१६॥ [१८
N] निक्षिप्याहं तदा भारं राघवेण समागत ।
N] निर्यात्य गुरवे राज्यं वर्तिष्ये रामशासने ॥१७॥ [१९
राघवस्य तु सन्यस्य पादुके रुचिरे त्विमे ।
११] राज्यं चेदमयोध्यायां दत्वा मत्स्यामि निर्वृतः[3] ॥१८॥[२०
अभिषिक्ते तु काकुत्स्थे प्रहृष्टमुदिते जने ।
१२] प्रीतिर्मम यशश्चैव भवेद्राज्याच्चतुर्गुणम्॥१९॥ [NA
एवं तु विलपन्वीरो भरतः सुमहायशा[4] ।
१३] नन्दिग्रामेऽकरोद्राज्यं राघवस्य गुणान् स्मरन् ॥२०॥[NA
जटावल्कलधारी च मुनिवेशधरः प्रभुः ॥२०॥
१४] नन्दिग्रामेऽवसद्वीरः ससैन्यो भरतस्तदा ॥२१॥ [२१
रामागमनमाकांक्षन् भरतो गुरुवत्सलः ।

---

२ म—०मुपागतः ।
३ य, ल, म—निर्वृतः ।
४ य, ल—सुमहायशाः ।

A अयं श्लोकः दाक्षिणात्ये पाठ क्षेपकरूपेण विन्यस्तः ।

१५] भ्रातुर्वचनकारी च तस्य पादुकयोस्तदा ॥२२॥ [NA
१६उ] स बालव्यजनं छत्रं धारयामास वै स्वयम् ॥२२॥ [२२पू
स पादुकेऽभिषिच्याथ नन्दिग्रामे वसंस्तदा । [NA
१७] भरतः शासनं सर्वं पादुकाभ्यां न्यवेदयत् ॥२३॥ [२२उ
एवं कालोऽतिचक्राम भरतस्य महात्मनः ।
१८] यावदागमनं तस्य रामस्य कृतकर्मणः ॥२४॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतव्रतग्रहणं नाम सर्गः [॥१२८॥]

समाप्तश्चायमयोध्याकाण्डः ॥



A दाक्षिणात्ये पाठे प्रवास रूपेणोद्धृतः ।

॥ सूचियां ॥

(शब्दविशेषसूची–१)

* स्थानविशेषः ॥

(सूची–२)

॥ व्यक्तिविशेषनाम ॥

* स्थानविशेषः ॥

(सूची-१)

॥ पुर नाम ॥

(सूची-४)

॥ नदि नाम ॥

(सूची—६)

॥ पर्वत नाम ॥

(सूची—६)

॥ वन नाम ॥

(सूची—७)

॥ देश नाम ॥

(सूची—८)

॥ शस्त्रास्त्र नाम ॥

(सूची—६)

॥ वृक्ष-लता आदि नाम ॥

(सूची—१०)

॥ उपमायें ॥

दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला।

* प्रकाशित ग्रन्थ *

१—अथर्ववेदीया पञ्चपटलिका	१॥)
२—ऋग्वेद पर व्याख्यान	१।)
३—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मणम्	२॥)
४—दन्त्योष्ठविधि	॥)
५—अथर्ववेदीया माण्डूकी शिक्षा	१)
६—अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणिका	४)
७—रामायणम्, अयोध्या-काण्डम् (समग्र)	७॥)
८—वैदिक कोष प्रथम भाग	१२)
९—काठकगृह्यसूत्रम् with extracts from three com Ed by Dr. W, Caland	७)

* यन्त्रस्थ *

१—चारायणीय शाखा मन्त्रार्षाध्याय

२—ऋग्वेदभाष्य-उद्गीथाचार्यकृत [सायण से प्राचीन]



SUPDT. RESEARCH DEPARTMENT,

D A V College, Lahore.